लोहगढ़

सिक्ख राज्य की राजधानी

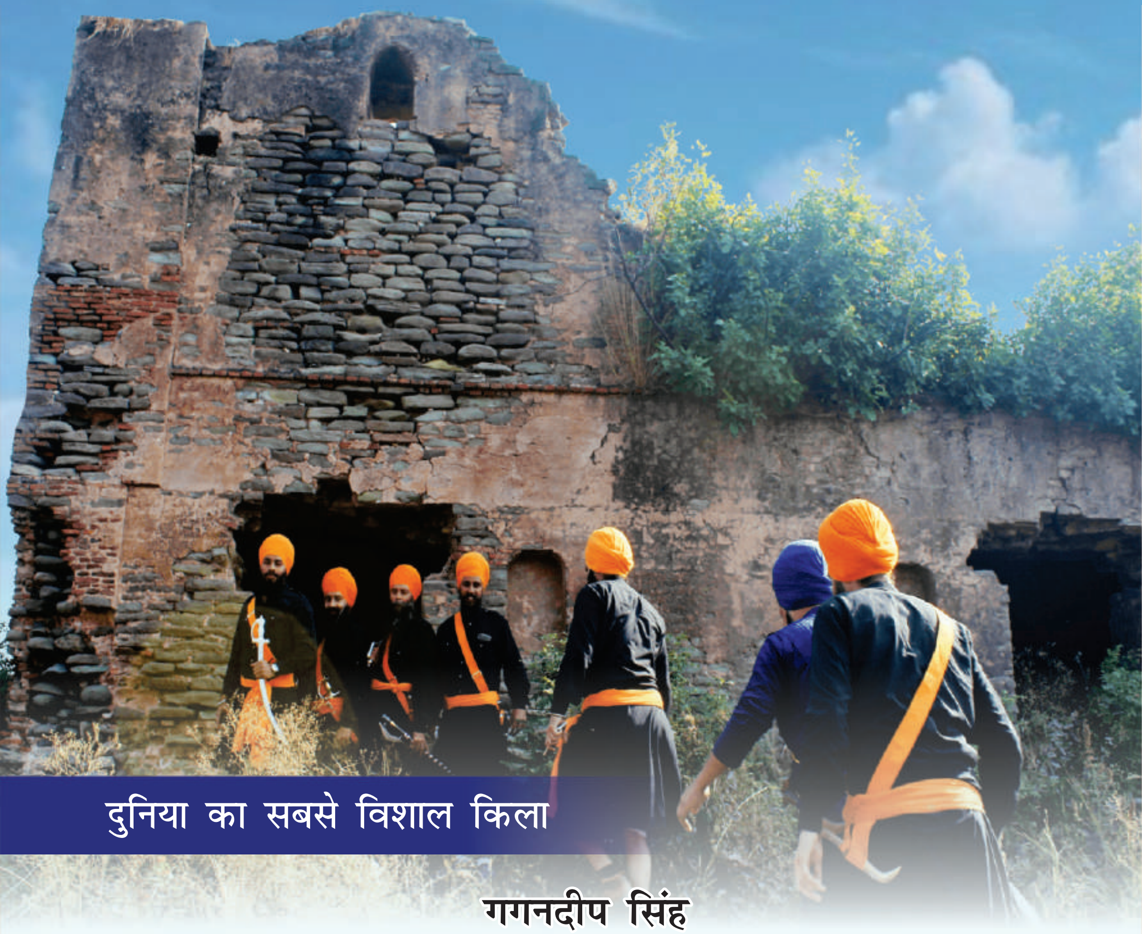

दुनिया का सबसे विशाल किला

गगनदीप सिंह
गुरविन्दर सिंह

हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी, पंचकूला

लोहगढ़

(दुनिया का सबसे विशाल किला)

लोहगढ़

(दुनिया का सबसे विशाल किला)

(सिक्ख राज्य की राजधानी)

गगनदीप सिंह (एच.सी.एस.)
संयुक्त आयुक्त, नगर निगम करनाल, हरियाणा

गुरविन्दर सिंह
उपाध्यक्ष हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी, पंचकूला
एंव चेयरमैन, लोहगढ़ ट्रस्ट

प्रकाशकः हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी, पंचकूला
आई.पी.-16 सैक्टर-14, पंचकूला (हरियाणा)

© HPSA : 2022

सभी अधिकार संरक्षित है, लेखकों और प्रकाशकों की लिखत में इजाजत के बगैर इस पुस्तक का कोई भी हिस्सा किसी भी रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता।

लोहगढ़ पुस्तक के प्रकाशन

2018	अंग्रेजी	संस्करण	हरियाणा अकादमी आफ हिस्टरी एंड कल्चर	(हरियाणा)
2018	कन्नड़	संस्करण	श्री रामा नायक, अध्यक्ष, IBRO बैंगलोरू	(कर्नाटक)
2019	मराठी	संस्करण	श्री जय राम पंवार, MCS मुंबई	(महाराष्ट्रा)
2019	पंजाबी	संस्करण	हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी, पंचकूला	(हरियाणा)
2022	हिंदी	पहला संस्करण	हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी, पंचकूला	(हरियाणा)

ISBN:- 978-81-955000-4-8

हिंदी दूसरा संस्करण : 2023
मुल्य : 550 रुपये

हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी
आई.पी.-16, सैक्टर-14 पंचकूला
फोन: 0172-2972071, 2577798
Email: hpsaa55@gmail.com
haryanapunjabisahityaacademy.com

भारत में छपी

सामग्री, विचार, तथ्य आदि जरुरी नहीं कि हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी के हों। असलीयत में यह लेखक के है।

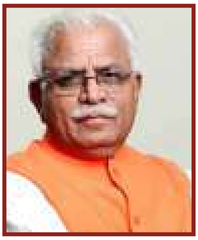

मनोहर लाल
MANOHAR LAL

सत्यमेव जयते

मुख्य मन्त्री, हरियाणा,
चण्डीगढ़।

CHIEF MINISTER, HARYANA,
CHANDIGARH

Dated 21-12-21

संदेश

महाराणा प्रताप, शिवाजी और बंदा सिंह बहादुर उन महान नायकों में से हैं, जिन्होंने विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा भारत की अधीनता का विरोध किया। हरियाणा के लिए बाबा बंदा सिंह बहादुर का विशेष महत्व है क्योंकि इसी क्षेत्र में उन्होने 'लोहगढ़' को ख़ालसा राजधानी घोषित किया।

'लोहगढ़' का किला दुनिया का सबसे बड़ा किला है। इस पर कब्जा करने के अभियान ने शक्तिशाली मुगल साम्राज्य को छः साल के लम्बे समय तक रोक कर रखा और मुगल कभी भी इस किले को जीत नहीं सके। यह एक ऐसा अभियान था, जिसने अंततः मुगल सेना की जड़ें उखाड़ दीं व उनके खजाने को खत्म और उनकी अर्थव्यवस्था को बर्बाद कर दिया।

हरियाणा का क्षेत्र भारत के इतिहास में महत्वपूर्ण घटनाओं का केंद्र रहा है। यह भारत की समृद्ध विरासत का उद्‍गम स्थल है। महान नायक बाबा बंदा सिंह बहादुर और 'लोहगढ़' किले से जुड़े ऐतिहासिक तथ्यों का खुलासा सभी हरियाणा वासियों को गौरवान्वित करता है।

बाबा बंदा सिंह बहादुर को अपनी विनम्र श्रद्धांजलि देने के हमारे प्रयास में हरियाणा सरकार ने लोहगढ़ में 'स्मारक', 'संग्रहालय' और 'मार्शल आर्ट' का एक स्कूल स्थापित करने की योजना बनाई है। लोहगढ़ और इसके आसपास के क्षेत्र के विकास के लिए कई अन्य परियोजनाओं की भी योजना है।

मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी द्वारा पुस्तक **'लोहगढ़: दुनियां का सबसे विशाल किला'** को हिन्दी भाषा में प्रकाशित किया जा रहा है। यह पुस्तक पंजाबी, अंग्रेजी, कंनड़ तथा मराठी में भी छप चुकी है। श्री गगनदीप सिंह तत्कालीन जिला विकास एवं पंचायत अधिकारी, यमुनानगर तथा 'लोहगढ़ ट्रस्ट' के साथियों द्वारा लोहगढ़ क्षेत्र में व्यापक सर्वेक्षण और शोध किया गया। इस खोज कार्य से इस क्षेत्र के बारे में कई महत्वपूर्ण नए तथ्य सामने आए।

मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक हरियाणा की समृद्ध विरासत के इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। मुझे यह भी आशा है कि यह पुस्तक न केवल इतिहास के छात्रों के लिए, बल्कि उन लोगों के लिए भी उपयोगी साबित होगी जो हमारी बहादुर और महान विरासत के बारे में पढ़ने और जानने की रुचि रखते हैं।

मेरी शुभकामनाएँ।

मनोहर लाल

(मनोहर लाल)

संदेश

हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी द्वारा ख़ालसा राज के संस्थापक, सिक्ख राज के प्रथम जरनैल बाबा बंदा सिंह बहादुर के जीवन तथा ख़ालसा राज की राजधानी लोहगढ़ पर खोज भरपूर हिंदी पुस्तक 'लोहगढ़ दुनियां का सबसे विशाल किला' प्रकाशित हो रही है जो कि बहुत ही सराहनीय कार्य है।

बाबा बंदा सिंह बहादुर महान सेना नायक, सच्चाई के संरक्षक, कुशल प्रशासक, गरीबों के मसीहा, जनसाधारण की आवाज बनकर जुल्म का अंत करने वाले महान योद्धा थे। उन्होंने गुरु गोबिंद सिंह जी द्वारा दी गई जिम्मेवारी को निभाते हुए मुगल राज की जड़ें उखाड़ फैंकी और गुरु नानक साहिब के हलीमी राज की सोच को क्रियात्मक रूप दिया। वह पहले ऐसे शख्सियत हुए जिन्होंने मुगलों के अजय होने के भ्रम को तोड़ा, बाबा बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में सिक्ख फौंजों ने मुगल साम्राज्य के खिलाफ केवल 10 महीने में (नवंबर 1709 से सितंबर 1710) जीत हासिल की व गुरु गोबिंद सिंह जी के साहिबजादों की शहीदी का बदला लेकर इतिहास का रुख बदल दिया।

बाबा बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ को ख़ालसा राजधानी घोषित किया। यह किला हिमाचल प्रदेश के सिरमौर तथा नाहन व हरियाणा राज्य के यमुनानगर जिले में स्थित है। लोहगढ़ किला दुनियां का सबसे विशाल किला है, जो लगभग 7000 एकड़ के क्षेत्र में फैला हुआ है। बाबा बंदा सिंह बहादुर ने ख़ालसा तख्त लोहगढ़ से ही गुरु नानक साहिब और गुरु गोबिंद सिंह के नाम से सिक्के और मोहरें जारी की। वह दुनिया के पहले शासक हैं जिन्होनें राज स्थापित होने के बाद अपने नाम से नहीं बल्कि गुरु साहिबान के नाम से सिक्के और मोहरें जारी किए। ऐसा करके उन्होनें अपनी प्रत्येक कामयाबी का श्रेय गुरु साहिब को ही समर्पित किया।

हरियाणा सरकार लोहगढ़ की ऐतिहासिक विरासत को सरंक्षित करने के लिए विशेष प्रयास कर रही है और इस इलाके में बाबा बंदा सिंह बहादुर को समर्पित 'स्मारक' 'संग्राहलय' और 'मार्शल आर्ट' का एक स्कूल आदि स्थापित करने की योजना हैं।

बाबा बंदा सिंह बहादुर के द्वारा स्थापित डेरा बाबा बंदा सिंह की त्रैश्ताब्दी के अवसर पर 2013 में विशाल चेतना मार्च रोहतक से रियासी तक निकाला गया तथा वर्ष 2016 में बाबा बंदा सिंह बहादुर जी की शहादत की तीसरी शताब्दी पर डेरा बाबा बंदा सिंह बहादुर रियासी (जम्मू कश्मीर) से चल कर शहादत स्थल महरौली (दिल्ली) तक नगर कीर्तन (यात्रा) का आयोजन किया गया था जिससे 300 वर्ष से छिपी महान शख्सियत का किरदार बहुत ऊंचा होकर दुनियां के सामने आया। इन दोनों यात्राओं को सभी राज्य सरकारों द्वारा 'राज्य अतिथि' का दर्जा दिया गया था तथा हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी के वर्तमान डिप्टी चेयरमैन सरदार गुरविंदर सिंह जी को बतौर कनवीनर दोनों यात्राओं के संचालन की सेवा मिली। 3 जून, 2016 को श्री मनोहर लाल माननीय मुख्य मंत्री, हरियाणा जी ने इस यात्रा का राज्य स्तरीय समारोह के द्वारा लोहगढ़ (गांव भगवानपुरा, जिला यमुनानगर) में स्वागत किया तथा माननीय मुख्य मंत्री के आदेश पर गगनदीप सिंह के नेतृत्व में एक टीम बना कर 'लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी' की खोज की गई। इस कार्य के लिए मैं हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी को हृदय से बधाई देता हूं।

बाबा जतिंदरपाल सिंह सोढी
वर्तमान गद्दीनशीन एवं 10वें वंशज, बाबा बंदा सिंह बहादुर
डेरा रियासी (जम्मू और कश्मीर)

गुरु नानक साहिब

व

भाई लक्खी शाह वणजारा

व

सिक्ख कौम के महान

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के

350 वें

जन्म दिवस को समर्पित

विशेष धन्यवाद

माननीय मनोहर लाल जी खट्टर
मुख्यमंत्री, हरियाणा

—

महंत करमजीत सिंह सेवापंथी
(प्रधान सेवापंथी अड्नशाही सभा)

—

बाबा जतिंदर पाल सिंह सोढी
(डेरा रियासी, जम्मू)

—

स. जसमेर सिंह वणजारा
(सदस्य, हरियाणा घुमूतू बोर्ड)

—

डॉ. वीणा सचदेवा
(पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़)

—

स. मनोरंजन सिंह साहनी
(गुरु नानक गर्लज कालेज, यमुनानगर)

—

स. जरनैल सिंह ख़ालसा
(यमुनानगर, हरियाणा)

—

स. गुरमीत सिंह रिटायर्ड सीनियर वैज्ञानिक (डी.आर.डी.ओ.)
रक्षा मंत्रालय, भारत

—

प्रेम सेठी
(करनाल, हरियाणा)

—

एडवोकेट नेहा धवन
(हांसी, हरियाणा)

पुस्तक लोहगढ़ (दुनिया का सबसे विशाल किला)
अंग्रेजी, मराठी, कंनड़, पंजाबी और हिंदी
आप आनलाईन भी डाउनलोड कर सकते हैं।
www.lohgarh.com

अनुक्रमणिका

जानकारी 01

पेशकारी 04

अध्याय 1 लोहगढ़ किला (दुनिया का सबसे विशाल किला) 07

- ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ किले का भौगौलिक मानचित्र 09
- अमर बेल 11
- गुप्त मार्ग 11
- पानी को संचित करने के लिए डैम 11
- चक्कियां, औखली और बर्तन के भंडार 11
- अनाज और दाल के भंडार 12
- हथियार बनाने के कारखाने 12
- खिलौने बनाने का कारखाना 13
- ईंट बनाने के भट्ठे व अन्य व्यापार केन्द्र 13
- डाबर के पहाड़ों व तलहटी वाले गांवों की जमीन का मालिक कौन था? 13
- निर्माण किसने करवाया व इसको बनाने में कितना समय लगा? 14
- भाई लक्खी राय वणजारा कौन था? 15
- सिक्ख वणजारों का इतिहास 16
- पीर बदर-उद्-दीन (बुद्धू शाह) का योगदान और किला लोहगढ़ 19
- मुखलिसगढ़ और लोहगढ़ 20
- बाबा राम राय, बीबी रूप कौर व गुरु हर किशन साहिब का जन्म 21

अध्याय 2 लोहगढ़ किले की बनावट और भौगोलिक स्थिति 25

- किले का उत्तरी भाग 28
- किले का पश्चिमी भाग 29
- किले का दक्षिण भाग 30
- किले का पूर्वी भाग 31
- लोहगढ़ से मिली किलेबंदी की निशानियां 32

अध्याय 3 लोहगढ़ किले को बनाने का कारण 36

- गुरु हर गोबिंद साहिब और अन्य राजाओं की रिहाई 37
- रोहिला की लड़ाई 37
- कीरतपुर के लिए ज़मीन खरीदना 38
- गुरु हर राय साहिब का समय 39

अध्याय 4 जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लोहगढ़ तक पहुंचने का सफर 40

➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पाहुल लेना (अमृतपान करना) 41
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का नांदेड़ से कूच करना 42
➢ बांगर देश (हरियाणा) पहुंचे 43
➢ कैथल के शाही खजाने पर कब्ज़ा 43
➢ सिक्ख फ़ौजों की समाना पर जीत 44
➢ नगर सन्नौर पर सिक्ख फ़ौजों का कब्ज़ा 46
➢ सिक्ख फौजों का घड़ाम पर कब्ज़ा 46
➢ ठसके पर हमला 46
➢ थानेसर और शाहबाद (मार्कण्डेय) पर कब्ज़ा 47
➢ मुस्तफाबाद पर कब्ज़ा 47
➢ दामला किले पर सिक्ख फ़ौजों का कब्ज़ा 47
➢ कुंजपुरा पर हमला 48
➢ कपूरी के कदम-उद्-दीन का खात्मा 48
➢ सढ़ौरा पर विजय और उस्मान ख़ान का खात्मा 49
➢ लोहगढ़ को राजधानी स्थापित करना 50
➢ दाबर के इलाके में वणजारों की भूमिका 51

अध्याय 5 लोहगढ़ से जरनैल बंदा सिंह बहादुर के कार्य 52

➢ सरहिंद पर हमले की तैयारी 52
➢ माझे के सिक्खों और मलेरकोटला की फ़ौज में जंग 53
➢ चप्पड़-चिड़ी की लड़ाई 53
➢ सरहिंद शहर पर कब्ज़ा 56
➢ चप्पड़ चिड़ी लड़ाई की वास्तविक तारीख 57
➢ वज़ीर ख़ान की मौत कैसे हुई? 58
➢ लड़ाई दौरान मौतों की संख्या 58
➢ बहादुर शाह द्वारा सूबा दिल्ली व सूबा लाहौर को आदेश जारी करना 59
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मुसलमान शहरियों के साथ बर्ताव 59
➢ जमींदारी व्यवस्था खत्म करना 59
➢ मलेरकोटला पर हमला 60
➢ अनूप कौर और बुलाका सिंह का मसला 60
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लोहगढ़ कूच करना 60
➢ नानकशाही सिक्का जारी करना 61
➢ नानकशाही मोहर से फरमान जारी किए गए। 61

➢ नानकशाही कैलेंडर लागू किया 61
➢ बुड़िया पर कब्ज़ा और इसका नाम गुलाब नगर रखना 62
➢ पानीपत पर कब्जा 63
➢ सहारनपुर, देवबंद, जलालाबाद पर हमले 63
➢ बेहट के पीरजादों को दण्ड देना 64
➢ जलालगढ़ी पर हमला 64
➢ मुजफ्फरनगर पर अधिकार जमाना 64
➢ दिल्ली के हाकिमों,अमीरों और मंत्रियों में दहशत 65
➢ लाहौर और रियाड़की (माझा) में सिक्खों का दबदबा 65
➢ लाहौर पर हमला 66
➢ सिक्खों के विरूद्ध जिहाद 67

अध्याय 6 मुग़ल बादशाह की सिक्खों के विरूद्ध मुहिम 69

➢ बादशाह बहादुर शाह का दक्षिण से दिल्ली की ओर आना 69
➢ बादशाह को सिक्खों के विजयी होने की ख़बरें मिलना 70
➢ राहों (ज़िला नवांशहर) की लड़ाई (अक्तूबर-नवंबर, 1710) *76*
➢ पानीपत की लड़ाई 77
➢ तरावड़ी/खेड़ा अमीन की लड़ाई 78
➢ बादशाह का सढ़ौरा व लोहगढ़ की पहाड़ियों की ओर कूच 80
➢ बादशाह लोहगढ़ किले की पहली चौंकी के समीप पहुंचा 80
➢ सढ़ौरा की पहली लड़ाई 82
➢ लोहगढ़ की पहली लड़ाई (1710 से 1712) 83
➢ सिक्ख सिपाहियों की सप्लाई का प्रबंध 87
➢ लोहगढ़ और इसके मोर्चों पर पानी का प्रबंध 89
➢ इतिहासकारों के द्वारा लोहगढ़ की लड़ाई के बारे में ग़लत जानकारी देना 89
➢ लोहगढ़ किला मुग़लों के हाथ ना आना और बंदा सिंह बहादुर का लाहौर पर हमला (मुगलों के दस्तावेजों के अनुसार) 92
➢ क्या लोहगढ़ किले को एक दिन में जीत लिया गया था? 93
➢ लोहगढ़ किले पर कब्ज़े का झूठा प्रचार 93
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ क्यों छोड़ा 94
➢ लोहगढ़ की एक-दो पहाड़ी जीतने के उपरांत के हालात 94
➢ सिक्खों को कत्ल करने का हुक्म जारी करना 96
➢ राजा नाहन की गिरफ्तारी 97

➢ फूटकल 99

अध्याय 7 मुग़ल बादशाह द्वारा सिक्खों के विरूद्ध अन्य मुहिम का फैसला 100

➢ बादशाह द्वारा रोपड़ में छावनी कायम करनी 102

➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर की दिल्ली पर कब्ज़े की अफवाह 103

➢ पसरूर के निकट सिक्खों और मुग़लों के बीच लड़ाई 103

अध्याय 8 लोहगढ़ किला छोड़ने के उपरांत जरनैल बंदा सिंह बहादुर की कार्यवाही 106

➢ पहाड़ी रियासतों को अधीन करना और बिलासपुर पर हमला 106

➢ मंडी के राजे का सम्मान 108

➢ जरनैल बंदा सिंह बहुादर का चम्बा में विवाह 108

➢ जम्मू और सुल्तानपुर लोधी के फ़ौजदारों को मारना 108

➢ बटाला और कलानौर पर सिक्खों का कब्ज़ा 110

अध्याय 9 बहादुर शाह का लाहौर रहने का फैसला 115

➢ चालीस सिक्खों का कत्ल 117

➢ बिलासपुर में शहादतें 118

➢ हातिम ख़ान का सिक्खों के हाथों मारा जाना 119

➢ बहादुर शाह का पागल होना और उसकी मौत 119

➢ बहादुर शाह की मौत के पश्चात उसके पुत्रों में खूनी-जंग 122

➢ जहांदार शाह द्वारा विरोधियों का कत्लेआम 122

अध्याय 10 जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लोहगढ़ और सढ़ौरा वापिस आना 124

➢ सढ़ौरा की दूसरी लड़ाई 126

अध्याय 11 मुगलों का सिक्खों के विरुद्ध तीसरा संग्राम 128

➢ जहांदार ख़ान का कत्ल और फरख्खसियर का बादशाह बनना 128

➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरुद्ध मुग़लों की नयी मुहिम 129

➢ फरख्खसियर द्वारा अपने पिता के कातिल को माफ करना 129

➢ अब्दुस समद खान को माफी देकर सिक्खों के पीछे भेजना 129

➢ फरख्खसियर को सिक्खों के बारे में सूचनाएं मिलनी 130

➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का नाहन पर हमला 131

➢ सढ़ौरा की तीसरी लड़ाई 131

➢ भाई फतेह सिंह की शहीदी 132

अध्याय 12 लोहगढ़ किले पर शाही फ़ौज का तीसरा हमला 136

➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर 1713 में लोहगढ़ से क्यों निकल कर गए? 139

➢ फरख्खसियर द्वारा अब्दुस समद ख़ान का शाही इस्तेकबाल (स्वागत) 140
अध्याय 13 जरनैल बंदा सिंह बहादुर की आखिरी लड़ाईयां 142
➢ सिक्ख फ़ौजें लोहगढ़, बद्दी, पिंजौर, मोरनी की पहाड़ियों में 143
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का उत्तराखंड और कुमांऊं में होने की चर्चा 144
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का फिर पंजाब आना 145
➢ जत्थेदार बाज सिंह को माखोवाल के इलाके का नेतृत्व सौंपना 147
अध्याय 14 गुरदास नंगल की लड़ाई और जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी 148
➢ गुरदास नंगल के किले का घेराव करना 149
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उसके साथी सिक्खों की गिरफ्तारी 152
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर को जंजीरों के साथ जकड़ लिया 153
➢ बादशाह फरख्खसियर ने जश्न मनाया 154
➢ गिरफ्तार सिक्खों के कत्लेआम का हुक्म 155
➢ सिक्ख नौजवान का ऐलान 'यह मेरी मां नहीं है' 156
➢ 700 सिक्खों का कत्लेआम 157
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत की दासतान 157
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर और सिक्खों के ब्यान 159
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी पर इनामों के भंडारे 159
अध्याय 15 लोहगढ़ किला किस ने गिराया और इसे तहस नहस करने में कितना समय लगा? 160
अध्याय 16 युद्ध समाप्ति के बाद वणजारों के हालात 163
अध्याय 17 गढ़वाल की रियासत और सिक्ख 165
➢ उत्तराखंड और वणजारे 166
अध्याय 18 सिक्ख जरनैल बंदा सिंह बहादुर की मानवता को देन 168
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर और इस्लाम 169
अध्याय 19 नानकि राजु चलाइआ सचु कोटु सताणी नीव दै 171
➢ ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ की तैयारी कब और कैसे? 171
➢ भील सिक्खों का ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ में योगदान 173
अध्याय 20 बेगमपुरा उर्फ लोहगढ़ 174
➢ मारिआ सिका जगत्रि विचि नानक निरमल पंथ चलाइआ 178
अध्याय 21 पीर बुद्धू शाह और सढौरा 179
➢ लोहगढ़ और सढ़ौरा 179
➢ पीर बुद्धू शाह का विवरण 179

➢ खलीफा महोम्मद-4, रोम, इटली की तलवार पीर बुद्धु शाह द्वारा गुरु गोबिंद सिंह को भेंट करना 180
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का सढ़ौरा पर कब्ज़ा 181
➢ बादशाह बहादुर शाह का सढ़ौरा पर हमला 181
➢ सढ़ौरा को लेकर नई इतिहासिक शोध 182
➢ पीर दस्तगीर का सढ़ौरा में आकर बसना 184
➢ गुरु नानक साहिब का सढ़ौरा में मंजी स्थापित करना और भगत सदना जी का सढ़ौरा में आकर बसना 184

अध्याय 22 थानेसर-लोहगढ़ का प्रवेश द्वार 186

➢ गुरु नानक साहिब का थानेसर दौरा 186
➢ मिस्त्र के पीर शेख जलालुद्दीन का थानेसर में बसना 188
➢ गुरु अंगद साहिब का थानेसर दौरा 189
➢ गुरु अमरदास साहिब का थानेसर दौरा 190
➢ गुरु रामदास साहिब का थानेसर दौरा 192
➢ गुरु अर्जुन साहिब और साई मियां मीर का थानेसर दौरा 193
➢ गुरु हर गोबिंद साहिब का थानेसर दौरा 197
➢ गुरु हर राय साहिब का थानेसर दौरा 198
➢ गुरु हर किशन साहिब का थानेसर दौरा 199
➢ गुरु तेग़ बहादुर साहिब का थानेसर दौरा 199
➢ गुरु गोबिंद सिंह का थानेसर दौरा 202
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का थानेसर जीतना 204

अध्याय 23 भाई लक्खी राय (शाह) व्यापारी कौन था? 205

➢ भाई लक्खी राय वणजारा का परिवार 207
➢ दिल्ली का बसाया जाना और लाल किले का निर्माण 208
➢ भाई लक्खी राय वणजारा का सिक्ख गुरु साहिबानों से सबंध 209
➢ भट्ट बही यदुवंशी 8(आठ) में खाता बड़तियां कन्नौत का उल्लेख 210
➢ हलीमी राज की स्थापना में भाई लक्खी राय का योगदान 212
➢ शूरबीर योद्धा बीबी बसंत कौर उर्फ बीबी सीतो भाई लक्खीराय वणजारा की बेटी 213
➢ भाई मनी सिंह जी दामाद भाई लक्खी राय वणजारा 215
➢ भाई मक्खन शाह लुबाणा (पेलिया वणजारा) 217
➢ शहीद नगाहीया सिंह पुत्र भाई लक्खी राय वणजारा 218
➢ अमृतसर की लड़ाई 219

➢ शहीद जवाहर सिंह पुत्र भाई लक्खी राय वणजारा 220
➢ शहीद हेमा सिंह पुत्र भाई लक्खी राय वणजारा 220
➢ भाई लक्खी शाह वणजारा से संबंधित स्थान 221
अध्याय 24 जरनैल बंदा सिंह बहादुर कौन था ? जरनैल बंदा सिंह बहादुर के जन्म को लेकर भ्रम 222
➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रारंभिक जीवन पर नया शोध 222
➢ कोपल शहर में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का किला 223
➢ गुरु नानक साहिब का कर्नाटक में भ्रमण 224
➢ भाई साहिब सिंह निवासी कर्नाटक ख़ालसा पंथ पांच प्यारों में से एक 225
➢ भाई मक्खन शाह लुबाणा का जन्म हंपी कर्नाटक में हुआ 225
➢ दक्षिण भारत में वणजारों की उपस्थिति 226
➢ किला बंदा सिंह बहादुर, कोपल कर्नाटक में वणजारों की वार्षिक सभा 229
➢ अंग्रेज़ों द्वारा किला बंदा सिंह बहादुर पर कब्ज़ा 230
अध्याय 25 जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ सिक्ख शहीद 231
➢ 06 अप्रैल, 1709 को हुई सिक्ख शहीदियां 232
➢ 13 मई, 1710 को हुई सिक्ख शहीदियां 234
➢ 16 अक्तूबर, 1710 को हुई सिक्ख शहीदियां 235
➢ 20 नवंबर, 1710 को हुई सिक्ख शहीदियां 235
➢ 26 जून, 1711 को हुई सिक्ख शहीदियां 235
➢ 10 सितंबर, 1711 को हुई सिक्ख शहीदियां 236
➢ 11 अक्तूबर, 1711 को हुई सिक्ख शहीदियां (लाहौर) 236
➢ 28 दिसंबर, 1711 को हुई सिक्ख शहीदियां (बिलासपुर) 239
➢ 15 जून, 1712 को हुई सिक्ख शहीदियां (सरहिंद) 240
➢ 22 जून, 1713 को हुई सिक्ख शहीदियां (सढ़ौरा) 240
➢ 09 जून, 1716 को हुई सिक्ख शहीदियां (दिल्ली) 241
अध्याय 26 भारतवर्ष में किले लोहगढ़ का वर्णन 244
➢ किला लोहगढ़, मुम्बई-पुणे मार्ग महाराष्ट्र 244
➢ किला लोहगढ़ भरतपुर, राजस्थान 245
➢ किला लोहगढ़ झुन झनू, राजस्थान 245
➢ किला लोहगढ़ उदयपुर 245
➢ लोहगढ़ सिरसा, हरियाणा, लोहगढ़ मोगा और लोहगढ़ मानसा 246
➢ किला लोहगढ़ खालसा राजधानी 246
➢ किला लोहगढ, अंबाला 246
➢ किला लोहगढ़ जीरकपुर, चंडीगढ़ 247
➢ किला लोहगढ़, पिंजौर 247

- ➢ किला लोहगढ़ आनंदपुर साहिब, पंजाब 247
- ➢ किला लोहगढ़, अमृतसर 247
- ➢ किला लोहगढ़ करसू, पाकिस्तान 248
- ➢ किला लोहगढ़ गुरदासपुर और लुधियाणा 248
- ➢ किला लोहगढ़ अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) और मुरैना (मध्य प्रदेश) 248
- ➢ किला लोहगढ़ सिलीगुढ़ी और लोहगढ़ किला भोलपुर, पश्चिम बंगाल 248

अध्याय 27 जम्मू से लेकर बरेली तक हलीमी राज 249

अध्याय 28 जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कालक्रम 259

अंतिका 272

- ➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उसके साथियों के साथ संबंधित स्थान 274
- ➢ भाई लक्खी राय (शाह) वणजारा पर लोकगीत 276
- ➢ कविता (अंग्रेजी) - जरनैल बंदा सिंह बहादुर (रविंद्र नाथ टैगौर) 277
- ➢ कविता (हिंदी) - जरनैल बंदा सिंह बहादुर (रविंद्र नाथ टैगौर) 280
- ➢ पुस्तक में आए मुख्य शब्द 282
- ➢ बिबलियोग्राफी (संदर्भ-ग्रंथ सूची) 285
- ➢ अंग्रेजी स्रोत 288
- ➢ सहायक पुस्तक सूची 289
- ➢ सिक्ख राजधानी लोहगढ़ का मानचित्र 291
- ➢ लोहगढ़ के 52 मोर्चों का विवरण व नक्शा 292
- ➢ किला लोहगढ़ और सिक्ख राज के सचित्र प्रमाण 294
- ➢ लोहगढ़ के 52 अग्रिम किले 295
- ➢ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का आक्रमण क्षेत्र (जम्मू से बरेली तक) 306
- ➢ किला लोहगढ़ का मानचित्र (32 सैक्टरों में विभाजित) 307
- ➢ भाई लक्खी राय वणजारा के व्यापारिक रास्तों का मानचित्र 308
- ➢ लोहगढ़ और मुखलिसगढ़ 309
- ➢ भोजराज में एक अन्य दुहरी (दो-मंजिला) इमारत मिली है जिसमें 25 बैरकें बनी हुई हैं। 311
- ➢ भोजराज में लोहगढ़ का मोर्चा 312
- ➢ गांव भोजराज में लोहगढ़ के मोर्चे 314
- ➢ थानेसर शहर का नक्शा दस सिक्ख गुरु साहिबान के आगमन का प्रतीक 315
- ➢ जंग-ऐ-सतून खालसा मीनार, थानेसर 316
- ➢ गुरुद्वारा मंजी साहिब बनी-बदरपुर तहसील लाडवा, जिला कुरुक्षेत्र 317

- लोहगढ़ किले की दीवारें व अन्य निशानियां 319
- लोहगढ़ में मटकियां, बर्तन, चक्की आदि (जोन 2 और 3) 322
- डेम और पानी का प्रबंध 326
- मस्सा रंघड़ का महल 329
- गांव 'बवाना' पिंजौर (पंचकूला) में लोहगढ़ का मोर्चा 330
- गांव बवाना (पिंजौर) गढ़ी के कुछ चित्र 331
- गुरुद्वारा गोरखपुर (पिंजौर) व लोहगढ़ की बुर्जियां 332
- चंडीगढ़ और आसपास में एतिहासिक सिक्ख ईमारतें 334
- बनासर (लोहगढ़ मोर्चा) 341
- भाई लक्खी राय वणजारा से जुड़े स्थान 344
- लोहगढ़ साहिब के नजदीक भाई लक्खी राय वणजारा द्वारा बनवाए गये कुएं 345
- फतेहगढ़ साहिब के नजदीक भाई लक्खी राय वणजारा का किला और सराए 346
- भाई लक्खी राय वणजारा की बावड़ियां 347
- भाई लक्खी राय वणजारा की राजशाही छत्तरियां 348
- बाबा बंदा सिंह बहादुर किला कोपल, कर्नाटक 351
- शैय्यद बदर-उ-दीन उर्फ पीर बुद्धु शाह के परिवार का कुर्सीनामा 354
- हरियाणा सरकार द्वारा शाहबाद से लेकर लोहगढ़ तक सड़क को लोहगढ़ मार्ग घोषित किया गया 356
- लोहगढ़ ट्रस्ट द्वारा खालसा राजधानी के पुन: निर्माण के लिए चल रहे कार्य 358
- लोहगढ़ के बारे में ट्रिब्यून अखबार में छपी खबर 360
- पुस्तक में आए मुख्य शब्दों का विवरण और पन्ना नं. 361

जानकारी

लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी यमुनानगर, हरियाणा, हिमाचल सिक्ख इतिहास का एक प्रमुख स्थान है।जोकि समय के साथ भुला दिया गया। यही से सन् 1710 में सिक्खों के महान जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने गुलामी की जंज़ीरों को तोड़ते हुए आजादी का ध्वज लहराया था और मानवतावादी हलीमी राज की स्थापना करते हुए ताकतवर मुग़ल राज का खात्मा किया था।किला लोहगढ़ से संबंधित ऐतिहासिक खोज में कई नए तथ्य सामने आए हैं।इस खोज में कई आधुनिक तकनीक भी इस्तेमाल की गई हैं। खोज करते समय किले के पुरातत्व अवशेष, पुरालेख, संबंधित ऐतिहासिक स्त्रोतों का गहनता से अध्ययन किया गया है।किला लोहगढ़ के इतिहास की महत्वता केवल सिक्खों के लिए सीमित नहीं हैं। यह एक ऐतिहासिक खोज है, जिसका उल्लेख इतिहास में पहले नहीं मिलता।दस्तावेजों के अध्ययन से पता चला है कि सिक्ख गुरु साहिबान ने अपने-अपने समय पर और अपने-अपने स्थानों पर कई किले लोहगढ़ के अन्तर्गत निर्माण करवाऐ। हरियाणा स्थित लोहगढ़ किला (ख़ालसा राजधानी) के निर्माण की रुप-रेखा गुरु नानक साहिब के समय से शुरू कर दी गई जिसमें वणजारें सिक्ख, खासकर भाई मनी सिंह के पूर्वजों के द्वारा प्रमुख भूमिका निभाई गई। लोहगढ़ राज्य की किलाबंदी जम्मू से लेकर बरेली (नेपाल की सीमा तक) कर दी गई। इस किलाबंदी का केन्द्र बिन्दु किला लोहगढ़ (ख़ालसा राजधानी) बना। जोकि शिवालिक की पहाड़ियों में हज़ारों एकड़ में फैला हुआ था। इस किले के अग्रिम 52 किले मौजूदा ज़िला करनाल, कैथल, कुरुक्षेत्र, यमुनानगर, अंबाला और पंचकूला तक फैले हुए थे। इन 52 किलों का ज़िक्र सभी इतिहासकार करते हैं। परन्तु इन किलों का स्थान, उद्देश्य और युद्ध के दौरान दायित्व का उल्लेख नहीं करते। इस किताब के माध्यम से किलेबंदी के उद्देश्य का उल्लेख करने का प्रयास किया गया है और इतिहास में छिपे रहस्यों को उजागर किया हैं।

मुग़लों की विशाल फ़ौज का सामना करने के लिए इंद्री, लाडवा, बाबैन, शाहबाद, बराड़ा, अंबाला, शहजादपुर, जगाधरी, सढ़ौरा, मुस्तफाबाद, रायपुररानी और पिंजौर में सिक्खों के द्वारा किले बनाऐ हुए थे। इतनी बड़ी किलाबंदी करने के लिए बहुत धन चाहिए था। जो वणजारे सिक्खों द्वारा उपलब्ध करवाया गया और किलाबंदी की जमीन भी वणजारें सिक्खों के द्वारा गुरु साहिबान के आदेशानुसार खरीदी गई। टांडे (जोकि वणजारों के व्यापार के केन्द्र) पूरे विश्व भर में स्थापित थे और इन व्यापार केन्द्रों से हलीमी राज की स्थापना हेतू ख़ालसा कामनवैल्थ की तैयारी की गई और धनराशि इक्ट्ठी की गई।

अठारवीं सदी के शुरू में मुग़लों के पास दुनिया की 25.4 प्रतिशत दौलत थी और वणजारों के व्यापार के कारण मुग़ल इतने अमीर बने थे। मुग़ल राज में वणजारों को कई इलाकों का मनसबदार बनाया था, जोकि आज के मुख्यमंत्री के पद के बराबर है।अठाहारवीं शताब्दी तक वणजारे केवल अमीर व्यापारी ही नहीं थें बल्कि विश्वभर में उनकी राजनीतिक ताकत का भी

परचम लहरा रहा था। वह कई वर्ष लोहगढ़ किले के निर्माण के लिए कार्य करते रहे। भाई लक्खी शाह व वणजारों का लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी की स्थापना में प्रमुख योगदान था।

सन् 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़ से उत्तर भारत में अपने साथ भारी संख्या में वणजारा सिक्ख फ़ौज लेकर आए। इन वणजारों ने ही गुरु साहिब का भेजा हुआ हुक्मनामा जिस में लिखा हुआ था कि मुग़लों के विरुद्ध जंग शुरू हो गई है और सभी सिक्ख जंग की तैयारी कर लें व सिक्ख फ़ौज के जरनैल बंदा सिंह बहादुर हैं। यह हुकुमनामा भारत के अलग-अलग हिस्सों में सिक्ख फ़ौज तक पहुंचाया। सन् 1710 से 1716 तक लोहगढ़ की लड़ाईयां मुख्यत वणजारों, लुबानों, भीलों और सिकलीगरों के द्वारा मुग़लों के खिलाफ लड़ी गईं। जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत के पश्चात भी इन वणजारों ने मुग़लों के विरुद्ध लड़ाई जारी रखी।

मुग़लों ने लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी के नजदीक रंगड़ों के (इन्होनें अकबर के समय दीन-ए-ईलाही को अपनाया और मुसलमान बने थे) 85 गांव बसा दिए। जिन्होंनें सिक्खों का भारी जान-माल का नुक्सान किया। यहीं से वणजारा-सिक्खों के नरसंहार की शुरुआत हुई। यह भी शाही फ़ुरमान जारी किया गया कि नानक परस्थ सिक्ख जहां भी मिले कत्ल कर दिया जाए व जो सिक्ख का सिर काट कर लाऐगा, उसको इनाम में 30 रुपए दिए जाएंगे। यह उस समय की बहुत बड़ी राशि होती थी। यह कार्यवाही सिक्खों के खिलाफ अगले 35 से 40 वर्ष तक लगभग सन् 1716 से सन् 1750 तक चलती रही। सन् 1760 में सिक्ख मिसलों ने लोहगढ़ क्षेत्र पर पुनः कब्ज़ा स्थापित किया। तब तक भी वणजारे सिक्ख मुग़ल हकुमत से टक्कर लेते रहे थे। मुग़ल व अंग्रेज़ी शासन ने इन वणजारे सिक्खों का पहाड़ी इलाकों, जालंधर-दुआब से बरेली तक कत्लेआम निरंतर जारी रखा।

लोहगढ़ की लड़ाई के पश्चात इन इलाकों में पुरानी आबादी नहीं रही। यहां यह बताना जरूरी है कि यमुनानगर, कैथल, करनाल, कुरुक्षेत्र, अंबाला और पंचकूला जिलों की आबादी 250 साल से पुरानी नहीं है। ब्रिटिश सरकार ने काले राय (रंगड़) को प्रथम बदोंबस्त अफसर नियुक्त किया। जो लोहगढ़ क्षेत्र में दूर-दूर से लोगों को लेकर आया और यहां पर जनसंख्या बढ़ाई।

ऐतिहासिक दस्तावेजों के साथ कथित तौर पर छेड़छाड़ कर कुछ इतिहासकारों ने लिखा है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मुखलिसगढ़ किले पर कब्ज़ा करके इसको लोहगढ़ किले का नाम दे दिया था। उन्होंने एक 'रंग महल' जोकि (मुग़ल बादशाहों और जरनैलों के लिए गर्मियों में आराम करने के लिए विश्राम ग्रह रूपी महल था) को लोहगढ़ किला कह दिया जो सही नहीं हैं। वास्तव में मुखलिसगढ़ यमुना नदी के किनारे, हथनी कुंड बैराज के समीप और लोहगढ़ किले से लगभग 35 किलोंमीटर दूरी पर है। लोहगढ़ किले को ग़लत मंशा के साथ मुखलिसगढ़ कह कर प्रचार किया गया। ताकि मुग़लों की शानो-शौक़त कमज़ोर न पड़े। आज भी सिक्खों की शिरोमणि संस्थाएं लोहगढ़ किले को मुखलिसगढ़ का किला बताकर गुमराह कर रही है। समकालीन इतिहासकारों जैसे ख़ाफ़ी ख़ान, मुहम्मद कासिम औरंगाबादी ने भी इस किले की विशालता का उल्लेख किया

है। बाद में अलेग्जेंडर कनिंघम जो बंगाल इंजीनिरिंग का इंजीनियर था को सन् 1861 में पुरातात्विक सर्वे विभाग, भारत सरकार का प्रतिनिधि नियुक्त किया गया। उसने जान-बूझकर लोहगढ़ किले के बारे में जानकारी अपनी प्रकाशित रिपोर्टो में नहीं दी। एक बहुत बड़ी साजिश के तहत लोहगढ़ का इतिहास छुपा दिया गया। इसके अतिरिक्त अंबाला ब्रिटिश गजेटियर जो सन् 1893 में प्रकाशित हुआ था और इस दस्तावेज में भी लोहगढ़ किले के बारे में कोई जानकारी नहीं दी गई। हालांकि सहारनपुर ज़िले के गजेटियर में मुखलिसगढ़ का उल्लेख किया है। 19वीं सदी में अंग्रेज़ों ने कनिंघम, इर्विन और डब्ल्यू क्रुक जैसे अंग्रेज़ों को वणजारे सिक्खों पर शोध करने का कार्य मिला था। परन्तु इनके द्वारा कोई भी जानकारी प्रकाशित नहीं की गई। ज़ालिम मुग़ल शासकों की जड़े उखाड़ने वाले वणजारें ही थे और अंग्रेजी सरकार को भी वणजारें सिक्खों से खतरा था। इसलिए वणजारों पर 'क्रिमिनल ट्राईबल एक्ट 1871' लगा कर 80 साल तक नजरबंद रखा। जिस कारण इन वणजारों का विश्व स्तर का व्यापार खत्म हो गया। यह क्रिमिनल एक्ट देश की आजादी के पश्चात सन् 1952 में हटाया गया।

इस तरह सिक्लीगर व वणजारे सिक्खों ने गुरु नानक साहिब के हलीमी राज की स्थापना के लिए तन, मन, धन समर्पित कर दिया व मानवता की भलाई के लिए शहीदियां दी। आज इन्हें जगह-जगह भटकने वाला समुदाय बना कर रख दिया और सिक्खी की मुख्य धारा से भी बाहर कर दिया।

अब 'लोहगढ़ ट्रस्ट' और हरियाणा सरकार ने संगतों के सहयोग से सार्थक कदम उठाए हैं, जिससे लोहगढ़ के इलाके का विकास शुरू हो गया है। 'लोहगढ़ ट्रस्ट' ने चार एकड़ जमीन खरीद कर धरमसाल, अजायबघर, लंगर हाल, डिस्पैंसरी, रहने के लिए आवासीय कमरे इत्यादि के निर्माण का कार्य आरंभ किया हुआ है। हरियाणा सरकार ने भी यहां जरनैल बंदा सिंह बहादुर मैमोरियल कम्युनिटी सैंटर, मार्शल आर्ट अकैडमी, लाईट एंड साउंड डिस्पले इमारत और आधुनिक पार्क बनाने की घोषणा की हुई है। भगवानपुर से लोहगढ़ पहुँचने के लिए पक्की सड़क बना दी गई है और सोम नदी व लोहगढ़ खोल को पार करने के लिए पुल का निर्माण करवाया है। इसके अतिरिक्त ज़िला करनाल, कुरुक्षेत्र, अंबाला, पंचकूला से आने वाले मार्गो पर लोहगढ़ से संबंधित साईन बोर्ड लगाए गए है। शाहबाद से लेकर लोहगढ़ जाने वाली सड़क को लोहगढ़ मार्ग घोषित किया गया है। इन विकास कार्यों को देखते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर ने भी पिछले कई वर्षों से खरीदी हुई 10 एकड़ ज़मीन पर गुरुद्वारा साहिब का निर्माण किया है जोकि एक सहारनीय कदम है।

गगनदीप सिंह (H.C.S.)
हरियाणा सरकार

पेशकारी

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने अठाहरवीं शताब्दी में विश्वभर के राजनीतिक व आर्थिक समीकरण बदल कर रख दिए। सिक्ख राज स्थापित कर मानवता विरोधी मुग़ल हुकुमत को जड़ से उखाड फेंका। इतिहासकारों ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर व 'लोहगढ़ किले' के साथ बेइन्साफी करते हुए इस किले को शाहजहां का बनाया हुआ मुखलिसगढ़ रंगमहल बताया। यह भी बताया गया कि बंदा सिंह बहादुर ने जीत कर इसे अपने कब्ज़े में लिया व मुखलिसगढ़ को लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी घोषित कर दिया। परन्तु वास्तव में किला लोहगढ़ और मुखलिसगढ़ 35 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित हैं। फिर इतिहासकारों ने नवंबर-दिसंबर 1710 की घटना को ग़लत लिखा कि मुग़लों ने सिर्फ एक दिन में इस लोहगढ़ किले पर विजय प्राप्त कर ली थी। इस पुस्तक में ऐतिहासिक दस्तावेज़ों व मौजूदा प्रमाणों के आधार पर यह साबित किया गया है कि मुग़ल लोहगढ़ किले को कई वर्षो तक भी जीत नहीं पाए। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी जो मौके का चश्मदीद गवाह था ने स्वयं ही मान लिया था कि इस किले पर कभी भी जीत हासिल नहीं की जा सकती थी और इसके प्रमाण उपलब्ध हैं।

शायद समकालीन इतिहासकार लोहगढ़ किले की शान को दिखाना नहीं चाहते थे। क्योंकि, सच बताने से सामान्य लोगों पर ताकतवर मुग़ल राज का प्रभाव समाप्त हो जाता। लोहगढ़ की महानता के बारे में आम लोगों को तब जानकारी मिली जब 3 जून, 2016 को हरियाणा सरकार द्वारा इस स्थान पर बंदा सिंह बहादुर के 300 वर्षीय शहादत दिवस पर आयोजित यात्रा जो डेरा जरनैल बंदा बहादुर, रियासी (जम्मू कश्मीर) से चलकर दिल्ली जा रही थी, इस यात्रा का राज्य स्तरीय समागम के रुप में स्वागत किया गया। गगनदीप सिंह तत्कालीन ज़िला विकास एंव पंचायत अधिकारी, यमुनानगर ने लोहगढ़ किले से संबंधित पाठ्य सामग्री को एकत्रित किया। जिससे पता चला कि लोहगढ़ किला हरियाणा और हिमाचल प्रदेश की सीमा पर स्थित है और इस किले के अग्रिम 52 मोर्चे हरियाणा राज्य के करनाल, कैथल, कुरूक्षेत्र, यमुनानगर, अंबाला और पंचकूला में फैले हुए थे। यहां पर तीन मुग़ल बादशाह सन् 1710 से लेकर सन् 1716 तक लाखों की फ़ौज लेकर सिक्ख फ़ौज के विरूद्ध लडते रहे। यहां एक प्रश्न उत्पन्न हुआ कि कैसे सिक्ख फ़ौज इतने लंबे समय तक मुग़ल फ़ौजों के आगे डटी रही। इसी प्रश्न के उत्तर के लिए लोहगढ़ संबंधित खोज का आरंभ हुआ।

सच्चाई को जानने के लिए इस पूरे लोहगढ़ के पहाड़ी व जंगली इलाके का सर्वेक्षण करने का फैसला किया। ताकि इस किले की वास्तविकता सामने आ सके। यमुनानगर के तत्कालीन डिप्टी कमिशनर डॉ.एस.एस. फुलिया ने इस खोज में बहुत सहयोग दिया तथा मार्गदर्शन भी किया। हिमाचल प्रदेश के ज़िला सिरमौर प्रशासनिक अधिकारियों को इस खोज में मदद करने हेतू पत्र भी लिखा। शुरूआत के सर्वे में यह अनुमान लगाया जा रहा था कि किला 500 से 600

एकड़ में होगा। परन्तु आश्चार्य तब हुआ जब किले के अवशेष, निशानियाँ 7000 एकड़ से अधिक क्षेत्रफल में मिली। यह सूचना यमुनानगर की स्थानीय सिक्ख संगत तक पहुंचाई व ट्रस्ट की स्थापना की गई। गुरबानी और सिक्ख इतिहास के खोजी सरदार जरनैल सिंह यमुनानगर ने दिन-रात सरदार गगनदीप सिंह के साथ इस खोज में सहयोग दिया और 'लोहगढ़ किले' के बहुत सारे अवशेष एकत्रित किए जो इस बड़े इलाके में बिखरे हुए थे।

इन तथ्यों की प्रमाणिकता के लिए लोहगढ़ ट्रस्ट ने दिल्ली की एक प्रोफैशनल एजेंसी इंडियन ट्रस्ट फॉर रूरल हेरिटेज एंड डेवलप्मेंट (ITRHD) के साथ इकरार किया गया। उन्होनें 7000 एकड़ से अधिक इलाकों में फैले हुए लोहगढ़ किले के तथ्यों की पुष्टि की। ITRHD की खोजी टीम ने लोहगढ़ किले में मोर्चाबंदी, कमरे, सिपाहियों की बैरकें, चौकीयां, मिट्टी में मिला लोहे का बुरादा, तराशे हुए पत्थर, चक्क्यिां, अनाज स्टोर करने के लिए मिट्टी के मटके और विभिन्न तरह के मिट्टी के बर्तनों के अनेक टुकड़े खोज निकाले। किले की दीवारें, तराशे हुए पत्थरों की बनीं हुई हैं। जिन की चिनाई चूना और सुरखी के साथ हुई थी।

एस.के.मिश्रा आई.ए.एस (रिटायर्ड) जो कि ITRHD के प्रमुख हैं ने बताया कि किले की दीवारों में पाँच साईज की ईंटें लगी हुई है। जोकि बहुत आश्चार्यचकित तथ्य है। लोहगढ़ किले को बाबा बंदा सिंह बहादुर ने सन् 1710 में ख़ालसा राजधानी ऐलान कर दिया। जो दुनिया का सबसे विशाल किला था। हमने लोहगढ़ किले की विशालता की बात कई इतिहासकारों से की और उनसे सहयोग मांगा कि इस किले का इतिहास पुनः लिखा जा सके। इस किले के इतिहास को पुनः लिखने के लिए नई तकनीक अपनाई गई। जिसमें प्रथम पुरातात्विक अवशेषों का अवलोकन व सर्वे, संबंधित पुरालेख प्रमाणों का अध्ययन, मौजूदा इतिहासिक स्त्रोतों का अध्ययन, भौगौलिक सर्वे, राजस्व रिकार्ड का अध्ययन और लोकसाहित्य का अध्ययन किया गया। सरदार गगनदीप सिंह ने इस किले संबंधित सभी प्रमाणों और इसकी भौगोलिक स्थिति प्रकट करने के लिए सभी नक्शे बनवाए। इन्होंने मिले तथ्यों और प्रमाणों के आधार पर लोहगढ़ किले की लड़ाईयों का विवरण, वणजारों और सिकलीगरों की अहम भुमिका, सढ़ौरा नगर व पीर बुद्धू शाह के जीवन का इतिहास लिखा।साथ ही भाई लक्खी शाह वणजारा व साथियों की अहम भूमिका को दर्शाया है। इस पुस्तक में प्रकाशित सभी तस्वीरों की फोटोग्राफी स. गगनदीप सिंह और स. जरनैल सिंह ने की है।

इस मानवतावादी हलीमी राज की स्थापना में गुरु नानक नाम लेवा संगतें स्थानीय व्यक्तियों और अन्य समाज सेवी लोगों का बहुत योगदान रहा है। जिनकी शहादतों को समय के साथ भुला दिया गया है।इन सब आदरणीय सज्जनों को दिल की गहराईयों से इस पुस्तक के माध्यम से हम श्रंद्धाजलि भेंट करते हैं।

इस कार्य को पूर्ण करने हेतू बहुमूल्य सहयोग देने वालों में बाबा करमजीत सिंह, बाबा जतिंदरपाल सिंह, प्रिथीपाल सिंह, हरजिंदर सिंह, परमजीत सिंह, दलजीत सिंह, मनमोहन सिंह,

गुरबख्श सिंह, गुरप्रीत सिंह, हरजीत सिंह, नरिंदर सिंह, शिव शंकर पाहवा, हरदेव सिंह, चरन सिंह, हरप्रीत सिंह, अरविन्दर पाल सिंह, जरनैल सिंह मिर्जापुर, रिशीपाल सिंह, सुखविन्दर सिंह, जोगिन्द्र सिंह, सतिन्द्रपाल सिंह, कुलविन्दर सिंह और उन सभी सज्जनों का जो लोहगढ़ किले और लोहगढ़ ट्रस्ट के साथ जुड़े हुए हैं। सभी के अति धन्यवादी हैं जिन्होंने इस किले की सच्चाई सामने लाने के लिए योगदान दिया है।

हम सिक्ख इतिहास के विद्वानों, इतिहासकारों को भी विनती करते है कि वह लोहगढ़ किले का सर्वेक्षण करें, अध्यन व रिसर्च करें जिससे इतिहास के खोजी इस अमूल्य सिक्ख विरासत की जानकारी प्राप्त कर सके।

हम सरदार आदर्शदीप सिंह, डी.एस.पी. पुलिस, हरियाणा सरकार का विशेष रूप से धन्यवादी है, जिन्होंने लोहगढ़ किले की छानबीन और सर्वेक्षण करते समय हमें अपेक्षित सुरक्षा प्रदान करवाई। हम सभी सरपंचों, ग्राम सचिवों, पटवारियों, डी.डी.पी.ओ. दफ्तर यमुनानगर और संयुक्त आयुक्त नगर निगम कार्यालय के सभी कर्मचारियों और सज्जनों के धन्यवादी हैं, जिन्होंने हमें इस लोहगढ़ किले की खोज में हर संभव सहयोग दिया।

हम हरियाणा अकैडमी ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर केन्द्र, कुरूक्षेत्र और हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी के अति आभारी हैं। जिन्होंने इस पुस्तक को पहले अंग्रेजी भाषा में, पंजाबी और अब हिन्दी भाषा में प्रकाशित करने का सहयोग दिया। इस पुस्तक का विमोचन श्री मनोहर लाल, मुख्यमंत्री हरियाणा सरकार ने 21-02-2018 को हरियाणा भवन में धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक व अन्य वरिष्ठ नागरिकों व सिक्ख संगतों की उपस्थिति में किया। 8 अप्रैल, 2018 को डॉ. राम नायक बेंगलोर ने इस पुस्तक का कन्नड़ भाषा में अनुवाद करके विमोचन करवाया। सन् 2019 में श्री जय राम पंवार, एम.ए.एस. ने मराठी भाषा में अनुवाद कर वाई.बी चौहान ओडिटोरियम, मुम्बई में विमोचन करवाया। इस पुस्तक के पंजाबी संस्करण का विमोचन 4 अगस्त 2019 को सिरसा में श्री मनोहर लाल, मुख्यमंत्री हरियाणा द्वारा किया गया।

हम हरियाणा प्रदेश के माननीय मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर जी के दिल की गहराईयों से धन्यवादी हैं। जिन्होंने इस खोज पर बहुमूल्य शब्द लिखे और भरपूर सहयोग दिया।

गुरविन्दर सिंह 'चेयरमैन'
लोहगढ़ ट्रस्ट व
डिप्टी चेयरमैन, हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी, पंचकूला

अध्याय 1

लोहगढ़ - ख़ालसा राजधानी (दुनिया का सबसे विशाल किला)

लगभग सभी इतिहासकारों ने लिखा है कि मुग़ल बादशाह बहादुर शाह ने डेढ़ लाख से अधिक फ़ौज के साथ नवंबर, 1710 में ख़ालसा राजधानी किला लोहगढ़ पर हमला किया। कुछ ही दिनों में लोहगढ़ पर मुग़ल फ़ौज का कब्ज़ा हो गया। पूर्व लेखकों के ऐतिहासिक स्त्रोतों के विवरण से यह लगता है कि यह किला एक छोटी सी इमारत रही होगी। जोकि एक-दो पहाड़ियों पर मौजूद थी। मुग़लों की मामूली कोशिश से ही इस पर कब्ज़ा हो गया। परन्तु समकाली लेखकों, राजाओं के वकीलों द्वारा लिखी चिट्ठियों और अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की लिखतों व लोहगढ़ किले के पुरातत्व अवशेषो का सर्वे और भौगोलिक मानचित्र से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि लोहगढ़ की किलाबंदी हज़ारों एकड में फैली हुई थी।[1] जिसकी घेराबंदी की जानी संभव नही थी। इस तरह जरनैल बंदा सिंह बहादुर व राजधानी लोहगड़ के उपलब्ध ऐतिहासिक स्त्रोत हकीकत से कोसों दूर ही नहीं बल्कि मानवता के साथ खिलवाड़ भी है।

सिक्ख किलों का लोहगढ़ नाम रखने का प्रचलन, जरनैल बंदा सिंह बहादुर के जीवन काल से बहुत पहले ही गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख परम्पराओं में आरंभ हो गया था। ऐतिहासिक और भौगोलिक स्त्रोत का अवलोकन करने से जानकारी मिलती है कि भारतीय उप महाद्वीप में कई लोहगढ़ है। जोकि गुरु नानक साहिब से गुरु गोबिंद सिंह, भाई लक्खी शाह वणजारा व जरनैल बंदा सिंह बहादुर से संबंधित है।[2] इन सभी लोहगढ़ किलों का जिक्र इस

---

1 *लोहगढ़ दुनिया के बड़े किलों में से एक था और यह विश्व के अन्य बड़े किले जैसे 1. पाकिस्तान का राणीकोट किला लगभग 26 मुरब्बा किलोमीटर के क्षेत्रफल तकरीबन 3000 एकड़ में है। 2. चितौड़गढ़ 691.9 एकड़ में है। 3. यूरोप का बड़ा किला मालबोरक किला पोलैंड 52 एकड़ में है से भी बहुत बड़ा था। 4. इंग्लैंड का सबसे बड़ा किला विंडसर किला केवल 13 एकड़ में है। 5. जोधपुर का मेहरानगढ़ जो क्षेत्रफल में कम है परन्तु वो 125 मीटर ऊँचाई पर है।

2. *लोहगढ़ अमृतसर, लोहगढ़ गुरदासपुर, लोहगढ़ मोगा, लोहगढ़ सिरसा, लोहगढ़ पिंजौर, ख़ालसा राजधानी लोहगढ़, लोहगढ़ ज़ीरकपुर, लोहगढ़ चंडीगढ़, लोहगढ़ अंबाला, लोहगढ़ भरतपुर, लोहगढ़ पुणे, लोहगढ़ अलीगढ, लोहगढ़ झुंझनू, लोहगढ़ उदयपुर, लोहगढ़ सिलीगुड़ी, लोहगढ़ मुनेरिया, लोहगढ़ ग्वालियर, आदि। यह सभी किले दस गुरू साहिबान, भाई लक्खी शाह वणजारा व जरनैल बंदा सिंह बहादुर से संबंधित है। पंजाब प्रदेश में स्थित लोहगढ़ किलों को मुग़लों व अंग्रेजों द्वारा ध्वस्त कर दिया गया था।

किताब के अध्याय 26 में विस्तार पूर्वक दिया गया है।

सिक्ख राज की राजधानी लोहगढ़ की घोषणा जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा जनवरी, 1710 में की गई थी। ऐतिहासिक दस्तावेज़ की पड़ताल से पता चलता है कि इस लोहगढ़ का संबंध पहले पातशाह गुरु नानक साहिब के "नानकि राजु चलाइआ सचु कोटु सताणी नीव दै॥" गुरु ग्रंथ साहिब, अंग 966 से है। यह भी जानकारी मिलती है कि गुरु-का-चक्क, चक्क रामदासपुर (अब अमृतसर) पंजाब क्षेत्र में लोहगढ़ किले का निर्माण छठे गुरु हर गोबिंद साहिब ने सन् 1621 में आरंभ किया था। जहां पर आज गुरुद्वारा किला लोहगढ़ सुशोभित है। किला लोहगढ़, ख़ालसा राजधानी के निर्माण की योजना निश्चित रूप से गुरु नानक साहिब ने बनाई थी।[3] यह किला इतना विशाल था कि इसके निर्माण हेतु कई दशकों की तैयारी की गई। जिसका विवरण अध्याय-26 में विस्तारपूर्वक दिया गया है। लोहगढ़ किले का क्षेत्र उस समय के सिरमौर [4] रियासत के इलाके में था। इस किले के निर्माण का कार्य 7वें गुरु हर राय साहिब की निगरानी में सन् 1645 से 1658 के बीच हुआ था, जब गुरु साहिब ने 13 साल थापल गांव [5] में बिताए थे।[6] थापलपुर में ही भाई राम राय जी का जन्म 24 फरवरी, 1647 को, बीबी स्वरूप कौर का जन्म 09 अप्रैल, 1649 को और गुरु हर किशन साहिब का जन्म 20 जुलाई, 1652 में हुआ था। सन् 1658 से लेकर 1661 तक कीरतपुर, गोबिंदवाल, सियालकोट, कश्मीर के इलाकों में गुरु हर राय साहिब द्वारा प्रचार दौरे किए गए। इसके पश्चात किले के निर्माण में गुरु तेग़ बहादुर साहिब का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

इस क्षेत्र में गुरतागद्दी से पहले गुरु तेग़ बहादुर साहिब के प्रचार दौरों की अनेक निशानियां,

---

3 लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी के समीप गुरू नानक साहिब ने अपने प्रचार भ्रमण किया था। उनकी याद में गुरूद्वारा कपाल मोचन, किला संधाए और गुरूद्वारा मारवा खुर्द सुशोभित है।

4 *सिरमौर, नाहन रियासत का संबंध सिक्खों के साथ गुरू नानक साहिब के समय से है। गुरू नानक साहिब जी ने वर्ष 1502 में इस इलाके का भ्रमण किया था और नाहन में धर्म प्रचार केन्द्र (मंजी) स्थापित की थी। जिसका नाम गंगूशाही मंजी था।

5 *थापल गांव पुरानी नाहन रियासत में स्थित है और अब यह मौजूदा तहसील रायपुर रानी पंचकुला में स्थित है। इस गांव के मौका निरीक्षण पर पाया गया कि यह एक बहुत गुप्त और सुरक्षित स्थान था और यहां पहुंचना आम आदमी के बस की बात नहीं थी। आज भी इस गांव में किलेबंदी के अवशेष मौजूद हैं और भाई लक्खी शाह वणजारें के द्वारा बनवाए गए 8-9 कुएं आज भी मौजूद है। दंत कथा से पता चलता है कि यह एक बहुत बड़ा विशाल गांव था जिसे उजाड़ दिया गया। इस गांव में अंग्रेजों के समय पर तीन नम्बरदार नियुक्त थे।

6 *दबिस्ताने मज़ाहिब के लेखक जुल्फकार अरदसतानी के अनुसार सातवें गुरु, गुरु हर राय साहिब 13 साल तक थापल में सहपरिवार और 2200 घुडसवारों के साथ रहें।

स्थान मिले हैं। यहां पर गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारा साहिब[7] सुशोभित हैं। किले के निर्माण कार्य में भाई लक्खी राय व अन्य वणजारों के टांडों में शामिल जवानों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। सन् 1685 से 1688 तक गुरु गोबिंद सिंह पाउंटा साहिब रहे। गुरु जी द्वारा इस निर्माणधीन किले को अंतिम रूप दिया। सन् 1689 में गुरु गोबिंद सिंह आनंदपुर साहिब लौट आए। यहां पर भी उनके द्वारा लोहगढ़ किले का निर्माण करवाया गया। किला लोहगढ़ आनंदपुर साहिब में, हथियार बनाने का कारखाना भी लगाया गया था। जिसमें सिकलीगर और वणजारें हथियार बनाया करते थे। इसके अलावा कई अन्य किलों जैसे कि केसगढ़ साहिब (चक्क नानकी), फ़तेहगढ़, आनंदगढ़, लोहगढ़ (सहोटा), होलगढ़, तारागढ, निरमोहगढ़ और बसंतगढ़ का निर्माण भी गुरु गोबिंद सिंह द्वारा करवाया गया। इस तरह यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जनवरी 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पहले से ही तैयार लोहगढ़ किले को 'ख़ालसा राज की राजधानी' घोषित कर दिया था।

ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ किले का भौगौलिक मानचित्र

अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला का अध्ययन करने पर पता चलता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मुग़लों पर आक्रमण क्षेत्र जालंधर, दोआब (जम्मू) से नेपाल, बरेली तक था।[8] जम्मू की पहाड़ियों से गढ़वाल की पहाड़ियां लगभग 600 किलोमीटर की दूरी पर स्थित हैं। आज भी इन पहाड़ियों पर किलों के अवशेष मौजूद हैं और लोहगढ़ का विस्तार इसी क्षेत्र में आता है। ख़ाफी ख़ान के अनुसार लोहगढ़ किले की सुरक्षा के लिए 52 अग्रिम किले थे। ऐतिहासिक दस्तावेज के आधार पर की गई खोज के अनुसार यह 52 किले मौजूदा हरियाणा प्रदेश के ज़िला करनाल, कैथल, कुरूक्षेत्र, अंबाला, यमुनानगर व पंचकूला में फैले हुए थे, जिनके अवशेष आज भी मौजूद है। लोहगढ़ क्षेत्र की मोर्चाबंदी यमुना नदी से लेकर घग्गर नदी के बीच शिवालिक पहाड़ियों पर थी। इस मोर्चाबंदी का केन्द्र बिंदु लोहगढ़ किला था।

लोहगढ़ किला केवल एक या दो पहाड़ियों पर निर्मित कोई मोर्चाबंदी वाला किला नहीं था।यह 7000 एकड़ से भी अधिक भूमि पर और दर्जनों पहाड़ियों में फैला हुआ था। इन्हीं कारणों से किला लोहगढ़ दुनिया का सबसे विशाल किला है। लोहगढ़ किला मौजूदा हरियाणा के ज़िला यमुनानगर और हिमाचल के ज़िला सिरमौर (पुरानी रियासत[9]) में लगभग 50 किलोमीटर के घेरे

---

7 *लोहगढ़ क्षेत्र के गांवों में गुरू तेग़ बहादुर साहिब जी के कई गुरूद्वारा साहिब सुशोभित हैं। गुरूद्वारा बुड़िया साहिब, मंजी साहिब सुढ़ल, गुरूद्वारा साहिब ताजेवाला (तहसील जगाधरी), गुरूद्वारा झींवरेहड़ी साहिब (तहसील मुस्तफाबाद) गुरूद्वारा साहिब बनी-बदरपुर (लाडवा)।

8 *Muzaffar Alam Page 169, The Crisis of Empire in Mughal North India, Muzaffar Alam, Oxford Publication, Page 169.

9 *सिरमौर, नाहन रियासत का सबंध सिक्खों के साथ गुरू नानक साहिब के समय से है। एक प्रथा के अनुसार यह स्थान राजा भोज की मलकीयत थी और आज भी कई गांव राजा भोज के नाम से शिवालिक की पहाड़ियों में स्थित हैं। भाई मनी सिंह, राजा भोज के खानदान के वंशज थे। इनके बुजुर्ग भाई राधे वणजारा (जन्म सन् 1433) व भाई लखमन वणजारा (जन्म 1482) नाहन के रहने वाले थे। जोकि गुरू नानक साहिब जी के सिक्खों में से थे। यही गुरू जी को इस इलाके में लेकर आए थे। भाई मनी सिंह के पिता भाई माई दास का जन्म भी नाहन में हुआ था। नाहन रियासत की स्थापना वर्ष 1095 में राजा शोभा रावल (सुबंस प्रकाश) ने की थी।*

में फैला हुआ है। इसकी सीमा हिमाचल (नाहन[10]) के लोहगढ़, हरीपुर, झील बांकेबाड़ा, महतावाली, देववाला, पलोड़ी, सुकरों, महरोंवाला, चरनवाला, जामुनी और हरियाणा के भगवानपुर-नथौरी, धनौरा, नगली और मोहिदीनपुर में पड़ती है। ऊधमगढ़ काला अंब के नजदीक से कलेसर के जंगल तक का रायपुर रानी, टोका, पिंजौर और काला अम्ब भी इसका हिस्सा थे। यह ठसका से तेवर, मिलकारा होते हुए ताहरपुर, डारपुर, चुलकना से निकलता हुआ कलेसर के जंगल तक लगभग 28-30 किलोमीटर लंबा और 10-15 किलोमीटर चौड़ा क्षेत्र है। यहां प्राकृतिक मोर्चों के अतिरिक्त कमजोर जगह पर पक्के मोर्चे बने हुए थे। यहां किलाबंदी की अनेक निशानियां देखने को मिलती है। जैसे- अमर बेल, गुप्त रास्ते, पानी को इकट्ठा करने के डैम, चौंकियां इत्यादि।[11]

इनके आसपास कलेसर, सुकरों और लोहगढ़ के जंगल (रिजर्व फोरेस्ट) भी हैं। जिन में खूंखार जानवर आज भी मौजूद हैं। इस इलाके को ही डाबर हिल (पहाड़) कहते हैं। लोहगढ़ किला नाहन, पाउंटा साहिब, सढ़ौरा इन तीनों स्थानों से ही लगभग 28-30 किलोमीटर की दूरी पर है।

---

*नाहन शहर की नींव राजा कर्म प्रकाश (वर्ष 1616-1630) ने सन् 1621 में रखी थी। गुरू गोबिंद सिंह जी के लिए किला गोबिंदगढ़ तैयार करवाया था। नाहन का राजा कर्म प्रकाश गुरू हर गोबिंद साहिब के साथ ग्वालियर के किले में कैद था। वह उन 52 राजाओं के साथ शामिल था जिनकी रिहाई अक्तूबर 1619 में गुरू हर गोबिंद जी के साथ हुई थी। कर्म प्रकाश के बाद मंधाता प्रकाश सन् (1630-1654) गद्दी पर बैठा। गुरू हर राय साहिब जी के साथ उसके बहुत नजदीक के संबंध थे। सन् 1645 में जब कहलूर (बिलासपुर) रियासत के राजा तारा चंद ने शाहजहां को कर (लगान) देना बंद कर दिया तो बादशाह ने उसे गिरफ्तार कर कैद में डाल दिया। इस समय (गुरू) हर राय जी कीरतपुर छोड़कर नाहन रियासत के राजा मंधाता प्रकाश की रियासत के थापल गांव में निवास किया। 'दबिस्ताने मज़ाहिब' के लेखक जुल्फकार अरदसतानी (कुछ लेखक गलती से जिसका नाम मुहसन फानी लिखते रहे थे) के अनुसार गुरू जी इन इलाकों में सन् 1645 से सन् 1658 तक (तकरीबन 13 साल)रहे थे।

मंधाता प्रकाश के बाद सोभाग प्रकाश सन् (1654-1664) और उसके बाद बुद्ध प्रकाश सन् (1664-1684) गद्दी पर बैठा। बुद्ध प्रकाश ने नौंवे गुरू तेग़ बहादुर साहिब जी के साथ बहुत नज़दीकी बनाई हुई थी। बुद्ध प्रकाश के बाद मत प्रकाश सन् (1684-1704) गद्दी पर बैठा।सिक्ख तारीख़ में इसका नाम मेदनी प्रकाश के रूप में आता है। मेदनी प्रकाश ने गुरू गोबिंद सिंह जी को मार्च 1685 में अपनी रियासत में दर्शनों के लिए बुलाया था। इस दौरान गुरू गोबिंद सिंह जी सन् 1685-1689 तक पाउंटा साहिब (रियासत सिरमौर) में रहे और किला गोबिंदगढ़ नाहन भी ठहरे थे।

मत्त प्रकाश के उपरांत बिजै प्रकाश (मौत सन् 1736) गद्दी पर बैठा। मुग़ल अभिलिखि में इसका नाम भूप प्रकाश लिखा मिलता है। बंदा सिंह बहादुर की मदद करने के कारण वह सन् 1711 से सन् 1713 तक सलीमगढ़ दिल्ली किले में कैद रहा था। कई मुसलमान लेखकों के अनुसार नाहन के राजाओं ने सिक्ख धर्म को अपना लिया था। इसी कारण दस गुरू साहिबान निरंतर इस क्षेत्र में प्रचार भ्रमण करते रहे। ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ का निर्माण किया।

10 *इतिहासिक स्त्रोत अनुसार नाहन में एक किले की नींव सन् 1621 में गुरू हर गोबिंद साहिब जी के हुक्म अनुसार रखी गई थी।

11 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी (अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 67) नवंबर 1710 का हाल लिखते हुए कहता है कि लोहगढ़ किले की पहाड़ियां चढ़ना बहुत कठिन है। इसके आसपास डेढ़-दो कोस (5 से 7 किलोमीटर) तक मोर्चाबंदी की हुई थी। उसके अनुसार लोहगढ़ किला 16-17 पहाड़ियों से घिरा हुआ है।(पृष्ठ 68-69)

अमर बेल

यह लोहगढ़ के जंगलों में पाई जाने वाली एक मोटी और मजबूत लंबी बेल होती है। यह बेलें लम्बी आयु की होती है और जल्दी से नष्ट नहीं होती। इन बेलों के रस्से बहुत मजबूत बनते हैं। जोकि सामान व जानवरों को बाँधने में सहायक होते हैं। लंगूर और बंदर भी इसका बहुत प्रयोग करते हैं। दुश्मन के हमले से बचने के लिए यह बेलें बहुत मदद करती हैं। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के समय पर सिक्ख इन बेलों को इकट्ठा करके मोटे रस्से बनाकर ऊंची पहाड़ियों से नीचे लटककर एक जगह से दूसरी जगह आसानी के साथ निकल जाते थे। लोहगढ़ किले के जंगलों में ऐसी कुछ बेलें आज भी नजर आती हैं। इसके अतिरिक्त जंगलों में कई प्रकार की वनस्पतियां पैदा होती हैं। जिनको खाकर इन्सान मुश्किल समय में अपना पेट भर सकता है।

गुप्त मार्ग

लोहगढ़ किले में अनेक ऐसे गुप्त मार्ग मौजूद थे जोकि जरूरत पड़ने पर गुप्त तरीकों के साथ निकलने के काम आते थे। कई स्थानों पर यह रास्ते आज भी दिखाई देते हैं। इनमें से बहुत सारे अब झाड़ियां उगने के कारण बंद हो चुके हैं। इन रास्तों में से कुछ कच्चे हैं और कुछ पत्थरों के साथ पक्के किये हुए हैं। यह मार्ग केवल एक-दो पहाड़ियों या टीलों पर ही नहीं बल्कि दर्जनों पहाड़ियों, सभी तलहटी और बहुत से पहाड़ों की चोटियों तक नजर आते हैं। इनको गुप्त मार्ग की जानकारी रखने वाला ही पहचान सकता था। इस कारण दुश्मन से बचने और उसके पीछा करने पर घेरकर मारने के लिए यह रास्ते बहुत मददगार साबित होते थे।

पानी को संचित करने के लिए डैम

किसी भी लड़ाई को जीतने के लिए सबसे पहले उचित पानी की व्यवस्था होनी अति आवश्यक है और लोहगढ़ से की गई लड़ाई दुनिया के सबसे ताकतवार सल्तनत के विरूद्ध थी। इसलिए सिक्ख फ़ौजों व घोड़ों के लिए भारी मात्रा में पानी की आवश्यकता थी। इन क्षेत्रों में पानी की कोई कमी नहीं थी। यहां पहाड़ों से निकल कर पानी के कई स्त्रोत बहते थे। इसके अतिरिक्त नदियों की कई धाराएं आज भी इनमें से बहती हैं। हरीपुर खोल, लोहगढ़ खोल, नगली की खोल, बोली खोल, असरोदी खोल, कालूदेउ का खाला, गुरु की खोल आदि। इस किले में जगह-जगह पर पानी को संचित करने के लिए पत्थरों के पक्के डैम सिक्ख फ़ौज के द्वारा बनाए गए। इनमें 100 से अधिक पक्के डैम आज भी देखे जा सकते हैं। (देखे चित्र) पृष्ठ- 326-328

चक्कियां, औखली और बर्तन के भंडार

लोहगढ़ ट्रस्ट की खोजी टीम को लोहगढ़ किले में बहुत स्थानों से अनाज पीसने वाली चक्कियां, औखलियां और बर्तनों के भंडार मिले हैं। इससे पता चलता है कि यहां बड़ी आबादी

रहती थी और कई सिक्ख फ़ौजियों के परिवार भी यहां रहते थे। वह अपना अनाज पीसने और खाना बनाने के लिए सरसों आदि का तेल निकालते थे। चक्कियां, औखलियां और बर्तनों के भंडार केवल एक पहाड़ी या नजदीक की पहाड़ियों पर ही नहीं बल्कि बहुत ऊंची पहाड़ियों से भी मिले हैं। इससे पता चलता है कि लोहगढ़ के किले में हर जरूरत का सामान मौजूद था। इन कारणों से किले की विशालता का भी पता चलता है। (देखे चित्र) पृष्ठ-323

अनाज और दाल के भंडार

लोहगढ़ किले में और इसके आसपास अनाज और दालों के भी भंडार होने का पता चला है। इनको बड़े बर्तनों में डाल कर रखने और संभालने के प्रमाण भी मिले हैं। एक खेत में हल चलाने पर एक बड़ा बर्तन मिला था जिसमें बहुत मात्रा में दाल मिली। (देखे चित्र) पृष्ठ-322

हथियार बनाने के कारखाने

किला लोहगढ़ क्षेत्र में लोहा और पीतल का बुरादा (Residues) मिला है। जोकि तकरीबन 1000 से 1200 एकड़ में फैला हुआ है। धातु का बुरादा अनेक जगह पर टुकड़ों के रूप में बिखरा पड़ा मिलता है, विश्लेषण करने से प्रतीत होता है कि यहां खानों से विभिन्न कच्ची धातुंए लाई जाती थी। जिनको गर्म करके अलग-अलग खनिज पदार्थ (लोहा, पीतल, सिलवर आदि) निकाले जाते थे। इस ढाले हुए साफ लोहे को सांचे में डालकर अलग-अलग तरह के हथियार बनाऐ जाते थे। जैसे तलवारें, तीर, नेजे, तोप की बैरल आदि। धातु के टुकड़ों से पता चलता है कि यहां हथियार बनाने का बड़ा कारखाना था। जिसमें सिकलीगर व वणजारे शस्त्र बनाया करते थे। यह हथियार गुरु हर गोबिंद साहिब के समय से लेकर बंदा सिंह बहादुर के समय तक बनते रहे। पीतल के बुरादे से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यहां पीतल की गहरी टोपियां और तोप की बैरले बनाई जाती थी। जिनमें बारूद भर कर आगे से गोली की तरह धातु के टुकड़े को लगाकर दूर तक दागा जा सकता था और जिनके साथ गोले दूर तक फेंके जाते थे।

खोज करने पर यह भी पता चलता है कि भाई लक्खी राय (शाह) वणजारा जोकि बहुत बड़े व्यापारी और मुग़ल सल्तनत के ठेकेदार थे। जहां वह मुग़ल सरकार को प्रत्येक जरूरत के सामान की आपूर्ति देता था। वहीं वह मुग़लों को हथियार भी बनाकर उपलब्ध करवाता था और यह हथियार उनके वणजारे साथी ही तैयार करते थे। यही कारण था कि सिकलीगर लोग जो गुरु हर गोबिंद साहिब के समय से ही सिक्खों के लिए हथियार बनाने का काम करते थे। वह धातुओं को साफ करने, पिघलाने, सांचे में ढ़ालने और गर्म करने व तुरंत ठंडा करके धातु को मजबूत और लचीला बनाने के बहुत माहिर थे। ऐसे मजबूत हथियार लड़ाई के समय आपस में टकराने से टूटते नहीं थे। वणजारों ने गुरु नानक साहिब के समय से ही उनकी विचारधारा को अपना लिया था। भारत देश के कई प्रांतों में आज भी सिकलीगरों के गांव मौजूद हैं। गुरु अर्जुन

साहिब से संबंधित वणजारा पोथी में दुनिया की बेहतरीन तोपें बनाने का हवाला मिलता है। नवीन खोज से जानकारी मिलती है कि बारूद को भारत में लवण, लून भी कहा जाता था। इस बारूद को तैयार करने वाले विशेष लोग थे, जिन्हें लवणकार, नोनिया कहा जाता था। इन लोगों के गांव भी लोहगढ़ क्षेत्र में बसाए गए थे।[12]

खिलौने बनाने का कारखाना

लोहगढ़ किले में कई जगह अलग-अलग प्रकार के खिलौने भी मिले हैं। जैसे मिट्टी के बने हुए ऊंट, हाथी, चिड़ियां, तोते, बच्चे आदि। यह लगभग 7-8 एकड़ के क्षेत्रफल में बिखरे पड़े मिले हैं। इससे प्रमाण मिलता है कि यहां बड़ी संख्या में फ़ौजियों के परिवार रहते थे और यही से ही भाई लक्खी राय अपने टांडों के साथ माल सप्लाई करता था। क्योंकि धार्मिक मेलों में बच्चों के खिलौने बिकते थे। इसलिए लक्खी शाह ने लोहगढ़ को अपना बड़ा भंडार घर बनाया।

ईंट बनाने के भट्ठे व अन्य व्यापार केन्द्र

यहां पर 5 तरह की ईंटों के अवशेष मिले हैं।जहां पर विभिन्न प्रकार के माप की ईंटें मिली हैं (देखे चित्र)। यह सभी ईंटे लोहगढ़ के मोर्चो पर मिली है। क्षेत्र से चूना पीसने वाली चक्कियों के बड़े-बड़े पाट भी मिले हैं। इसके अतिरिक्त लोहगढ़ क्षेत्र में वणजारों द्वारा कई प्रकार के व्यवसाय स्थापित किए गए थे। जिनमें मुख्य रूप से पहाड़ों से लकड़ी काटकर मैदानी इलाकों में बेचने का व्यापार था। लोहगढ़ क्षेत्र के खिजराबाद परगना में लकड़ी की विशाल मंडी थी। इसके अतिरिक्त रूई से सबंधित कार्य जैसे कि कपड़ा बुनना इत्यादि इस क्षेत्र में वणजारों द्वारा स्थापित किए गए थे।

डाबर के पहाड़ों व तलहटी वाले गांवों की जमीन का मालिक कौन था?

इन इलाकों का बहुत सारा हिस्सा लगभग 80 गांवों की ज़मीन भाई लक्खी शाह वणजारा की मलकीयत और रियासत थी। इसका प्रमाण इस बात से मिलता है कि इन सभी इलाकों में लक्खी राय वणजारा के बनाऐ हुए कुएं आज भी मौजूद हैं। अब तक 52 कुएं ढूंढ लिए गए हैं। जो खत्म हो गए या दबा दिए गए या ढक दिए गए उनकी गणना नहीं की जा सकी। आज भी ठसका (नजदीक सुधा पीर), मिर्जापुर, टोडरपुर (सढ़ौरा सब तहसील) बुढ़ी, भट्टवाला, सुन्दरपुर, काट्टरवाली, बहादरपुर, लोहगढ़, अलीशेरपुर माजरा (तहसील बिलासपुर) ताहरपुर, बनसंतूर, डारपुर (तहसील छछरौली) में मौजूद हैं। अकेले गांव बांगरपुर में ही 12 कुएं मौजूद है। यह कुएं लगभग 150 फुट गहरे है। जो पत्थर और नानकशाही ईंटों से बने हुए हैं।[13] उस समय में जब आज की माडर्न ड्रिलिंग मशीनों का स्वपन भी नहीं लिया जा सकता था। यह कुआं बनवाना

---

12 *गांव नोनिया, तहसील साहा, ज़िला अंबाला में आज भी मौजूद है परंतु अब इस जनजाति के लोग यहां नहीं बसते।

13 *आज भी इन कुओं में सीमेंट की 1.5 X 2" 6'' साईज की प्लेट लगी हुई है, जिस पर लक्खी राय वणजारा का नाम फारसी में लिखा हुआ है।

और पत्थर व नानकशाही ईंटों के साथ इसकी दीवारों का निर्माण करना (मिस्त्र के पिरामिड की तरह) एक हैरत-अंगेज ख्याल है। जिसका जवाब शायद वैज्ञानिक ही दे सकें। वास्तव में लक्खी शाह उस समय का सबसे बड़ा वणजारा (व्यापारी) था। उसका व्यापार मध्य एशिया से श्रीलंका तक फैला हुआ था। इसी कारण उसे निर्माण कला और इमारतसाजी की बहुत बढ़िया जानकारी थी। खोज से यह बात सामने आई है कि लक्खी शाह वणजारा ने यहां कई अन्य इमारते और कारीगरी के काम करवाए।

इन इलाकों में लक्खी राय के कुछ छोटे किले भी थे। जैसे बुड़िया, गढ़ी वणजारा, दयालगढ़, सुग आदि। भाई लक्खी राय वणजारा बहुत अमीर व्यक्ति था। इतना बड़ा किला लक्खी राय वणजारा जैसा अमीर शख्स ही निर्मित कर सकता था। उसके पास लाखों आदमी काम करते थे। दूर-दूर से पत्थर, चूना, ईंटें लेकर आना किसी दो-चार सौ आदमियों का काम नहीं था। किले के निर्माण में भाई लक्खी राय वणजारा और उसके साथियों का महत्वपूर्ण योगदान था। इसके अतिरिक्त सैनिकों के लिए विशेष रूप से सर्दियों की रजाई, कंबल, कपड़े और भोजन की आपूर्ति क्षेत्र में दुर्लभ थी। ऐसा करने के लिए सामान भी बाहर से टांडों के रास्ते लाया गया होगा। फ़ारसी लेखकों ने किले को छोड़ने के पश्चात सिक्खों की लूटी गई वस्तुओं के बीच रेशमी कपड़े और पश्मीना का भी उल्लेख किया है। इसलिए यह बाहर से आया होगा। बुड़िया के साथ सटा हुआ शहर जगाधरी की स्थापना गुरु काल के समय में हो गई थी। यहां पर वणजारे सिक्खों के द्वारा धातु से निर्माण होने वाली वस्तुओं के कारखाने थे और आज भी जगाधरी में बर्तन बनाने के कारखाने हैं।

भाई लक्खी राय के पुत्र व पौत्र, नाती सभी जरनैल बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज के जरनैल थे और उनके साथी वणजारें भी इसका हिस्सा थे। वह शहीद होने तक लड़ते रहे। बंदा सिंह बहादुर की व इन हज़ारों शहादतों के पश्चात ही किला मुग़लों के कब्ज़े में आया था। मुग़लों द्वारा लोहगढ़ किले का नामोनिशान मिटाने के लिए तोड़-फ़ोड़ के बाद मलबा खुर्द-बुर्द किया गया। ताकि सिक्ख फ़ौजें यहां पर दुबारा किला न बना सकें।

निर्माण किसने करवाया व इसको बनाने में कितना समय लगा ?

अधिकतर इतिहासकार यह लिखते हैं कि इस किले को बंदा सिंह बहादुर ने सन् 1710 में कुछ महीनों में ही बनाया या बने बनाए को मुरम्मत किया था। परन्तु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि 7000 एकड़, इससे भी कुछ अधिक क्षेत्रफल और दर्जनों पहाड़ियों में बना यह किला हरगिज़ कुछ महीनों में या कुछ सालों में भी नहीं बनाया जा सकता था। पहाड़ी इलाकों में दीवारों के लिए पत्थर, नानकशाही ईंटों और चूना ढुलाई के लिए बहुत लम्बा समय लगा होगा। ऐतिहासिक खोज करने से पता चलता है कि इसकी नींव गुरु हर गोबिंद साहिब के कीरतपुर रहते समय सन् 1635 में रखी थी। 'दबिसताने मजाहिब' (लेखक जुल्फिकार अरदसतानी) के अनुसार गुरु हर राय साहिब सन् 1645 से 1658 तक गांव थापल (थापलपुर) रहे थे। गुरु हर

राय साहिब के समय पर (1645 से 1658 ई.) इस किले का सबसे अधिक काम हुआ। गुरु साहिब के पास 2200 घुड़सवार थे जो यही पर ही रहते थे। यह जंगल और पहाड़ इन घोड़ों के लिए बढ़िया चारागाह थी और उनको घास व पानी यहां से आसानी से हासिल होता था। यहां रहते हुए गुरु हर राय साहिब के पास लक्खी राय वणजारा अकसर आता रहता था। यहां से गुरु साहिब ने लोहगढ़ किला बनाने की निगरानी की। यही से लोहगढ़ किला मौजूदा पक्की सड़क से 8 कोस (25 किलोंमीटर) की दूरी पर पड़ता है। जिसके बीच सिर्फ कलेसर का जंगल (अब कलेसर वाइल्ड लाईफ सैंचुऐरी) ही है। इसका एक रास्ता मौजूदा सुखचैनपुरा की ओर को भी जाता है। यह सुखचैनपुरा किसी सुखचैन सिंह के नाम पर बना हुआ है। सुखचैन सिंह, लक्खी राय वणजारा के वारिसों में से एक हो सकता है। लोहगढ़ किले में लगा पत्थर, चूना और ईंटें सब भाई लक्खी राय वणजारा के टांडे द्वारा लाई गई थी। लोहगढ़ किले की दर्जनों पहाड़ियों में आज भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के समय की दीवारों के चिन्ह मिलते हैं।

भाई लक्खी राय वणजारा कौन था?

बहुत से लोग तो इतना ही जानते हैं कि 11 नवंबर, 1675 को गुरु तेग़ बहादुर साहिब को दिल्ली में शहीद किया गया था तो भाई लक्खी राय वणजारा उनका धड़ चांदनी चौंक से उठाकर अपने घर ले आए थे। जहां पर गुरु साहिब के धड़ का संस्कार किया था। जहां अब गुरुद्वारा रकाब गंज सुशोभित है। कई इतिहासकारों का अनुमान है कि भाई लक्खी राय ने संस्कार करने के लिए अपने घर को ही आग से जला दिया था। कई इतिहासकार यह समझते हैं कि भाई लक्खी राय वणजारा ने घर को इस कारण जलाया था जिससे किसी को पता न चल सके। कुछ इतिहासकारों का कहना है कि भाई लक्खी राय ने गुरु साहिब को सम्मान देने के लिए ही अपना घर जला दिया था। कुछ लोगों के लिए भाई लक्खी राय का योगदान सिर्फ इतना ही था। परंतु वह यह नहीं जानते कि भाई लक्खी राय वास्तव में कौन थे। भट्टबहीयों में इस का उल्लेख इस प्रकार मिलता है -

लक्खी राय बेटा गोधू का, नगाहीया, हेम चंद, हाड़ी, बेटे लक्खी राय के, पोते गोधू के, पड़पोते ठाकर दास के, बंस प्रसोतम की चंद्रबंसी जादव गौत्र, औलाद प्रसोतम की बड़तीयां कनावत, संवत 1732 मगसर सुदी छठ गुरुवार के देहों गुरु तेग़ बहादुर साहिब की लाश उठाय के दाग दिया रायसिना गांव में आदि रेन रहे।[14]

गुलाम हसन द्वारा प्रकाशित फ़ारसी स्त्रोत सियार-उल-मुता-खिरैन के अनुसार औरंगज़ेब ने गुरु तेग़ बहादुर साहिब के शरीर के टुकड़े करके दिल्ली शहर में लटकाने का हुक्म दिया था। लेकिन भाई लक्खी शाह वणजारा ने उस समय के विश्व के सबसे ताकतवर मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब के फरमान के विरुद्ध गुरु साहिब की देह (धड़) को उठाने का जोखिम भरा कार्य किस प्रकार किया होगा। यह प्रश्न इतिहास का अध्ययन करने वालों के मन में आश्चर्य पैदा करता है। 95

14 *Sikh History Vol. 1 Hari Ram Gupta, P. 217

वर्षीय बुजुर्ग ने इस कार्य की सफलता के लिए क्या रुपरेखा तैयार की होगी। इस कार्य को सफल बनाने में बहुत से सिक्खों का हाथ था। जिनमें से मुख्य रूप से अब्दुल्ला ख्वाजा कोतवाल चांदनी चौंक,[15] भाई उदय सिंह (लाडवा), भाई नानू दिल्ली,[16] भाई जैता जी व भाई खुशहाल सिंह दहिया ने भाई लक्खी शाह का साथ दिया। 95 वर्ष की आयु में भाई लक्खी शाह वणजारा द्वारा किये गए इस साहसिक कार्य के समान कोई दूसरी उदाहारण पूरे विश्व भर में नहीं मिलती।

भाई लक्खी शाह का परिवार उनके पिता भाई गोधू, दादा भाई ठाकर दास जी और पड़दादा भाई प्रषोतम नायक, गुरु नानक साहिब के समय से ही सिक्खी विचारधारा अनुसार जीवन व्यतीत कर रहे थे। भाई प्रशोत्तम नायक, गुरु नानक साहिब का सिक्ख तब बना था जब गुरु साहिब उत्तर प्रदेश के नगर रामपुर के पास से गुज़र रहे थे। भाई प्रशोत्तम नायक का टांडा वहां रुका हुआ था जोकि भाई लक्खी शाह वणजारा के पड़दादा थे। जो गुरु नानक साहिब के साथ इतनी श्रद्धा भावना के साथ जुड़े कि उनकी आने वाली पीढ़ियों ने भी गुरु नानक साहिब की विचारधारा को जीवन में अपनाया। इनकी पीढ़ी दर पीढ़ी ने दस गुरु साहिबों के पश्चात जरनैल बंदा सिंह बहादुर और मिसलों के मुखियों के रूप में आकर सेवा निभाई। आरंभ में जहां गुरु नानक साहिब की मुलाकात वणजारों के साथ हुई वहां आजकल 'नानकपुरी टांडा' (उतराखंड) नाम का नगर बसा हुआ है।

सिक्ख वणजारों का इतिहास

वणजारा सिक्खों का मुख्य व्यवसाय जोकि बैलगाड़िओं व समुद्री बेड़ों के द्वारा किया जाता था। अठारहवीं सदी तक वणजारे पूरे विश्व भर में व्यापार करने लगे। गुरु नानक साहिब के सन्देशवाहक बनकर नानक की विचारधारा को विश्व भर के कोने-कोने में पहुंचा रहे थे। मध्य युग काल में 4 प्रमुख व्यापारी वर्ग (यूरोपियन, फ़ारसी, यहूदी और वणजारे) विश्व भर में व्यापार कर रहे थे। पन्द्रहवीं सदी में गुरु नानक साहिब के आगमन पर इन वणजारों ने नानक विचारधारा को अपना लिया। 16वीं, 17वीं, और 18वीं सदी तक वणजारे पुरे विश्व में अपने व्यापार के माध्यम से अपना परचम लहरा चुके थे। जहां पर भी वणजारे पहुंचे वही पर इन्होंने टांडा नामक गांव-शहर स्थापित किये। अन्य व्यापारी वर्ग इनसे पीछे रह गए। इनसे द्वेष भावना रखने लगे। इन वणजारों के कारण भारतीय उप-महाद्वीप की अर्थव्यवस्था पहले स्थान पर पहुच गई। विश्व की एक चौथाई दौलत भारत में आ गई। लोहगढ़ की लड़ाईयों के पश्चात मुग़ल सल्तनत द्वारा वणजारों का नरसंहार किया गया और उसके पश्चात अंग्रेज सरकार ने इन लोगों पर 'आपराधिक ट्राईबल एक्ट' लगा दिया। विश्व की सबसे अग्रिम कौम को आर्थिक, सामाजिक स्तर पर कमजोर बना दिया। यूरोपियन, फ़ारसी, यहूदीयों ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी।

अठारवीं सदी तक दक्षिण एशिया का सारा व्यापार वणजारे किया करते थे। वणजारे

---

15 *तवारीख गुरु ख़ालसा, ज्ञानी ज्ञान सिंह
16 *Sikh History Vol. 1, Hari Ram Gupta, P.216

सैंकड़ों, हजारों घोड़ों, ऊंटों, हाथियों और बैलों पर सामान लादकर ले जाया करते थे। उस समय के 5 सबसे बड़े व्यापारी घराने वणजारों के थे।

1. **परमार परिवार:** यह राजा भोज के वंशज थे। जिसमें आगे चलकर भाई बल्लू के पुत्र भाई माई दास (पिता भाई मनी सिंह) और भाई नठिया थे। भाई नठीया का पुत्र भगवंत सिंह (भागू वणजारा) अटक का राजा था और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक था। इन्होंने वर्ष 1716 में अपने परिवार के कई सदस्यों के साथ जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ शहीदी प्राप्त की थी। इसी परिवार में से आगे चलकर भाई मनी सिंह ने मुख्य रूप से गुरु नानक साहिब की विचारधारा पर चलकर कार्य किया और शहादत प्राप्त की।
2. **तोमर परिवार:** (पेलिया वणजारा) इस परिवार में भाई मक्खन शाह लुबाना बहुत मशहूर हुए। इनके बड़े बुजुर्ग भाई दयासा अफ्रीका के मसंद थे। अपने परिवार के साथ गुरु नानक साहिब की विचारधारा को पूरे अफ्रीका में फैला रहे थे। भाई मक्खन शाह के पुत्रों ने गुरु गोबिंद सिंह के नेतृत्व में बहुत सी लड़ाइयों में हिस्सा लिया और शहादतें प्राप्त की।
3. **राठौर परिवार:** यह परिवार राजशाही परिवार था जिनके बड़े बुजुर्ग का कनौज शहर पर राज था। इस परिवार के भाई रामा जी गुरु नानक साहिब के श्रद्धालु बने और आगे चलकर इस परिवार के अन्य सदस्य गुरु साहिबानों के साथ रहे। समय-समय इस परिवार के सदस्यों ने शहादत को प्राप्त किया।
4. **चौहान परिवार:** यह भी एक राजशाही परिवार था जिसमें भाई उदय जी गुरु नानक साहिब के श्रद्धालु थे। आगे चलकर इस परिवार के सदस्य गुरु नानक साहिब की विचारधारा पर शहीदी देने से पीछे नहीं हटे।
5. **जादव परिवार:** भाई लक्खी राय वणजारा के पास लाखों की संख्या में घोड़े, ऊंट, हाथी, खच्चर और बैल थे। इनके पास हज़ार युवा फ़ौजी भी थे। जो इनके सामान व टांडों की सुरक्षा किया करते थे। लक्खी राय वणजारा (04-07-1580 - 28-05-1680) पुत्र गोधू, पोत्र ठाकुर (चंद्रबंसी अत्रिश, यादव, बढ़तीया कन्नौत) बहुत अमीर था। वह दिल्ली के गांव रायसीना, बाराखंबा, नरेला, मालचा और इनके आस-पास की जमीन और जंगल का मालिक था। लोहगढ़ किले का काफी इलाका भाई लक्खी राय वणजारा का बसाया हुआ था। काला अम्ब से लेकर यमुना नदी तक का सारा इलाका उसकी मलकियत व सल्तनत थी। इस सल्तनत के लिए उसने इन इलाकों में लोहगढ़ और अन्य किले और गढीयां बनाई हुई थीं। भाई लक्खी राय वणजारा के पास तीन लाख के करीब घोड़े, ऊंट, हाथी, खच्चर आदि थे। इतनी ही संख्या में लोग उसके यहां काम करते थे। वह घोड़े, ऊंट, हाथी, खच्चर, बकरियों, भेड़ों के व्यापार के साथ-साथ अनाज, दालें, नमक, मसाले, कपड़ा विशेष रूप में पश्म, रेशम, सिल्क, ऊन, इमारतसाजी का सामान पत्थर, संगमरमर, चूना आदि, जंग का सामान (हथियार, जिरह, बख्तर), घोड़ों का सामान जैसे गद्दियां, रकाब, लगाम आदि चमड़े आदि के अतिरिक्त हुंडी का बड़ा व्यापारी था। उनका व्यापार टांडा काफ़िला समरकंद और यारकंद

(मध्य एशिया) से श्रीलंका तक चलता था। केवल बारिश के दिनों में वह आराम करते थे।

भाई लक्खी राय के 8 पुत्र निगाहिया, हेम चंद, हाड़ी, हीरा, पुंडीया, बख्शी, बाला और जवाहर, 17 पोते और 24 पड़पोते थे। यह सभी गुरु गोबिंद सिंह और जरनैल बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज का अहम हिस्सा थे। भट्ट वहियों में भी जवाहर सिंह (30-08-1700), हेम सिंह (16-01-1704), निगाहीया सिंह (06-04-1709) की शहादतों का उल्लेख मिलता है।

सन् 1628 में शाहजहां मुग़ल बादशाह था। उस समय दिल्ली में कई पुराने किलों की थेह मौजूद थी। शेर शाह सूरी का सन् 1546 में बनाया किला सलीमगढ़ भी मौजूद था। परन्तु शाहजहां ने नई आबादी जिसको उसने शाहजहांनाबाद का नाम दिया, अब पुरानी दिल्ली में है। वहां एक नया व बड़ा किला बनाने का फैसला किया। इसका नक्शा उस्ताद अहमद लाहौरी ने बनाया। 12 मई, 1639 को इस किले की नींव रखी गई और भाई लक्खी राय वणजारा द्वारा लगभग 9 वर्ष में 06 अप्रैल, 1648 को यह किला तैयार करवाया गया। शाहजहां ने इसका नाम 'किला मुबारक' रखा था क्योंकि यह लाल पत्थर का बना हुआ था इस कारण इसका नाम 'लाल किला' मशहूर हो गया। 94 एकड़ में बना आगरा का किला भी लाल पत्थर का बना होने के कारण 'लाल किला' कहलाता है। वैसे आगरा का किला (जिसका पहला नाम बादलगढ़ था जो दिल्ली के किले से 150-200 साल पहले का बना हुआ था) ईंटों का किला था। परन्तु सन् 1568 से 1573 के दौरान अकबर ने बराउली, राजस्थान से लाल पत्थर मंगवाया था। इस पत्थर के साथ इसकी पुरानी दीवारों के बाहर नई दीवार का निर्माण किया था।

दिल्ली का लाल किला 254.67 एकड़ क्षेत्रफल में बना हुआ है। इसके आसपास 2.41 किलोमीटर लंबाई की दीवार बनी हुई है। इस दीवार की ऊंचाई 18 मीटर से 33 मीटर (बुर्ज वाली जगह से) है। इस किले का मुख्य दरवाजा दक्षिण में लाहौरी गेट है। इसका दूसरा मुख्य दरवाजा दिल्ली गेट है। यमुना नदी की ओर खुलने वाले गेट को पानी दरवाजा (वाटर गेट) कहते हैं। किले के अंदर एक बावड़ी भी है। यह कहा जाता है कि यह बावड़ी किले से पहले के समय की है।

दिल्ली का मालचा महल और इसके आस-पास की सारी जमीन लक्खी राय वणजारा की थी। धौला कुआं,[17] बाराखंबा, पूसा हिल, कनाट प्लेस, राष्ट्रपति भवन, पार्लियामेंट हाऊस और गुरुद्वारा रकाब गंज उसी जमीन में बने हैं। ऐसे ही लोहगढ़ और डाबर की जमीन का भी यही मालिक था। जोकि उसके बनाऐ हुए कुओं से साबित हो जाता है। कोई भी शख़्स पीने के पानी का कुआं किसी दूसरे की ज़मीन पर नहीं लगाता।

भाई लक्खी राय वणजारा का एक अन्य किला यमुना दरिया के दूसरे पार (पूर्व में) मुखलिसगढ़ से कुछ आगे गांव टांडा और रामपुर के बीच खवासपुर और हैदरपुर अली, हिन्दूवाला के निकट है। इसके थेह-खंडर आज भी मौजूद हैं। इसकी दीवारों में भी लोहगढ़ किले जैसे पत्थर लगे हुए हैं। इसके आस-पास भी लक्खी राय वणजारा का कुआं हैं। इसका अर्थ यह है कि

---

17 *नाहन से 20 किलोमीटर दूर पाउंटा सड़क पर बना हुआ धौला कुंआं भी भाई लक्खी राय वणजारा का था।

रायपुर रानी से लेकर देहरादून तक की जमीन का मालिक लक्खी राय वणजारा ही था। राजपुरा के नजदीक वणजारा सराए भी लक्खी राय की निजी जायदाद थी। यहां उन का टांडा रुकता था। भाई लक्खी शाह वणजारें के विषय में विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-23 में दी गई है।

पीर बदर-उद्-दीन (बुद्धू शाह) का योगदान और किला लोहगढ़

सढ़ौरा और लोहगढ़ किलों की तारीख़ में एक अहम नाम पीर बुद्धू शाह का भी आता है। पीर बुद्धू शाह जी के गुरु गोबिंद सिंह के साथ बहुत नजदीकी संबंध थे। उनका असली नाम सैयद बदर-उद्-दीन था। सैयद होने के कारण उन्हें 'शाह' जी और 'पीर' जी भी कहते थे। 13 जून, 1647 के दिन पैदा हुए पीर जी को मुग़ल बादशाह द्वारा जागीर मिली हुई थी। उनका निवास सढ़ौरा कस्बे में था। क्योंकि वह हजरत मुहम्मद साहिब की बेटी फ़ातिमा और हजरत अली के ख़ानदान से थे, इस कारण लोगों में उनकी बहुत मान्यता थी। जब लोग पीर जी के पैरों को हाथ लगाते थे तो वह कहा करते थे कि मुझे बदर-उद्-दीन शाह के स्थान पर बुद्धू शाह कहा करो। इतनी नम्रता थी पीर बदर-उद्-दीन में।

इनके बड़े बुजुर्ग शाह अब्दुल वाहिद क़ुतुब-उल-क़ुतुब (हजरत निज़ामुदीन के पौत्र) गुरु नानक साहिब के शार्गिद बने और उनकी बाबा फ़रीद व गुरु नानक साहिब से कई मुलाकातें हुई। गुरु नानक साहिब के हुक्म के अनुसार यह परिवार सढ़ौरा आकर बसा और गुरु नानक साहिब ने इनके साथ भगत सदना जी को भी भेजा। गुरु नानक साहिब प्रचार दौरों के दौरान स्वयं सढ़ौरा आए और प्रचार केंद्र (मंजी) स्थापित की। हजरत मोहमद साहिब के वंशज होने के कारण सन् 1669 में औरंगज़ेब भी सढ़ौरा आया और शाह अब्दुल वाहिद का मकबरा तैयार करवाया। यह ख़ानदान सूफी विचारधारा की चिश्ती शाखा से संबंध रखता था। गुरु नानक साहिब के मक्का-मदीना दौरे के पश्चात उनके पीछे-पीछे हिन्दुस्तान चला आया। इस परिवार के साथ सूफी विचारधारा की कादरी शाखा के 2 बड़े पीर बग़दाद से चलकर सढ़ौरा पहुंचकर गुरु नानक विचारधारा के मुरीद बने। औरंगज़ेब के बड़े भाई दारा शिकोह के गुरु, शेख़ चेहली (अब्दुल रहीम बनूड़ी) का भी कादरी शाखा से संबंध था और सढ़ौरा का रहने वाला था। इनके संबंध साई मियां मीर से भी थे। शेख चेहली का मकबरा थानेसर (कुरुक्षेत्र) शहर में आज भी मौजूद है।

पीर बदर-उद्-दीन जी और ठसका मीरांजी (ज़िला कुरूक्षेत्र) के पीर भीखण शाह जी का आपस में स्नेह था। वह अपने बच्चों सहित अक्सर पाउंटा साहिब जाया करते थे। पीर बदर-उद्-दीन जी का विवाह 18 वर्ष की उम्र में औरंगज़ेब के एक जरनैल सैयद ख़ान की बहन नसीरा के साथ हुआ था। पीर जी के चार बेटे अशरफ, मुहम्मद, महमूद बख्श और हुसैन थे।

पीर बदर-उद्-दीन और उसके परिवार के साथ सिक्ख इतिहास की एक अहम घटना जुड़ी है। 18 सितंबर, 1688 को जब गढ़वाल के राजा फतेह शाह ने बिना कारण गुरु गोबिंद सिंह पर हमला किया था। तब इन्होनें गुरु साहिब की सहायता के लिए 500 पठान भेजे और वह सब गुरु गोबिंद सिंह से गद्दारी करके निकल गए थे। जब इस घटना की ख़बर पीर बदर-उद्-दीन

जी को मिली तो उन्होंने अपने भाई, चारों पुत्रों और 700 साथियों सहित पाउंटा साहिब पहुंच कर गुरु साहिब के सहयोगी बनकर मैदाने जंग में शामिल हुए। इस लड़ाई में उनके दो पुत्र अशरफ, मुहम्मद और भाई भूरे शाह शहीद हो गए थे। भाई काहन सिंह नाभा द्वारा लिखे गये 'महान कोश' के पृष्ठ 251 पर दर्शाया गया है। गुरु गोबिंद सिंह जब सढ़ौरा पहुंचे थे तो पीर बुद्धु शाह ने रोम (इटली) के ख़लीफ़ा मोहम्मद चौथा द्वारा गुरु नानक साहिब की गद्दी के लिए भिजवाई गई तलवार भेंट की थी। रोम में मौजूद ऐतिहासिक स्त्रोतों से पता चलता है कि गुरु नानक साहिब रोम गए थे। वहां के धार्मिक और राजनीतिक नेताओं ने गुरु नानक साहिब की विचारधारा को नमन किया था। यह तलवार इस बात का प्रतीक है कि 200 वर्ष बीत जाने के पश्चात भी रोमन साम्राज्य के ख़लीफ़ा मोहम्मद चौथा गुरु नानक विचारधारा की अधीनगी मानते थे। पीर बुद्धु शाह जी की गुरु गोबिंद सिंह के साथ नज़दीकियों के कारण ही हाकिम उस्मान ख़ान ने पीर जी को जंगल में ले जाकर 21 मार्च, 1704 को कत्ल कर दिया था।

5 दिसंबर, 1709 के दिन जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सढ़ौरा पर हमला किया, तब पीर बुद्धू शाह के परिवार और साथियों ने उसकी पूरी मदद की थी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सढ़ौरा जीतने के पश्चात उस्मान ख़ान को गिरफ्तार कर पीर बुद्धू शाह के कत्ल करने व अन्य लोगों पर जुल्म करने के कारण सरेआम लोगों के सामने मौत की सजा दी थी। उस्मान ख़ान पर यह भी आरोप था कि वह ग़ैर-मुसलमानों से नफरत करता था और इसके अतिरिक्त पीर बुद्धू शाह का भतीजा भीखण सिंह, जरनैल बंदा सिंह बहादुर का प्रमुख जरनैल था। जिसने चप्पड़-चिड़ी की लड़ाई में अहम भूमिका निभाई थी। इस विषय बारे विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-21 में दी गई है।

मुखलिसगढ़ और लोहगढ़

इतिहासकारों ने यह लिखा है कि बंदा सिंह बहादुर ने मुखलिसगढ़ के किले पर कब्ज़ा करके इसका नाम लोहगढ़ रख दिया था।[18] डॉ. बलवंत सिंह[19] के अनुसार जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मुखलिसपुर के नज़दीक किला बनवाया था और इसका नाम लोहगढ़ रख दिया था। लोहगढ़ की पहली लड़ाई दिसंबर, 1710 में हुई थी। उस समय बादशाह बहादुर शाह इस लड़ाई से बहुत परेशान हो गया था। क्योंकि जरनैल बंदा सिंह बहादुर उसकी पकड़ में नहीं आ रहे थे। वह अपने दिमागी संतुलन को ठीक करने के लिए मुखलिसपुर में ठहरा था। हिमाचल प्रदेश के रेवेन्यू रिकॉर्ड के अनुसार लोहगढ़ की 3000 एकड़ ज़मीन है। लोहगढ़ की पहाड़ियों की तलहटी में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने ज़मीन खरीदी है, जो मुखलिसपुर से 35 किलोमीटर दूर है। इस तरह शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का प्रचार करना कि लोहगढ़ किले का पुराना नाम मुखलिसपुर था, जिसको बंदा सिंह बहादुर ने कब्ज़ा करके लोहगढ़ रख दिया, बिल्कुल ग़लत है।

---

18 *डॉ. गंडा सिंहः लाईफ आफ बंदा सिंह बहादुर, पृष्ठ 55-56, डॉ. हरजिंदर सिंह 'दलगीर' ग्रेट सिक्ख जनरल बंदा सिंह बहादुर, पृष्ठ 57, डॉ. जे.एस.ग्रेवालः द सिक्खज़ ऑफ द पंजाब, पृष्ठ 83, खुशवंत सिंहः ए हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज़, पृष्ठ 103, डॉ. हरी राम गुप्ताः हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज़, पृष्ठ 11

19 *परशियन सोरसिज ऑन बंदा सिंह बहादुर, पृष्ठ 36

उनका यह प्रचार भी सही नही है कि मुखलिसपुर का निर्माण कार्य शेरशाह सूरी ने आरंभ करवाया था। जिसको बीच में ही अधूरा छोड़ दिया था। बाद में इसको शाहजहां के जरनैल मुख्लिस ख़ां ने पूरा किया। वैसे मुखलिसपुर नाम का कोई भी गांव, लोहगढ़ में या इसके आसपास नहीं है। हमारे पास अंग्रेज़ जियोग्राफर् और इतिहासकार मेजर जेमस रेनल् (1742-1830) के नक्शे मौजूद हैं (उसे 'फादर ऑफ ज्योग्राफी' माना जाता है)। उसके सन् 1782 के 'मैमोइर ऑफ ए मेप ऑफ हिन्दोस्तान' में किसी मुखलिसगढ़ या लोहगढ़ का उल्लेख तक भी नहीं है। मुखलिसगढ़ का किला बादशाह की शिकारगाह, आरामगाह पहाड़ी इलाके का रमणीक रंगमहल है। यह लोहगढ़ किले से 35 किलोमीटर की दूरी पर है और यमुना नदी के दूसरी ओर है।

मुखलिसपुर को अली मरदान ख़ान ने डिजाईन करके बनवाया था। यह शाहजहां का इंजीनियर था। इन्हें हाइर्डालिक का बहुत ज्ञान था।उन्होनें दिल्ली-यमुना नहर, जो रंगमहल के नज़दीक पड़ती हैं को डिजाईन किया था। मुग़ल बादशाह विशेषकर शाहजहां इस स्थान को शिकार के लिए इस्तेमाल करते थे।[20] इस किलानुमा महल के अंदरूनी प्रमाणों से साफ पता चलता है कि यह जगह किसी हालत में भी किला नही थी और राजमहल की तरह इसमें बेमिसाल सुविधाएं उपलब्ध नही थी। इस इलाके को बादशाही बाग और ईमारत को 'रंग महल' के नाम से भी याद किया जाता है।

यह हथनी कुंड बैराज के निकट यमुना नदी के किनारे पर है। इस बादशाही बाग का कुल क्षेत्रफल 45 एकड़ है। इसके बीच वाले महल की ईमारत लगभग डेढ़ एकड़ में बनी हुई है। यह पहाड़ियों के तलहटी में होने के कारण बहुत ही खूबसूरत जगह है। बीते समय (2017) में A.S.I ने दो करोड़ रुपए खर्च कर इस रंग महल की मुरम्मत करवाई है। लोहगढ़ और मुखलिसगढ़ की दूरी और स्थान को दर्शाते हुए नक्शे और तस्वीरें ऐपीलोग (पन्ना नंबर 292) में दिए गए हैं।

बाबा राम राय, बीबी रूप कौर व गुरु हर किशन साहिब का जन्म

गुरु हर राय साहिब ने 3 मार्च, 1644 के दिन गुरगद्दी संभाली और इसके एक साल पश्चात 1645 तक वह कीरतपुर साहिब में रहे। उधर कहिलूर (बिलासपुर) रियासत का राजा कल्याण चंद, रियासत सुकेत के हमले के दौरान 12 फरवरी, 1637 को हुई लड़ाई में मारा गया। राजा कल्याण चंद के पुत्र ने इसका बदला लेने के लिए सुकेत पर हमला कर दिया। बाद में उसने शाहजहां को टैक्स देना भी बंद कर दिया। इस पर 1055 हिजरी सन् 1645 ई. में मुग़ल बादशाह शाहजहां के हुक्म पर मिर्जा शाहरुख के पुत्र नजाबत ख़ान ने बिलासपुर पर हमला कर दिया। इस पर कब्ज़ा करके तारा चंद को गिरफ्तार कर लिया। इसके पश्चात गुरु हर राय

---

20 *फरवरी, 1711 में बादशाह बहादुर शाह मुखलिसपुर में ठहरा था और निकट के जंगल में शिकार किया था। इसका उल्लेख पंचोली जगजीवन दास ने जयपुर के राजा जय सिंह सवाई को 4 फरवरी, 1711 के दिन लिखे ख़त में किया है।बलवंत सिंह ढिल्लों, राजस्थानी डॉक्यूमेंटस ऑन बंदा सिंह बहादुर, पृष्ठ 88 व 194 ढिल्लों ने अंग्रेजी अनुवाद में यह ख़त 'वकील रिपोर्ट' होने के कारण, ख़त लिखने वाले का नाम दीवान भिखारी दास लिख दिया है।

साहिब थापल में (तब सिरमौर रियासत, अब हरियाणा का एक गांव) चले गए, जहां उनके पास 2200 घुड़सवार थे। जिनकी चारागाह के लिए थापल और इसके आसपास का जंगल बहुत मुनासिब जगह था।यह बात 'दबिस्तान-ऐ-मज़ाहब' का लेखक जुल्फिकार अरदसतानी ने पृष्ठ 282 पर लिखी। अरदसतानी गुरु हर गोबिंद साहिब और गुरु हर राय साहिब को अकसर मिलता रहता था। उनका गुरु साहिब के साथ पत्राचार भी चलता रहता था। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज़ एंड देयर रिलीजन, भाग प्रथम, पृष्ठ 189, डॉ. कृपाल सिंह व खड़क सिंह द्वारा संपादित इस बात की पुष्ठि करती है। डॉ. हरबंस लाल अग्निहोत्री और चांद राम अग्निहोत्री की पुस्तक 'गैदरिंग स्टौर्म, गुरु हर राय साहिब' पृष्ठ 54 के अनुसार गुरु हर किशन साहिब का जन्म गांव थापल में हुआ था। डॉ. अग्निहोत्री हरी राम गुप्ता हिस्ट्री ऑफ द सिक्ख गुरुज़ का हवाला देते हुए लिखते है कि गुरु हर राय साहिब 13 वर्ष नाहन की पहाड़ियों के बीच सिरमौर रियासत के थापल गांव में रहे थे।बहुत से लेखकों ने भी गुरु हर राय साहिब के थापल में 13 वर्ष रहने का उल्लेख किया है।

इन्दु भूषण बैनर्जी (ऐवलूशन ऑफ द ख़ालसा, जिल्द दूसरी, पृष्ठ 48), डॉ. गंडा सिंह (पुस्तक 'माख़ज़ि तवारीखे सिक्ख', पृष्ठ 45), खुशवंत सिंह (हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज़, जिल्द प्रथम, पृष्ठ 64), कनिंघम (ए हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज़, पृष्ठ 55) ने भी गुरु हर राय साहिब के थापल में 13 वर्ष रहने का उल्लेख किया है। वैसे पुरानी सिरमौर रियासत में आज भी थापल नाम के दो गांव हैं।इसलिए ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के अनुसार कोई शंका नहीं रह जाती कि गुरु हर राय साहिब सन् 1645 से 1658 तक थापल गांव सिरमौर रियासत के थापल गांव में रहे थे। इस कारण गुरु हर राय साहिब की संताने राम राय (24 फरवरी, 1646), बीबी रूप कौर (9 अप्रैल, 1649) और गुरु हर किशन साहिब (17 जुलाई, 1652) का जन्म थापल सिरमौर रियासत, किला लोहगढ़ का ही है।

वास्तव में कुछ लेखकों के पास सन् 1645 से 1658 सन तक की तवारीख के साथ सबंधित सामग्री न होने के कारण व थापल गांव का पता न लग पाने के कारण उन्होंने बिना खोज के गुरु हर राय साहिब की संतानों का जन्म कीरतपुर में ही हुआ लिख दिया। कई लेखकों ने गुरु हर किशन का जन्म भी सन् 1656 में लिख दिया था। गुरु हर राय साहिब की थापल से कीरतपुर साहिब वापसी 26 वर्ष की उम्र में हुई और यहां से वह पंजाब में अलग-अलग स्थानों पर धर्म प्रचार के लिए जाते रहे वह सन् 1659-60 के कुछ महीने कश्मीर भ्रमण पर भी रहे। सन् 1660-61 के समय वह कीरतपुर में ही रहे। कीरतपुर आकर आप ने एक किला बनवाया था। जो अब अस्तिव में नही है। इसका उल्लेख गणेशा सिंह बेदी द्वारा लिखित 'शशीबंस बिनोद' में मिलता है। स्वरूप सिंह कोशिश संपादित ज्ञानी गरजा सिंह और प्यारा सिंह पदम द्वारा 'गुरु कीआं साखीयां' पुस्तक में साखी नंबर 7 से 16 तक और साखी 19 और 21 आदि में भी गुरु हर राय साहिब का उल्लेख आता है। कीरतपुर में गुरु साहिब ने एक खूबसूरत बाग भी बनवाया था। जिसमें तरह-तरह के फूल और जड़ी-बूटियां लगवाई थी। मान्यता है कि आप जी हिकमत और

दवाइयों के बारे में भी जानकारी रखते थे। जोकि आप जी ने थापल रहते हासिल की थी। कई वैद्य भी आपके पास कीरतपुर में रहने लगे थे, जो जड़ी बूटियों के माहिर थे। आपके बाग में पैदा हुई जड़ी-बूटी के प्रयोग से बादशाह शाहजहां के बड़े पुत्र दारा शिकोह की एक पुरानी बीमारी ठीक हुई थी।

सन् 1658 में कीरतपुर साहिब वापिस जाने के पश्चात गुरु हर राय साहिब करतारपुर (जालंधर), गोबिंदवाल, डरोली भाई की (ज़िला मोगा), थानेसर (कुरूक्षेत्र) और कई अन्य स्थानों पर गए थे। इन प्रचार भ्रमण दौरान वह माझा, दोआबा और मालवा के बहुत से गांवों में गए। इनमें से अधिकतर स्थानों पर उनकी याद में गुरुद्वारे सुशोभित हैं।

गुरु हर राय साहिब करतारपुर (जालंधर) कई बार गए थे। करतारपुर में गंगसर वाले कुएं और सरोवर को आपने ही पक्का करवाया था। करतारपुर नगर गुरु अर्जुन साहिब ने बसाया था। यह सारा नगर सिक्खों की जायदाद थी। करतारपुर जाने के समय आप फगवाड़ा, पुआदड़ा, नूरमहल, नकोदर, सुलतानपुर और इस रास्ते के कई गांवों में गए और संगतों को दर्शन दिए। इस पुरानी जरनैली सड़क पर कई गांवों में गुरुद्वारे बने हुए हैं। दोआबे के इस इलाके के अतिरिक्त आप कई बार मालवे में भी गए। मालवे में डरोली (अब डरोली भाई) आप के पिता की मौसी का गांव था। आपके पिता बाबा गुरदित्ता जी का जन्म इसी गांव में सन 1608 में हुआ था। डरोली के अतिरिक्त आप भाई रुपा के गांव, नथाना व गांव महराज में भी गए। इसके अतिरिक्त मोगा और जीरा में भी आपने संगतों को दर्शन दिए। जीरा से आप हरि के पत्तन होते हुए तरनतारन और गोबिंदवाल गए थे। गोबिंदवाल में तो आप अनेक बार गए और वहां कई सप्ताह तक रुकते भी थे। आप पंजाब के अन्य इलाकों के अतिरिक्त जम्मू और कश्मीर में भी गए थे। गुरु साहिब ने दौलोवाल में एक किला बनवाया था। रायपुर सैनी, मलेड़, बड़ूवाल, शाहपुर और चनौली में भी अक्सर जाते रहते थे। चनौली में आप ने अपने घोड़ों के लिए एक बड़ा अस्तबल भी बनाया हुआ था।

गुरु हर किशन साहिब सन् 1663 में कीरतपुर से दिल्ली जाते हुए ख़ालसा राजधानी के इलाकों में प्रचार करते हुए सन् 1664 को दिल्ली पहुंचे थे। गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने सन् 1665 में चक्क नानकी की स्थापना की जो आजकल आनंदपुर साहिब का हिस्सा है। उन्होंने 4 वर्ष सन् 1666 से 1670 उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल और असम में बिताए और गुरु नानक साहिब के मिशन का प्रचार किया। इस दौरान भाई लक्खी शाह वणजारा और उनके पुत्रों ने 'लोहगढ़ किले' के निर्माण का कार्य देखा।

गुरु तेग़ बहादुर साहिब को सन् 1675 में दिल्ली के चांदनी चौंक में शहीद कर दिया गया। गुरु गोबिंद सिंह, गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहादत के पश्चात दस साल तक चक्क नानकी रहे थे। गुरु जी ने सन् 1688 में नाहन रियासत का भ्रमण किया और यहां पाउंटा साहिब की स्थापना की। इस समय के दौरान उन्होंने 'लोहगढ़' के निर्माण को अंतिम रुप दिया। सन् 1680 में भाई लक्खी शाह का देहांत हो गया था। परन्तु उनके पुत्र, गुरु साहिबों के साथ रहे और

उन्होंने गुरु साहिबों के नेतृत्व में सभी लड़ाइयों में शूरवीरता से भाग लिया। नवंबर, 1688 में गुरु गोबिंद सिंह वापिस 'चक्क नानकी' लौट आए और यहां भी बहुत सारे किलों का निर्माण करवाया। चक्क नानकी में लोहगढ़, आनंदगढ़, केसगढ़ साहिब, सहोटा में फतेहगढ़, अगमपुरा में अगमगढ़, होलगढ़, तारापुर में तारागढ़ और गुरु का लाहौर व बसंतगढ़ इत्यादि किलों का निर्माण शामिल है।

अध्याय 2

लोहगढ़ किले की बनावट और भौगोलिक स्थिति

सन् 1525 में बाबर का कुछ मुट्ठी भर मुग़ल सैनिक लेकर भारतवर्ष पर हमला करके ग़ुलाम बना लेना यह दर्शाता है कि भारत में रहने वाले लोगों के पास इस तरह के हमले का मुहतोड़ जवाब देने की कोई तैयारी नहीं थी। यही कारण रहा कि भारत वर्ष के लोगों ने सैंकड़ों साल ग़ुलामी सहन की और मानसिक तौर पर पीढ़ी दर पीढ़ी यह गुलामी सहन करते रहे। 18वीं सदी तक पहुंचते-पहुंचते मुग़ल दुनिया के सबसे बड़े व् शक्तिशाली शासक बन चुके थे। मुग़लों को जंग के लिए ललकारना और उनका पतन करना भारत में किसी भी ग़ैर मुस्लिम राजा के लिए संभव नही था। मुग़लों की सेना इतनी विशाल थी कि विश्व का अन्य कोई साम्राज्य मुग़ल सेना से टकराव के लिए सक्षम नहीं था। मुग़ल सल्तनत के पास विशाल सेना के साथ दुनिया की एक चौथाई दौलत भी थी। जिसके कारण मुग़ल अपार शक्तिशाली बन गए।

गुरु नानक साहिब के आगमन उपरांत हतोत्साहित भारत की आबादी में नया जोश और उम्मीद पैदा हो गई। गुरु नानक साहिब ने भारतवासियों को मानसिक गुलामी से बचाने के लिए योजनाबद्ध तरीके से कार्य आरंभ किया। बात केवल किला निर्माण तक ही सीमित नही थी बल्कि ऐसी फ़ौज के गठन करने की थी जो शारीरिक और मानसिक स्तर पर पूर्ण रूप से जंग के लिए तैयार हो। सिक्ख सैन्य क्रांति ने युद्ध को एक नई परिभाषा दी। जिसके तहत सैनिक बनने से पहले संत होना आवश्यक था। जो एक परम् पिता परमात्मा और उसकी अनंत शक्तियों में विश्वास रखता हो। गुरु नानक साहिब के द्वारा एक नए संकल्प संत-सिपाही की संरचना हुई। जिसमें हर सिक्ख के अंदर शूरवीरता के साथ-साथ नैतिकता और धर्म के गुणों को भी अपनाया गया हो।

मुग़लों की कुल फ़ौज का आकलन करना मुश्किल है परन्तु इतिहासकार लिखतें है कि उनकी 18वीं सदी में लगभग 7 लाख के करीब मुग़ल फ़ौज थी। उनकी फ़ौज कई भागों में विभाजित थी। जिसमें घुड़सवार, पैदल सैनिक, तोपें व् बंदूकों के दल, तोपची, शुतारनाल (ऊंटों की पीठ पर बंदूकों का दल), गजनाल व् हथनाल (हाथी की पीठ पर बंदूकों का दल) तीरअंदाज इत्यादि थे। इस फ़ौज के बल पर वह भारतवर्ष[21] के इलाके को नियंत्रण में रखते थे।

यूबेक, रोम और मराठों के विरुद्ध मुग़लों को युद्ध में कम सफलता प्राप्त हुई क्योंकि युद्धों का क्षेत्र पहाड़ी घाटियों में था। इस बात से यह साफ हो जाता है कि उबड़-खाबड़ और पहाड़ी इलाकों में मुग़लों को युद्ध करने में कठिनाई आती थी। मुग़लों की युद्ध रणनीति का अध्ययन करने

---

21 *पुराने भारतवर्ष में मौजूदा पाकिस्तान, बाग्लादेश भी शामिल था। पुराने भारतवर्ष की सीमाएं अफगानिस्तान तक फैली हुई थी और इस तरह वह मौजूदा भारत से लगभग डेढ़ गुना बड़ा था।

से पता चलता है कि मैदानी इलाकों में मुग़लों को मात देना बहुत मुश्किल कार्य था। न्यूनतम बल का प्रयोग करना और कूटनीति का अधिकतम प्रयोग करना मुग़ल युद्ध रणनीति का आधार था। जिससे अनेक युद्धों में मुग़लों को सफलता मिली। मुग़लों के जासूसों द्वारा युद्ध क्षेत्र में अपने दुश्मन के विरुद्ध झूठी और विरोधाभास ख़बरें फैलाई जाती थी। जिससे विरोधियों का मनोबल गिराया जाता था। मुग़ल शासक बड़ी फ़ौज के साथ दुश्मन की घेराबंदी करते थे और अपनी बड़ी फ़ौज का प्रदर्शन कर दुश्मन का मनोबल गिराते थे। मुग़ल, विरोधियों की रसद् व् आपूर्ति पर भी रोक लगा देते थे। ताकि भूख-प्यास से दुश्मन आत्मसमर्पण करे। अधिकतर मुग़ल बादशाह लड़ाई की योजना अपनी राजधानी में तैयार करते थे और यह योजना मैदानी जंग में सख्ती से लागू की जाती थी। उनकी तकनीक थी घुड़सवार फ़ौज विरोधी गुट के किले के पिछले भाग से घेराबंदी करती थी। इसके अतिरिक्त मुग़ल, विरोधी गुट में काली भेड़ों-गद्दारों को ढूंढ़कर मोटे इनाम देती थी ताकि विरोधी गुट से संबंधित अधिक से अधिक जानकारी एकत्रित की जा सके।

किला लोहगढ़ के निर्माण से पहले सिक्ख गुरु साहिबान द्वारा मुग़लों की युद्ध तकनीक, रणनीति, संचालन, प्रशिक्षण और रसद का उचित अध्ययन किया गया। जैसे कि लोहगढ़ के नाम से विदित है कि लोहे के गढ़ की तैयारी आरंभ करना। एक ऐसे किले का निर्माण किया गया जिसे मुग़ल फ़ौज अपनी ताकत या षड़यंत्र से भेद ना सके।उसके पश्चात किला लोहगढ़ बनाने के लिए स्थान/क्षेत्र निर्धारित किया गया। भौगौलिक दृष्टि से देखा जाये तो किला लोहगढ़ पानीपत से लगभग 125 किलोमीटर दूरी पर है। ऐतिहासिक स्त्रोतों का अध्ययन करने से पता चलता है कि पानीपत में 3 बड़ी जंग लड़ी गई। जिनका निर्णय कुछ ही दिनों में आ गया था और जंग जीतने वाला भारत का शासक बन बैठा था। यदि पानीपत को भूगोलिक दृष्टिकोण से देखा जाये तो पता चलता है कि यह सीधा मैदानी इलाका है जिस पर बहुत कम वनस्पति व जंगल मौजूद थे।इसके विपरीत लोहगढ़ किले का क्षेत्र यमुना से घग्गर नदी के बीच का क्षेत्र होने के कारण भारी वनस्पतियों व जंगल से घिरा हुआ था। ज़मीन भी ऊबड़-खाबड़ थी। शिवालिक पहाड़ियों में से इस क्षेत्र में कई नदियां-नाले निकल कर मैदानी क्षेत्र की ओर बहते थे। किसी भी युद्ध को लंबा चलाने के लिए आदर्श क्षेत्र था। हालांकि फारसी के स्त्रोतों का अध्ययन करने से पता चलता है कि सन् 1710 में सिक्ख फ़ौज और मुग़ल फ़ौज के बीच लड़ाई कई दिनों तक पानीपत के इलाके में लड़ी गई। इस लड़ाई में काफी मुग़ल सैनिक मारे गए और दिल्ली का सूबेदार दुम दबाकर पानीपत से भाग खड़ा हुआ।

लोहगढ़ की किलाबंदी सुरक्षा के मद्देनज़र विशाल क्षेत्रफल में मुग़ल सल्तनत की विशाल फ़ौज का मुकाबला करने के लिए की गई थी। वास्तव में लोहगढ़ सिरमौर की पुरानी रियासत का एक हिस्सा था। अब यह हिमाचल प्रदेश के ज़िला सिरमौर व हरियाणा के ज़िला यमुनानगर में शामिल है। लोहगढ़ किले का क्षेत्रफल 7000 एकड़ और इसका घेरा 50 किलोमीटर के लगभग में फैला हुआ है। इस किले में अग्रिम 52 किले थे जो कि मौजूदा करनाल ज़िले से पंचकूला ज़िले

तक फैले हुए थे। दुनिया के इतिहास में कहीं भी ऐसी किलेबंदी नहीं देखी गई।

मुग़ल शासकों की रणनीति थी कि, विरोधी गुट की किलेबंदी कर, आसपास रहने वाली आबादीयों को बर्बाद कर देना ताकि किले तक किसी प्रकार की रसद इत्यादि ना पहुंच सके। परन्तु लोहगढ़ किले के इर्द-गिर्द 52 और छोटे किले तैयार किये गए। इन किलों द्वारा ना केवल आम आबादी की हिफ़ाजत हुई बल्कि यह किले लोहगढ़ किले के सामने ढ़ाल बनकर खड़े रहे और यहीं से अग्रिम युद्ध के क्षेत्र में सिक्ख फ़ौजें अपनी तैयारी कर मुग़ल फ़ौज पर टूट पड़ी।

पुरातत्व सर्वेक्षण से लोहगढ़ किले की समय और गति के अध्ययन से पता चलता है कि इतने विशाल किले के निर्माण और मुकम्मल होने में कई वर्ष लगे। लोहगढ़ ट्रस्ट यमुनानगर ने इससे सबंधित समय और गति के प्रमाण पुरातात्विकविदों से एकत्रित किए है।[22]

इस किले के क्षेत्रफल का कुछ हिस्सा लोहगढ़, हरिपुर, झील, महतावाली, पलोड़ी, सुकरानो, महारोंवाला गांव हिमाचल प्रदेश में है और कुछ क्षेत्रफल भगवानपुर, नथौरी, धनौरा, नागली और मोहिदीनपुर गांव हरियाणा में है।संपूर्ण रूप में यह इलाका एक ओर यमुना नदी व दूसरी ओर मार्कण्डेय दरिया के बीच स्थित है। इसकी किलाबंदी वाली पहाड़ियों को डाबर की पहाड़ियां कहा जाता है। ‘लोहगढ़ ट्रस्ट’ ने इसकी खोज करने के लिए, दिल्ली की मशहूर कंपनी की सहायता से इस क्षेत्र को 32 सैक्टरों में विभाजित किया। यह कई दर्जन छोटी बड़ी पहाड़ियों में फैला हुआ था। किला बनाने वाले विशेषज्ञों ने लोहगढ़ के मैदानी इलाकों में से दुश्मन की फ़ौज का आक्रमण रोकने के लिए लाडवा और इंद्री (कुरूक्षेत्र और करनाल ज़िलों) में जबरदस्त हिफाज़ती इंतज़ाम किये हुए थे। पुरातात्विक महकमों के सर्वेक्षण के पश्चात व समकालीन फारसी स्त्रोतों की जांच पड़ताल के पश्चात यह स्पष्ट हो गया है कि यह किलेबंदी, चौंकियां और मोर्चाबंदी शिवालिक पहाड़ियों में जगह-जगह पर (आज के यमुनानगर ज़िला, अंबाला ज़िला के टोका क्षेत्र में और पंचकूला ज़िले के नाडा साहिब के नज़दीक) बनी हुई थी। इन इलाकों में आज भी मसुमपुर और भवाना के किले मौजूद हैं।

इस क्षेत्र में सिक्खों और बंदा सिंह बहादुर की ओर से आखिरी किलेबंदी पिंजौर के नज़दीक मिली है।[23]तंग रास्ते बनाने के लिए पहाड़ियों को इस तरीके से काटा गया था कि अगर दुश्मन की फ़ौज किलेबंदी वाली जगह तक पहुंच भी जाये तो वह तुरंत मोर्चों तक न पहुंच सके। इन तंग रास्तों की योजना इस तरीके से की गई थी कि एक बार में सिर्फ एक फ़ौजी ही इन रास्तों में से गुजर सकता था। इस तरह लोहगढ़ की ओर बढ़ती दुश्मन फ़ौज का बहुत भारी जान-माल का नुक्सान किया जा सकता था। यह किला गुरु साहिबानों के नेतृत्व में लक्खी राय वणजारे ने सिक्खों के सहयोग से बनवाया था ना कि किसी मुग़ल बादशाह ने। लोहगढ़ किला बनवाने में बड़ा

22 *इंडियन ट्रस्ट फार रुरल् हेरिटेज एंड डिवैल्पमैंट नई दिल्ली सन् 2016-2017 द्वारा तैयार रिपोर्ट, पृष्ठ 8।

23 *बंदा सिंह बहादुर ने मुगल शासकों पर जालंधर दुआब से लेकर बरेली तक हमले किये हैं। पृष्ठ 169 मुजफ्फर आलम द्वारा मुग़ल उत्तरी भारत में साम्राज्य का संकट ISBN13:978-0-19-807741-6 & ISBN 10: 0 -19-80741-6 और पिंजौर का इलाका भी इस क्षेत्र के बीच में आता है।

सहयोग उन इलाकों में रहने वाले लोगों ने दिया। विशेषकर वणजारा और सिकलीगरों ने, क्योंकि वह इस इलाके की भूगोलिक स्थिति को अच्छी तरह समझते थे और वह अच्छी व मज़बूत किलेबंदी कर सकते थे। यह दुनिया का सबसे विशाल किला था। इसकी किलेबंदी प्रभदुर्ग से थी। घने जंगल को 'वणदुर्ग' कहा जाता था। पहाड़ को 'प्रभदुर्ग' कहा जाता था। लोहगढ़ किले में 'वणदुर्ग' और 'प्रभदुर्ग' दोनों थे। जिसका सिक्ख फ़ौजों को बहुत लाभ होता था।

किले की पहली तह समुद्र तल से 1200 फीट की ऊंचाई से शुरू होती है और आखिरी चोटी समुद्र तल से 1900 फीट की ऊंची पहाड़ी पर है। प्रत्येक पहाड़ का अपना अलग सुरक्षा इंतजाम था जो बाकी के सुरक्षा इंतज़ामों के साथ जुड़ा हुआ था। यह बेमिसाल किला दुनिया की उस समय की सबसे ताकतवर फ़ौज के साथ मुकाबला करने के लिए बनाया गया था। मुग़लों की फ़ौज के पास अति आधुनिक हथियार थे। जंगी नीति के तौर पर मुग़ल फ़ौज का पैंतरा यह होता था कि लंबे समय का घेरा डाला जाये। ताकि किले के अंदर की फ़ौजों के लिए अनाज और अन्य वस्तुओं की पहुंच रोकी जा सके और वह हथियार डालने के लिए मजबूर हो जाएं। मुग़ल फ़ौजें किले या नगर की सीमा को घेरकर छोटे-छोटे मुकाबले किया करती थी।[24] (इंडियन ट्रस्ट फॉर रुरल् हैरीटेज एंड डिवैल्पमैंट, नई दिल्ली की ओर से तैयार की गयी रिपोर्ट, पृष्ठ 8) मुग़लों की फ़ौज का घेरा बहुत घना होता था। विशेषकर जब गुरिल्ला लड़ाई हो।[25] गुरिल्ला लड़ाई के लिए गुरु साहिब द्वारा चुस्त व फुर्तीले सिक्खों की पहचान कर विशेष सेना प्रशिक्षण देकर सैनिकों को उत्साहित किया जाता था। जब भी किसी नए नगर या इमारत का निर्माण होता था तो सार्थक सुरक्षा इंतज़ामों को प्रमुख रखा जाता था। प्राचीन काल में सुरक्षा के कुदरती पहलुओं का प्रयोग भी किया जाता था। भूगोलिक सर्वेक्षण से पता चलता है कि लोहगढ़ किले के दक्षिण की ओर खेती की जाती थी और उत्तर की ओर ऊँचे पहाड़ व जंगल थे। पूर्व और पश्चिम की ओर घनी झाड़ियों का जंगल था।

किले का उत्तरी भाग

लोहगढ़ किले की भूगोलिक स्थिति ऐसी थी कि इस किले के उत्तर में घने जंगल थे। जिनकी चौड़ाई लगभग 10 से 14 किलोंमीटर के बीच है। घने जंगल खत्म होते ही शिवालिक की पहाड़ियां शुरू हो जाती हैं। इन घने जंगलों में गुप्त रास्ते बने हुए थे। जिनके द्वारा सिक्ख फ़ौजों को नाहन की ओर से जरूरी राशन और सामान की स्पलाई होती थी। इन रास्तों द्वारा जरनैल बंदा सिंह बहादुर अपनी सिक्ख फ़ौज सहित लोहगढ़ से बाहर निकल कर नाहन रियासत से होता हुआ मुग़लों के घेरे से बाहर निकल जाते थे। इस ओर घने जंगल और पहाड़ होने के कारण यह हिस्सा सिक्खों के लिए पूर्ण तौर पर सुरक्षित था।

लोहगढ़ के किले में सिक्ख फ़ौजों के पास खुला व स्वच्छ पानी का भंडार था। इस

---

24 *ibid Page 160-174.

25 *इंडिया हिंटज, मुग़ल ऐंपायर एंड इट्स डैकलाईनः ऐन इंट्रप्रटेशन आफ सोर्सिज़ आफ सोशल पावर, पृष्ठ 62

पानी का बहाव दुश्मन की ओर मोड़ा जा सकता था। किले का नक्शा/बनावट इस तरह की थी कि इसकी दो किलेबंदियां थी। एक इसकी अंदरूनी सुरक्षा व्यवस्था और दूसरी इसके आसपास पहाड़, जंगल और दरिया जो तीन ओर से एक ताकतवर दीवार की तरह थे, जो सम्पूर्ण सुरक्षा करते थे। नदी किले को दो हिस्सों में बांटती थी। परन्तु दोनों हिस्से आपस में जुड़े हुए थे। ज़रूरत पड़ने पर एक हिस्से से दूसरे हिस्से में जाया जा सकता था। किले के दोनों ओर सुरक्षा पट्टी बनी हुई थी। अगर कही से दुश्मन किले के एक हिस्से पर कब्ज़ा कर भी ले तब भी दूसरा हिस्सा फ़तेह नहीं हो सकता था। क्योंकि सिक्ख फ़ौजें ऊंची पहाड़ियों में बने मोर्चों में सुरक्षित पहुंच जाते थे।

चौकियां और मीनारें ऐसे स्थानों पर बनाई हुई थी कि सोम नदी किले के किसी भी कोने या नुक्कड़ से देखी जा सकती थी। इस कारण अगर दुश्मन की फ़ौज की संख्या सिक्ख फ़ौजों से बहुत अधिक भी हो तो भी शत्रु इस किले को जीत नही सकता था। क्योंकि इसके सुरक्षा इंतजाम बहुत ही मजबूत और ठोस थे। इसकी दीवारें भी बहुत ही मज़बूत और ठोस थी। इस कारण इसकी दीवारों पर किसी भी तोप के गोलों का प्रभाव नही होता था। किले के किनारे और पिछला हिस्सा तंग खोलों के कारण महफूज़ थे। इसका माथा ढ़लान पर था। पहाड़ियों पर तप्त खंडी घास के पौधे अंकुरित हुए थे। कंटीली झाड़ियां, कीकर के घने कांटेदार वृक्ष, थोहरें और लटेनें इस इलाके में आज भी मौजूद हैं। इन कारणों के कारण इधर से इस किले पर बड़े स्तर पर हमला करना मुमकिन नहीं था। दूसरी ओर अगर दुश्मन का घेरा लम्बा हो भी जाये तब किले में से निकलने के अनेक रास्ते थे।

एक दो वर्षों के कम समय में ही इतना विशाल किला बनाना मुमकिन नहीं था और विशेष रूप से उस जगह पर जो समुद्र तल से 1200 से 1900 फीट की ऊंचाई पर शिवालिक की पहाड़ियों में हो। सन् 1700 के समय की बात तो क्या, आज भी यह धरती घने जंगल वाली है और इसका सर्वेक्षण करवाने और नक्शा बनाने में कई महीनों का समय चाहिए।

किले का पश्चिमी भाग

शिवालिक की अति निचली धरातलें (1200 से 1900 फीट की ऊंचाई तक) में डाबर का क्षेत्र जो उधमगढ़ (काला अम्ब के निकट) से कलेसर के जंगल तक फैला हुआ था। जिसके बीच के हिस्से को किले के निर्माण के लिए चयन किया गया था। उत्तर की ओर उधमगढ़ के नजदीक मार्कण्डेय दरिया बहता है जो शिवालिक पहाड़ के बीच में से निकलता है और मैदानी इलाके की ओर बहता है।यह डाबर इलाके के बीच से तकरीबन 20 किलोंमीटर बहने के पश्चात मैदानों में निकलता है। यह नदी लगभग 30 से 40 मीटर चौड़ी है। परन्तु मैदानों में पहुंच कर इसकी चौड़ाई एक सौ पचास मीटर से भी बढ़ जाती है। ऊंचे इलाकों में इसके दोनों ओर पहाड़ियां हैं। इसी कारण सन् 1710 से 1716 के बीच बेशक मुग़ल फ़ौज ने इस इलाके को

घेरने का प्रयास किया परन्तु वह इस पर कब्ज़ा न कर सके। इन इलाकों के घने जंगलों में कांटेदार झाड़ियां हैं जो मार्कण्डेय दरिया से लोहगढ़ की सीमा तक फैली हुई हैं। मौजूदा समय में मार्कण्डेय दरिया के साथ-साथ नाहन से पाउंटा साहिब तक पक्की सड़क बनी हुई है।

किले की सीमा से मार्कण्डेय दरिया तक सिक्ख फ़ौजों ने कमजोर स्थानों पर मोर्चे स्थापित किए हुए थे। जिससे दुश्मन को आगे बढ़ने से रोका जा सके। यह घने कांटेदार जंगल छिपने के लिए भी इस्तेमाल किए जाते थे।ताकि नज़दीक से दुश्मन पर अचानक हमला किया जा सके। दुश्मन फ़ौज के लिए इन इलाकों के अंदर के प्रबंधों का अनुमान लगाना नामुमकिन था। इस इलाके में अनेकों छोटी नदियां और नाले जैसे हरिपुर खोल, लोहगढ़ खोल आदि सोम नदी में मिलते हैं।

इस इलाके में एक अन्य नदी 'बोली नदी' भी निकलती है जो डाबर की तलहटी में 10 किलोंमीटर आगे जाकर मैदानी इलाकों में बहती है। यह मौसमी नदी है जो बरसात के दिनों में भरपूर बहती है और रेत के कण नीचे लेकर जाती है। इस रेत में सुनहरी कण हैं और आज भी यमुनानगर ज़िले का प्रशासन नदी के कुछ हिस्सों को खनिज पदार्थ (रेत, बजरी, कोरसैंट) निकालने के लिए लीज़ पर देता है। इस जगह नदी का पहाड़ी हिस्सा बहुत ऊंचा था, परन्तु कही-कही कमज़ोर स्थान भी थे जिनमें से लोहगढ़ किले तक पहुंचने के लिए संकरे रास्ते बनाऐ हुए थे। इसके अतिरिक्त इन इलाकों में अन्य नदियां भी हैं जैसे कि नगली खोल जो आगे जाकर बड़ी नदी बन जाती है और बरसात के दिनों में इसमें पानी का निकास बहुत अधिक और तेज़ होता है।

किले का दक्षिण भाग

किले का दक्षिणी हिस्सा मैदानी क्षेत्र के सामने है जहां सिक्ख खेती किया करते थे और अनाज पैदा करते थे। लोहगढ़ के मैदानी क्षेत्र में पहाड़ी क्षेत्र से सोम नदी बहती है जो अंत में यमुना नदी में जा मिलती है। यह पश्चिम की ओर 15 किलोंमीटर पहाड़ के साथ होती हुई मैदानी इलाके में बहती जाती है।

इन इलाकों में खोलें और नदियां एक तरह के रास्ते भी हैं जो लोहगढ़ किले तक जाते हैं। इसके साथ लोहगढ़ की किलेबंदी और अधिक मज़बूत हो जाती है। क्योंकि सोम नदी के शिखर से पहाड़ी ढ़लानें बहुत सीधी हैं।जिस कारण दुश्मन के लिए लोहगढ़ किले तक पहुंच पाना बहुत मुश्किल हो जाता था। दक्षिण ओर से नदी के समीप लगती पहाड़ियों में जहां से दुश्मन आ सकता था को पूरी तरह से किले की दोहरी सुरक्षा के साथ मजबूत किया हुआ था। इन स्थानों पर किले की दीवारें आज भी देखी जा सकती हैं जो पहाड़ियों के इर्द-गिर्द घूमती हैं।पहाड़ियों के ऊपर वाली ढ़लानों पर आबादी के अवशेष मिले हैं। पहाड़ियों की चोटियों पर मोर्चे व् बुर्ज बने हुए हैं। इसमें सिक्खों ने सुरंगे बनाई हुई थी और बहुत सारी किलेबंदियां की हुई थी ताकि यदि दुश्मन हमला करे तो उसकी चाल रोकी जा सके और उनका अत्याधिक नुक्सान किया जा सके।

किले के ऊंचे मोर्चों से सोम नदी को देखा जा सकता है। पहाड़ी चोटियों पर कई छोटी बुर्जियां बनाई हुई थी। जिससे सिक्ख गुरिल्ला योद्धाओं को रात के समय जानकारी मिलती रहे और दुश्मन के खेमों पर हमला करने के पश्चात वह सही सलामत किले में वापिस आ सके। हर एक बुर्जी पर एक छोटे से अलाउ में कपास के बिनौले जला कर रखे जाते थे।जो रौशनी का काम करते थे। जिनकी चमक दूर से ही दिखाई देती थी।

किले के दक्षिण ओर अग्रिम भाग में 52 किलेबन्दियां थी जो इंद्री, लाडवा से शुरू होकर यमुना नदी के किनारे-किनारे मौजूदा यमुनानगर ज़िले तक फैली हुई थी। सिक्ख फ़ौजों की मुग़लों के साथ अधिकतर लड़ाईयां मैदानी इलाकों में ही हुई थी जहां किलेबन्दियां थी। यह सभी इलाके लक्खी राय ने वणजारों को दिए हुए थे जहां पर उनके परिवार भी बसे हुऐ थे। इन मोर्चों में वहां रहने वाले वणजारे डयूटी पर तैनात किये हुए थे। वास्तव में इन सभी इलाकों में जैसे कि झंडा, सालेहपुर, ठसका हसनपुर, महमूदपुर, लाहड़पुर, पंमूवाला, बहादरपुर, मिर्जापुर, ननहेड़ी, जफरपुर जाफरी, तेवर, कोटला, गढ़ी वीरान, संघोली, नया गांव, भोलीवाला, बिजौली, टोडरपुर, चूहड़पुर, उतमवाला, नाईवाला, सफीलपुर, इस्लाम नगर (सढ़ौरा), बुढ़ी, मुगलावाली, रानीपुर, रोहलेड़ी, नगली, मोहदीनपुर, सुलतानपुर, भट्ठूवाला, अलीशेर माजरा, गाडवाली, सुंदर बहादरपुर,गोड़ाबनी, संधाया, कोटड़ा खास, चाउली, गनोली, रामपुर गैंडा, धनौरा, भगवानपुर, इबराहीमपुर, मछरौली, बांसेवाला, रुकाली, मिल्क खास (बिलासपुर) जरनैल बंदा सिंह बहादुर के मोर्चे और बुर्ज थे। लोहगढ़ तक पहुंचने से पहले मुग़ल फ़ौजों को इन मोर्चों पर सख्त टक्कर मिलती थी। उनका बहुत अधिक नुक्सान होता था। जिसको मुग़ल जरनैलों, इतिहासकारों ने खुद माना था।

किले का पूर्वी भाग

लोहगढ़ किले का पूर्वी भाग पूरी तरह जंगल से ढका हुआ है। यहां अब 'नेशनल फोरेस्ट पार्क' है। यह हिमाचल प्रदेश में पड़ता है। लोहगढ़ से पाउंटा साहिब व आगे नाहन तक बहुत घना वृक्षों भरा जंगल है।जिसमें अनेकों गर्म-खंडी बूटियां और झाड़ियां थी। उन दिनों यहां जंगली जानवर रीछ, चीते, भेड़िये और शेर भी होते थे।

यह जंगल किले की दीवार से लगभग 8 किलोमीटर की दूरी तक फैला हुआ था। इस ओर से लोहगढ़ पहुंचने के लिए कई खुफिया रास्ते बनाऐ हुए थे जो सिक्ख फ़ौजों के लिए रसद-सामान पहुंचाने के लिए इस्तेमाल किए जाते थे। जब कभी दुश्मन द्वारा भारी फ़ौज का हमला होता था तो सिक्ख फ़ौजी इन रास्तों से बाहर निकल जाते थे। इन रास्तों से ही बंदा सिंह बहादुर आनंदपुर साहिब, मंडी, चम्बा, जम्मू की पहाड़ियों, पंजाब के मैदानों की ओर या पंजाब के शहरों पर हमला करने के लिए जाया करते थे। मुग़लों को कभी भी इन रास्तों का पता नहीं चला। इन रास्तों में पत्थर होने के कारण दुशमन को रास्तों का पता नहीं चलता था, और वह कब्ज़ा नही कर सकते थे। ऐसे सामने से लेकर, पीछे तक के सभी अंदर जाने के मुख्य रास्ते सुरक्षित थे

और इन रास्तों से दुश्मन की फ़ौज द्वारा घेराबंदी करना मुमकिन नही था। क्योंकि मार्कण्डेय और सोम नदियां इसमें बहती थी और दोनों ओर ऊंचे-ऊंचे पहाड़ थे। केवल दक्षिण की ओर का हिस्सा ही दुश्मन के हमले के लिए खुला था। सिक्ख फ़ौजों ने इस ओर भी पक्के मोर्चे बनाए हुए थे और मैदानी इलाकों में अनेक रुकावटें खड़ी की हुई थी।

लेखक सुरेन्द्र सिंह अपनी पुस्तक 'डिस्कवरिंग बंदा बहादुर' के पृष्ठ 242 पर लिखते हैंः

"The Sikhs had made fifty two defensive entrenchments all around the Lohgarh Fort. These entrenchments with small supporting walls were made in a manner that each supported the other. The Forces moving up the hillock to the fort were to receive deadly fire throughout their advance from every entrenchment"

लोहगढ़ किले के इस क्षेत्रफल को लोहगढ़ ट्रस्ट ने 32 सैक्टरों में बांटा है। प्रत्येक सैक्टर अलग-अलग पहाड़ी पर स्थित है। प्रत्येक सैक्टर के आसपास दोहरी सुरक्षा सीमाएं हैं। आज भी लोहगढ़ के बहुत से हिस्सों का सर्वेक्षण बाकी हैं क्योंकि इनका सर्वेक्षण जंगली पौधे काटकर ही मुमकिन है।

लोहगढ़ की बाहरी सीमा अब नही रही। मिट्टी के बहाव से नींव कमज़ोर हो गई है और दिखाई देती हैं। जो ढेड़ से दो मीटर तक चौड़ी है।जहां सीमा पहाड़ी के साथ जुड़ी हुई है वहां यह नींव दिखाई नही देती। लोहगढ़ किले की भूगोलिक स्थिति और स्थान-निरूपण (टोपोग्राफी) ऐसे हैं कि यहां दुश्मन द्वारा घेरा डालना मुमकिन नही था। इस इलाके में ऊंची पहाड़ियां और गहरी खाईयां हैं। जिनमें एक ओर कांटेदार पौधे और झाड़ियां हैं, तो दूसरी ओर सीधी ऊंची पहाड़ियां हैं। जिसके आसपास बरसाती नदियां और नाले बहते थे जो इसको बहुत सुरक्षित बना देते थे। तीसरा और चौथा हिस्सा भी सुरक्षित रहता था। मुग़ल बादशाह बहादुर शाह वर्ष 1710 में सिक्खों से यह किला हथियाने आया था परन्तु इस जगह पर पहुंच कर उसने हालात का जायज़ा लिया और किले को अजेय होने के हालात भांप कर उस पर कब्ज़ा करने की आशा छोड़ वापिस जाने के लिए मजबूर हो गया। इसके साथ ही उसके मन में मुग़ल सल्तनत के पतन का भय भी बैठ गया। जिस कारण वह मानसिक संतुलन खो बैठा और पागल अवस्था में कुछ दिनों पश्चात मर गया।

इतने बड़े किले के निर्माण के लिए बहुत बड़ी संख्या में मिस्त्री, कारीगर, प्रशिक्षित मजदूर लगे थे। साथ ही निर्माण का सामान जैसे ईंटें, अलग-अलग आकार के पत्थर, रेत, पिसा हुआ पत्थर इत्यादि बड़ी मात्रा में प्रयोग में लाए गए थे।

लोहगढ़ से मिली किलेबंदी की निशानियां

लोहगढ़ किले से संबंधित पुरातत्वी खोज जो कई महीनों तक की गई। उस दौरान

किलेबंदी और दीवारों के अनेक अवशेष मिले हैं। स्पष्ट होता है कि इतनी विशाल और मज़बूत किलेबंदी मुग़लों के साथ बड़ी लड़ाई की संभावना को देखते हुए ही बनाई गई थी। सिक्खों को पता था कि मुग़ल तोपखाने में दुनियां की सबसे बेहतरीन तोपें थी। उनको यह भी पता था कि मुग़ल फ़ौज के पास छोटी तोपें भी हैं जो कि ऊंटों पर लादी जा सकती हैं।

पलहोड़ी रिजर्व फोरेस्ट में भी किले की सुरक्षा के अवशेष मिले हैं। यह पुरातात्विक प्रमाण उत्तरी दिशा की ओर है। पिछली ओर घना जंगल है जिसको अब 'शेरजंग नेशनल पार्क' का नाम दिया गया है। जंगल में पाउंटा साहिब की ओर 10 किलोमीटर दूर पुरातात्विक अवशेष मिले हैं। गांव सुखचैन सिंह टांडा में भी पुरातात्विक प्रमाण देखे जा सकते है।

किलेबंदी की नींव सैक्टर 30 में भी मिली है जोकि लगभग 100 मीटर लंबी है। यहां किले में पक्का प्लेटफार्म देखा जा सकता है जिसका क्षेत्रफल 50 वर्ग फुट है। इस समय इसमें पत्थर की मात्र दो ही तहें हैं जो पुरातात्विक ठिकाने पर बची हुई हैं। बाकी का ढांचा मुग़लों ने गिरा दिया था। दीवारों के किनारों के टुकड़े जो लोहगढ़ में मिले हैं उनसे पता चलता है कि यह क्षेत्र रणनीति के नुक्ते से बहुत अहम है क्योंकि यह किले के बिल्कुल सामने स्थित है।इस स्थान पर दिवारों की मोटाई 3 से 4 मीटर है। यह दिवारें तराशे हुए पत्थर की बनी हैं जिन्हें कारीगरों ने छैनी और हथोड़ों से तराशा था। जोड़ बहुत मोटे हैं और ईंटों व चूने से बने हैं। पत्थरों और ईंटों को जोड़ने के लिए चूने में ईंटों की सुरखी मिलाई हुई है। इस बड़े सुरक्षित स्थान का विवरण माल महकमे के रिकार्ड में गांव नंगली के साथ जुड़ता है जहां पुरातात्विक प्रमाण मिलते है। यहां पत्थर की चिनाई की हुई है जिसमें चूना और सुरखी का प्रयोग किया हुआ है। इसका अर्ध-घेर पहाड़ी की चढ़ाई की ओर है और इस जगह पर पहुंचने के लिए दुश्मन के रास्ते में बहुत बड़ी रुकावट थी। इसी कारण सिक्ख फ़ौजों ने थोड़ी संख्या होने के बावजूद मुग़ल फ़ौजों का वीरता से मुकाबला किया था।

लोहगढ़ के सैक्टर 12 से मिली चारदिवारी ठोस किलेबंदी की हुई है तथा इसकी मोटाई भी 3 से 4 मीटर की है और यह क्षेत्र लोहगढ़ नाले के किनारे पर है। यह सामने से समतल है और इस पर खेमे लगाने के लिए बड़ा भूखंड है। इसका पिछला हिस्सा ऊंचा उठा हुआ और तंग है। इसका एक हिस्सा सीधा और ऊंचा है। इसके दोनों ओर अन्य दो नाले इनके साथ बहते हुए लोहगढ़ नाले में जा मिलते हैं। सिक्ख फ़ौजों के लिए यह बड़ा लाभदायक स्थान था। इसको मुग़ल फ़ौजों के विरूद्ध लड़ने वाले सिक्ख फ़ौजियों के लिए सप्लाई डिपू के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। इस किले का पिछला सैक्टर 4 (हरिपुर रिजर्व फौरैस्ट) बहुत ही सुरक्षित किलाबंद था।

इस किले की ढ़लान की ओर पत्थर के टिले मिले हैं। जो पहाड़ी के ऊपर वाले गांव से हरियाणा राज्य के रिजर्व फौरैसट की ओर जाने का इशारा करते हैं। इस क्षेत्र का पुरातात्विक सर्वेक्षण करने के पश्चात पहाड़ी की दोहरी किलेबंदी देखी जा सकती है। बहुत दूर तक मैदानी

इलाका देखा जा सकता है। लोहगढ़ का मैदाने जंग और कुछ किलाबंदी आसानी के साथ देखी जा सकती है। इस जगह को घेरा डालना तकरीबन नामुमकिन था। क्योंकि यहां बिल्कुल सीधी पहाड़ियां हैं और इन पहाड़ियों के समीप लगता मार्कण्डेय दरिया बह रहा है। दूसरा यहां सिक्ख फ़ौजों के लिए रसद और हथियारों की सप्लाई पिछली ओर से की जाती थी। जो नाहन के समीप है।

पत्थर की नाकेबंदी के अवशेष 'ननहेड़ी रिजर्व फौरैसट' की रेवेन्यू एस्टेट में भी मिले हैं। यह क्षेत्र लोहगढ़ किले के दक्षिण में है। भौगोलिक तौर पर यह क्षेत्र नालों और दरिया के बीच जो जाफरपुर जाफरी गांव (हरियाणा) के बीच में स्थित है। यहां कोटला के रिजर्व फौरैस्ट में पुरातत्वी प्रमाण मिलते हैं। कोटला की छोटी पहाड़ी पर और इसके समीप के क्षेत्र (हिमाचल) में पहाड़ियों पर और चौकी के स्थान पर बहुत ठोस किलेबंदी की हुई है। इससे पता चलता है कि सिक्ख सिपाहियों के लंगर का स्थान ऊंचाई पर था ताकि खाने की सामग्री व अन्य सुविधाएं दुश्मनों के हाथ न लग सके।

संघोली के माल क्षेत्र में ऊंचाइयों की ओर किलेबंदी के अनेक प्रमाण मिले हैं। जहां अलग-अलग आकार का बिना तराशा पत्थर इस्तेमाल किया गया है। जो कि इसको बहती नदी-नाले की तह से निकाल कर लाया गया हो। लोहगढ़ टीम व सिक्ख इतिहासकार डॉ. हरजिंदर सिंह ने जब लोहगढ़ का सर्वेक्षण किया तो वहां किले के सैक्टर 16 में एक किले के गुंबद और पानी के डैम दिखे। इस किलेबंदी की नींव की पुरातात्विक जगह पर पत्थर की सिर्फ दो ही तहें बची है। बाकी का निर्माण मुग़लों ने बंदा सिंह बहादुर की शहादत के बाद गिरा दिया। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बारिश के कारण यहां लगातार बहाव हो रहा है और इस बहाव के कारण ही किलेबंदी की नींवों का पता चला है। यह किलेबंदी 40 वर्ग फुट है। लोहगढ़ के सैक्टर सी-2 में घूमते हुए उन्होंने देखा कि यह सैक्टर किले के 10-12 किलोमीटर अंदर जाकर है और किले के सामने से दूर है। सिक्ख फ़ौज का सप्लाई डिपू यहां होने के संकेत मिलते हैं।

चारदीवारी के प्रवेश द्वार के टुकड़े भी लोहगढ़ के सैक्टर 17 में मिले हैं। यह क्षेत्र रणनीति पक्ष से अहम है क्योंकि यह सामने स्थित है। यहां भी चारदीवारी की मोटाई 3 से 4 मीटर है। यहां भी सही आकार की हथौड़ी के साथ तराशे हुए पत्थर की चुनाई की हुई है और मोटे-मोटे जोड़ चूने और गाढ़ी सुरखी के साथ मिलाए हुए हैं। जहां तक लोहगढ़ किले का प्रश्न है कि कोई लक्खी राय जैसा अमीर शख्स ही इसको बनवा सकता था। उनके पास लाखों कारिन्दे थे (जिन्होंने फ़ौजी प्रशिक्षण भी लिया हुआ था)। इतनी बड़ी मात्रा में पत्थर इकट्ठा करना और चूना और ईंटों का किले के निर्माण के लिए इंतजाम करना 100-200 आदमियों के बस की बात न थी। लाखों की संख्या वाला टांडा ही इतना सामान ला सकता था। दूसरा लक्खी राय वणजारा को पहले ही इमारतें बनाने का तजुर्बा था। वह दर्जनों किले, महल और अन्य इमारतें बनवा चुका था। उन्होनें लाल किला दिल्ली और मराठों के किलों के लिए सामग्री (पत्थर, चूना, इमारती

लकडी इत्यादि) सप्लाई की हुई थी। उन्होनें स्वयं के लिए दिल्ली में मालचा महल और वणजारे मुलाज़िमों के लिए बहुत सराएं और इमारतें बनवाईं थी। इस कारण गुरु हर गोबिंद साहिब और गुरु हर राय साहिब ने लोहगढ़ किले के निर्माण की सेवा मुख्य रुप से भाई लक्खी राय को ही सौंपी हुई थी।उन्होनें हजारों कारीगर और मजदूर लगा कर और सारी सामग्री उपलब्ध करवा कर इस किले का निर्माण करवाया।

ऐतिहासिक और भूगोलिक सर्वेक्षण करने पर पता चलता है कि मात्र किले का निर्माण ही नहीं बल्कि कारीगरों और मज़दूरों के लिए और पश्चात में सिक्ख फ़ौजों के लिए कपड़े, कंबल, अनाज, हाथ चक्कियां, तेल निकालने के लिए कोहलू और अन्य बहुत सारा सामान और हथियार इत्यादि की व्यवस्था करने की सेवा भी भाई लक्खी राय व उनके पुत्रों और पोत्रों ने की थी।

कुछ फारसी लेखकों ने उल्लेख किया है कि सिक्खों की ओर से किला छोड़ जाने के पश्चात मुग़ल फ़ौजियों को इस जगह से बहुत सारा देसी कपड़ा, विदेशी रेश्मी कपड़ा और अन्य कीमती सामान मिला था। निश्चित रूप से यह कीमती कपड़ा चीन और मध्य एशिया से भाई लक्खी राय के टांडों द्वारा ही लाया गया था।

अध्याय 3

लोहगढ़ किले को बनाने का कारण

गुरु नानक साहिब ने ना केवल एक परमात्मा की विचारधारा दी बल्कि सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक समानता की क्रातिकारी विचारधारा सामने रखी। इस विचारधारा को अमली जामा पहनाने के लिए कार्य आरम्भ किया। हलीमी राज का संकल्प जो गुरु नानक साहिब ने लिया उसे गुरु नानक साहिब के अगले 9 उत्तराधिकारियों ने अमली जामा पहनाने के लिए लगभग दो शताब्दियों तक शिद्दत से कार्य किया। यह कहा जाना भी गलत नहीं होगा कि गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान 35 महापुरूष हलीमी राज (मानवता के राज) की स्थापना के लिए कार्य कर रहे थे।

नई खोज से यह पता चला है कि दस के दस सिक्ख गुरु साहिबान थानेसर आए थे। बंदा सिंह बहादुर के समय इसे राजधानी का प्रवेश द्वार माना जाता था। यहां पर जिस मीनार पर ख़ालसा निशान साहिब झूलता था उसे जंग-ए-स्तून कहते थे इस बारे विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-19 व 22 में दी गई है।

ऐतिहासिक दस्तावेजों का अध्ययन करने से जानकारी मिलती है कि इस किले की बुनियाद गुरु हर गोबिंद साहिब ने ग्वालियर किले में तैयार की जब गुरु साहिब पहाड़ी राजाओं के साथ सन् 1608 से 1619 में शाही कैदी के रूप में परिवार सहित इस किले में रहे थे। यह शाही जेल सिर्फ राजाओं और अन्य अहम व्यक्तिओं को कैद करने के लिए इस्तेमाल की जाती थी। उस समय यहां देश की रियासतों के राजे, शहज़ादे, मंत्री, जमींदार और अफसर इत्यादि, जिनकी संख्या 101 थी (जो लगभग सभी हिंदू थे) इस किले में राजनीतिक कैद काट रहे थे। उनको मुग़ल बादशाह जहांगीर ने टैक्स न अदा करने या बादशाह के हुक्म को पूरी तरह लागू न करने के कारण कैद किया हुआ था। इनमें बिलासपुर (कहिलूर) का राजा कल्याण चंद व उसका पुत्र तारा चंद, हंडूर (अब नालागढ़) का राजा हरि चंद और कई अन्य रियासतों के राजे भी शामिल थे, ये बहुत परेशान और उदास रहते थे। गुरु साहिब की संगत करने के कारण सभी कैदी राजे और शहज़ादे जो गुरु साहिब के आने से पहले मानसिक पीड़ा झेल रहे थे अब चढ़दीकला में रहने लगे। ये सभी गुरु साहिब के मुरीद बन गए। गुरु साहिब ने उनको ढांढ़स बंधाया।जिससे इन्होंने राहत महसूस की। वह सभी राजे मुग़ल हकूमत की बड़ी ताकत के कारण बेबस होकर जेल में बैठे थे। इस कारण वह गुरु साहिब को कोई प्रयास करने के लिए विनती करते रहते थे। ऐसा विचार है कि गुरु साहिब ने यहीं मुग़लों का मुकाबला करने के लिए सुरक्षा (डिफेंस) व्यवस्था के एक हिस्से के तौर पर मज़बूत और अभेद्य किलों के निर्माण की एक योजना सांझा की। लोहगढ़ का किला उसी का परिणाम है।

गुरु हर गोबिंद साहिब और अन्य राजाओं की रिहाई

सन् 1618 में लाहौर के सूबेदार मुर्तजा ख़ान की मौत हो गई। इन्हीं दिनों शाहजहां के वज़ीर ख़ान (चन्योट वाला) नाम के एक अहम दरबारी के साथ सुखद संबंध बन गए। जिसने जहांगीर को गुरु साहिब को रिहा करने के लिए सिफारिश की। इसके अतिरिक्त सांई मीयां मीर और मलिका नूरजहां ने भी इस सम्बन्ध में विशेष भूमिका निभाई थी। दूसरी ओर जहांगीर अब मुतस्सबी मौलवियों से दूर हो रहा था। सरहिंद के शेख अहमद सरहन्दी जैसे कट्टरपंथिओं का प्रभाव भी कम हो गया था। इन सभी कारणों के कारण जहांगीर ने गुरु साहिब को रिहा करने के लिए हुक्म जारी कर दिए। जब रिहाई के हुक्म गुरु साहिब तक पहुंचे तो गुरु साहिब ने जहांगीर को किले में कैद पहाड़ी और दूसरे राजाओं को भी अपने साथ रिहा करने की बात कही। जहांगीर ने अप्रत्यक्ष तरीके के साथ यह बात मंजूर कर ली और किले में कैद छोटी कैदों वाले 49 हिन्दू राजाओं को भी रिहा कर दिए। गुरु साहिब का इम्तिहान लेने के लिए शर्त रखी कि लम्बी कैदों वाले 52 राजाओं में से, जितने राजे गुरु साहिब के चोले को पकड़ कर किले में से बाहर आ सकें सभी रिहा हो जाएंगे। जहांगीर सोचता था कि गुरु साहिब यह फैसला नहीं कर सकेंगे कि 52 राजाओं में से वह कौन-कौन से राजे को रिहा करवाएंगे। इस पर गुरु साहिब नें ग्वालियर जेल के दरोगा हरि राम यादव से 52 कलियों वाला चोला/शाहीवस्त्र सिलवा कर सभी राजाओं को किले से रिहा करवा लिया। गुरु साहिब के इस फैसले को देख कर जहांगीर ने उनकी अज़मत के आगे सिर झुकाया। गुरु साहिब और हिंदू राजाओं की रिहाई 26 अक्तूबर, 1619 को हुई थी।

रोहिला की लड़ाई

यह लड़ाई 28 सितंबर, 1621 को लड़ी गई थी और 03 अक्तूबर, 1621 के दिन कर्मचन्द जोकि चन्दू लाल का पुत्र था, जालंधर से मुग़ल फ़ौज लेकर भगवान दास घेरड़ के पुत्र रतन चन्द से मिलकर हमलावर हुआ और घमासान युद्ध हुआ। गुरु साहिब की तरफ से भाई नानू जी व भाई मथुरा भट्ट जी की शहीदी हुई।इस लड़ाई की जीत की ख़बर बिलासपुर के राजा कल्याण चंद को पता चली तो वह अन्य पहाड़ी राजाओं के साथ मिलकर गुरु साहिब जी के दर्शन करने आए। वास्तव में वह गुरु साहिब से मुग़लों के विरुद्ध सहायता चाहते थे। क्योंकि मुग़ल उनके भी शत्रु थे।

गुरु अर्जुन साहिब ने ब्यास दरिया के दाहिने किनारे पर गोबिंदपुरा नगर का निर्माण करवाया था। जिसे वर्तमान में श्री हरगोबिंदपुरा कहते हैं।उस जगह पर पहले रोहिला गांव का टीला था। गुरु हर गोबिंद साहिब की गिरफ्तारी के पश्चात् इस शहर पर लाहौर के दीवान चन्दू लाल व उसके रिश्तेदार भगवान दास घेरड़ ने कब्ज़ा कर लिया था। रिहाई के बाद गुरु साहिब ने 'गुरु-का-चक्क' में रहने का फैसला किया और इसके साथ ही उन्होंने गोबिंदपुरा वापिस लेने का फैसला भी किया। जब गुरु साहिब अपनी फ़ौज के साथ गांव रोहिला पहुंचे तो आगे से भगवान दास घेरड़ व उसके पुत्र रतन चन्द ने अपनी फ़ौज के साथ हमला कर दिया। इस लड़ाई में

भगवान दास घेरड़ मारा गया व उसका पुत्र रतन चन्द घायल हो गया व उनकी फ़ौज मैदान छोड़कर भाग गई।

28 मार्च, 1624 को गुरु-का-चक्क में भारी संख्या में सिक्ख एकत्रित हुए। जिसमें बिलासपुर व हंडूर के राजा शामिल थे, जिनको गुरु साहिब ने ग्वालियर किले से सन् 1619 में रिहा करवाया।

कीरतपुर के लिए ज़मीन खरीदना

नाहन (सिरमौर रियासत) का राजा भी कल्याण चंद के साथ गुरु साहिब के पास आया और उन्होंने गुरु साहिब से विनती करते हुए कहा कि वह अपना मुख्यालय उनकी रियासत में स्थापित करें। उन्होंने इस कार्य के लिए गुरु साहिब को तोहफे में ज़मीन देने का प्रस्ताव रखा। गुरु साहिब पहले से ही इन पहाड़ी क्षेत्रों में एक मजबूत डिफैंस (रक्षा) सुरक्षित स्थान बनाने की तलाश में थे। गुरु साहिब ने इनकी ज़मीन मुफ्त में लेने से मना कर दिया। 11 अप्रैल, 1624 को वापिस जाने से पहले उन्होंने गुरु साहिब को फिर विनती दोहराई। कल्याण चंद को रोहिला की लड़ाई में गुरु साहिब की जीत का विश्वास था और वह चाहता था कि अगर गुरु साहिब उसकी रियासत में आ गए तो कोई भी आसानी से उन पर हमला नहीं कर पाएगा। यदि किसी ने हमला करने की हिमाकत भी की तो उसे गुरु साहिब की मदद मिल जाएगी। गुरु साहिब 'गुरु का चक्क' से बिलासपुर जाने के लिए तैयार नहीं हुए परन्तु यह वायदा किया कि वह उनकी रियासत में एक केन्द्र जरूर बनाऐंगे।

इसके पश्चात गुरु साहिब ने कल्याण चंद के साथ उसकी रियासत के दरिया सतलुज के समीप के इलाकों का भ्रमण किया। नये नगर के लिए कल्याणपुर, भटौली और जीऊवाल गांवों के बीच कुछ ज़मीन खरीदने की पेशकश की। कल्याण चंद ने इस ज़मीन का मूल्य लेने से इंकार कर दिया। परन्तु जब गुरु साहिब ने उसे बताया कि वह (गुरु साहिब) दान की ज़मीन पर सिक्ख पंथ का नगर नहीं बसाऐंगे तो मजबूरन कल्याण चंद को इस ज़मीन की कीमत लेनी पड़ी। मौजूदा कीरतपुर में चार गांव शामिल हैं। गुरु साहिब ने कीरतपुर साहिब की जमीन पर नये नगर के निर्माण के लिए अपने पुत्र बाबा गुरदित्ता को उत्तरदायित्व दिया। बाबा गुरदित्ता ने 1 मई, 1624 को नए नगर (कीरतपुर) की नींव रखी।

सन् 1624 से 1634 तक गुरु हर गोबिंद साहिब गुरु का चक्क (अमृतसर) में ही रहे थे। उधर 28 अक्तूबर, 1627 को जहांगीर की मौत हो गई। जहांगीर का पुत्र शाहजहां भी धीरे-धीरे मुतस्सबी मुसलमानों के प्रभाव में आ गया। इसके पश्चात मुग़लों ने गुरु साहिब पर भी हमले शुरू कर दिए। सन् 1634 और 1635 में गुरु साहिब पर चार बार हमले हुए (पहला हमला 13 अप्रैल, 1634 अमृतसर, दूसरा हमला 16 से 17 दिसंबर, 1634 महराज, तीसरा हमला 26 अप्रैल, 1635 और चौथा हमला 29 अप्रैल, 1635 करतारपुर)।

इसके उपरांत गुरु हर गोबिंद साहिब कीरतपुर साहिब आ गए। कीरतपुर साहिब में रहते गुरु साहिब के पास कहलूर (बिलासपुर), हंडूर (नालागढ़), सिरमौर (नाहन) और कई अन्य

रियासतों के राजे आने लगे। इन्हीं दिनों अनेक हिंदू राजपूत राजे गुरु साहिब के पास कीरतपुर में पनाह लेने के लिए आए। यह सभी राजे मुग़लों के जुल्म से तंग आकर और विद्रोही होकर गुरु साहिब के पास शरणार्थी बनकर रह रहे थे। यहां भाई लक्खी राय वणजारा, भाई माई दास (पिता भाई मनी सिंह) और भाई हरदेव (देसा) जी (पिता भाई मक्खण शाह लुबाना) भी गुरु साहिब के पास अक्सर आते रहते थे। यहीं पर गुरु साहिब ने नाहन रियासत के पहाड़ों में लोहगढ़ किले का निर्माण करने की योजना बनाई। लक्खी शाह शिवालिक की पहाड़ियों के नीचे (काला अम्ब और यमुना नदी के बीच) की बहुत सारी ज़मीन का मालिक था। उसने गुरु साहिब को अपनी ज़मीन में किला बनाने का आग्रह किया और तभी इसके निर्माण का कार्य आरंभ हुआ।

गुरु हर राय साहिब का समय

मार्च, 1644 को गुरु हर गोबिंद साहिब ने परमधाम गमन होने से पहले गुरगद्दी अपने पोत्र गुरु हर राय साहिब को सौंप दी। गुरु हर राय साहिब सदैव ही गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ रहते थे। इसी कारण गुरु साहिब ने नाहन की पहाड़ियों में स्थापित की जाने वाली सुरक्षा व्यवस्था को अच्छी तरह समझ लिया था। सन् 1645 में जब कहलूर (बिलासपुर) रियासत के राजा तारा चंद ने शाहजहां को कर (लगान) देना बंद कर दिया तो बादशाह ने उसे गिरफ्तार कर लिया। इस दौरान गुरु हर राय साहिब कीरतपुर से नाहन रियासत के गांव थापल में आ गए थे। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि 'दबिस्ताने-मजाहब' के लेखक जुल्फकार अरदसतानी के अनुसार गुरु साहिब इस इलाके में सन् 1645 से 1658 तक लगभग 13 वर्ष रहे थे। ऐतिहासिक दस्तावेज़ों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि इस समय में इस स्थान पर किला बनाने के लिए सबसे ज्यादा कार्य हुआ था।

अध्याय 4

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लोहगढ़ तक पहुंचने का सफर

सिक्ख इतिहासकारों के अनुसार सन् 1705 में जब गुरु गोबिंद सिंह का आनंदपुर साहिब का किला छोड़ने के पश्चात सरसा नदी पर परिवार बिछड़ा, उस समय गुरु साहिब का परिवार अलग-अलग हो गया था। माता गुजरी जी और छोटे साहिबज़ादे बाबा जोरावर सिंह व बाबा फ़तेह सिंह को सरहिंद में नवाब वज़ीर ख़ान[26] ने शहीद करवा दिया था। गुरु साहिब के दोनों बड़े बेटे साहिबज़ादा अजीत सिंह व साहिबज़ादा जुझार सिंह जी चमकौर की गढ़ी में दुश्मनों के साथ युद्ध करते हुए शहीद हो गए थे। सन् 1705 में गुरु साहिब ने दयालपुरा भाई का दीना कांगड़, किला लोहगढ़ से एक पत्र औरंगज़ेब को भाई दया सिंह के हाथ भेजा जिसको सिक्ख इतिहास में 'जीत की चिट्ठी' के नाम से याद किया जाता है और बाद में यह चिट्ठी 'ज़फ़रनामा' नाम से प्रचलित हुई।

गुरु साहिब ने इस पत्र में औरंगज़ेब को फटकार लगाते हुए कहा कि 'तू बादशाह कहलवाने के योग्य नही, धर्म के नाम पर झूठी कसमें खाने वाले ऐसे फरेबी इन्सानों का कोई ईमान नही, न ही तुझे कोई ईश्वर का भय है और न ही तुझे अपने मुरशिद का कोई खौफ़'। अपने अंतरआत्मा में झांक कर देख 'क्या इस्लाम के कायदे और कुरान की आयतें यही कुछ शिक्षा देती हैं?' तुम मेरे चार बेटों व कुछ मुरीदों को शहीद करके बहुत अहम में हो परन्तु तुम्हें यह नहीं मालूम कि आज भी मेरा कुंडली-ख़ालसा मौजूद है। जो जुल्म के विरूद्ध जंग शुरू कर ज़ालिम मुग़ल सल्तनत की जड़ें उखाड़ देगा।

अभी भी समय है कि अपने किये कुकर्मों की माफी मांग और सत्य के मार्ग पर चल। मर्द वही होते हैं जो सत्य पर न्याय के लिए खुद को न्योछावर कर दें। मुझे कोई हकूमत के साथ लड़ाई करने का शौक नही परन्तु जब तक ज़ालिम हकूमत के गरीब जनता पर जुल्म न रुकें और जब जुल्म रोकने के सभी साधन खत्म हो जाएं तब हथियार उठाना जायज़ है।

जब गुरु साहिब के ऐसे वचन औरंगज़ेब ने सुने तो मन में बड़ा पश्चाताप किया और उसने गुरु साहिब जी को मिलने की तीव्र इच्छा जाहिर की। उसने गुरु साहिब के पास संदेश भेजा कि वह गुरु साहिब को मिलना चाहता है। उसने बीते समय दौरान किए गए जुल्मों के गुनाहगारों को

---

26 *मिर्ज़ा अशकारी (शीर्षक वज़ीर ख़ान) का 3000 का मनसब था। उसका गांव करनाल के निकट कुंजपुरा था। वह ईरानी मूल का था। उसके पिता और दादा भी मुग़ल शासकों की सेवा में रहे थे। एम. आथर अली, द मुग़ल नोबिलटी अंडर औरंगज़ेब पृष्ठ 249, पहले संस्करण का रीप्रिंट. आथर अली कोटस मीरात-ऐ-अफताब नुमा, पी 594

सजा देने की बात भी कही। लेकिन गुरु साहिब जी से मिलने से पहले ही औरंगज़ेब की मौत हो गई।

औरंगज़ेब की मौत के पश्चात उसके पुत्रों में राजगद्दी को लेकर विवाद पैदा हो गया।शहज़ादा मुअज़म (बहादुर शाह) ने गुरु साहिब से सहायता की मांग की। क्योंकि बहादुर शाह गुरु गोबिंद सिंह की अज़मत को अच्छी तरह से जानता था और वह अपने पिता औरंगज़ेब और गुरु साहिब की मुलाकात से संबंधित पत्र के बारे जानकारी रखता था। दूसरा कारण कि बहादुर शाह का गुरु भाई नन्द लाल 'गोया' गुरु गोबिंद सिंह का सेवक था। वह भी बहादुर शाह को गुरु गोबिंद सिंह की अज़मत संबंधी जानकारी देता रहता था। सिक्ख सैनिकों की मदद के साथ शहज़ादा मुअज़म (बहादुर शाह) विजेता रहा। 7 जून, 1707 को जौनपुर में लड़ाई हुई जिसमें शहज़ादा तारा 'आज़म' मारा गया और 'मुअज़म' जीत गया। अपना वादा पूरा करने से पहले वह आगरा चला गया। जिससे अम्बेर (जयपुर), जोधपुर और अजमेर के राजपूत राजाओं का उसके विरुद्ध चल रहे आंदोलन को दबाया जा सके। उन्होंने गुरु साहिब को साथ चलने की अपील की।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पाहुल लेना (अमृतपान करना)

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पिछले जीवन के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-24 में दी गई है। ऐतिहासिक स्त्रोत बताते है कि जरनैल बंदा सिंह, गुरु गोबिंद सिंह को फरवरी, 1694 में ऋषिकेश मिले थे। जब गुरु गोबिंद सिंह नांदेड़ पहुंचे तो उस समय बंदा सिंह बहादुर की मुलाकात गुरु साहिब के साथ फिर हुई। जहां गुरु साहिब ने बंदा सिंह बहादुर को पंजाब के वर्तमान हालातों के बारे में बताया और आगे की रणनीति तैयार कर सिक्ख कौम का जरनैल स्थापित करके पंजाब की ओर रवाना किया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का खंडे बाटे की पाहुल लेने का सब से बेहतर विवरण सरूप सिंह कोशिश द्वारा भट्ट वहियों के आधार पर लिखी पुस्तक 'गुरु दीआं साखीयां' (1790) में दिया है। इसके अतिरिक्त मिर्जा मुबारकुल्ला इरादत ख़ान की 'तारीखे इरादत ख़ान' (1714), मुहम्मद अली ख़ान अंसारी की 'तारीखे मुजफ्फरी' (1788), गुलाम हुसैन की 'स्यारुल मुताखरीन' (1836), अली-उद्-दीन मुफ्ती की 'इबारतनामा' (1894), गणेश दास वढ़ेरा की 'चारे बागे पंजाब' (1855), कन्हैया लाल की 'तारीखे पंजाब' (1881), अहमद शाह बटालिया की 'किताबे हिंद' (1885), मुहम्मद लतीफ की 'तारीखे पंजाब', एलियट एंड डाऊसन की 'हिस्ट्री ऑफ इंडिया एंड टोल्ड बाए इट्स हिस्टोरियनज़' जैसी फारसी दस्तावेजों में भी बंदा सिंह बहादुर के खंडे बाटे की पाहुल लेने का उल्लेख है। पंजाबी स्त्रोतों में केसर सिंह छिबर की 'बंसावलीनामा दस पातशाहीयां का' (1769), रत्न सिंह भंगू का 'प्राचीन पंथ प्रकाश' (1808-1841), ज्ञानी ज्ञान सिंह की 'शमशीर ख़ालसा' (1880) में भी खंडे बाटे की पाहुल का जिक्र है। करम सिंह हिस्टोरियन और ज्ञानी करतार सिंह कलासवालिया जो पहले खंडे बाटे की पाहुल के बारे लिखना

भूल गए थे ने भी अपने नए संस्करणों में बंदा सिंह बहादुर के खंडे बाटे की पाहुल लेने का उल्लेख किया था। जिन अन्य लेखकों ने भी बंदा सिंह बहादुर के पाहुल लेने का उल्लेख किया है, उनमें राधा कृष्ण (गोशा-ऐ-पंजाब), बेनी प्रसाद (गुरु गोबिंद सिंह), राजा विक्रम सिंह (गुरु गोबिंद सिंह), सुरिन्दर शर्मा (गुरु गोबिंद सिंह) व कई अन्य शामिल हैं। अंग्रेजी लेखकों में जेमज़ ब्राउन (इंडियन ट्रैक्टस), मैकगरेगर (हिस्ट्री ऑफ द सिख्ज), सी. ऐच. पेन (द सिक्खज) भी इसकी पुष्टि करते हैं। इसलिए लगभग सभी निष्पक्ष लेखक यह मानते हैं कि बंदा सिंह बहादुर ने खंडे बाटे की पाहुल ली थी।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का नांदेड़ से कूच करना

गुरु गोबिंद सिंह को 07 अक्तूबर, 1708 में नांदेंड में घोड़ों के सौदागर जमशीद ख़ान अफ़गान जो गुरु साहिब का श्रृद्धालु था व गुरु साहिब की फ़ौजों के लिए घोड़े उपलब्ध करवाने का कार्य करता था। उन्होनें आराम फरमाते समय गुरु साहिब को धोखे से खंजर से वार करके शहीद कर दिया था, शहादत से दो दिन पहले ही गुरु साहिब ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर को नांदेंड से पंजाब की तरफ कूच करने का आदेश दिया था। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में सिक्ख फ़ौज वणजारों के वेश में भाई भगवंत सिंह, कोयर सिंह, बाज़ सिंह, रण सिंह, राम सिंह, विनोद सिंह, काहन सिंह मुखी सिक्खों के साथ भंगेश्वरी[27] के टाडें सहित 04 अक्तूबर, 1708 को नांदेड़ से पंजाब की तरफ कूच किया। भगवंत सिंह भंगेश्वरी (पहला नाम भागू वणजारा) औरंगज़ेब के बड़े मनसबदारों में से एक था। जिसके पास 5000 का मनसब था।[28] गुरु साहिब ने बंदा सिंह बहादुर को गातरे की तेग़/ किरपाण, खालसे का निशान साहिब, एक नगाड़ा और पांच तीर भी दिए व संगतों के नाम एक हुक्मनामा (गुरु की चिट्ठी) जिसमें मुखी सिक्खों के नाम हुक्म था कि वह बंदा सिंह बहादुर का तन, मन, धन से साथ दें।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर महाराष्ट्र से ख़ान देश (बुरहानपुर), सागर (मध्य प्रदेश) से होते हुए मंदसौर, अजमेर, फूलेरा, चूरू, भरतपुर इत्यादि में पड़ाव करते हुए, लगभग एक वर्ष में 1500 किलोंमीटर फासला तय कर बंदा सिंह बहादुर बांगर देश में परगना खरखौदा के इलाके में पहुंचा। बंदा सिंह बहादुर ने खरखौदा परगना के गांवों के बीच वाले जंगल में जहां निकट ही दादा घोड़ा नाम का बड़ा तालाब था अपना पड़ाव किया।[29] तब यह इलाका घना जंगल होने के कारण काफी हद तक महफ़ूज़ था।

---

27 *भाई भगवंत सिंह बंगेशरी उर्फ भागू वणजारा, भाई मनी सिंह के सगे भतीजे थे और भाई बल्लू जी के वंशज थे।

28 *पृष्ठ-222, द मुग़ल नोबिलटी अंडर ओरंगज़ेब, एम. आथर अली ISBN 13ए 978.0.19.565599.5 और ISBN 10.0.19.565599.0

29 *खरखौदा, सांपला तहसील में, सांपला और सोनीपत के बीच, दिल्ली के उत्तर-पश्चिम में, दिल्ली से लगभग 40 और सोनीपत से 30 किलोमीटर दूर है।

बांगर देश (हरियाणा) पहुंचे

जरनैल बंदा सिंह बहादुर हरियाणा में नारनौल के रास्ते होते हुए भिवानी, जींद, हिसार, हांसी इत्यादि इलाकों के प्रमुख सिक्खों को ख़त भेज कर गुरु साहिब का पैगाम दिया और हथियारबंद होकर इकट्ठे होने के लिए कहा। टोहाना स्थित भाई लक्खी शाह वणजारे की बावड़ी व किले से मालवे के सिक्खों को अपने साधन इक्ठे करने की चिट्टियां लिखी गई और युद्ध की तैयारी करने को कहा गया। यह संदेश पहुंचाने का कार्य वणजारें सिक्ख कर रहे थे और हज़ारों की तादात में जींद के जंगल में सिक्ख फ़ौजे मौजूद थी। अक्तूबर, 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने दिल्ली के नजदीक सोनीपत परगना पर हमला कर दिया। यहां का फ़ौजदार सिक्ख फ़ौज की तैयारी देख कर मुकाबला करने की बजाय डरता हुआ नगर छोड़ दिल्ली को भाग गया। सिक्ख फ़ौज ने सोनीपत परगना का शाही खजाना, घोड़े और हथियार कब्ज़े में ले लिए और सोनीपत को अपने अधिकार में लेकर सिक्ख फ़ौजें अगले पड़ाव के लिए रवाना हुई। अधिकारिक तौर पर सिक्ख मौर्चा सोनीपत में स्थित खण्डा शेरी में लगाया गया था और यहां से ही जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मुग़लों के खिलाफ युद्ध का आगाज़ किया था।

कैथल के शाही खजाने पर कब्ज़ा

जींद के जंगलों से हज़ारों की तादात में सिक्ख फ़ौजे कैथल की तरफ कूच करने लगी और इन्हीं दिनों जरनैल बंदा सिंह बहादुर को जानकारी मिली कि एक फ़ौजी दस्ता मुग़ल सरकार का शाही खज़ाना लेकर दिल्ली जा रहा है। उस समय पर वह कैथल से 20 किलोंमीटर दूर, बहुण (भूण) गांव में पड़ाव कर रहा है। यह पता चलने पर सिक्खों का जत्था 'बहुण' गांव की ओर चल पड़ा। शाही खजाना लेकर आ रहे अमले पर हमला कर दिया। शाही मुग़ल फ़ौजी, सिक्खों के अचानक हमले से डर कर भाग गए और खजाना सिक्खों के हाथ आ गया। यहां से भागे मुग़ल फ़ौजियों ने कैथल जाकर वहां के आमिर (छोटा फ़ौजदार) को ख़बर की। कैथल का आमिल हिंदू था परन्तु वह मुग़लों का वफादार था। मुग़लों को अपनी वफादारी दिखाने के लिए वह अपने साथियों को लेकर वहां पहुंचा। कैथल के फ़ौजी जत्थों के आने की ख़बर सिक्खों को पहले ही मिल गई थी। जब मुग़ल फ़ौजी नजदीक आए तो सिक्खों ने अचानक हमला कर दिया। सिक्खों के इस अचानक हमले के दौरान बहुत से शाही मुग़ल सिपाही मारे गए। मुग़लों का आमिर स्वयं सिक्खों के घेरे में आ गया। उसने सिक्खों की ताकत देख कर हथियार फैंक दिए। उसने सिक्खों की अधीनगी स्वीकार करते हुए जान बक्शने की अपील की।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने उसकी विनती कबूल कर ली। कैथल का तमाम शाही खजाना, हथियार, व घोड़े आदि सिक्ख फ़ौज के खजानची के हवाले कर दिए। इसके थोड़े दिन के पश्चात ही भाई रुपा, भाई बहलो और मालवे के बहुत से सिक्ख परिवारों के अनेक नौजवान घोड़ों और हथियारों के साथ होकर बंदा सिंह बहादुर के फ़ौजी जत्थे में शामिल हो गए। कुछ ही

दिनों में यह संख्या काफी बढ़ गई। बंदा सिंह बहादुर ने सिक्ख फौजों को बताया कि हमारी अगली बड़ी कार्यवाही समाना पर होगी।

सिक्ख फ़ौजों की समाना पर जीत

किसी समय में समाना मालवा और बांगर देश की राजधानी रही थी। सन् 1360 में फिरोजशाह तुगलक ने समाना की जगह सरहिंद को राजधानी बना दिया लेकिन समाना नगर की शान-ओ-शौकत कम नही हुई। इसके बाद सन् 1709 में भी इसके 09 परगने थे। अभी भी बहुत सैयद[30] वज़ीर यहीं पर ही रहते थे। ऐसे लोग सैंकड़ों की संख्या में थे। इनमें से 22 उमरा (अमीर) तो वह थे जिनको निजी पालकियों में आने-जाने का हक हासिल था। इन सभी की हवेलियां किले जैसी थी। यहां का मुख्य किला भी बहुत मजबूत था तथा इसकी दीवार का एक हिस्सा आज भी मौजूद है। समाना के इस बड़े किले में मुग़ल फ़ौजों की बड़ी संख्या रहती थी। यहां के फ़ौजदार को कभी भी किसी के हमले की आशा नहीं थी।

समाना शहर का सिक्ख तवारीख के साथ एक अन्य सम्बन्ध भी था। 11 नवंबर, 1675 को चांदनी चौंक दिल्ली में गुरु तेग़ बहादुर साहिब का सिर धड़ से जुदा करने वाला जल्लाद सैयद जलालुद्दीन भी यहीं का था। गुरु गोबिंद सिंह के दोनों छोटे साहिबज़ादो को भी इसी शहर के जल्लादों सैयद शाशल बेग और बाशल बेग ने ही 12 दिसंबर, 1705 को कत्ल किया था। आनंदपुर साहिब में 04 दिसंबर, 1705 के दिन गुरु साहिब को बादशाह की नकली चिट्ठी पहुंचाने वाला सैयद अली हुसैन भी यहां का था। सिक्ख इसको 'जल्लादों का शहर' कहकर याद करते थे, इसी कारण जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सबसे पहले उनकी पनाहगाह से 90 किलोंमीटर दूर ज़ालिमों को सजा देने का निर्णय लिया।

पेहवा और गुला-चीका के जंगलों में गुरु नानक साहिब के समय से ही किलाबंदी की तैयारी शुरू कर दी गई थी और इन जंगलों में आज भी किलों के पुरातत्व अवशेष मौजूद है।[31] अच्छी तरह प्रशिक्षित और शस्त्रों से सुसज्जित सिक्ख फ़ौजों ने स्योंसर के वन क्षेत्र में रहकर नवंबर, 1709 में समाना पर आक्रमण किया। समाना सैय्यदों का शहर था जिसमें 22 उमरा रहते थे, वह बहुत समृद्ध और अभिजात वर्ग के लोग थे। इस शहर के चारों ओर बड़ी किलेबंदी थी। यहां मुग़लों की बड़ी सैना तैनात थी जिनके पास उस समय के सबसे अच्छे हथियार थे। सिक्ख सेनाएं गढ़ी नाजीर[32] में

---

30 *सैयद फातिमा और अली की संतान हैं। फातिमा हजरत मुहम्मद की बेटी और अली उसका दामाद था। इसलिए सैय्यदों में भी इन्हें विशेष सम्मान व हक हासिल था और मुग़ल बादशाह इनका आदर-सम्मान करते थे।

31 *इस किलाबंदी में साईं मिंया मीर, पीर भीखण शाह, पीर बुद्धु शाह की फ़ौज का योगदान था।

32 *गढ़ी नाजीर समाना के पास एक किला था जोकि पीर नवाब भीखन शाह के द्वारा बनाया गया था। गुरु तेग़ बहादुर साहिब भी गढ़ी नाजीर गए थे। मुग़ल जासूसों को जब गुरू तेग़ बहादुर के यहां पर आगमन का पता चला तो वह यहां मुग़ल सेना लेकर पहुंचे परन्तु भीखन शाह की चौकसी के चलते वह गुरू तेग़ बहादुर जी को गिरफतार नही कर पाए। सन् 1709 में जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने समाना पर हमला किया तो गढ़ी नाजीर से सिक्ख फ़ौज को भारी मदद पहुंचायी गई। आज भी गुरू जी और भीखन शाह की याद में गढ़ी नाज़ीर में एक गुरूद्वारा साहिब सुशोभित हैं।

एकत्रित हुई जो समाना शहर के बाहर था। यहां पीर भीखन शाह, हाफिज-ए-अल्लाह और गुलाम मोहम्मद बख्श ने सिक्ख फ़ौजों की सहायता की। कुछ ही घंटों के अन्दर सभी मुग़ल सैनिक मारे गए। सिक्ख फ़ौजों ने समाना के सभी किलों पर कब्ज़ा कर लिया। मुग़ल फ़ौजों ने काफी मुकाबला किया परन्तु कुछ ही घंटों में नगर और इसके किले सिक्ख सिपाहियों के अधीन हो चुके थे।

समाना पर कब्ज़ा करने के पश्चात जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने ऐलान किया कि किसी भी निर्दोष व्यक्ति के जान-माल को कोई हानि नहीं पहुंचाई जाएगी और केवल ज़ालिम हाकिमों और जल्लादों को ही सज़ा दी जायेगी। स्थानीय लोगों में ज्यादातर मुसलमान किसान ही थे जो ज़मीनों के मालिक नहीं थे बल्कि मुज़ारे थे। वह मुग़ल और जल्लाद सैयद जागीरदारों से बहुत दुखी थे। इसी कारण उनको जागीरदारों और अमीरों के साथ कोई हमदर्दी नहीं थी। इन किसानों ने सिक्ख फ़ौजों को ज़ालिम हाकमों के बारे जानकारी दी। इनसे जानकारी हासिल करके सिक्ख फ़ौजों ने अमीरों, वजीरों और जल्लादों की किलानुमा हवेलियां और घरों की निशानदेही कर घेरा डाल दिया। सिक्खों द्वारा घिरे देख ज़ालिम हाकमों ने खुद को बचाने के लिए हवेलियों के बाहर आग लगवा दी ताकि सिक्ख सिपाही अंदर न आ सकें। उन्होंने अपनी हवेलियां और किलों में से सिक्खों पर गोलाबारी व आग के गोले फेंकने शुरू कर दिए। सिक्ख इस खतरनाक हमलों के बावजूद डटे रहे। अंत में अपने ही बचाव के लिए लगाई आग की चपेट में आकर अनेक सैयद मुग़ल अंदर ही जल कर मर गए और जो आग से बचने के लिए हथियार लेकर बाहर निकले वह सिक्ख फ़ौजों की तलवारों और नेजों का शिकार बन गए। सुबह से लेकर शाम तक समाना की गलियों में जबरदस्त लड़ाई चलती रही। कई मुग़ल और सैय्यद तो डटकर लड़े परन्तु अंततः मारे गए।

अभी शाम पूरी तरह ढ़ली नही थी कि सिक्खों का मुकाबला करने वाले सभी जल्लाद, ज़ालिम हाकम व मुग़ल फ़ौजी खत्म हो चुके थे या शहर छोड़ कर भाग चुके थे। सिक्खों ने किसी भी औरत, बूढ़े और बच्चे को हानि नहीं पहुंचाई व ना ही किसी निहत्थे पर वार किया। इसके अलावा सिक्खों ने कभी किसी भी मस्ज़िद पर हमला नहीं किया था। क्योंकि सिक्खों की यह लड़ाई इस्लाम के विरूद्ध नही थी बल्कि जुल्म के विरूद्ध थी। इस कारण आज भी समाना में उस समय की दर्जनों मस्जिदें, मकबरे और अन्य इमारतें मौजूद हैं। रात्रि होने से पहले समाना सिक्ख फ़ौजों के अधीन आ चुका था। इस लड़ाई में मरने वाले मुग़लों और सैय्यदों की संख्या अलग-अलग स्त्रोत पांच से दस हज़ार तक लिखते हैं।

समाना पर कब्ज़े के दौरान सिक्ख फ़ौजों को हथियारों का बड़ा ज़खीरा, खजाना, व सैंकड़ों घोड़े हासिल हुए। समाने को सिक्खों के अधीन करने में भाई फतेह सिंह (भाई भगतू के परिवार) ने अहम भूमिका निभाई। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने भाई फतेह सिंह को समाना का फ़ौजदार नियुक्त किया और कुछ फ़ौज उनके लिए छोडकर अगले मनसूबे की तैयारी शुरू कर दी। इस समय तक सिक्ख फ़ौज में 10-12 हज़ार सिक्ख शामिल हो चुके थे। खाफी ख़ान के

अनुसार दो से तीन महीनों में ही चार से पांच हज़ार घुड़सवार और सात से आठ हज़ार पैदल सिक्ख बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज में शामिल हो चुके थे और दिन-प्रतिदिन उनकी संख्या बढ़ती गई।[33] समाना में कुछ अमीर मुसलमान जो बचकर निकलने में कामयाब हो गए थे, और उनमें से अधिकतर थानेसर, मुरतज़ापुर और पेहवा चले गए थे।

नगर सन्नौर पर सिक्ख फ़ौजों का कब्ज़ा

सन्नौर एक प्राचीन नगर था जोकि समाना से लगभग 15 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित था। सन्नौर शहर के मुखिया ने जल्दी ही अपनी हार मान ली। यहां का हथियार व खजाना भी सिक्ख फ़ौजों के पास आ गया और सिक्ख फ़ौजों ने अपने अधीन आने वाले सभी गांवों में अपनी पंचायतें स्थापित कर दी।

सिक्ख फौजों का घड़ाम पर कब्ज़ा

प्राचीन सन्नौर नगर को अपने अधीन करने के बाद सिक्ख फ़ौजों ने घड़ाम शहर की ओर कूच किया जो सन्नौर से लगभग 20 किलोंमीटर की दूरी पर था, जिसका पुराना नाम कुहराम था।[34] घड़ाम भी एक प्राचीन नगर था और इसका किला बहुत महत्व रखता था। यह किला मुहम्मद गौरी के समय से ही बड़ी राजनीतिक सरगर्मियों का केंद्र रहा था। बंदा सिंह बहादुर चाहते थे कि सरहिंद पर हमला करने से पहले इसके आसपास के सभी किलों को अपने अधीन कर लिया जाये, इस कारण सिक्ख फ़ौजों के लिए यह किला जीतना भी ज़रूरी था। जब सिक्ख फ़ौजों ने घड़ाम पर हमला किया तो यहां के फ़ौजदार ने डट कर मुकाबला किया। इस घमसान जंग में सिक्ख और मुगल दोनों फ़ौजों का भारी नुक्सान हुआ परन्तु अंत में जीत सिक्खों की ही हुई और यहां का किला, घोड़े, हथियार व खज़ाना भी सिक्खों के हाथ आ गया। अब वर्तमान में घड़ाम किले के कुछ अवशेष ही मौजूद हैं।

ठसके पर हमला

घड़ाम पर विजय के पश्चात बंदा सिंह बहादुर ने घड़ाम से 20 किलोंमीटर आगे ठसका जिसको 'ठसका मीरांजी' भी कहते हैं पहुंचे। यह शहर पीर भीखण शाह से संबंधित था और इस शहर के सूफी-संतों, शैय्यद, मुसलमान 'पीर' ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर का स्वागत किया व सैन्य सामान इत्यादि सिक्ख फ़ौज को उपलब्ध करवाया। पीर ज़फर अली जोकि पीर भीखण के खिलाफ अन्य रणनितियां भी तैयार की। यहां से भारी मात्रा में मुस्लमान फ़ौजी जरनैल बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज में शामिल हुए।

---

33 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखाब-उल-लुबाब, (सन् 1722), भाग दूसरा, पृष्ठ 652

34 *घड़ाम, सनौर से तकरीबन 20 किलोमीटर दूर एक प्राचीन शहर है जो कभी पंजाब की राजधानी रहा है। कुतुब -उद्-दीन ऐबक ने दिल्ली जाने से पहले इसको राजधानी बनाया। रज़ीया सुलताना जब महारानी बनी तो उसने शाही कैदियों के लिए एक जेल के तौर पर इस किले को इस्तेमाल किया। उसने अपने बागी भाई को भी इस जेल में रखा।

थानेसर और शाहबाद (मार्कण्डेय) पर कब्ज़ा

ठसका के उपरांत जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने 30 किलोंमीटर दूर थानेसर को भी अपने अधीन कर लिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के थानेसर पहुंचने से पहले ही सिक्ख फ़ौजों के द्वारा थानेसर के किले पर सिक्ख राज का झंडा लहराया जा चुका था और थानेसर का मनसबदार जोकि साई मींया मीर के परिवार से था।उनके द्वारा जरनैल बंदा सिंह बहादुर का स्वागत किया गया। थानेसर में एक ख़ालसा मीनार भी तैयार की गई जो आज भी मौजूद है। थानेसर ही दुनिया का ऐसा शहर है जहां पर दस के दस सिक्ख गुरु साहिबानों ने प्रचार दौरे किए। थानेसर से ही ख़ालसा राज को स्थापित करने के लिए प्रमुख योगदान दिया गया। भूगोलिक दृष्टिकोण से थानेसर एक व्यापारिक मार्ग के ऊपर स्थित है और थानेसर से 90 कि.मी. की दूरी पर लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी स्थित है। थानेसर से संबंधित अधिक जानकारी अध्याय-22 में दी गयी है।

इसके पश्चात मार्कण्डेय नदी के किनारे बसा नगर शाहबाद जोकि (थानेसर से 30 किलोंमीटर दूर) की ओर कूच किया गया। शाहबाद का कोतवाल नानक परस्ती मुरीद था, जरनैल बंदा सिंह बहादुर के शाहबाद आगमन पर उनका स्वागत किया। ज़रूरी सैन्य सामान सिक्ख फ़ौज को मुहैया करवाया और शाहबाद का किला सिक्ख फ़ौज के हवाले कर दिया। उसके बाद शाहबाद में जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा अपना शासक नियुक्त किया गया। शाहबाद में ही गुरु नानक साहिब ने एक मंजी/सिक्ख प्रचार केन्द्र स्थापित किया था। इसलिए शाहबाद और उसके आस-पास के इलाकों के लोग गुरु नानक साहिब की विचारधारा को मानने वाले लोग थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर का शाहबाद में भी सिक्ख संगत के द्वारा स्वागत किया गया।

मुस्तफाबाद पर कब्ज़ा

दिसंबर, 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर जब शाहबाद से मुस्तफाबाद की तरफ कूच करते हुए मुस्तफाबाद इलाके में बसे वणजारे/लुबाने सिक्खों के द्वारा उनका स्वागत किया गया और भारी संख्या में वह लोग सिक्ख फ़ौज में शामिल हुए। मुस्तफाबाद इस इलाके का सबसे बडा परगना था। 700 का मनसबदार मुस्तफाबाद में बैठता था। जब सिक्ख इस नगर के निकट पहुंचे तो यहां के फ़ौजदार ने 2000 फ़ौजी, दो तोपें लेकर सिक्ख फ़ौजों का रास्ता रोकने के लिए भेज दिए। सिक्ख फ़ौजों ने जोरदार हमला किया तो मुग़ल फ़ौजें भयभीत होकर भाग गई। वह भागते समय तोप भी पीछे छोड़ गई जो सिक्ख फ़ौजों ने कब्ज़े में ले ली। इसके पश्चात सिक्ख फ़ौजों ने इस नगर में हाकिमों और अमीरों के खजाने, हथियार व घोड़ों आदि को अपने अधीन कर लिया और यहां पर अपना किलेदार नियुक्त कर दिया।

दामला किले पर सिक्ख फ़ौजों का कब्ज़ा

मुग़ल फ़ौज के 500 अफ़गानी पठान दामला में एक मजबूत किले में रहते थे। पीर बदरूद्दीन शाह सढ़ौरा के ख़ानदान को मुग़ल हुकुमत ने 500 का मनसब दे रखा था। क्योंकि यह

परिवार मुहम्मद साहब की बेटी फातिमा के वंश से संबंध रखता था। भगानी के सथान पर इन पठानों ने गुरु गोबिंद सिंह से युद्ध किया था। पीर बदरूद्दीन शाह को धोखा भी दिया था। बंदा सिंह बहादुर ने इन 500 पठानों को सजा-ए-मौत दी व किले पर कब्ज़ा कर लिया।

कुंजपुरा पर हमला

मुस्फाबाद और दामला पर कब्जा करने के पश्चात और सरहिंद पर हमला करने से पहले जरनैल बंदा सिंह बहादुर सभी परगनों के चौधरियों को अपने अधीन करते आ रहे थे। तभी उन्हीं दिनों वज़ीर ख़ान (फौजदार सरहिंद) का एक जासूस, सिक्ख फ़ौजों की सूचना लेता पकड़ा गया। सिक्खों ने उसे मारने की जगह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के हवाले किया।जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने उसके हाथ वज़ीर ख़ान को पैगाम भेजा कि अब ख़ालसा फ़ौजें सरहिंद पर हमला करने की तैयारी में है।सिक्खों ने यह भी कहा कि इससे पहले उसके जद्दी पुश्तैनी गांव कुंजपुरा पर भी हमला करेंगे। जब सिक्खों ने ठसका पर विजय प्राप्त कर ली तो वज़ीर ख़ान को यकीन आ गया था कि अब सिक्ख उसके गांव कुंजपुरा (मुस्तफाबाद से 75 किलोंमीटर, करनाल से 13 किलोंमीटर) दूरी पर जरूर हमला करेंगे। कुंजपुरा मुग़लों की कोतवाली थी और यमुना के किनारे कुंजपुरा स्थित एक मजबूत किला मौजूद था। कुंजपुरा का किला जीतने के लिए जरनैल बंदा सिंह बहादुर को ज्यादा मशक्क़त नहीं करनी पड़ी। क्योंकि कुंजपुरा के नज़दीक नेवल गांव सिक्खी का बड़ा केन्द्र था और आज भी नेवल में भाई लक्खी शाह वणजारे के कुंए मौजूद हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान करनाल शहर के बीचों-बीच सिक्खों का एक किला मुरादगढ़ भी मौजूद था। जहां भारी मात्रा में सिक्ख फ़ौज मौजूद थी। इसके अलावा फूसगढ़, शामगढ़ इत्यादि किले मौजूद थे। करनाल में कई सूफी संत रहते थे जोकि सिक्ख विचारधारा से सहमत थे। केवल शाह कलंदर ही एक मुस्लिम पीर था। जोकि ज़ालिम हुकुमत का वफादार था।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने जब कुंजपुरा को जीतने के लिए कूच किया तो वज़ीर ख़ान फ़ौजदार सरहिंद ने दो हज़ार घुड़ सवार, चार हज़ार पैदल फ़ौज और दो बड़ी तोपें कुंजपुरा की हिफाज़त के लिए रवाना कर दी। परन्तु वज़ीर ख़ान की भेजी हुई फ़ौज कुंजपुरा ना पहुंच पाई।

इस फ़ौज को अंबाला-शाहबाद के बीच में मार गिराया गया व इस जंग के बाद सिक्ख फ़ौजों को दो तोपें व भारी मात्रा में हथियार भी मिले।

कपूरी के कदम-उद्-दीन का खात्मा

पुआध के इन इलाकों में सढ़ौरा से 13 किलोंमीटर दूरी पर कपूरी नाम का एक नगर था। इसका हाकिम कदम-उद्-दीन था। वह अमानुल्ला का पुत्र था जो औरंगज़ेब के समय गुजरात का फ़ौजदार था। कदम-उद्-दीन भी एक ज़ालिम और अय्याश व्यक्ति था। उसने दूसरे हाकिमों की तरह खूब दौलत इकट्ठी की हुई थी। उसे अपने पिता की बहुत सारी दौलत भी मिली हुई थी।

एक दिन कपूरी के कुछ हिन्दू जरनैल बंदा सिंह बहादुर को मिले और कदम-उद्-दीन के जुल्मों के बारे में बताया। अगले ही दिन बंदा सिंह बहादुर ने कपूरी पर हमला कर दिया। कदम-उद्-दीन ने सिक्ख फ़ौजों के आगे हथियार फेंकने की जगह स्वयं को अपनी हवेली में कैद कर लिया। सिक्ख फ़ौजों का रास्ता रोकने के लिए उसने अपनी हवेली के इर्द-गिर्द आग लगवा दी ताकि सिक्ख फ़ौजें अंदर न आ सके लेकिन वह स्वयं अपनी हिफाज़त के लिए लगाई आग में हवेली के अंदर ही जल कर राख हो गया। एक मुसलमान के लिए जल कर मरने से बड़ी सज़ा नही हो सकती।

सढ़ौरा पर विजय और उस्मान ख़ान का खात्मा

सढ़ौरा का ज़ालिम हाकिम उस्मान ख़ान भी सिक्ख फ़ौजों के निशाने पर था। उस्मान ख़ान ने गुरु गोबिंद साहिब के एक मुसलमान मुरीद सईद बदरुद्दीन (पीर बुद्धू शाह) और उसके परिवार पर बड़े जुल्म किये थे। उनको सिक्खों का साथी कह कर शहीद किया गया था। उस्मान ख़ान पर यह भी इल्ज़ाम था कि वह ग़ैर-मुसलमानों से सख्त नफरत करता था। इस कारण कपूरी पर जीत के पश्चात बंदा सिंह बहादुर ने सढ़ौरा की ओर कूच कर दिया। इस समय तक बंदा सिंह बहादुर की फ़ौजों की संख्या 70 हज़ार तक हो चुकी थी।[35] नई खोज से पता चला है कि सिक्ख फ़ौजों द्वारा सढ़ौरा और सढ़ौरा के आस-पास कई किलों का निर्माण कर दिया गया था। इसके चलते हुए जरनैल बंदा सिंह बहादुर को सढ़ौरा जीतने में कोई विशेष मुश्किल नहीं आई और दो-तीन घंटे के समय के अन्दर ही मुग़ल हाकम को मार गिराया।

प्रसिद्ध इतिहासकार हरिराम गुप्ता के अनुसार जब बंदा सिंह बहादुर की फ़ौजें सढ़ौरा के निकट पहुँची तो उस्मान ख़ान की पहले से ही तैयार की गईं तोपों ने सिक्ख फ़ौजों पर गोले दागने शुरू कर दिए। जिस कारण कई सिक्ख शहीद हो गए परन्तु इसके बावजूद सिक्ख फ़ौजी आगे बढ़ते गए। नगर का मुख्य द्वार तोड़ने में सफल हुए। शहर के अंदर उस्मान ख़ान की फ़ौजों और सिक्ख फ़ौजों के बीच घमसान जंग हुई। इस मौके पीर बुद्धू शाह के परिवार में से कुछ शख्स सिक्ख फ़ौजों का साथ दे रहे थे।इस कारण उनको शहर पर अधिकार करने में कोई मुश्किल नही आई। सढ़ौरा के कई नवाब, वज़ीर और अमीर सफेद ध्वज लेकर बंदा सिंह के पास पेश हुए और रहम की अपील की। बंदा सिंह बहादुर ने उनको क्षमा कर दिया परन्तु उनसे यह वायदा लिया कि वह हमेशा से सिक्ख फ़ौजों के वफादार रहेंगे। बेशक अन्य सभी ने हथियार फैंक दिए थे परन्तु सढ़ौरे के हाकिम उस्मान ख़ान ने स्वयं को किले के अंदर बंद कर लिया।

सढ़ौरे का किला बहुत मज़बूत था और इसको जीत पाना एक बहुत मुश्किल मुहिम थी। इस बार फिर पीर बदर-उद-दीन के मुरीदों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने किले के अंदर रास्ता बना कर उनसे किले का द्वार खुलवा लिया और किले पर कब्ज़ा कर लिया। उस्मान ख़ान

---

35 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला में बताया गया है कि जयपुर राज्य के रिकार्ड मुताबिक इनकी गिनती 70 हज़ार के करीब थी।

को गिरफ्तार करके सजा-ए-मौत दी गई।[36] आज भी सढ़ौरा में कुतब-उल-अकताब (शाह अब्दुल वहाब) की दरगाह और गंजे-इल्म भी वैसे ही कायम हैं जैसे वह 1709 में थी।[37] यह घटना 5 दिसंबर, 1709 की है। अब सढ़ौरा पर ख़ालसे का नीला निशान साहिब[38] फहरा दिया गया और शहर के इंतजाम के लिए एक 'ख़ालसा पंचायत' कायम कर दी गई। इन घटनाओं की ख़बर मुग़ल बादशाह बहादुर शाह को टोडा नगर में मिली। बहादुर शाह ने लाहौर के सूबेदार और सरहिंद के फ़ौजदार को सिक्खों के विरूद्ध कार्रवाही करने के लिए ख़त लिखे।

अहवाल-उल-खवाकीन के लेखक मुहम्मद कासिम औरंगाबादी के अनुसार बंदा सिंह बहादुर ने सढ़ौरा का नाम 'अजायबगढ़' रख दिया।[39] औरंगाबादी यह नाम दो जगह (पृष्ठ 64-67 और 68 पर) लिखता है। सढ़ौरा किले को मुग़ल फ़ौजों ने 19 सितंबर, 1713 को गिराना शुरू किया था। इसके अतिरिक्त सढ़ौरा से संबंधित विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-21 पर दी गई है।

लोहगढ़ को राजधानी स्थापित करना

समाना, घुड़ाम, सनौर, ठसका, मीरांजी, थानेसर, कुंजपुरा, शाहबाद, दामला, मुस्तफाबाद, कपूरी और सढ़ौरा की विजय के पश्चात जनवरी, 1710 में बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ को अधिकारिक तौर पर ख़ालसा राजधानी घोषित किया। लोहगढ़ सढ़ौरा से 20 किलोंमीटर की दूरी पर शिवालिक की पहाड़ियों में सोमनदी के नीचे एक गांव है। यहां सिक्खों का एक बहुत बड़ा किला था। बंदा सिंह बहादुर ने इस किले में दीवारें, बुर्ज़ और मोर्चे बनाकर इसको और ज्यादा महफूज़ बना लिया। उन्होनें खजाना, हथियारों, अनाज इत्यादि की संभाल के लिए इमारतें बनवाईं। ऐसे ही उन फ़ौजियों जिनके साथ परिवार भी थे के रहने के लिए मकान भी बनवाए। इसके पश्चात सारा खजाना, हथियार और काफी मात्रा में अनाज भी इस किले में लाया गया। यह किला दर्जनों पहाड़ों, खोलों व जंगल से घिरा हुआ था। इस कारण इस पर हमला करके विजय पाना आसान नहीं था। लोहगढ़ के इलाके को दाबर भी लिखा जाता था।[40] दाबर लफ़्ज सबसे पहले इरादत ख़ान ने तारीखे इरादत खानी में इस्तेमाल किया है। नई पुरातात्विक खोज के अनुसार लोहगढ़ किले के दक्षिण हिस्से में समतल भूमि पर खेती होती थी। उत्तर की ओर ऊंचे पहाड़ और जंगल हैं, पूर्व और पश्चिम की ओर घनी झाड़ियों वाला जंगल है।

---

36 *उसको बदर-उद-दीन से भी भयानक मौत मिली। यहां यह साबित हुआ कि जैसा आप बीजते हो उसी तरह का ही आपको काटना पड़ेगा। लोग तो अब भी पीर बुद्धू शाह (बदर-उद-दीन) को याद करते हैं परन्तु उस्मान ख़ान को कौन जानता है।

37 *पीर बुद्धू शाह का यह महल अब मौजूद नहीं है। इस स्थान पर अब स्कूल स्थापित है।

38 *गुरू साहिब के समय सिक्ख निशान साहिब का रंग नीला था (देखोः हरजिंदर सिंह दिलगीर, नानकशाही कैलेंडर, (2010)

39 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी अहवाल-उल-खवाकीन, पन्नें 68-69

40 *दाबर का अर्थ हैः पहाड़ियों की निचली सतह पर ऊंची-नीची जमीन।

दाबर के इलाके में वणजारों की भूमिका

दाबर इलाके के गांवों का मालिक एक सिक्ख भाई लक्खी राय वणजारा था। जो उस समय एशिया का सबसे बड़ा वणजारा (व्यापारी) था। लक्खी राय के व्यापार में हज़ारों मुलाज़िम कार्यरत थे। यह सभी सिक्ख थे। जब बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ को राजधानी बनाया तो यह सभी वणजारे उनके मददगार बन गए। कुछ उनकी फ़ौज का हिस्सा बन गए थे। कुछ उनको खाना, हथियार और अन्य सामान उपलब्ध करवाते थे और कुछ मुग़ल सरकार और फ़ौज की सूचनाओं को लाने का कार्य करते थे। मुग़लों को भी अनाज की सप्लाई इन वणजारों से ही मिलती थी। इस कारण मुग़लों की ख़बरें इनको पता चलती रहती थी और वह सारी जानकारी बंदा सिंह बहादुर तक पहुंचा दिया करते थे। वणजारा एक परमात्मा को मानते थे और गुरु नानक साहिब को अपना इष्ट मानते थे।[41] क्योंकि वणजारे सभी देशों में व्यापार करते थे, इसलिए वह सिक्खों के जरनैल बंदा सिंह द्वारा चलाई हुई मुहिम में बहुत सहायक हुए। उसमें बहुत से वणजारों ने सिक्खी धारण की हुई थी और गुरु नानक साहिब की विचारधारा में दृढ़ विश्वास रखते थे। कामवर ख़ान (तजकिरातु सलातीन चगत्ता, सफ़े 93-94) भी इस की ताईद करता है।

---

41 *पिछड़ी जातियों और कबीलों पर ऐन. डबल्यु की पुस्तक 1542, डब्ल्यू क्रुक

अध्याय 5

लोहगढ़ से जरनैल बंदा सिंह बहादुर के कार्य

जनवरी, 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ को ख़ालसा राजधानी घोषित किया। लोहगढ़ व उसके नज़दीक पहाड़ियों पर किलाबंदी का मुआयना किया। इसके अतिरिक्त सिक्ख फ़ौज की तैयारी जैसे की रसद, सैन्य सामान का भी आंकलन किया गया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने अगले तीन महीने डाबर की पहाड़ियों में बिताए और सुनिश्चित किया कि सिक्ख फ़ौज मुग़ल फ़ौज से टकराने के लिए हर तरह से तैयार रहे। क्योंकि सरहिंद और सहारनपुर सरकार पर हमले के बाद यह तय था कि बादशाह बहादुर शाह अपनी पूरी ताकत के साथ सिक्ख क्रांति को कुचलने के लिए दक्षिण से पंजाब पहुंचेगा।

सरहिंद पर हमले की तैयारी

अब बंदा सिंह बहादुर का उद्देश्य सरहिंद को फतेह करने का था। बंदा सिंह बहादुर इस समय अपनी फ़ौज के साथ छत बनूड़ के इलाके में रह रहा था। सिक्ख फ़ौजों के द्वारा जम्मू से लेकर बरेली तक अलग-अलग मुग़ल ठिकानों पर हमले बोल दिए गए थे। अप्रैल, 1710 तक जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सरकार सरहिंद के अधीन आने वाले लगभग 30 परगनाओं का इलाका मुग़लों से आज़ाद करवा लिया था।[42] सरहिंद का फ़ौजदार सूबा लाहौर के अधीन था। यहां का प्रशासक आज़ाद फौज़दार की हस्ती रखता था। मुग़ल बादशाह से इसे विशेष अधिकार प्राप्त थे। इसकी सालाना आय 80 लाख रुपए से अधिक थी। यमुना नदी और सतलुज के बीच वाला इलाका सरहिंद की हकूमत के अधीन था। सरहिंद के फ़ौजदार वज़ीर ख़ान के पास 3000 का मनसब था और उसके पास लगभग 12,000 की फ़ौज थी।

वज़ीर ख़ान ने जिहाद का नारा लगाकर मुसलमानों को (विशेषकर अपने पठान भाइयों, राजपूत मुसलमानों और बलोचों को) फ़ौज में भर्ती कर लिया था। अनेक मुस्लिम चौधरी और जागीरदार भी उसकी फ़ौज में शामिल हो गए थे। उसकी सबसे बड़ी मदद मलेरकोटला के नवाब शेर मुहम्मद ख़ान ने की। वह स्वयं अपने भाइयों, पुत्रों, भतीजों और 10,000 की फ़ौज सहित इस जिहाद में शामिल हुआ था।

---

42 *सरकार सरहिंद में 33 परगना आते थे इन परगना का नाम है अंबाला, बनूड़, पैल, बहादुर, भठिंडा, तहारा, थानेसर, छत, चारख, खिज़राबाद, दौराला, दहोटा, दयोराणा, रोपड, सरहिंद, समाना, सुनाम, सढ़ौरा, सुल्तानपुर बहारा, शाहबाद, फतेहपुर, कराट-राय-शम्मू, कैथल, घड़ाम, लुधियाना, मुस्तफाबाद, मसैगन, मसुमपुर, मलेर कोटला, माछीवाडा और हापरी।

माझे के सिक्खों और मलेरकोटला की फ़ौज में जंग

मई, 1710 के शुरू में माझे इलाके से हज़ारों की तादात में सिक्ख, जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ शामिल होने के लिए कीरतपुर में पहुंच चुके थे। यह सभी वे सिक्ख थे जो पंथ के लिए जान न्यौछावर करने के लिए घर से निकले थे। कीरतपुर से उन्होंने रूपड़ (अब रोपड़) के रास्ते छत-बनूड़ पहुंच कर बंदा सिंह बहादुर के साथ मिलना था। इसकी ख़बर वज़ीर ख़ान को मिल चुकी थी। उसने मलेरकोटला के शेर मुहम्मद ख़ान जिसको छोटे साहिबज़ादों के लिए सहानुभूति दिखाने के कारण 'सिक्खों का हमदर्द' कहा जाता है, को फ़ौजों के साथ माझे की ओर से आ रहे सिक्खों को रोकने के लिए कूच करने की हिदायतें दी। शेर मुहम्मद ख़ान अपने एक भाई (खिज़र ख़ान) और भतीजों (वली ख़ान और मुहम्मद बख्श) के साथ बड़ी फ़ौज लेकर रोपड़ की ओर चल पड़ा। रोपड़ के नजदीक सतलुज दरिया के किनारे, गांव बहलोल पुर की चारागाह में सिक्खों और मुग़ल फ़ौजों में ज़बरदस्त जंग हुई। तब सतलुज दरिया बहलोल पुर और माछीवाड़ा के पांव में बहता था।[43] पहले दिन शेर मुहम्मद ख़ान मलेरकोटला की फ़ौजों का पलड़ा भारी लगता था। शाम ढ़लते ही लड़ाई बंद हो गई। रात को माझे से कुछ अन्य सिक्ख भी उनके साथ आ मिले। अगले दिन सूर्योदय होते ही सिक्खों ने अचानक मुग़ल सैनिकों पर हमला कर दिया। वहां घमासान लड़ाई हुई। इस लड़ाई में एक गोली शेर मुहम्मद ख़ान मलेरिया के भाई खिज़र ख़ान की छाती में आ लगी और वह वही ढ़ेर हो गया। उसके मरने के साथ ही पठान फ़ौजी मैदान छोड़ कर भागने लगे। शेर मुहम्मद ख़ान ने अपने भतीजों सहित सिक्ख सिपाहियों पर हमला कर दिया। दोनों भतीजे ख़ान अली और मुहम्मद बख्श इस हमले में मारे गए। शेर मुहम्मद ख़ान स्वयं भी जख्मी हो गया। इसके पश्चात सभी पठान फ़ौजें मैदान में से भाग गई। जीत के बाद माझा के सिक्ख फ़ौज छत-बनूड़ की ओर चल पड़े। जब इसकी ख़बर बंदा सिंह बहादुर तक पहुंची तो वह कुछ सिक्खों को साथ लेकर काफी आगे आ गया और मझैलों को गले लगाकर स्वागत किया।[44] अगले दिन सिक्खों के एक अन्य जत्थे की टक्कर राणवों गांव में (संघोल के निकट) वज़ीर ख़ान की भेजी फ़ौज के साथ हुई। यहां से भी विजेता होकर सिक्ख बंदा सिंह बहादुर के पास छत-बनूड़ पहुंच गए।

चप्पड़ चिड़ी की लड़ाई

चप्पड़ चिड़ी की लड़ाई का मैदान जोकि मोहाली ज़िला में आज के समय में मौजूद है और चंडीगढ़ शहर के भी काफी नज़दीक है। शोध से यह पता चला है कि सिक्खों के बडेल, मनौली, मनी माजरा, जीरकपुर लोहगढ़ इत्यादि में किले मौजूद थे। इनमें से यह किले आज भी

---

43 *उन दिनों में सतलुज दरिया माछीवाड़ा और बहालोलपुर के नजदीक से बहता था। जो उस समय बहुत बड़े कस्बे थे। 1750 के बाद नदी ने अपना रास्ता बदल दिया और अब उत्तर दिशा की ओर 10 किलोमीटर दूरी पर बहती है।

44 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखाब-उल-लुबाब, पृष्ठ 653

मौजूद है। इन किलों में भारी मात्रा में हथियार और रसद के भंडार थे और यही से ही सिक्ख फ़ौज को चप्पड चिड़ी की लड़ाई के लिए सैन्य सामान उपलब्ध करवाया गया। नई खोज की विस्तारपूर्वक जानकारी किलों के चित्रों सहित पृष्ठ 292 पर अंकित की गई है।

चप्पड़ चिड़ी की लड़ाई में जब वज़ीर ख़ान को, खिज़र ख़ान और उसके दोनों पुत्रों के मरने और शेर मुहम्मद ख़ान के जख्मी होने व मलेरी फ़ौजों की हार की ख़बर पहुंची तो वह दुखी हुआ। परन्तु उसने दिल्ली और लाहौर से अन्य फ़ौज व हथियार मंगवा लिए थे। अब वज़ीर ख़ान के पास बेपनाह गोला बारूद, हथियार, घोड़े व हाथी थे। उसकी फ़ौज की संख्या भी बहुत थी। परन्तु वह बंदा सिंह बहादुर के हमले का इंतज़ार नही करना चाहता था। वह चाहता था कि सिक्खों पर अचानक ही हमला कर दिया जाये। दूसरा वह बंदा सिंह बहादुर के साथ सरहिंद से बाहर ही टक्कर लेना चाहता था। वज़ीर ख़ान ने एक अन्य चाल चलते हुए सुच्चा नंद के भतीजे गंडा मल को एक हज़ार फ़ौजी देकर बंदा सिंह बहादुर की फ़ौजों में शामिल होने के लिए छत-बनूड़ की ओर भेज दिया। उसकी योजना थी कि जंग शुरू होते ही यह सभी गद्दारी करके मैदान छोड़ कर भाग जाएं जिसके साथ सिक्ख फ़ौजों में खलबली मच जाये। इसी उलझन में वह मारे जाएं या मैदान छोड़ जाएं।

जब यह जत्था बंदा सिंह बहादुर के कैंप में पहुंचा तो सिक्खों को इनकी बात पर यकीन नहीं हुआ कि यह वज़ीर ख़ान से बागी होकर सिक्खों के साथ मिलना चाहते हैं। इस कारण बंदा सिंह ने फैसला किया कि इनको आगे रखने की जगह सबसे आखिरी कतारों में रखा जाए। अब सभी सिक्ख चप्पड़ चिड़ी के मैदान में इकट्ठा हो गए। कभी इस स्थान पर कई छोटे-बड़े छप्पर/तालाब और नज़दीक ही झाड़ीदार जंगल था।जिसका नाम पश्चात में 'छप्पड़ झिड़ी' से बिगड़ कर चप्पड़ चिड़ी बन गया।

बंदा सिंह बहादुर ने मैदान में इकक्ठे होकर सरहिंद पर हमले की तैयारी कर ली। यहां से सरहिंद लगभग 20 किलोमीटर की दूरी पर था।[45] परन्तु इससे पहले कि सिक्ख फ़ौजें सरहिंद की ओर कूच करती उनको ख़बर मिल गई कि वज़ीर ख़ान भी एक बड़ी फ़ौज लेकर उधर की ओर चल पड़ा है। इस पर बंदा सिंह बहादुर ने सभी फ़ौजों को चार हिस्सों में बांट दिया। सिक्खों के पास अब तक छह तोपें भी आ चुकी थी। मशहूर तोपची भाई शाहबाज सिंह को प्रभारी बनाया गया। फ़ौजों की कमान फतेह सिंह, करम सिंह, धर्म सिंह और आली सिंह को सौंप दी गई। बंदा सिंह बहादुर ने स्वयं एक ऊंचे टीले पर मोर्चा लगा लिया और सभी हालातों पर निगाह रखने लगा। खाफी ख़ान के अनुसार सिक्ख फ़ौजों की संख्या तीस से चालीस हज़ार थी।[46] सिक्ख फ़ौजों के पास तलवारें, नेज़े, तीर कमान और बंदूकें थी। 12 मई, 1710 की सुबह तक वज़ीर ख़ान की फ़ौज भी पहुँच चुकी थी। वज़ीर ख़ान की फ़ौज में सबसे आगे हाथी थे। सरिहंद की

45 *यह नाम वास्तव में छप्पड़ झिड़ी का मूल नाम है (वृक्षों व झाड़ियों के आसपास का तालाब)

46 *(खाफी ख़ान, चैप्टर 2, पृष्ठ 652-53)

फ़ौज 'या अली, या अली' के नारे लगा रहे थे। इस पर सिक्खों ने अकाल! अकाल! के जयकारे लगाने शुरू कर दिए।[47]

लड़ाई शुरू होते ही जब हाथी सिक्खों की तोप की मार के दायरे में आ गए तो सिक्खों ने तुरंत ही गोले बरसा कर हाथियों को खदेड़ने की कोशिश की। वज़ीर ख़ान की फ़ौज के कुछ हाथी जख्मी हो कर चिंघाड़ते हुए पीछे की ओर भागे और अपने ही फ़ौजियों को जख्मी कर गए। इसके जवाब के तौर पर सरहिंद की फ़ौज की तोपें भी बरसने लगी। सिक्ख फ़ौजें क्योंकि झिड़ी की ओर थी।इस कारण उनको वृक्षों की ओट मिल गई। उधर सिक्खों की तोपों ने सरहंदी तोपचियों को भारी नुक्सान पहुंचाया। इन तोपचियों के मारे जाने के पश्चात सरहंदी फ़ौज की ओर से तोपों की गोलाबारी बंद हो गई। अब कई सिक्ख घुड़सवार सरहंदी फ़ौज में जा घुसे और मार-काट शुरू हो गई। सिक्ख सरहिंद के हाकिमों को सज़ा देना चाहते थे। इस कारण वह सिर हथेली पर रख कर जूझ रहे थे।

दूसरी ओर मुग़ल और पठान फ़ौजी केवल मुलाज़िम थे। जब बहुत मार-काट हो चुकी तो बहुत से सरहंदी फ़ौजियों ने जान बचाने के लिए वहां से भागना शुरू कर दिया। उनमें से अनेक मारे गए या मैदान छोड़ कर भाग गए। इस मौके पर गंडा मल (भतीजा सुच्चानंद) भी अपने जासूस हिंदू फ़ौजी लेकर भागने लगा। सिक्खों के खेमे में भी कुछ हलचल होने लगी। इसको देखकर बंदा सिंह बहादुर स्वयं टीले से उतर कर मैदाने-जंग में आ गया। बंदा सिंह बहादुर को अपने में उपस्थित देखकर सिक्खों के हौंसले बुलंद हो गए। वह नये जोश के साथ सरहंदी फ़ौजों पर टूट पड़े। इसके साथ ही सरहंदी फ़ौजों ने पीछे हटना शुरू कर दिया। यह देखकर वज़ीर ख़ान और उसका मंत्री सुच्चा नंद स्वयं अगली कतार में आ गए और सरहंदी फ़ौजों को प्रोत्साहित करने लगे।[48] सबसे पहली टक्कर बाज सिंह और सुच्चानंद में हुई। बाज सिंह जब सुच्चानंद की ओर बढ़ा तो बुजदिल सुच्चा नंद खौफ के साथ दहल गया और पीछे को भाग गया। मैदान में से भागे सुच्चा नंद ने सरहिंद पहुंच कर ही सांस ली। इसके पश्चात जब बाज सिंह व फतेह सिंह की नजर वज़ीर ख़ान पर पड़ी तो वह उसकी ओर बढ़े और उसके हाथी को घेर लिया। अब हाथों-हाथ लड़ाई हुई जिसमें वज़ीर ख़ान मारा गया। इतने में ही उनको शेर मुहम्मद ख़ान (मलेरकोटले वाला, जो बहलोलपुर में मझैले हाथों हारकर फिर यहां चप्पड़ चिड़ी में आ कर लड़ा था) भी नज़र आ गया। सिक्खों ने उसे भी मार दिया।[49] उसका भाई ख्वाजा अली भी मारा गया इनकी मौत के पश्चात एक भी पठान या मुग़ल फ़ौजी मैदान में न ठहरा। कुछ मुग़ल फ़ौजी जान बचाकर भाग गए, अन्य फ़ौजियों ने सिक्खों के आगे घुटने टेक दिए। सिक्खों ने उनसे हथियार छीनकर उनको क्षमा

---

47 *(इलियट और डोजन, जिल्द 7, पृष्ठ 414)

48 *इरविन के अनुसार, वज़ीर ख़ान तब 80 साल का थाः लेटर मुग़लज़, भाग-1, पृष्ठ 96

49 *इरविन के अनुसार शेर मुहम्मद ख़ान, वज़ीर ख़ान की मौत से पहले मारा गया था।

कर दिया। यह लड़ाई 12 मई की सुबह से दोपहर तक कुछ घंटे ही चली थी।[50] चप्पड़ चिड़ी की लड़ाई में जो सिक्ख शहीद हुए उनका विस्तारपूर्वक ब्यौरा अध्याय-25 में दिया गया।

सरहिंद शहर पर कब्ज़ा

चप्प्पड़ चिड़ी की लड़ाई खत्म होने के पश्चात जख्मी सिक्खों की मरहम पट्टी की गई। शहीद सिक्खों को इकट्ठे करके उनका संस्कार किया गया। इस मौके पर सिक्ख पूरा समय शब्द गायन करते रहे। संस्कार करने के पश्चात सिक्ख फ़ौजें सरहिंद की ओर कूच कर गई। बीस किलोंमीटर का फासला तय करके सिक्ख आधी रात के समय सरहिंद पहुंच गए।रात के समय शहर के द्वार बंद थे। सिक्ख फ़ौजों ने सरहिंद नगर पर घेरा डाल लिया। अगले दिन एक छोटी सी झड़प के उपरांत सिक्ख शहर में दाखिल हो गए। उन्होंने वज़ीर ख़ान के शव का जुलूस निकाला और किले के पास ले आए। उन्होंने इस शव को एक वृक्ष पर उल्टा लटका दिया। इस समय तक शव में से बदबू आनी शुरू हो चूकी थी। जल्दी ही गिद्धों और अन्य पक्षियों ने उसके शव को नोचना शुरू कर दिया। यह देख कर शहर के लोग बुरी तरह विचलित हो गए। उनमें से कुछ ने सिक्ख फ़ौजों से रहम की मांग की। शहर में खामोशी और भय का माहौल बना हुआ था। सिक्खों ने शहर निवासियों को यकीन दिलाया कि कोई भी सिक्ख किसी बेगुनाह के साथ ना इंसाफी नहीं करेगा।

अब सिक्खों ने किले की ओर कूच किया। यहां जबरदस्त लड़ाई हुई। किले की तोपों के गोलों के साथ कई सिक्ख शहीद हो गए। इस पर कुछ सिक्ख किले के पास के एक टीले पर चढ़ गए और वहां से उन्होंने किले में से गोले बरसाती तोपों के तोपची मार दिए। अब सिक्ख फ़ौज ने चप्पड़ चिड़ी में सरहिंद की फ़ौज से छीनी तोपों के साथ किले पर गोलाबारी करके अंदर जाने का रास्ता बना लिया। किले के अंदर बची-खुची फ़ौज ने भी हथियार डाल दिए। बंदा सिंह बहादुर ने इन सभी को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया तथा सरहिंद शहर सिक्खों के अधिकार में आ गया। इस समय शहर या किले में विरोध करने वाला कोई भी नहीं बचा था। वज़ीर ख़ान का पुत्र समुंद ख़ान बहुत दौलत लेकर दिल्ली की ओर भाग गया था। परन्तु सुच्चा नंद अभी भी शहर में ही छिपा बैठा था।

शाम के समय जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने प्रमुख शहर वासियों को एकत्रित करके ऐलान किया कि सिक्ख किसी भी बेगुनाह पर कोई जबरदस्ती या जुल्म नहीं करेंगे और ना होने देंगे। परन्तु किसी भी मुज़रिम को क्षमा नहीं किया जायेगा। इस पर लोगों ने राहत महसूस की। अनेकों व्यक्ति बंदा सिंह बहादुर के साथ समझौता करने लगे। सुच्चा नंद अभी शहर में छिपा हुआ था। वह चप्पड़ चिड़ी से भागकर जाने के बावजूद सरहिंद से भाग नहीं पाया था। क्योंकि वह अपनी

---

50 *इरविन के अनुसार शेर मुहम्मद ख़ान, वज़ीर ख़ान की मौत से पहले मारा गया था।

इकट्ठी की हुई दौलत को संभालने और निकाल कर ले जाने की योजना बनाता रह गया था। उसे गिरफ्तार कर उसके नाक में नकेल डालकर उसे घर-घर में भिक्षा मांगने पर मजबूर किया गया। रास्ते में लोगों ने उसे पत्थर भी मारे। अंत बुरी तरह जख्मी और ज़लील होकर सुच्चा नंद मर गया व सुच्चा नंद की दौलत को ज़ब्त कर लिया गया।

इबारतनामा का लेखक मुहम्मद कासिम लिखता है कि 'ऐसे स्पष्ट होता था कि उसने यह सारी दौलत इसी दिन के लिए इकट्ठी की हुई थी।' मुहम्मद कासिम यह भी लिखता है कि लोग कहते थे कि वज़ीर ख़ान के समय पर कोई इस तरह का जुल्म नहीं था, जो गरीबों पर न किया गया हो और अब (जुल्म का) कोई ऐसा बीज नहीं था जो अंकुरित न हुआ हो। जैसा बोया गया वैसा काटा गया।[51] उनको ज़िस्म ढ़कने के लिए कपड़े देकर शहर में भीख मांगने पर मजबूर किया गया और साथ ही शहर में यह मुनादी भी करवा दी गई कि कोई भी इनको एक कौड़ी से ज्यादा भिक्षा न दे। इसके साथ ही बंदा सिंह ने हर उस शख्स को सजा-ऐ-मौत दी जिस ने लोगों पर जुल्म ढ़ाए थे।

चप्पड़ चिड़ी लड़ाई की वास्तविक तारीख

चप्पड़ चिड़ी की लड़ाई 12 मई, 1710 को हुई थी। अगले दिन शहर सरहिंद और इसके किले पर भी कब्ज़ा हो चुका था। सरहिंद शहर के सिक्ख फ़ौजों के अधीन होने की ख़बर बादशाह बहादुर शाह को बहासू नगर के पड़ाव पर 20 मई, 1710 को मिली।[52] अंग्रेज़ लेखक इरविन[53] (पुस्तक लैटर मुग़लज़) ने सरहिंद की लड़ाई की तारीख 22 मई लिखी है जोकि सही नही है। वास्तव में उसको अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की एक बिना तारीख प्रविष्टि (13 फरवरी, 1712 की प्रविष्टि के बाद प्रकाशित) से गलती लगी थी।[54] अगर तारीख 22 मई होती तो बादशाह को 20 मई को ख़बर कैसे मिल सकती थी? अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की रिपोर्ट के अनुसार लड़ाई की रिपोर्ट बादशाह को 20 मई, 1710 को मिली थी। इस ख़बर को बादशाह के पास पहुंचाने में आठ दिन लगे थे। इसलिए 12 मई, 1710 को ही चप्पड़ चिड़ी की लड़ाई की सही तारीख है।[55]

---

51 *(मुहम्मद कासिम, इबारतनामा, पृष्ठ 133-46, ब्रिटिश पुस्तकालय की हस्त -लिखित के पन्ने 26वीं से 35वीं तक)।

52 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 20 मई, 1710

53 *ख़ाफी ख़ान, लेटर मुग़लज़, पृष्ठ 95

54 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की एक बिना तारीख रिपोर्ट दर्ज की गई 13 फरवरी, 1712

55 *'सूरज प्रकाश' का लेखक संतोख सिंह (जो सिक्ख तवारीख को बिगाड़ने का भरकस प्रयास करता है) सरहिंद की लड़ाई 1707 में, गुरू गोबिंद सिंह के नांदेड़ से होते हुए, करवा कर गुरु साहिब से खुशी का इज़हार करवाता है। संतोख सिंह की नकल मार कर दूसरा लेखक ज्ञानी ज्ञान सिंह भी यह लड़ाई जेठ 1764 यानि 1707 में लिखता है।

वज़ीर ख़ान की मौत कैसे हुई?

खाफी ख़ान के अनुसार वज़ीर ख़ान गोली लगने से मरा था। इस अनुसार शेर मुहम्मद ख़ान मलेरकोटले वाले ने बिनोद सिंह पर हमला किया। इतने में एक गोली वज़ीर ख़ान को लगी और वह मर गया। शेर मुहम्मद ख़ान का ध्यान उस ओर हो गया।[56] कन्हैया लाल अनुसार वज़ीर ख़ान की मौत गोली लगने से हुई थी। पुस्तक 'तारीखे पंजाब' के पृष्ठ 59 के अनुसार वज़ीर ख़ान की मौत एक तीर लगने से हुई थी। (हिस्ट्री ऑफ पंजाब, पृष्ठ 274)

मीर मुहम्मद अहसन इज़ाद के अनुसार वज़ीर ख़ान बंदा सिंह बहादुर की ओर बढ़ा। बाज सिंह यह देख रहा था। वह घोड़ा भगाकर वज़ीर ख़ान और बंदा सिंह बहादुर के बीच आ गया। इस पर वज़ीर ख़ान ने बाज सिंह की ओर नेजा फेंका जो बाज सिंह ने हाथ से पकड़ लिया और वापिस वज़ीर ख़ान की ओर ज़ोर से मारा। यह बरछा वज़ीर ख़ान के घोड़े को लगा। वज़ीर ख़ान ने गिरते ही बाज सिंह पर तीर चलाया जो बाज सिंह की बाजू में लगा। इसके साथ ही वज़ीर ख़ान ने बाज सिंह पर तलवार के साथ भी वार कर दिया। परन्तु इससे पहले कि तलवार बाज सिंह को लगती, फतेह सिंह ने तलवार मार कर वज़ीर ख़ान का दाहिना कंधा काट दिया। मीर मुहम्मद अहसन इजाद, शाहनामा वज़ीर ख़ान को गिरा देख कर बाकी फ़ौजी जान बचाकर भाग गए। उनके पास केवल बदन के कपड़ों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। (ख़ाफी ख़ान, चैप्टर 2, पृष्ठ 654) 'दस्तूर उल इनशा' का लेखक 'यार मुहम्मद' लिखता है कि वज़ीर ख़ान का सिर एक नेजे पर टांग कर और उसके धड़ को बैलों के पीछे बांधकर और घसीटते हुए 20 किलोमीटर दूर सरहिंद पहुंचाया गया। लोग कहते हैं कि वज़ीर ख़ान ने हर तरह का जुल्म जनता पर किया और उसे ऐसी घिनौनी मौत मिली जो सारी दुनिया याद रखेगी।[57] सुच्चा नंद और वज़ीर ख़ान के महलों के बारे मुहम्मद कासिम लिखता है कि 'उनके स्वर्ग जैसे महल कौवों के बसेरे बन गए'।

लड़ाई दौरान मौतों की संख्या

सिक्खों के एक जत्थे ने शहीदों के शवों को संभालना शुरू कर दिया। आम चर्चा के अनुसार अनेक सिक्ख शहीद हुए और लगभग 20,000 मुग़ल सैनिक मारे गए। शहीद होने वालों में गुरु गोबिंद सिंह साहिब को शस्त्रों की शिक्षा देने वाले उस्ताद भाई बजर सिंह राठौर भी थे। इसके अतिरिक्त अनेकों सिक्ख जख्मी भी हुए। इस जंग में सिक्खों ने 45 बड़ी-छोटी तोपें, दर्जनों हाथी, सैंकड़े घोड़े और बहुत सी बंदूकें कब्ज़े में ली।

---

56 *खाफी ख़ान, मुंतखब-उल-लुबाब, पृष्ठ 653, इरविन, पुस्तक लेटर मुग़लज़, भाग 1, पृष्ठ 96, इलियट और डौजन, भारत का इतिहास जैसा कि यहां के इतिहासकारों ने लिखा, भाग 7, पृष्ठ 414

57 *इबारतनामा, प्रिंटरड बुक के पृष्ठ 133-146, 26वीं से 35वीं पांडुलिपी की प्रति ब्रिटिश पुस्तकालय, लंदन में मौजूद है।

बहादुर शाह द्वारा सूबा दिल्ली व सूबा लाहौर को आदेश जारी करना

बहादुर शाह को दक्षिण में 20 मई, 1710 वज़ीर ख़ान की मौत का पता चला और सरहिंद पर सिक्खों की फ़तेह का समाचार मिला। उसने लाहौर और दिल्ली के मुखियों को हुक्म भेजे कि वह सिक्खों की मुहिम को दबाने के लिए सख्त कार्यवाही करें।[58]

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मुसलमान शहरियों के साथ बर्ताव

जीत के उपरांत सिक्खों ने किले की चोटी पर नीला निशान साहिब फहराया और बाज सिंह भगेश्वरी को सरहिंद का फ़ौजदार स्थापित किया व आली सिंह सलौदी को उसका नायब फौजदार तैनात किया।[59] निःसंदेह बंदा सिंह बहादुर ने सभी ज़ालिम शासकों को सख्त सजा दी थी। सिक्ख फ़ौजें धार्मिक व सामाजिक तौर पर किसी को भी अपना दुश्मन नहीं मानती थी। यहां तक कि गरु अर्जुन साहिब और गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहादत पर खुशी मनाने वाले सरहंदी शेखों को भी कुछ नहीं कहा। वास्तव में जरनैल बंदा सिंह बहादुर की जंग मुसलमानों के विरूद्ध नहीं थी बल्कि जुल्मी मुग़ल शासको के विरूद्ध थी। इसी कारण बंदा सिंह बहादुर ने किसी भी इस्लामी संस्था पर हमला नहीं किया। आज 2020-21 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के सरहिंद पर हमले से तीन सौ साल के पश्चात भी शेख अहमद सरहिंदी की मजार और डेरा, लाल मस्जिद, सधने कसाई की मस्जिद, निकट तलानियां में उस्ताद और शागिर्द के मकबरे, मीरे-मीरा गांव में बहलोल लोधी के दामाद की मजार और अन्य कई मस्जिदें और मकबरे आज भी सरहिंद में मौजूद हैं।

जमींदारी व्यवस्था खत्म करना

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने 27 मई, 1710 को किले के बाहर सामान्य व्यक्तियों का एक जनसमूह बुलाया और लोकराज का ऐलान कर दिया। उन्होनें यह भी कहा कि ज़मीन का मालिक काश्तकार (जोतने वाला किसान) ही होगा। वह केवल 1/3 बटाई सरकार को लगान के तौर पर देगा। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने जमींदारी व्यवस्था खत्म करने का ऐलान कर दिया। यह बंदा सिंह बहादुर ही था जिसने दबे, कुचले, गरीब और कमज़ोर किसानों को ज़मीनों का मालिक बना दिया था। गौरतलब है कि दुनिया भर में जागीरदारी प्रथा का अंत सबसे पहले जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने ही किया था। दुनिया के इतिहास में पहली बार किसी राजा की ओर से यह फैसला लिया गया था कि समाज में राजसी, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिकता के आधार पर सब मानव बराबर है। यह काम फ्रांस की क्रांति से लगभग 70 साल पहले हुआ था परन्तु दुनिया भर में इस सच्चाई का सही प्रचार नहीं हो पाया।

---

58 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 20 मई, 1710

59 *तारीख-ऐ-इरादतखानी, पृष्ठ 68

मलेरकोटला पर हमला

जब गुरु गोबिंद सिंह के छोटे साहिबज़ादों को वज़ीर ख़ान ने कत्ल करने का हुक्म दिया तो मलेरकोटला के पठान हाकिम शेर मुहम्मद ख़ान ने वज़ीर ख़ान को कहा था कि मेरी इन बच्चों के साथ कोई दुश्मनी नहीं है। मेरी लड़ाई तो इन बच्चों के पिता 'गुरु' गोबिंद सिंह के साथ है, हमें अपना बदला दुश्मन के मासूम बच्चों से नहीं बल्कि उस (गुरु) से ही लेना चाहिए। वैसे शेर मुहम्मद ख़ान सिक्खों का कोई हमदर्द नहीं था। उसने और उसके भाइयों, पुत्रों और भतीजों ने बार-बार गुरु गोबिंद सिंह साहिब और सिक्खों पर हमले किये थे। 12 अक्तूबर, 1700 को निरमोहगढ़, 7-8 दिसंबर, 1705 को चमकौर, 9-10 मई, 1710 को मझैल सिक्खों और बहलोलपुर में व 12 मई, 1710 के दिन चप्पड़ चिड़ी में भी ज़बरदस्त टक्कर ली थी और सरहिंद के फ़ौजदार वज़ीर ख़ान के हर हुक्म को मानते हुए सिक्खों पर अकारण ही हमले किये थे। इन लड़ाईयों में वह स्वयं, उसके तीन भाई और दो भतीजे मारे गए थे। इस कारण सिक्खों को मलेरकोटला के पठान हाकिम भी बहुत चुभते थे और वह उसे भी सज़ा देना चाहते थे। सरहिंद जीतने के पश्चात सिक्ख फ़ौजों ने मलेरकोटला की ओर कूच कर दिया। जब मुग़लों को पता चला कि सिक्ख फ़ौजें मलेरकोटला की ओर आ रही हैं तो वहां के मुखी लोगों का एक समूह जरनैल बंदा सिंह बहादुर को मिलने पहुंचा। किशन चंद, बंदा सिंह को पहले से ही जानता था। उसने बंदा सिंह बहादुर को अपील की कि मलेरकोटला को क्षमा कर दिया जाये। बंदा सिंह बहादुर ने मलेरकोटला के वासियों को क्षमा करते हुए, पंचायत स्थापित करके एक मुखी नियुक्त किया।[60]

अनूप कौर और बुलाका सिंह का मसला

ऐतिहासिक घटना अनुसार अपनी इज्जत बचाने के लिए अपनी जान पर खेल जाने वाली एक बीबी अनूप कौर के शव को मलेरकोटला के नवाब ने कब्र में दबा दिया था। बंदा सिंह बहादुर ने उनकी कब्र ढूंढी और उसके शव को कब्र में से निकाल कर उनका दाह संस्कार किया।

ऐसे ही घुड़ानी गांव, जहां रामराईयों ने एक सिक्ख बुलाका सिंह को बहुत परेशान किया हुआ था, बंदा सिंह बहादुर वहां गए और उन्होंने उन रामराईयों के गुंडों को सख्त सज़ा दी। इसके साथ ही बंदा सिंह बहादुर ने बुलाका सिंह को वहां का थानेदार भी लगा दिया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लोहगढ़ कूच करना

सरहिंद पर कब्ज़ा करने के उपरांत जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सरहिंद के किले पर खालसे का नीला निशान साहिब लहराया व बाज सिंह भंगेश्वरी को सरहिंद का फ़ौजदार नियुक्त किया और अली सिंह सलौदी को नायब-फ़ौजदार तैनात किया। थानेसर की जिम्मेदारी राम सिंह और बिनोद सिंह को सौंप कर स्वयं ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ आ गए। कामवर ख़ान

---

60 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला

(तजकिरातुल सलातीन-ऐ-चगत्ता, पृष्ठ 94) अनुसार बंदा सिंह बहादुर को सरहिंद में वज़ीर ख़ान के खजाने में से 2 करोड़ रुपए की दौलत हासिल हुई थी।[61] ऐसे ही सुच्चा नंद के महल में से भी कई लाख रुपए बरामद हुए थे।

नानकशाही सिक्का जारी करना

जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा लोहगढ़ से नानकशाही सिक्के जारी किए गए। ऐसा कर वह दुनिया के पहले शासक बने जिन्होनें राज स्थापित होने के बाद अपने नाम से नहीं बल्कि गुरु नानक साहिब और गुरु गोबिंद सिंह के नाम से सिक्के और मोहरें जारी किए। इस विषय बारे विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-20 पर दी गई है।

नानकशाही मोहर से फरमान जारी किए गए।

ख़ालसाई सिक्का जारी करने के पश्चात सिक्खों द्वारा ख़ालसा राज की मोहर भी जारी की गई जिस पर लिखा थाः-

देगो-तेगों-फतिह-ओ-नुसरत बेदिरंग
याफ़त अज़ नानक - गुरु गोबिंद सिंघ

(देग तेग़ और फतेह बिना किसी देरी से गुरु नानक साहिब-गुरु गोबिंद सिंह से हासिल हुई)

इस बात से स्पष्ट होता है कि बंदा सिंह बहादुर ने न तो अपने नाम पर सिक्का जारी किया और न ही उन्होंने अपने नाम की मोहर चलाई। बंदा सिंह बहादुर ने प्रत्येक कामयाबी का श्रेय गुरु साहिब को ही समर्पित किया। दुनिया भर की तारीख में कभी किसी विजेता या हाकिम ने आज तक अपने नाम के अतिरिक्त कभी किसी अन्य के नाम का सिक्का जारी नही किया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर स्वयं को हमेशा 'बंदा-ऐ-गुरु' भाव 'गुरु का बंदा' कहा करता था। मानवता के हक में बराबरी के आदेश जारी किए गए और मुजाहारों को मालकाना हक दिए गए। इसके अतिरिक्त जाति-पाति की प्रथा को समाप्त कर सभी लोगों को सामाजिक बराबरी के अधिकार राज्य में रहने वाले सभी लोगों को प्रदान किए। इस विषय बारे विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-20 पर दी गई है।

नानकशाही कैलेंडर लागू किया

जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा नानकशाही कैलेंडर जारी किया गया और गुरु नानक साहिब के प्रकाश वर्ष को पहला वर्ष मानते हुए आगे का कार्यक्रम तय किया गया।

---

61 *कामवर, तजकिरातुल सलातीन-ऐ-चगत्ता, पृष्ठ 334

बुड़िया पर कब्ज़ा और इसका नाम गुलाब नगर रखना

बुड़िया कोतवाली खिजराबाद परगना[62] में आती थी और खिजराबाद परगना के मनसबदार पीर बुद्धु शाह के परिवार से थे और भाई लक्खी शाह वणजारे ने खिजराबाद किले के नज़दीक कई कुएं लगाए जो आज भी मौजूद हैं। खिजराबाद गुरु नानक साहिब के समय से ही व्यापार का बडा केन्द्र बन गया था और इरफान हबीब की किताब 'एटंलस ऑफ मुग़ल एम्पायर' के अनुसार यहां पर भारत की सबसे बड़ी लकड़ी की मंडी थी। चक्क बाबा साहिब सिंह और नागल चक्क बेट की जगीरें भाई लक्खी शाह वणजारें के परिवार के पास थी और इनसे कुछ दूरी के उपर शिवालिक की पहाडियां शुरू हो जाती हैं जहां पर लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी के अवशेष आज भी मौजूद है।[63] बुड़ीया शहर का सिक्ख इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है और गुरु नानक साहिब ने यहां पर मंजी/प्रचार केन्द्र स्थापित किया था और वहां आज भी गुरु तेग़ बह्युदर साहिब के प्रचार दौरे के सम्बंध में एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है। भाई काहन सिंह नाभा 'महानकोष' पन्ना न. 1841 में दर्शाते है कि गुरु तेग़ बहादुर साहिब के समय बुड़िया का मसंद भाई लाल चन्द थे। इन्होनें गुरु गोबिंद सिंह के समय भगानी के युद्ध में अपने जौहर दिखाए थे। यहां दयालगढ़ नामी मशहूर सिक्ख किला था और जिसमें भाई लक्खी शाह वणजारे के द्वारा बनाई गई बावड़ी आज भी मौजूद है।

इसके अलावा बुड़िया के नज़दीक अनेक सिक्ख किलों का निर्माण किया गया जिनके नाम हैं गढ़ी वणजारां, भगवान गढ़, कश्मीर गढ़, उदमगढ़ इत्यादि। ज्ञानी ठाकुर सिंह अपनी किताब गुरुद्वारा दर्शन सन् (1923) में यह दर्शाते है कि पांच प्यारों में से एक प्यारा भाई धर्म सिंह का जन्म जटवाड़ा गांव ज़िला सहारनपुर (यह गांव भाई धर्म सिंह का ननिहाल था) में हुआ। जटवाड़ा गांव बुड़िया से केवल 20 किलोंमीटर के दूरी पर स्थित है। बुड़िया का ज़िक्र फारसी के कई ऐतिहासिक स्त्रोतों जैसे कि अहकम-ए-आलमगीर सन् (1703-1707) दर्शाता है। बुड़िया एक बहुत बड़ा सिक्ख केन्द्र बनकर उभरा। जहां पर सिक्खों का दबदबा बहुत ज्यादा था। जब बुड़िया के काज़ी व कोतवाल ने सिक्ख धर्मशाला को तोड़कर मस्जिद का निर्माण शुरू किया तो सिक्खों ने दरोगा व काज़ी दोनों का कत्ल कर दिया था। पुनः सिक्ख धर्मशाला का निर्माण किया। भाई काहन सिंह नाभा महान कोष पन्ना न. 742 पर दर्शाते हैं कि पांच प्यारों में से एक प्यारा भाई मोहकम सिंह का जन्म स्थान बुड़िया है। उपरोक्त वर्णित तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि बुड़िया सिक्ख धर्म का गुरु नानक साहिब के समय से ही बड़ा केन्द्र बन चुका था।

---

62 *फारसी स्त्रोत लोहगढ़ में सिक्खों और मुगलों की लड़ाई में खिजराबाद परगना का कोई ज़िक्र नही आता। हैरानी की बात यह है कि लोहगढ़ के नज़दीक मुग़लों का सबसे नजदीक परगना खिजराबाद था।

63 *लाला वाला पीर लोहगढ़ के मोर्चा के ऊपर स्थापित किया गया है और इस पहाड़ी पर चढने के लिए ख़ालसा फ़ौज के द्वारा एक सकीर्ण रास्ता तैयार किया गया जिस में से केवल एक ही व्यक्ति मोर्चे तक पहुंच सकता था। इस रास्ते के अवशेष आज भी मौके के ऊपर मौजूद हैं।

11 जुलाई, 1710 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बुड़िया शहर पर हमला किया और इसे जीतने के लिए कोई विशेष प्रयत्न नही करना पड़ा। क्योंकि यहां पर पहले से ही सिक्ख फ़ौजें गुलाब सिंह बख्शी की अगवाई में मौजूद थी। गुलाब सिंह बक्शी जोकि भाई लक्खी शाह वणजारे का भतीजा था और एक शूरवीर योद्धा भी था। इस कारण बंदा सिंह ने इस शहर का नाम गुलाब नगर रख दिया था। बंदा सिंह बहादुर ने गुरबख्श सिंह को इस परगने का फ़ौजदार और अमीन लगा दिया था। बुड़िया का काज़ीशाह मुहम्मद जो लोगों के साथ ज़ोर-ज़बरदस्ती करता था। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने उसे गिरफ्तार करके लोहगढ़ किले में कैद कर उसकी संपत्ति ज़ब्त करने का हुक्म दिया।

पानीपत पर कब्जा

23 जुलाई, 1710 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पानीपत पर हमला कर दिया और पानीपत पर अपना कब्ज़ा स्थापित कर दिया। पानीपत के सूफ़ी पीरों ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर का स्वागत किया।

सहारनपुर, देवबंद, जलालाबाद पर हमले

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बुड़िया से सहारनपुर की सरकार के परगनों पर हमला कर दिया। सहारनपुर की सरकार के सभी परगने जीत लिए। सिक्खों की चढ़दीकला देखकर सिक्खी ग्रहण करने वालों में से यमुना पार देवबंद परगना के गांव उनारसा के कुछ लोग भी थे। जब जलालाबाद के फ़ौजदार जलाल-उद्-दीन को इस बात का पता चला तो उसने इन सिक्खों को कैद कर कष्ट देने शुरू किये, जिससे वह सिक्ख धर्म छोड़ कर मुसलमान बन जाऐं। कपूर सिंह नाम के एक सिक्ख ने इसकी ख़बर बंदा सिंह बहादुर तक पहुंचा दी। यह सुन कर बंदा सिंह ने देवबंद को सुधारने का फैसला कर लिया। बंदा सिंह बहादुर ने कुछ ही दिनों में देवबंद पर हमला कर सिक्ख राज के अधीन कर लिया। इसके उपरांत उन्होनें जलालाबाद पर हमला करने का फैसला किया। परन्तु इससे पहले वह सहारनपुर को जीतने की सोचकर उधर को चल पड़े। इसके 28 परगने थे। सहारनपुर का फ़ौजदार सईद अली मुहम्मद ख़ान कनौजी मुग़लों का 4000 का मनसबदार था। पहले तो बंदा सिंह बहादुर ने उसे पैगाम भेजा कि वह सिक्ख फ़ौज की सरदारी मान ले। परन्तु वह सिक्खों से बुरी तरह डर गया और शहर से भाग जाने की तैयारी करने लगा। शहर के अमीरों, मंत्रियों ने उसे बड़ी मदद का यकीन दिलाया परन्तु वह इतना भयभीत हो गया था कि वह डरता हुआ अपने पुत्र दीनदार अली ख़ान (फ़ौज का बड़ा अफसर था) और अपने परिवार व धन-दौलत लेकर दिल्ली भाग गया।

उसके जाने के उपरांत अमीरों-मंत्रियों और कुछ मुतसबी मुसलमानों ने कुछ फ़ौज इकट्ठी करके सिक्खों का मुकाबला करने का प्रयास किया। उन्होंने शहर को चारों ओर से भी मज़बूत

कर लिया। जब सिक्ख फ़ौजों ने हमला किया तो इन्होंने शहर की दीवारों से खूब गोलाबारी की और तीरों की बौछार की परन्तु वह सभी मिलकर भी सिक्खों का मुकाबला न कर पाए। जल्द ही सहारनपुर को भी सिक्खों ने अपने अधीन कर लिया। सहारनपुर में अधिकतर आबादी मुसलमानों की थी। वह ग़ैर-मुसलमानों के साथ अत्याचार करते रहते थे। इस कारण इस पर सिक्खों का अधिकार होने के पश्चात ग़ैर-मुसलमानों ने बहुत राहत महसूस की। सिक्खों की जीत के पश्चात बहुत अमीर मुसलमान अपना माल-असबाब घोड़ों पर भरकर सहारनपुर छोड़ कर दिल्ली चले गए। बंदा सिंह बहादुर ने सहारनपुर का नाम बदल कर भागनगर (भागांवाला नगर) रख दिया।

बेहट के पीरजादों को दण्ड देना

जरनैल बंदा सिंह बहादुर कुछ देर सहारनपुर में ही टिके रहे। इस दौरान प्राचीन शहर बेहट नगर (सहारनपुर से 25 किलोमीटर दूरी पर) के हिंदू, सिक्खों के पास आए और वहां के मुसलमान हाकिम और पीरजादों (बहाऊदीन जकरिया सुहरावरदी के ख़ानदान में से) के एक अमीर परिवार के जुल्मों की दास्तान सुनाई। इस पर बंदा सिंह बहादुर ने कुछ सिक्ख जरनैलों को फ़ौज देकर बेहट की ओर भेज दिया। जिसे सिक्खों ने मामूली प्रयत्न करके अपने अधीन कर लिया। सिक्ख फ़ौजों ने उन सभी पीरजादों को कठोर यातनाए देकर (जो हिन्दू परिवारों पर जुल्म कर रहे थे) कत्ल कर दिया गया। कहा जाता है कि उनमें से मात्र एक मर्द ही बचा जो उस दिन रिश्तेदारी में गया हुआ था। यह बात जून, 1710 के पहले सप्ताह की है।

जलालगढ़ी पर हमला

बेहट के कब्ज़े के पश्चात जून, 1710 के दूसरे सप्ताह सिक्ख फ़ौजों ने जलालगढ़ी को जा घेरा। इस गढ़ी में जलालाबाद के फ़ौजदार जलाल ख़ान ने अधिक मात्रा में फ़ौज रखी हुई थी। उसके पास अधिक मात्रा में धन-दौलत और हथियार भी थे। इस कारण जलालदीन सिक्खों के साथ टक्कर लेने के लिए पहले से ही तैयार बैठा था। उसने जिहाद के नाम पर बहुत सारे मुसलमान नौजवान भी अपनी फ़ौज में भरती कर लिए थे। उसने किले में भी भारी मात्रा में अनाज और हथियार जमा किया हुआ था। सिक्खों ने 20 दिन इस किले को घेरा डाले रखा। परन्तु वर्षा ऋतु होने के कारण वह कामयाब न हो सके और वहां से फिर वापिस आ गए।

मुजफ्फरनगर पर अधिकार जमाना

31 जुलाई, 1710 को सिक्ख फ़ौजों ने ननौता पर हमला कर दिया और इस नगर के ज़ालिम अमीरों को सबक सिखाया। एक ही दिन में ननौता तबाह हो चुका था। (इसकी हालत को देख कर लोग इसको 'फुट्टा शहर' कहने लग गए थे)। इस लड़ाई के दौरान स्थानीय गुज्जर व हिंदू भी सिक्खों के साथ आ मिले थे। इनका दावा था कि वह गुरु नानक साहिब, गुरु तेग़ बहादुर

साहिब के समय से ही सिक्ख सजे हुए थे। परन्तु कई दिनों से उनका संबंध आनंदपुर साहिब के साथ नही हो सका था। खाफी ख़ान लिखता है कि ननौता की लड़ाई में जलाल ख़ान ने अपने पुत्र दीनदार ख़ान, भांजे गुलाम मुहम्मद ख़ान और भतीजे हजबर ख़ान को भेजा था। हजबर ख़ान इस लड़ाई में मारा गया था। इसके पश्चात भी दीनदार ख़ान वीरता के साथ लड़ा परन्तु जीत सिक्खों की ही हुई थी। अंत दीनदार ख़ान साथियों के शवों को लेकर जलालाबाद वापिस चला आया। सहारनपुर के फ़ौजदार मुहम्मद अली ख़ान के दो भतीजे पीर ख़ान और जमाल ख़ान भी इस लड़ाई में मारे गए थे।[64] इन दोनों की कब्रें आज भी सहारनपुर-दिल्ली रोड पर कालेशाह के तकीए के पास मौजूद हैं। जब सहारनपुर के फ़ौजदार अली मुहम्मद ख़ान के शहर छोड़कर भागने की ख़बर दिल्ली के फ़ौजदार को मिली तो उसको 'बुज़दिली' का आरोप लगाकर उससे फ़ौजदारी छीन ली और जलाल ख़ान को सौंप दी। अगस्त, 1710 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर की नेतृत्व में मुजफ्फरनगर पर हमला करके उसे अपने कब्ज़े में ले लिया।

दिल्ली के हाकिमों, अमीरों और मंत्रियों में दहशत

तारीखे मुहम्मद शाही का लेखक इरादत ख़ान लिखता है कि सहारनपुर सिक्खों के अधिकार में आने के पश्चात दिल्ली से मुल्तान तक यह बात फैल गई कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का हमला थानेसर से लाहौर तक इतना जोरदार था कि कुछ कहा नहीं जा सकता। यहां तक कि नजामुल मुल्क आसिफ शाह का इतना जाहो-जलाल होते हुए भी भय से घबराकर बादशाह को पत्र लिखा और दिल्ली के अहलकारों को ताकीद की हर कोई बहुत जल्दी बादशाह को इस हंगामे की ख़बर पहुंचाऐ। उनके ताजदीन दीवान बयोतात, हाफिज ख़ान दीवान, हंसने रजा कोतवाल, फखर-उद्-दीन ख़ान, बख्शी वाकिया नवीस, मुहम्मद ताहिर वाकिया नवीस और दरवेश मुहम्मद काज़ी ने अलग-अलग अर्ज़ियां बादशाह को लिखी। दिल्ली का सूबेदार आसफ-उद्-दोला भी बहुत डर गया। ज़ालिम हाकिम परिवारों सहित दूसरे प्रांतों की ओर भागने लगे। वास्तव में इस समय हालात यह थे कि सिक्खों ने दिल्ली प्रांत के आस-पास का सारा इलाका जीत लिया था। तीन सरकारें सरहिंद, थानेसर, सहारनपुर उनके अधीन थी। यानि दिल्ली को लगभग सभी ओर से घेराबंदी कर दी थी और सूबा लाहौर के हाकिम भी सिक्खों से भयभीत रहते थे।

लाहौर और रियाड़की (माझा) में सिक्खों का दबदबा

यह बात 6 से 12 अप्रैल, 1709 की है।जब चूहड़ मल ओहरी के उकसाने पर लाहौर के डिप्टी सूबेदार असलम ख़ान ने पट्टी के अमीन चौधरी हरसहाय के द्वारा गुरु-का-चक्क (अमृतसर) पर हमला करवा दिया। यह लड़ाई पहले दिन आठ-नौ घंटे हुई थी। इसमें भाई मनी

64 *सहारनपुर-दिल्ली सड़क पर उनकी कब्रें काले शाह के मकबरों के नजदीक हैं।

सिंह, तारा सिंह डल्लवां, मुहकम सिंह ओहरी, भाई नगाहिया सिंह व अन्य ने बहुत बहादुरी दिखाई थी। इस लड़ाई में भाई नगाहिया सिंह के हाथों पट्टी का चौधरी हरसहाय मारा गया था। दूसरे दिन की लड़ाई का मैदान भी सिक्खों के हाथ ही रहा था। इसके पश्चात मुग़ल फ़ौजों ने 'गुरु का चक्क' (अमृतसर) पर हमला नही किया।

जब सिक्ख फ़ौजों ने सरहिंद पर अधिकार कर लिया तो पट्टी, गुरु का चक्क (अमृतसर), रियाड़की (ब्यास और रावी के बीच वाला इलाका) और तटीय इलाकों के सिक्खों के हौंसले और बुलंद हो गए। पट्टी और लाहौर वालों को अभी सात माह पहले सिक्खों के हाथों हुई हार याद थी। इस कारण लाहौर का नायब सूबेदार असलम ख़ान भी उनसे बहुत डरता था। सरहिंद, जरनैल बंदा सिंह बहादुर के अधीन होने के पश्चात माझे के सिक्ख गुरु का चक्क में इकट्ठे हुए और उन्होंने भी इस इलाके को मुग़ल और पठान हाकिमों से छीनना शुरू कर दिया। सिक्खों ने पहले लाहौर और कसूर को नही छेड़ा क्योंकि इन दोनों शहरों में मुग़लों की बहुत बड़ी फ़ौज भी थी और उनके पास किले और हथियार भी बहुत थे। बटाला जो कश्मीरी माल की सबसे बड़ी मंडी जाना जाता था और अमीरों-मंत्रियों का शहर था और कलानौर जहां अकबर की ताजपोशी हुई। लाहौर के पश्चात दूसरे नंबर पर थे। उन शहरों में भी माल-असबाब बहुत था। सिक्खों ने बटाला, कलानौर और आसपास के इलाकों के सभी गांवों में से सरकारी अहलकारों को भगा दिया। अब मुग़ल हकूमत इन इलाकों में केवल शहरों की चारदीवारियों और किलों में ही रह गई थी।[65] कलानौर और बटाला के पश्चात सिक्खों ने बुताला, सठियाला, घुमाण और काला अफ़गाना में भी अपना दबदबा कायम किया।

लाहौर पर हमला

पट्टी, गुरु का चक्क, रियाड़की और तटीय इलाकों पर कब्ज़े के पश्चात जून, 1710 में, सिक्ख फ़ौजों ने लाहौर पर भी हमला किया। इस समय लाहौर का सूबेदार बहादुर शाह का सबसे बड़ा शहज़ादा मआजुद्दीन जहांदार शाह था।नायब एक काबुली मौलवीज़ादा सईअद असलम ख़ान था। सिक्ख फ़ौजों ने शालीमार के आसपास कब्ज़ा कर लिया। अधिकतर अमीर मंत्री भय से भागकर लाहौर शहर के अंदर आ घुसे। सिक्खों ने शहर पर भी हमला किया। परन्तु वह शहर का द्वार न तोड़ पाए और चारदीवारी के अंदर दाखिल न हो पाए। फ़ौजदार असलम ख़ान सिर्फ बचाव की लड़ाई लड़ता रहा। क्योंकि उसे अप्रैल 1709 की हार अभी भी याद थी। वैसे उसकी फ़ौजों ने शहर का बचाव बहुत बहादुरी के साथ किया। यह लड़ाई दो दिन तक चली। इस लड़ाई में दोनों गुटों के हज़ारों फ़ौजी मारे गए। सिक्ख फ़ौजें बेशक किला तो न जीत सकी परन्तु उन्होंने लाहौर के आसपास के इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया।[66] सिक्खों ने यहां ठहरने की बजाय इलाकों के मुग़ल हाकिमों और

---

65 *खुशवंत राय, तवारीख-ऐ-सिक्खां

66 *इलियट और डोजन, भारत का इतिहास जैसे कि यहां के इतिहासकारों ने लिखा, भाग 7, पृष्ठ 419, मुहम्मद लतीफ, पंजाब का इतिहास, पृष्ठ 275

अन्य अमीरज़ादों से जो बहुत सी दौलत छीन कर दीन दुखियों में बांट दी।

सिक्खों के विरूद्ध जिहाद

मुहम्मद कासिम लाहौरी इबरतनामा में लिखता है कि जुलाई, 1710 में सिक्खों ने फिर लाहौर की ओर कूच किया। लाहौर के मौलवियों ने लाहौर में ईदगाह दिल्ली द्वार के निकट मौजूदा रेलवे स्टेशन की जगह पर 'हैदरी झंडा' फहराकर, जिहाद का नारा लगाकर दस हज़ार से ज्यादा मुसलमानों का जनसमूह इकट्ठा कर लिया। शाहजहां बादशाह के बड़े मंत्री साद्दुल्ला ख़ान का एक रिश्तेदार पीर मुहम्मद तक्की, मूसा बेग पुत्र खुदा वर्दी ख़ान अगरख़ानी के अतिरिक्त मौलानों के नेता हाजी इस्माइल, हाजी नियाज़ बेग, शाह इनायतुल्ला, मुहम्मद जमान रंगड़ मुसलमान और मुल्ला मीर मुहम्मद इस जिहादी फ़ौज का नेतृत्व कर रहे थे।

इन कट्टर मुसलमानों के साथ बहुत से हिंदू भी मिल गए। हिंदूओं का नेतृत्व अकबर का वज़ीर टोडर मल का पौत्र (पहाड़ा मल का पुत्र) कर रहा था। इस जिहाद के खर्च के लिए हिंदू व्यापारियों और अन्य अमीरों-मंत्रियों ने भी अपने खजानों के मुंह खोल दिए। इस राशि के साथ बहुत से घोड़े व हथियार खरीदे गये। हिंदूओं में से टोडर मल के पुत्र ने सबसे ज्यादा दौलत खर्च की। उसने सैंकड़ों मुसलमान नौजवान भर्ती करके खुद तनख्वाहें भी दी। उसने अपनी तोपें और बंदूकें भी लड़ाई में चलाने के लिए दी थी।

बेशक लाहौर का नायब असलम ख़ान सिक्खों से भयभीत स्वयं किले में छिपा हुआ था। परन्तु उसने भी एक हज़ार प्यादा फ़ौज और पांच सौ फ़ौजी अताउला ख़ान और मुहिब ख़ान खरल फरीद के बाद के नेतृत्व में जिहादी फ़ौज को भी साथ भेज दिया। इन 'गाजियों' की फ़ौज के साथ सिक्खों की तीन लड़ाईयां लाहौर के आसपास 'भरली' चमियारी के नज़दीक कोटला बेगम, किला भगवंत सिंह (परगना सहंसरा) और भीलोवाल (मल्हा) के इलाके में हुई। सबसे पहली लड़ाई गांव भरत और गांव रानी के पास कोटला बेगम में हुई। यहां सिक्खों के सिर्फ चार छोटे-छोटे जत्थे थे। लाहौर से आई हज़ारों की गाजी फ़ौज ने सिक्खों को घेर लिया। संख्या कम होने के कारण सिक्ख बचाव की लड़ाई लड़ते रहे और अंधेरा होने के पश्चात घेरा चीरकर निकल गए। यहां से निकल कर सिक्ख चमियारी गांव के पास जा कर रुक गए।[67] अब गाज़ियों ने चमियारी को चारों ओर से घेर लिया। चमियारी जाते हुए गाज़ी में से कुछ मुग़ल सिपाहियों ने निकट के गांवों में लूट-पाट करनी शुरू कर दी। कुछ बदमाश गाज़ियों ने औरतों के साथ जबरदस्ती भी की। गाज़ियों के नेताओं ने इन बदमाशों को भी दण्डित किया परन्तु इसके बावजूद गुंडागर्दी की हरकतें बंद नहीं हुई।

अगले दिन गिनती के सिक्खों और गाज़ियों के बीच घमासान लड़ाई हुई। सिक्ख संख्या

---

67 *उन दिनों में चमियारी एक प्रमुख शहर था और उस समय एक किला भी था।

में बहुत कम थे। वह यहां से निकलकर 'गढ़ी भगवंत राय' में जा घुसे। गाज़ी ने सिक्खों को यहां भी घेर लिया। रात के समय सिक्ख यहां से भी घेरा तोड़कर निकल गए। अगली सुबह को गढ़ी खाली देखकर गाज़ी फ़ौजें बहुत खुश हुई और कुछ देर ललकारने के पश्चात विजेता फ़ौजों की तरह, लाहौर की ओर चल पड़ी। लाहौर जाते हुए रास्ते में अंधेरा हो गया तो वह रात काटने के लिए भीलोवाल में रुके।परन्तु यह किला इतना बड़ा नहीं था कि इसमें सभी जिहादी आराम कर सकते। इस कारण उच्चाधिकारी और पुराने फ़ौजी किले में सो गए और बाकी के बाहर मैदान में लेट गए। उधर जब सिक्खों को पता चला कि जिहादी फ़ौज किले के बाहर सोई हुई है तो उन्होंने रातों-रात किला घेर लिया और सूर्योदय होते ही किले के बाहर ठहरी फौज पर हमला कर दिया। इस अचानक हमले में हज़ारों जिहादी मारे गए और अधिकतर अपनी जान बचाकर भाग गए। अब सिक्खों ने किले को घेरा डाले रखा और अंदर ठहरे फ़ौजियों को बाहर निकलने पर मजबूर कर दिया।

इस लड़ाई में टोड़र मल का पौत्र, मुर्तजा ख़ान और अन्य अनेक जिहादी नेता भी मारे गए। भीलोवाल की लड़ाई ने इस 'जिहाद' को नेस्त नाबूत कर दिया। इन तीनों लड़ाईयों में अंत जीत सिक्खों की ही हुई और उन्होंने किलों को अपने अधीन कर लिया। परन्तु सिक्ख इन किलों में नही रूके। इन लड़ाईयों में सिक्खों के विरूद्ध लड़ने वाले जिहादी तजुर्बेकार ना थे। और दूसरा जब लड़ाई शुरू हुई तो वह शुरू में ही सिक्खों से दहल गए। बेशक एक-आध बार जिहादियों के नेताओं ने उनको प्रोत्साहन देने की कोशिश भी की परन्तु डरे हुए सिपाहियों में वीरता न भरी जा सकी। इसके साथ सिक्खों का दबदबा बरकरार रहा और मुग़ल हाकिम और फ़ौजी भी सिक्खों से डरने लगे। इसकी ख़बरें बादशाह को भी पहुंची और वह भी बुरी तरह घबरा गया।[68] मुहम्मद कासिम लिखता है कि सिक्खों ने माझा से लाहौर शहर तक अपना कब्ज़ा कर लिया था।[69] यह बात अगस्त, 1710 की है।

एक साल से भी कम समय नवंबर, 1709 से सितंबर, 1710 केवल दस माह में बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में सिक्खों ने रावी दरिया से काली नदी (बरेली) के बीच का इलाका मुग़लों से आज़ाद करवा लिया था। इसके अतिरिक्त चम्बा, कुल्लू, मंडी, बिलासपुर, नाहन, गढ़वाल इत्यादि पहाड़ी रियासतों ने सिक्खों की बादशाही कबूल कर ली थी। सिक्खों के इन सभी इलाकों में अपने फ़ौजदार, दीवान, थानेदार, आमिल, जज, कर्मचारी लगा दिए थे। दिल्ली सूबे के हाकिम तो सिक्ख फ़ौजों के नाम से ही डरने लगे थे।

---

68 *मुहम्मद कासिम, इबरतनामा, पृष्ठ-22 कन्हैया लाल, तारीखे सिक्खां

69 *मुहम्मद कासिम की रिपोर्ट

अध्याय 6

मुग़ल बादशाह की सिक्खों के विरूद्ध मुहिम

बादशाह बहादुर शाह का दक्षिण से दिल्ली की ओर आना

दक्षिण भारत पर विजय के लिए मुग़ल साम्राज्य अकबर के समय से प्रयास कर रहे थे। बादशाह जहांगीर और बादशाह शाहजहां के समय में दक्षिण भारत पर मुग़ल जरनैलों के द्वारा हमले किए गए और मुग़ल साम्राज्य की सीमा नर्मदा दरिया के पार हो गई। बादशाह औरगंज़ेब के समय मुग़लों को दक्षिण पर विजय करने से संबंधित बड़ी कामयाबी हासिल हुई। मुग़ल साम्राज्य हैदराबाद तक पहुंच गया। बादशाह बहादुर शाह के समय दक्षिण भारत का सारा क्षेत्र मुग़ल साम्राज्य के अधीन आ गया और पूरे भारत वर्ष पर मुग़ल साम्राज्य स्थापित हो गया। जैसे कि पूर्व पृष्ठों में दर्शाया गया है कि मुग़ल राज दुनिया का सबसे अमीर साम्राज्य बन गया था। जिसके पास विश्व की 25 प्रतिशत धन-दौलत थी और सैन्य शक्ति में भी मुग़ल साम्राज्य, आटोमन साम्राज्य से उपर हो गया।

जनवरी, 1709 को बादशाह बहादुर शाह ने दक्षिण में अपने आखिरी भाई काम बख़्श को पराजित कर कत्ल कर दिया। अब बहादुर शाह का कोई भी विरोधी नहीं था। इसके बाद बादशाह ने फैसला किया कि दिल्ली लौटा जाए। दक्षिण की मुहिम पर सफल मुग़ल जरनैल मालिक अब्दुला 'दिल दलेर ख़ान' को लाहौर का सूबेदार और जम्मू का फ़ौजदार बना दिया और उसे दिल्ली से लाहौर जाने के लिए पैगाम भेज दिया।[70]

मार्च, 1709 में बादशाह राजस्थान पहुंचा ताकि बागी राजपूत राजाओं को सबक सिखाया जाए। इसमें से मुख्यतौर पर अजीत सिंह (जोधपुर), जय सिंह सवाई (जयपुर -अम्बेर) और अमर सिंह (उदयपुर) राजे सन् 1709 में बहादुर शाह के साथ दक्षिण की मुहिम पर गए थे और इस मुहिम में रास्ते में ही मंदसौर से वापिस आ गये थे। इन राजपूत राजाओं ने वापिस आकर आसपास के मुग़ल अफसर कत्ल करके अपना कब्ज़ा कायम कर लिया था। बहादुर शाह ने एक अन्य हुक्म जारी किया कि किसी हिंदू को पालकी में सफर करता देखो तो गिरफ्तार कर लो।[71]

इस सफर के दौरान मुग़ल अदालत भी बादशाह के साथ-साथ चल रही थी और बादशाह के द्वारा सफर में महत्वपूर्ण फैसले भी लिए गए। जिसके तहत लाहौर, कश्मीर, मुल्तान, जम्मू इत्यादि के नए सूबेदार और फ़ौजदार नियुक्त किए गए।

---

70 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की प्रविष्टि, तजकिरातुल सलातीन-ऐ-चगत्ता

71 *पालकी विशेष अधिकार और अमीरशाही का प्रतीक थी और यह केवल मुग़लों के लिए थी।

बादशाह को सिक्खों के विजयी होने की ख़बरें मिलना

25 फरवरी, 1710 को बहादुर शाह जमरौली कस्बे में पहुंच चुका था। यहां उसे सरहिंद के फौजदार वज़ीर ख़ान का एक ख़त मिला जिसमें उसने लिखा था कि ख़ालसा सिक्खों का दबदबा पंजाब के कोने-कोने में पहुंच गया है। उनको यह भी ख़बर मिली कि परगना बुड़िया और सढ़ौरा पर भी सिक्खों ने कब्ज़ा जमा लिया है और अपने प्रशासक नियुक्त कर दिए हैं। सरकारी अहलकार मार दिए हैं या पंजाब की धरती छोड़कर भाग खड़े हुए हैं। दामला के जांबांज़ अफ़गानों को सिक्ख फ़ौज द्वारा खाकशार कर दिया (मार दिया) है। इस पर बहादुर शाह ने लाहौर के सूबेदार को वज़ीर ख़ान की मदद भिजवाने की हिदायत जारी की।[72] 23 अप्रैल को बहादुर शाह को लाहौर सूबे के दीवान रुस्तम ख़ान का ख़त मिला। जिसमें उसने लिखा था कि एक आदमी ने स्वयं को गुरु बताकर पंजाब के क्षेत्र में उत्पात मचा रखा है। बादशाह इस बात को लेकर हैरान था कि ऐसा क्या कारण है कि इनती ऊंची शान-ओ-शौकत वाले बादशाह से टक्कर लेने की किसी ने हिम्मत की, जिसके कारण पंजाब में मुग़लों की हालत खराब हो गई है। बादशाह इस बात का निर्णय नहीं ले पा रहा था कि वह अनसुने दुश्मन के खिलाफ स्वंय कूच करें। अप्रैल, 1710 तक भी मुग़ल दरबार के दरबारी बादशाह को यह कहकर शांत करते रहे कि वह दुनिया का सबसे ताकतवार बादशाह है और पंजाब में हो रहा विरोध कोई छोटी-मोटी मुहिम है। जोकि मुग़ल अधिकारियों के द्वारा नियत्रंण कर ली जाएगी। दिन-प्रतिदिन पंजाब के हालात खराब होने लगे और सरकार सरहिंद और सरकार जालंधर के ज्यादातर परगने सिक्ख फ़ौज के कब्ज़े में आ गए। इस पर बादशाह ने 28 अप्रैल, 1710 को ऐमनाबाद और इसके आस-पास के फ़ौजदारों को हुक्म जारी किया कि वह लाहौर के सूबेदार का साथ दे ताकि सिक्खों को सजा दी जा सके।[73]

मई, 1710 को बहादुर शाह अजमेर पहुंच गया। यहां बहादुर शाह के भेजे सफीर जयपुर, जोधपुर, अजमेर के राजपूत राजाओं को लेकर बादशाह के पास पहुंचे।[74] बादशाह इन राजपूत राजाओं को सजा देना चाहता था। परन्तु पंजाब के बिगड़े हालातों के कारण राजस्थान में राजपूत राजाओं के प्रति रणनीती भी बदली गई। शहज़ादा अजीमुशान की सिफारिश मानकर इन तीनों राजाओं के सभी गुनाह माफ कर दिए गए। उनको खिल्लतें देकर विदा किया। वास्तव में बादशाह इस समय पंजाब के हालतों के बारे में अत्यधिक फिक्रमन्द था। इस कारण उसने राजपूतों के साथ समझौता करना ही बेहतर समझा।[75]

20 मई, 1710 को बहादुर शाह को खबर मिली कि सरहिंद और लाहौर के इलाकों पर सिक्खों का कब्ज़ा हो चुका है। सरहिंद का फ़ौजदार वज़ीर ख़ान भी मार गिराया गया है। इसके

---

72 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 25-02-1710 की एंट्री

73 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 23-04-1710 की एंट्री

74 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 05-05-1710 की एंट्री

75 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 10-05-1710 की एंट्री

अतिरिक्त यह भी खबर मिली कि सिक्ख फ़ौज के द्वारा सहारनपुर सरकार के परगनों पर भी हमले आरंभ कर दिए गए हैं। बादशाह को यह भी खबर दी गई कि सढ़ौरा में 70,000 घुड़ सवार सिक्ख फ़ौज इकट्ठी हुई हैं। बादशाह ने हिसार के फ़ौजदार को सिक्खों के खिलाफ मुहिम में शामिल होने के लिए आदेश जारी किए। परन्तु कुछ दिनों बाद खबर यह आई कि हिसार का फ़ौजदार अपनी जान बचाने के लिए हिसार छोडकर भाग खड़ा हुआ। कुछ दिन बाद बादशाह के पास यह खबर आती है कि सिक्ख फौजों ने लाहौर के आस-पास इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया है और सहारनपुर सरकार भी लगभग सिक्ख फौजों के कब्ज़े में है।

बादशाह ने नवाब आसफुद्दौला असद् ख़ान व मुहम्मद अमीन ख़ान और ख़ान दुरान बहादुर की ओर पैगाम भेजे थे कि वह उस ओर सिक्खों पर यकायक हमले करें। उन्होंने जवाब दिया है कि "हम तो खुद परेशान है और यदि वह सिक्ख फ़ौज के खिलाफ मुहिम शुरू करते है तो वह अपना इलाका सिक्ख फ़ौज से नहीं बचा सकते।" बादशाह की ओर से अब्दुल्ला ख़ान को पच्चीस हज़ार आलाति-नुकरा (चांदी के सिक्के) और पचास हज़ार रुपए शाही खजाने में से सहायता भिजवाने का हुक्म हुआ। यह भी हुक्म हुआ कि सिक्ख फ़ौज के खिलाफ कार्यवाही जल्द से जल्द और ज़ौरों-शौरों से की जाए। इस कार्य के लिए यदि और भी धनराशि की आवश्यकता पड़े तो वह शाही खज़ाने से उपलब्ध करवाई जाएगी।[76]

20 मई, 1710 को बादशाह अजमेर के निकट बहासू के पड़ाव पर था। यहां उसे ख़बर मिली कि सिक्खों का पूरे पंजाब पर कब्ज़ा हो चुका है[77] और पंजाब के मुख्य मुग़ल अहिलकार मार दिए गए हैं या पंजाब छोड़कर भाग गए हैं या सिक्ख फ़ौज में शामिल हो गए हैं। बहादुर शाह ने शाहजहांनाबाद (दिल्ली) के मुसद्दियों के नाम हुक्म लिखवाया कि वह खाने जहान बहादुर सूबेदार अलाहाबाद और अबैद ख़ान बहादुर को मदद के तौर पर 8 लाख रुपए दें। अफजल ख़ान को हुक्म दिया कि वह शाहजहांनाबाद जाये और ख़ान बहादुर, अब्दुला ख़ान, शमशेर ख़ान, चेत सिंह (जमींदार कुमाउं) और अनूप सिंह व ईसा ख़ान इत्यादि को लेकर सिक्ख फ़ौज के खिलाफ पंजाब रवानगी करें।[78]

27 मई 1710 को शफशिख़्रख़ान ने बहादुर शाह को अपील की कि अगर चकला सरहिंद की फ़ौजदारी को अपेक्षित सामग्री और जमीयत सहित जिम्मेदारी सौपीं जाए तो वह सिक्ख फ़ौज को पंजाब में काबू कर सकता है। परन्तु बादशाह ने पेशकश को कबूल नहीं किया।[79] 28 मई को बहादुर शाह को बताया गया कि जोधपुर के राजा अजीत सिंह और जयपुर के राजा जय सिंह सवाई को जरनैल बंदा सिंह बहादुर का ख़त पहुंचा है और उन्होंने इन ख़तों के जवाब भी

76 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 12-05-1710 की एंट्री
77 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 20-05-1710 की एंट्री
78 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 24-05-1710 की एंट्री
79 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 27-05-1710 की एंट्री

लिख भेजे हैं। यह दोनों राजे सांभर से मनोहरपुर कूच कर गए हैं।[80] 5 जून, 1710 को बहादुर शाह ने ख़ान खाना (मुनायम ख़ान) की विनती पर महाबत ख़ान (पुत्र ख़ान खाना) को इन राजाओं से भेट करने के लिए भेजा और इन राजाओं ने मुग़ल जरनैल को तसल्ली दिलाई कि वह बादशाह बहादुर शाह के साथ है और जरूरत पड़ने पर सिक्ख फ़ौज के खिलाफ मुहिम में शामिल होंगे।[81] 10 जून, 1710 महाबत ख़ान इन राजाओं को बादशाह से मिलाने के लिए चल पडा। सिक्ख फ़ौज से डरे हुए बादशाह ने आदेश जारी किए कि इन राजाओं का स्वागत शाही अदब से किया जाए।[82]

10 जून, 1710 को बादशाह ने लाहौर के मुसद्दियों को हुक्म भेजा कि वह वज़ीर ख़ान के भतीजे मुहम्मद तकी को तीन हज़ार रुपए रास्ता खर्च देकर बादशाह के पास भेज दे। इसी दिन बादशाह को पता चला कि बख्शी शाह निवाज की जागीर के आमिल (अफसर) सिक्खों से डर कर इलाका छोड़कर भाग गए हैं। थानेसर और पानीपत परगना में सिक्ख फ़ौज के द्वारा भारी मोर्चेबंदी कर ली गई और कोई भी मुग़ल जरनैल ऐसा नही है जो सिक्ख फ़ौज का सामना इस इलाके में कर सकें। ज्यादातर मुग़ल जरनैल शाहजहांनाबाद (दिल्ली) भाग आए हैं।

11 जून, 1710 को महावत ख़ान राजपूत राजाओं को बादशाह के पास लेकर आया। अजीत सिंह और जय सिंह सवाई ने दो-दो सौ मोहरें और दो-दो हज़ार रुपए निसार (वारने) के तौर पर बहादुर शाह को भेंट किये। बादशाह ने उन सभी को बढ़िया जामे-जोड़े, जड़ाऊ शमशीरें, कीमती मुकुट, हाथी और इराकी घोड़े दिए।[83] तज़किरा सलातीन चुगता का लेखक (मुहम्मद हादी कामवर ख़ान) जो उस समय बादशाह के साथ था बताता है कि मैंने देखा कि सारा पहाड़ और जंगल राजपूतों के साथ भरा पड़ा था और कई हज़ार सांड सवार पहाड़ की तलहटी में खड़े थे। परन्तु बादशाह के साथ चार शहजादे, निकटवर्ती अमीरों के अतिरिक्त कोई नहीं था। राजपूत राजे पूरी तैयारी में थे कि अगर बहादुर शाह कोई गड़बड़ करता तो उसका काम भी तमाम हो जाना था।

खाफी ख़ान (मुंतखाब-अल-लुबाब में) लिखता है कि बादशाह को 22 जून, 1710 को यह भी पता चला कि बंदा सिंह बहादुर ने किला लोहगढ़ में डेरा जमाया हुआ है। पिछले सप्ताह एक दिन वह इस किले में से हाथी पर सवार होकर हाथ में नेजा पकड़ कर निकले और यहां से 12-13 किलोमीटर दूरी पर गुलाब नगर (बुड़िया) पहुंचे। उनके साथ ढ़ाई हज़ार घुड़सवार और दस हज़ार प्यादा फ़ौज थी। बुड़िया से उसे ख़बर मिली कि सिक्ख फ़ौज से हार कर जलाल ख़ान सहारनपुर आ गया है। अगले दिन बादशाह को ख़बर मिली कि बुड़िया से बंदा सिंह बहादुर सहारनपुर की ओर चले गए थे।

80 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 28-05-1710 की एंट्री

81 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 05-06-1710 की एंट्री

82 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला

83 *कामवर ख़ान, तजकेरा सलातीन चुगता

सहारनपुर परगने के गांव बनेर में सहारनपुर का नया सिक्ख थानेदार अमर सिंह नियुक्त कर दिया गया। हिंदू चौधरी लाल कंवर गुज्जर ने मुग़लों को दगा दिया जिस कारण मुग़ल फ़ौज की सहारनपुर सरकार में हार हुई। बादशाह को यह भी बताया गया कि गुरबख्श सिंह इस समय पर बुड़िया का फ़ौजदार नियुक्त कर दिया गया हैं और बुड़िया के अमीर काज़ी शाह मुहम्मद को गिरफ्तार करके उसका माल ज़ब्त करके उसे डाबर लोहगढ़ में कैद कर दिया गया और बंदा सिंह बहादुर ने किशोर सिंह को बुड़िया का नायब फ़ौजदार नियुक्त कर दिया है।

इसी समय बादशाह को यह भी बताया गया कि बंदा सिंह बहादुर ने बुड़िया का नाम गुलाब नगर और सहारनपुर का नाम भागनगर रख दिया है।[84] इन ख़बरों के साथ बादशाह फिर परेशान हो गया। पहली जुलाई, 1710 को बहादुर शाह का काफिला रूपनगर पहुंचा और यहां उसे मुराफ ख़ान का ख़त मिला जिसमें लिखा था कि सिक्खों ने रामपुरा, ननौता, झुंझाना, बकौर, बरसादू, सढ़ौरा, कैराना, बुढ़ाना, कंधाला और बुड़िया इत्यादि में थानेदार नियुक्त कर दिए हैं। सहारनपुर का कानूनगो और बागी गुज्जर सिक्ख फ़ौज के साथ मिल गए हैं। बादशाह को यह ख़बर भी मिली कि 20 जून, 1710 को सिक्खों की टक्कर गांव रड़ के समीप गांव केहरा की चारागाह में देहराना और मुकाद गांवों के बीच वाले अफ़गानों के साथ हुई थी। जिसमें उन्होंने सिक्खों को पराजित किया था। सिक्खों और अफ़गानों में हुई लड़ाई के बारे बादशाह को बताया गया कि जलाल ख़ान ने अपने पोते गुलाम मुहम्मद बन्यारा और पीर मुहम्मद ख़ान की मदद से सिक्खों को पराजित किया था। इस लड़ाई में कई सिक्ख मारे गए थे। सिक्खों की दो तोपें, पांच बंदूकें, छह रामजंगे, कई राइफलें, दो तलवारें, एक हज़ार तीर, चार तंबू और अन्य सामान जलाल ख़ान की फ़ौजों के हाथ आया था। यह ख़बर सुनकर उदास हुए बादशाह को कुछ तसल्ली हुई और उसने जलाल ख़ान के लिए एक रेशमी पोशाक, एक फ़ुरमान और एक घोड़ा भेजने का हुक्म दिया। बादशाह इतनी छोटी सी जीत पर भी हर्षित हो गया और उसने यह भी कहा कि सरहिंद और सहारनपुर की फ़ौजदारी भी इस ख़ान (जलाल ख़ान रोहिला) को सौंप दी जायेगी।[85]

2 जुलाई, 1710 में बादशाह को जरनैल बंदा सिंह बहादुर की सरहिंद में जीत के पश्चात सिक्खों द्वारा ऐलान किया हुआ ऐलान-नामा पढ़ कर सुनाया गया जिसके बोल थे:-

अज़मत-ऐ-नानक गुरु हम ज़ाहिर ओ बातन असत।।
पादशाह-ऐ-दीन-ओ-दुनिया आप सच्चा साहिब असत।।

इस दुनिया व उस दुनिया में भावार्थ कुल जहान में गुरु नानक साहिब की महिमा कायम हो गई। सच्चा गुरुदीन और दुनिया का पातशाह है। बादशाह को बताया गया कि सिक्खों ने अपने खुफिया शब्द 'बोले' मुकर्रर किये हुए हैं। वह एक अकेले सिक्ख को 'सवा लाख फ़ौज' कहते हैं। उन्होंने अपना सिक्का भी जारी किया हुआ है। वह गांवों में फसलों की कटाई कराते हैं और दो

84 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 22-06-1710 की एंट्री

85 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-07-1710 की एंट्री

हिस्से कृषक को देते हैं और केवल तीसरा हिस्सा स्वयं लेते हैं। वज़ीर ख़ान के सरकारी खजाने के अतिरिक्त हाथी, घोड़े, नकद माल उनके हाथ लगा है।[86] इन दिनों बादशाह को पता चला कि बंदा सिंह बहादुर स्वयं सहारनपुर आ पहुंचे है। इस कारण बाढ़ा का सद्दात ख़ान और अन्य अमीर मंत्री बंदा सिंह बहादुर का मुकाबला करने के लिए तैयारी कर रहे हैं। सद्दात के पास सात सौ घुडसवार फ़ौज थी। जलाल ख़ान रोहिला इस समय जलालाबाद की रक्षा के लिए इस नगर के किले में बैठा हुआ था। जो कि उसके घर मुजफ्फर नगर से 45 किलोमीटर दूरी पर था।

7 जुलाई, 1710 को बादशाह को ख़बर मिली कि जलाल ख़ान और सद्दात ख़ान की फ़ौजों के छह हज़ार घुड़सवारों ने सिक्खों के साथ खूब टक्कर ली थी। इस लड़ाई में आठ सौ सिक्ख मारे गए थे या बुरी तरह जख़्मी हुए थे। बादशाह को यह भी झूठी ख़बर दी गई कि बंदा सिंह बहादुर भी मारे गए है। इस पर बादशाह बहुत खुश हुआ परन्तु जब इस खबर की पुष्टि बादशाह ने करनी चाही तो उसे पता चला कि बंदा सिंह बहादुर मारे नहीं गए थे बल्कि उन्होनें मुग़ल फ़ौज को भारी नुक्सान पहुंचाया है। जलाल ख़ान ने उनका पीछा किया था।

8 जुलाई, 1710 को बहादुर शाह ने सिकन्दराबाद और मेरठ के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान को सरहिंद का नया फ़ौजदार बना दिया। उसके मनसबदारी में आठ सौ की बढ़ौतरी कर दो हज़ार सवार और बढ़ा दिए परन्तु अहमद ख़ान में सरहिंद जाने की हिम्मत नहीं थी।[87]

23 जुलाई, 1710 को बादशाह उदयपुर पहुंचा। यहां उसे पता चला कि बंदा सिंह बहादुर ने पानीपत पर कब्ज़ा करने और दिल्ली पर हमले की तैयारी में है। यह भी चर्चा थी कि पानीपत के मुग़ल हाकिम सिक्खों के साथ मिल गए हैं। बख्शी मुहम्मद नसीर सिक्ख बनकर नसीर सिंह कहलाने लगा था। बंदा सिंह बहादुर ने उसे खजाना अफसर बना दिया है। इन दोनों शहरों में एक भी मुग़ल या अफ़गान अफसर नहीं रहा। बादशाह को यह भी बताया गया कि बंदा सिंह बहादुर के पास कोई करामाती ताकत है। जब वह सहारनपुर जाने के लिए यमुना नदी के किनारे पर आए तो उन्होनें दरिया को कहा कि मेरी फ़ौजों को पार करने के लिए रास्ता दे। तो दरिया तुरंत शांत हो गया और सभी सिक्ख फ़ौजें सरलता से पार हो गई।[88]

बादशाह को अपील भेजी कि वह फिरोज़ ख़ान मेवाती की कमान के नीचे शाही फ़ौज बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध भेजे। इस पर बादशाह ने रुस्तम दिल ख़ान के द्वारा फिरोज़ ख़ान मेवाती को सिक्खों के विरूद्ध फ़ौज लेकर जाने का हुक्म दिया। 28 जुलाई, 1710 को बादशाह ने सईद वजीह-उद्-दीन, उस्मान ख़ान करावल और रुस्तम दिल ख़ान के भाई सुलतान कुली ख़ान को भी फिरोज़ ख़ान मेवाती के साथ जाने का हुक्म दिया और बादशाह ने मेवाती को पचास

86 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 02-07-1710 की एंट्री

87 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 08-07-1710 की एंट्री

88 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 23-07-1710 की एंट्री, यहां पर यह भी बताना उचित होगा कि सिक्ख विचारधारा में चमत्कार नाम की चीज नही होती। यह आश्चर्यजनक बात है कि मुग़ल बादशाह के दरबार में जरनैल बंदा सिंह बहादुर को करामाती व्यक्तित्व बताया गया।

हज़ार रुपए भी खर्च के लिए दिए।[89]

अब बादशाह ने स्वयं पंजाब में बड़ी फ़ौजी कार्यवाही करने का फैसला कर लिया। 14 अगस्त, 1710 को बादशाह मदगांव में था और यहां उसने आदेश जारी किया कि बादशाह के काफिले का कोई भी शाहजहांनाबाद (दिल्ली) न जाये और न ही राजधानी से किसी को शाही लश्कर में घुसने दिया जाये।[90] बादशाह स्वयं भी दिल्ली नहीं गया और सीधा ही सोनीपत की ओर चला गया। बादशाह ने लखनऊ, मुरादाबाद और दिल्ली के सूबेदार भी अपनी, फ़ौजों सहित जरनैल बंदा सिंह बहादुर के खिलाफ मुहिम में शामिल होने का हुक्म दिया। इसके अतिरिक्त बाढ़ा सादात (ज़िला मुजफ्फर नगर) का सईअद अब्दुला (सूबेदार इलाहाबाद), दो हिंदू राजपूत राजा छत्रशाल बुंदेला और उदित सिंह बुंदेला को भी अपनी फ़ौजें लेकर बादशाह के साथ चलने का हुक्म दिया।[91]

26 अगस्त, 1710 को बादशाह ने कुमाऊं के हिंदू राजे को हुक्म भेजा कि वह बंदा सिंह बहादुर का पीछा करे और उसे सजा देने के पश्चात बादशाह के पास पेश हो। 28 अगस्त, 1710 को श्रीनगर-गढ़वाल के राजे फतेह शाह को भी हुक्म भेजा गया कि वह नानक पंथियों (सिक्खों) के विरूद्ध मुहिम शुरू करे।[92] बादशाह द्वारा फिरोज़ ख़ान मेवाती और सईअद वजीह-उद्-दीन पंजाब के लिए रवानगी का हुकुम हुआ। परन्तु वजीह-उद्-दीन ने यह हुकुम नहीं माना और अपने नगर चला गया। अगले दिन 5 सितंबर, 1710 को जब यह ख़बर बादशाह को मिली तो उसने गुस्से में आकर उसका मनसब समाप्त कर दिया और दरबार में पेश होने का हुकुम दिया।

उधर यमुना पार का इलाका जीतने के पश्चात बंदा सिंह बहादुर ने पंजाब की ओर वापसी शुरू कर दी। उसने किरत सिंह बक्शी को चार हज़ार सवार देकर पानीपत और तरावड़ी का हाकम नियुक्त किया। भाई भगतू परिवार के भाई फतेह सिंह और गुरबख्श सिंह, बाबा फूल परिवार के त्रिलोक सिंह और राम सिंह और भाई रुपे के बेटे परम सिंह और धर्म सिंह को मालवा (समाना, लक्खी जंगल और तिहाड़ा) का इलाका सौंप कर बंदा सिंह बहादुर स्वयं लोहगढ़ किले की ओर रवाना हो गया।

मुंतखबुल लुबाब का लेखक मुहम्मद हाशिम खाफी ख़ान इस समय के हालतों के बारे लिखता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर के हमले में असंख्य मुग़ल सैनिक शहीद हो गए थे। पंजाब सिक्खों के हमलों से र्बबाद हो गया था। विशेषकर सढ़ौरा और करनाल कस्बे के फ़ौजदार, अनेक साथी मुसलमानों सहित अपनी क्षमता अनुसार मुकाबला करके 'शरबते-शहादत' पी गए।

---

89 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 25-07-1710 की एंट्री

90 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 14-08-1710 की एंट्री

91 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 16-08-1710 की एंट्री

92 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 28-08-1710 की एंट्री

28 अगस्त, 1710 को बादशाह के दरबार में भी पंजाब में सिक्खों के बोलबाले का जिक्र हुआ था। साहूकारों से पता चलता है कि दोआबा से मामला-वटाई असल में हासिल नहीं हो रहा। ख़ालसे-सिक्ख मामला वसूल कर और बैलगाड़ियां भरकर डाबर (लोहगढ़) ले जाते हैं। एक दिन तो 300 बैलगाड़ियां लोहगढ़ की तरफ जाती देखी गई। बरेली से लेकर लाहौर सिक्ख फ़ौज का रास्ते रोकने का साहस किसी में भी नहीं था।[93]

29 अगस्त, 1710 को बादशाह ने एक नया हुक्म जारी किया कि जो हिंदू पेशेकार बन कर हजूर के सामने आते हैं। अपनी दाडियां (केश) मुंढवा कर आएं।[94] इस हुक्म पर तुरंत अमल करने वाले पेशकारों, दीवानों बक्शियां, मीर आतिश और अन्य खिदमत गुजारों को जामे-जोड़े और कानों के लिए मोतसरियां इनाम के तौर पर दी गई। बादशाह सिक्खों से इतना परेशान था कि अब वह हर समय बंदा सिंह बहादुर को खत्म करने की सोचता था। 29 सितंबर, 1710 को बादशाह ने महावत ख़ान (पुत्र मुनईम ख़ान) को अपने पास बुलाकर रेशमी पोशाक भेंट की और सिक्खों के विरूद्ध मुहिम पर जाने के लिए हुक्म किया। उसे कहा गया कि वह सिक्ख मोर्चा करनाल तक साफ कर दें। बादशाह ने नुसरत ख़ान, गुलाम पैगंबर कुली ख़ान और सईद हसन ख़ान के अतिरिक्त हिंदू राजा राजा छत्रसाल बुंदेला को भी महावत ख़ान के साथ जाने के लिए हुक्म किया जो उन्होंने खुशी-खुशी कबूल कर लिया।[95]

2 अक्तूबर, 1710 को बादशाह को सूचना मिली कि फिरोज़ ख़ान मेवाती 28 सितंबर 1710 को पानीपत में सिक्ख मोर्चा हटाते हुए करनाल पहुंच गया है।[96] 12 अक्तूबर, 1710 को बादशाह को ख़बर मिली कि फिरोज़ ख़ान भी करनाल से 6 किलोंमीटर की दूरी पर तरावड़ी पहुंच गया है। सिक्खों के साथ लड़ाई शुरू हुई हैं। 14 अक्तूबर, 1710 को बादशाह को ख़बर मिली कि जलाल ख़ान रोहिला और सिक्खों में घमसान जंग हुआ था। जिसमें 300 शाही फ़ौजी और कई सिक्ख भी मारे गए थे।[97] इस लड़ाई के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी आगे दी गई है।

राहों (ज़िला नवांशहर) की लड़ाई (अक्तूबर-नवंबर 1710)

सितंबर-अक्तूबर 1710 में सिक्खों ने राहों (तब ज़िला जालंधर अब ज़िला नवांशहर) पर भी हमला किया और कुछ देर के लिए वे इस शहर और इसके किले पर काबिज़ भी हो गए। इस जंग में मुग़लों की तरफ से शमश ख़ान भी लड़ रहा था। जो सुलतानपुर लोधी का पुराना

---

93 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 28-08-1710 की एंट्री
94 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29-08-1710 की एंट्री
95 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29-09-1710 की एंट्री
96 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 02-10-1710 की एंट्री
97 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 14-10-1710 की एंट्री

फौजदार रह चुका था। सितंबर में शमश ख़ान ने सिक्खों के विरुद्ध जिहाद का नारा लगाया और सुलतानपुर और निकट के इलाकों से कईं मुग़ल इकट्ठे कर लिए। शमश ख़ान के पास 4-5 हज़ार घुड़सवार, 30 हज़ार पैदल फ़ौज व शेष समान्य मुग़ल सैनिक थे। जब शमश ख़ान राहों पहुंचा तो सिक्खों ने किले से बाहर आकर शमश ख़ान की फ़ौज पर धावा बोल दिया। एक बार तो शमश ख़ान की फ़ौज भागने वाली थी।[98]

दोनों गुटों में बहुत जबरदस्त जंग हुई। सिक्खों के पास बढ़िया हथियार थे। वह वीरता के साथ लड़े और एक बार तो शमश ख़ान को अपनी पराजय सामने नज़र आई। परन्तु कुछ समय बाद ही शमश ख़ान का चाचा वाजीद ख़ान (कुतबदीन खेशगी), सूबेदार जम्मू भी वहां पहुंच गया। कसूर का पठान फ़ौजदार उम्र ख़ान भी अचानक उधर आ पहुंचा। इन्होंने किले और शहर को सभी ओर से घेर लिया। सिक्खों ने इन तीनों फ़ौजों का कई दिन तक मुकाबला किया और कुछ दिन बाद राहों का किला खाली कर दिया। इस जीत के पश्चात सभी मुग़ल और पठान फ़ौजों के हौसले बुलंद हो गए। वह सरहिंद की ओर चल पड़े जिससे उसे भी सिक्खों से आज़ाद करवाया जा सके। राहों से शमश ख़ान ने माछीवाड़ा से सतलुज दरिया पार किया और यहां की किला नुमा पक्की सराय में पहला पड़ाव किया।[99] राहों पर शमश ख़ान की फ़ौज के कब्ज़े की ख़बर बादशाह को 15 अक्तूबर, 1710 के दिन मिली थी। परन्तु इस सूचना में शमश ख़ान की सिक्खों के साथ राहों की जगह माछीवाड़ा में लड़ाई का विवरण दिया गया था और मरने वाले सिक्खों की संख्या दो हज़ार बताई गई थी।[100] इसके कुछ समय पश्चात शमश ख़ान को मार गिराया गया। सिक्खों ने फिर राहों पर कब्ज़ा कर लिया।

पानीपत की लड़ाई

अहवाल-उल-खवाकीन का लेखक मौहम्मद कासिम औरगांबादी लिखता है कि जुलाई 1710 में बादशाह के हुकुम अनुसार खाने-ख़ान मुनायिम ख़ान के बड़े बेटे महावत ख़ान को आदेश हुए थे कि वह दिल्ली से बड़ी फ़ौज लेकर पंजाब जाए। जरनैल बंदा सिंह के विरूद्ध मुहिम शुरू करे। महावत ख़ान बड़ी तेजी से पानीपत पहुंचता है और सिक्ख फ़ौज के साथ पानीपत में एक बड़ी जंग होती है। जिसमें मुग़ल फ़ौज का भारी नुक्सान होता है और महावत ख़ान अपनी फ़ौज समेत वापिस दिल्ली भाग आता है और सिक्ख थाने व मोर्चे ज्यों के त्यों कायम रहते है। महाबत ख़ान सिक्खों के हमले से डरकर पीछे हट गया था।[101]

---

98 *ख़ाफी ख़ान, भाग 2, पृष्ठ 658

99 *अब इस किले जैसी सराय का नामों-निशान भी बाकी नहीं है।

100 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 15-10-1710 की एंट्री

101 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी अहवाले-खवाकिन, पृष्ठ 31-32

तरावड़ी/खेड़ा अमीन की लड़ाई

तरावडी शहर में एक पुराना किला मौजूद था। जोकि काफी मज़बूत था और सिक्ख फ़ौजों ने इस किले के ऊपर कब्ज़ा कर लिया था। तरावड़ी शहर खेड़ा अमीन से 5 किलोंमीटर की दूरी है और थानेसर शहर से 15 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित है। अध्याय-22 में थानेसर शहर के बारे में विस्तारपूर्वक लिखा गया है। सिक्ख मोर्चो/किलों का ज़िर्क भी किया गया है। इस अध्याय में यह भी दर्शाया गया है कि थानेसर दुनिया का एक ऐसा शहर है जहां दस के दस सिक्ख गुरु साहिबान आए। उन्होंनें हलीमी राज की स्थापना के लिए समय-समय पर प्रमुख योगदान दिया। तरावड़ी और अमीन के आस-पास सिक्ख फ़ौज द्वारा कई सिक्ख किले स्थापित कर दिए गए थे। जिनमें से प्रमुख मोर्चो शामगढ़, टिखाना ख़ालसा, बरानी ख़ालसा, रायपुर, टिकरी ख़ालसा, सनहेरी ख़ालसा, सग्गा, रायसन, एबली ख़ालसा, नारायणा, कौल व जी.टी. रोड से इंद्री की तरफ राजगढ़, अमरगढ़, गढ़पुर ख़ालसा, गोरगढ़, नन्दी ख़ालसा, भोजी ख़ालसा, शेरगढ़ ख़ालसा इत्यादि। इन किलों में पर्याप्त मात्रा में हथियार और रसद मौजूद थी। यह किले आपस में ताल-मेल में रहकर मुग़लों पर हमला करने में सक्षम थे। इस इलाके में उस समय भारी जंगल था और ज़्यादातर इलाका ऊबड़-खाबड़ भी था। सिक्ख फ़ौज के लिए पानी की पर्याप्त व्यवस्था थी। जैसे कि सिक्खों द्वारा इस इलाके में बड़े-बड़े तालाब, कुएं इत्यादि स्थापित कर दिए गए थे। यही कारण है कि करनाल के आगे मुग़ल फ़ौज नही बढ़ पा रही थी और बार-बार मुग़ल फ़ौज को भारी नुकसान हो रहा था। बादशाह बहादुर शाह ने मुग़ल जरनैल नवाब ख़ान-खाने, वजीत ख़ान मेवाती, फिरोज़ ख़ान और सुल्तान क्वाली ख़ान को भारी मुग़ल फ़ौज देकर भेजा ताकि पहले पहुंच कर जी.टी. रोड का रास्ता सिक्ख फ़ौजों से मुक्त करवाया जा सके। 16 अक्तूबर, 1710 में खेड़ा अमीन में सिक्ख फ़ौज और मुग़ल फ़ौज के बीच भारी जंग हुई। सिक्ख फ़ौज ने मुग़ल फ़ौज का भारी नुकसान किया और सिक्ख फ़ौज का जरनैल भाई किरत सिंह (नामी बक्शी) शहीद हुआ। बहादुर शाह की भेजी 60 हज़ार फ़ौज के जरनैल फिरोज़ ख़ान मेवाती और महाबत ख़ान थे और सिक्खों पर हमला थानेसर (कुरूक्षेत्र) के निकट (करनाल से 24 किलोंमीटर की दूरी पर) गांव खेड़ा अमीन पर किया था। सिक्ख फ़ौज की तादाद भी हजारों में थी और वह जरनैल किरत सिंह बक्शी की अगुवाई में लड़ रही थी।

यार मोहमम्द ख़ान कलंदर फारसी के दस्तावेज दस्तूर-उल-इन्सा सन् (1710-1711 मौका का गवाह) लिखता है कि बादशाह के आदेश पर अगस्त, 1710 में सुल्तान कुली ख़ां, फिरोज़ ख़ां मेवाती, शिकार ख़ां ने सिक्ख फ़ौज के विरूद्ध जंग पानीपत से शुरू कर दी थी। इसके अतिरिक्त लेखक यह भी लिखता है थानेसर में सिक्ख फ़ौज ने अपना शासक नियुक्त किया। इस शहर के रहने वाले कई मुसलमान और हिन्दुओं ने सिक्ख धर्म अपना लिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पास जो भी व्यक्ति अपनी फरियाद लेकर जाता तो बंदा सिंह बहादुर उस व्यक्ति को सिंह कहकर संबोधित करते थे। खेड़ा अमीन की लड़ाई में शाह साफी कलंदर भी

मुग़ल फ़ौज की मदद के लिए अपने शार्गिदों के साथ पहुंचा। शाह सूफी कलंदर सुल्तान कुली ख़ां का गुरु भी था। अमीन की लड़ाई में मुग़ल और सिक्ख फ़ौज के बीच में घमासान युद्ध हुआ। जहां तक नज़र जाती थी वहां तक लाशों के ढ़ेर थे। बियाबान जंगल भी लाशों से भर गए। ज़खमियों की गिनती की जानी संभव नही थी। मैदाने जंग का हाल देखकर फिरोज़ ख़ां मेवाती और वजीद ख़ान मेवाती के होश उड़ गए। दोनों के पैर उनके शरीर का वज़न नही सह सकें। इस्लाम के मानने वाले लोगों के हालात काफी खराब थे। इस पराजय के पश्चात फिरोज ख़ान मेवाती गुस्से में आकर स्वयं आगे बढ़ा और सभी फ़ौजों को एक दम हल्ला बोलने के लिए कहा और घमसान जंग हुई। बार-बार यहां पर मुग़ल फ़ौज को हार का सामना करना पड़ रहा था। नोबत यहां तक आ गई थी कि मुग़ल फ़ौज दिल्ली की तरफ भागने के लिए तैयार हो गई थी। उसी समय शाह साफी कलंदर भी मुग़ल फ़ौज की मदद के लिए अपने शार्गिदों के साथ खेड़ा अमीन पहुंचा। इस मौके पर सैंकड़ों सिक्ख शहीद हो गए। फिरोज़ ख़ान मेवाती ने शहीद हुए 300 सिक्खों के सिर कटवा कर बादशाह को भेजे। भारी मात्रा में सिक्ख फ़ौज शाहबाद के नजदीक मौजूद थी। खेड़ा अमीन की जंग के बाद बादशाह खुश हुआ और उसने 20 अक्तूबर, 1710 को मेवाती को खूब इनाम देने की घोषणा की।

सिक्खों ने थानेसर शहर के समीप एक ऊंची मीनार (सैटल-अल-जंग) खड़ी की, जो कि राज स्थापना का चिह्न दिखाती थी।[102] इसके उपरांत जोश में आकर मेवाती ने सिक्खों पर दो अन्य हमले किये। तरावड़ी और थानेसर में 19 अक्तूबर को दोनों गुटों में खूब जंग हुई। सिक्ख फ़ौजे बार-बार मुग़लों पर हमला कर रही थी और मुग़ल फ़ौज का भारी नुकसान पहुंचा रही थी। मौके का गवाह कलंदर लिखता है कि लोहगढ़, खेड़ा अमीन से 10-15 किलोमीटर की दूरी पर थी। सिक्ख फ़ौज बार-बार हमला करके लोहगढ़ किले में पनाह लेती। लेखक कुछ हद तक सच लिख रहा है क्योकि लोहगढ़ के 52 अग्रिम मोर्चे करनाल से लेकर चंडीगढ़ तक फैले हुए थे। जोकि लोहगढ़ किले के ही हिस्से थे। परन्तु मुग़ल फ़ौज के पास लोहगढ़ के मौर्चाबंदी का नक्शा ना होने के कारण लेखक लोहगढ़ के बारे में इधर-उधर का इतिहास बताता है। मेवाती को एक लाख रुपए नकद और साथ ही जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान को हटाकर सरहिंद की फ़ौजदारी भी दी गई।[103]

2 नवंबर, 1710 को कुछ मुग़ल फ़ौज सरहिंद के पास पहुंच गए। सरहिंद के सूबेदार भाई बाज सिंह भी सरहिंद में नहीं थे। मुग़ल फ़ौजों ने सरहिंद के किले पर हमला कर दिया। भाई सुक्खा सिंह बंगेशरी और शाम सिंह के नेतृत्व में सिक्ख फ़ौजों ने शमश ख़ान और वजीद ख़ान की फ़ौज के साथ खूब लोहा लिया। इस लड़ाई में अनेकों सिक्खों ने शहादत प्राप्त की। सिक्ख अपने जरनैल भाई सुक्खा सिंह की शहादत के उपरांत पीछे हट कर सरहिंद के किले में जा

---

102 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी अहवाले-खवाकिन, पृष्ठ 99

103 *ख़ाफी ख़ान, ओ.पी.आई.टी., पृष्ठ 669-670, कामवर ख़ान, ओ.सी.टी., पृष्ठ 352, अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, दाखिला 20-10-1710

घुसे। भाई सुक्खा सिंह और अन्य शहीदों की याद में शहीद गंज गुरुद्वारा, लड़ाई वाले स्थान पर गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहिब के नजदीक सुशोभित है।

ज्यादा मुग़ल फ़ौज आती देखकर 24 नवंबर की रात को अंधेरे में घेरा तोड़ते सिक्ख फ़ौजियों ने सरहिंद का किला खाली कर दिया और मनौली और बुडैल में स्थित सिक्ख किलों में आ गए। उनका पीछा मुहम्मद अमीन ख़ान की फ़ौज ने किया परन्तु पीछा करने में भारी मात्रा में मुग़ल सैनिक मारे गए। शमश ख़ान ने सरहिंद पर कब्ज़े के उपरांत सिक्खों से लूटे माल में से चार निशान (emblem), एक निशान साहिब, चार तीर, दो नेज़े और सिक्खों के सिर चार बैलगाड़ियां में 25 नवंबर को बादशाह को भेजे। बादशाह ने खुश होकर शमश ख़ान को रेशमी पोशाक भेजी। शमश ख़ान द्वारा सरहिंद पर कब्ज़ा करने की मुहम्मद अमीन ख़ान को बहुत तकलीफ हुई। वास्तव में यह ताज वह स्वयं हासिल करना चाहता था। इस कारण मुहम्मद अमीन ख़ान शमश ख़ान के साथ ईष्या करने लगा और विरोधी बन गया।

बादशाह का सढ़ौरा व लोहगढ़ की पहाड़ियों की ओर कूच

बेशक बहादुर शाह के पंजाब पहुंचने से पहले अग्रिम 60 हज़ार से ज्यादा फ़ौज बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध भेज दी गई थी। वह स्वयं भी 1.50 लाख से उपर फ़ौज लेकर पंजाब की ओर आ रहा था। 12 अक्तूबर को शाही फ़ौज सोनीपत, 20 अक्तूबर को सराय कंवर, 23 अक्तूबर को समालखा, 28 अक्तूबर को घरोंड़ा और 30 अक्तूबर को करनाल पहुंच चुकी थी। पहली नवंबर को बादशाह को अजीमाबाद-तरावड़ी, थानेसर और सरहिंद के नक्शे पेश किये गए। 10 नवंबर को बादशाह को फ़ौज में घुड़सवार फ़ौजियों की संख्या के बारे बताया गया। बड़े शहज़ादे के पास 31 हज़ार, अन्य तीनों शहज़ादों के पास 15-15 हज़ार, मुनईम ख़ान के पास 11 हज़ार और महाबत ख़ान के पास 7 हज़ार सैनिक थे। इसके अतिरिक्त अन्य कर्मचारिओं और हिंदू राजाओं छत्रसाल बुंदेला और उदित सिंह बुंदेला आदि की फ़ौजें भी उनके साथ थी।[104] इस तरह बादशाह बहादुर शाह 2 लाख से अधिक फ़ौज के साथ लोहगढ़ की ओर बढ़ रहा था। करनाल से लेकर सढ़ौरा तक मुग़ल फ़ौज को सिक्खों के 19 किले शामगढ़, गोबिंदगढ़, किशनगढ़, लंडा, खरींडवा, रतनगढ़, डेरा बंजारा, केसरी, लखमड़ी, अधोया, तंदवाल, हेमू माजरा, सुहाना, सिरसगढ़, मुलाना, धीन, धनौरी, अज़ीजपुर कलां, सरावां में से निकल कर जाना था।

बादशाह लोहगढ़ किले की पहली चौंकी के समीप पहुंचा

बादशाह 02 नवंबर, 1710 को करनाल में से होता हुआ 07 नवंबर, 1710 को तरावड़ी/खेड़ा अमीन पहुंचा फिर 10 नवंबर को थानेसर और शाहबाद पार करते हुआ 14 नवंबर, 1710 को गांव उगाला (अब तहसील बराड़ा में) में डेरा जा लगाया।[105] करनाल से लेकर

---

104 *कामवर ख़ानः तजकिरा सलातीन चगत्ता, पृष्ठ 103, अली नदीम रिजवी का अनुवाद

105 *गंडा सिंह, पुस्तक बंदा सिंह बहादुर, पृष्ठ 188

शाहबाद का सफर मुग़ल फ़ौज के लिए जोखिम से भरा हुआ था क्योकि जी.टी. रोड की दोनों तरफ सिक्ख मोर्चाबंदी थी। जोकि निरन्तर मुग़ल फ़ौज पर हमला कर मुग़ल फ़ौज को भारी नुकसान पहुंचा रही थी। शामगढ़, रतनगढ़, रामगढ़, शरीफगढ़, रिंडवा, अजराना, गुलाबगढ़, गोबिंदगढ़ इत्यादि सिक्ख किलों में पर्याप्त मात्रा में रसद और हथियार मौजूद थे। इन किलों को जीतने के लिए बादशाह को बहुत समय लग गया और उसने आगे सढ़ौरा में पंहुचने का रास्ता बनाया। सिक्ख किलाबंदी की एक खास बात और थी कि सिक्ख फ़ौजे मुग़लों पर जी.टी. रोड पर गुरिल्ला हमला करने के लिए सक्षम थी। अचानक हमला कर मुग़लों का नुकसान पहुंचा कर जी.टी. रोड के दोनों तरफ मौजूद जंगलों में चली जाती थी। जहां पर पहले से ही सिक्ख किलाबंदी के पक्के ठिकाने मौजूद थे। जी.टी. रोड के एक तरफ ऊबड़-खाबड़ क्षेत्र लोहगढ़ की तरफ बढ़ता है। जी.टी रोड की दूसरी तरफ भारी जंगल था जोकि जींद तक जाता था।

बादशाह ने लोहगढ़ पहुंचने के लिए सबसे छोटा रास्ता चुना जोकि इंद्री से जगाधरी व लोहगढ़ पहुंचता था। परन्तु जैसे ही मुग़ल फ़ौज इंद्री पहुंची तो सिक्ख फ़ौज ने यहां पर मुग़ल फ़ौज पर हमला कर भारी नुकसान किया। यहां पर यह भी व्यक्त किया जाना जरूरी है कि यह रास्ता यमुना दरिया के साथ-साथ लोहगढ़ को जाता था। यमुना दरिया में सारा साल पानी होने के कारण इस रास्ते पर घणा जंगल था। इस कारण से मुग़ल फ़ौज का आगे बढ़ना खतरे से खाली नही था। इसलिए बादशाह के द्वारा निर्णय लिया गया कि पहले शाहबाद जाया जाए और मारकण्डा नदी के साथ-साथ चलकर सढ़ौरा पहुंचा जाए। उसके बाद लोहगढ़ पर हमला किया जाए। अग्रिम भेजी हुई मुग़ल फौज़ के द्वारा कुछ हद तक करनाल से लेकर जी.टी. रोड तक बादशाह के लिए हमला मुक्त करवाई गई। परन्तु यह व्यवस्था केवल कुछ समय के लिए थी। बंदा सिंह बहादुर ने मुग़लों के बहुत विशाल इलाके पर हमले किये हुए थे जैसे जालंधर दुआब (पंजाब में) से बरेली (दिल्ली तक)।[106] सिक्खों की करनाल ज़िले तक ही नही, कुरूक्षेत्र, यमुनानगर, अंबाला और पिंजौर में किलेबंदी फैली हुई थी।

मुग़ल फ़ौज को सिक्ख किलाबंदी के बारे में कोई विशेष जानकारी नही थी और इसलिए बादशाह ने रुस्तम दिल ख़ान और रफी-उस-शान को लोहगढ़ की मोर्चाबंदी का पता लगाने का हुक्म दिया। थानेसर से शाहबाद चलकर शाही मुग़ल फ़ौज ने डेरा उगाला गांव में लगाया। उगाला गांव में पहले से ही एक सिक्ख किला मौजूद था जोकि हमला करके खाली करवाया गया और बाद में इस किले में बादशाह को सुरक्षित रखा गया। इसी जगह से सढ़ौरा और लोहगढ़ पर हमले की रणनीती तैयार की गई। हर रात को मुग़ल फ़ौज पर सिक्ख फ़ौज के भारी हमले हो रहे थे। हर रोज सैकड़ों की तादाद में मुग़ल सैनिक मर रहे थे। इस पर बादशाह डर गया और उसने हुक्म जारी कर दिया कि कोई हिंदू उसके नजदीक न आने दिया जाये। यहां तक कि वह उन हिंदू

106 *पंचोली जगजीवन दास का राजा जयपुर को 26 दिसंबर, 1710 के दिन लिखा ख़त (सिरियल नंबर 1, अर्जदाशत नंबर 195, अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला मुताबिक बादशाह 24 नवंबर को सढ़ौरा के नजदीक पहुंच गया था)

राजाओं और जरनैलों से भी डरने लग गया जोकि हमेशा उसके वफादार रहे थे। लोहगढ़ पर हमलों में उसका साथ दे रहे थे। बादशाह ने उनके भी अपने खेमे में घुसने पर पाबंदी लगा दी। केवल हिंदू राजे और जरनैल ही नहीं वह अपने वफादार सिपाहियों से भी डरने लगा। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी के अनुसार जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पास एक लाख के लगभग फ़ौज लोहगढ़ क्षेत्र में मौजूद थी।[107]

सढ़ौरा की पहली लड़ाई

फिरोज़ ख़ान मेवाती और रुस्तम-दिल-ख़ान को बादशाह के द्वारा आदेश दिया गया कि वह शाही मुग़ल फ़ौज लेकर सढ़ौरा पर हमला करें। 18 नवंबर, 1710 को दोनों मुग़ल जरनैल भारी मात्रा में शाही फ़ौज लेकर सढ़ौरा की तरफ कूच करते हैं। परन्तु रास्ते में पड़ने वाले सिक्ख किले अब्दुला गढ़, अकालगढ़, जवाहरगढ़, गोकलगढ़, सरावां, मौजगढ़, रामगढ़, शेरगढ़, सरदाहेडी से भारी मात्रा में सिक्ख फ़ौज मुग़ल फ़ौज पर हमला कर रही थी। मुग़ल फ़ौज का भारी नुकसान हो रहा था। इस क्षेत्र में खाद्य साम्रगी और पीने के पानी के साधनों पर सिक्ख फ़ौज का पूर्ण रूप से कब्ज़ा था। इस कारण मुग़ल फ़ौज की बदहाली और बढ़ रही थी। शाहबाद से सढ़ौरा की दूरी लगभग 40 किलोमीटर है और मुग़ल फ़ौज केवल दिन की रोशनी में ही आगे बढ़ सकती थी। रात को मुग़ल फौज़ को सुरक्षित स्थान पर पहुंचना अनिवार्य था। क्योंकि सिक्ख फ़ौज रात को मुग़लों पर गुरिल्ला आक्रमण कर रही थी। यह सिलसिला कई दिन तक चलता रहा। परन्तु मुग़ल फ़ौज सढ़ौरे के नजदीक नहीं पहुंच पाई और इस कार्यवाही में मुग़ल फौज़ का भारी जानी नुकसान हुआ। परन्तु बादशाह के दवाब के चलते मुग़ल फ़ौज को बार-बार मौत के मुंह में जाना पड़ रहा था।

24 नवंबर, 1710 को सढ़ौरा में सिक्खों और मुग़लों के बीच जबरदस्त लड़ाई हुई। कामवर ख़ान का कहना है कि यह लड़ाई उसकी आंखों देखी है के अनुसार मैं राजकुमार राफ्योसान की यूनिट में उस वक्त उपस्थित था। मैंने अपनी आंखों के साथ देखा कि यह काले मुंह वाले लोग (सिक्ख) मैदाने जंग में आ जाते और बहुत बहादुरी के साथ लड़ते हुए अंत शाही फ़ौज का शिकार बन जाते। इस समय भारी शाही फ़ौज इनको चारों ओर से घेर लेती और इनकी बहादुरी पर नियंत्रण करते हुए इनको अपना शिकार बना लेती। यहां तकरीबन ढाई हज़ार सिक्ख उनके मुखियों सहित मारे गए। शाही फ़ौज में से फिरोज शाह मेवाती का भतीजा और मेवाती का पुत्र मारा गया व भारी संख्या में मुग़ल भी मारे गए।

सढ़ौरा के किले के नजदीक पहुंचने के उपरांत भी मुग़ल फ़ौज सढ़ौरा पर कई दिन तक

---

107 *अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 17

कब्ज़ा नही कर पाई। बादशाह ने फ़ौजों को हुक्म दिया कि वे किले से कुछ दूरी पर ऊंची मीनार बनाऐ ताकि किले पर तीरों की बौछार की जा सके इस मीनार के अवशेष आज भी मौजूद हैं।

लोहगढ़ की पहली लड़ाई (1710 से 1712)

मुग़लों के लगभग 200 सालों के इतिहास में मुग़लों की सिक्खों के विरुद्ध यह सबसे बड़ी मुहिम थी। जिसके पश्चात मुग़ल राज का पतन हो गया। बादशाह बहादुर शाह चार शहज़ादों सहित लोहगढ़ पहुंचा। राजकुमार रफी-अस-शाह, राजकुमार अजीम-हुसन, राजकुमार जहान-दार-शाह और राजकुमार खुजीस्टा। इसके अतिरिक्त 50 ऊंचे पद वाले कर्मचारी जिन के पास 1000 से अधिक का मनसब था और 100 से अधिक छोटे पद वाले प्रमुख और कई हज़ारों की संख्या के सिपाही बादशाह के साथ लोहगढ़ पहुंचे। बाद में बादशाह ने हिंदू राजे जैसे छतरशाल बुंदेला और चूड़ामनी जाट और कुछ समय उपरांत राजा जय सिंह सिवाह जोधपुर के राजा अजीत सिंह और अजमेर के राजा अमर सिंह को भी बंदा सिंह बहादुर के विरुद्ध लड़ने के लिए बुलाया।

मुग़लों ने सिक्खों को काबू करने के लिए भारी तोपखाने इस्तेमाल किए। तोपखाने को उठाने और खींचने के लिए हाथी इस्तेमाल किए गए। मुग़ल फ़ौजी विशेषकर छोटे हथियार कोटा यॉर्क पर निर्भर थे। जोकि उन्होंने लोहगढ़ में इस्तेमाल करने थे। यह हथियार पांच तरह के थे जैसे तलवारें, नेज़े, कुल्हाड़ियां, तीर, बड़े चाकू जो हाथों-हाथ लड़ाई करने वाले, दूर मार करने वाले हथियार जैसे तीरकमान, बंदूक और पिस्तौल इत्यादि। राकेट भी यहां इस्तेमाल किए गए। इसी तरह ऊंटों पर लादी हुई छोटी मार की तोपें भी सिक्खों के विरुद्ध इस्तेमाल की गई।

29 नवंबर, 1710 शाही फ़ौजें राजकुमार जहान-दार-शाह के नेतृत्व में लोहगढ़ के किले के नजदीक स्थानों को जायज़ा लेने के लिए गया।[108] राजकुमार जहान-दार-शाह ने लोहगढ़ (जिसको डाबर भी कहते है) का नक्शा तैयार करने की कोशिश आरंभ की।[109] लोहगढ़ और इसके किले का नक्शा तैयार करने में उसको काफी समय लगा परन्तु यह क्षेत्र इतना विशाल था कि इसका नक्शा नहीं बना। वास्तव में मुग़लों को लोहगढ़ किले की विशालता का पता नहीं था। शाही फ़ौजों ने अब तक इस तरह की किलेबंदी और रुकावट देखी नहीं थी। इस विशालता वाली जगह पर किलेबंदी (जो कई मीलों में फैली हुई थी) का नक्शा समझ न पाने के कारण मुग़ल बादशाह और जरनैल मानसिक तौर से बहुत परेशान हो गए।

बादशाह ने मार्कण्डेय और यमुना के मध्य के इलाकों को काबू करने की योजना बनाई। मुग़ल समझ नहीं पा रहे थे कि लोहगढ़ से पहले अग्रिम 52 किलों का जाल कैसे तोड़ा जाये। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'गुरमत प्रकाश' के मई 2011 अंक के पृष्ठ 53 पर प्रो. बलवंत सिंह ने भी 52 किलों का हवाला दिया है। यहां से मुग़ल फ़ौज पर निरंतर हमले हो रहे थे। जोकि उनको आगे बढ़ने में बाधा डाल रहे थे। मुग़लों के

---

108 *अमरजीत सिंह (संपादक), बंदा सिंह बहादुर, जे.ऐस. ग्रेवाल, पृष्ठ 34

109 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 16-11-1710 की रिपोर्ट

तजुर्बेकार जरनैल भी यहां असफल रहे। क्योंकि सिक्खों ने युद्ध के नियमों को बहुत अच्छे ढंग से अपनाकर यहां किलेबंदी जटिल बनाई हुई थी। इस किलेबंदी को चारों ओर से घेरने का नक्शा मुग़ल समझ न सके।

शिवालिक की पहाड़ी पर नालागड़, नाहन, गड़वाल, जम्मू, चंभा, नूरपुर के प्रमुखों ने किले/ठिकाने बनाऐ हुए थे। मुग़ल फ़ौज लोहगढ़ के निकट नहीं जा पा रही थी। जबकि सिक्खों की कुछ टुकड़ियां जम्मू से लेकर बरेली तक मुग़लों के कई ठिकानों पर लगातार हमले कर रही थी। मुग़ल फ़ौज तो लोहगढ़ किले के आसपास ही उलझी रही। इस लडाई में मुग़ल फ़ौज का भारी नुकसान हुआ। ज़िला पंचकूला और अंबाला की पहाड़ियों में सिक्खों फ़ौजों द्वारा की गई किलेबंदी के अवशेष भोजराज, बवाना, टांडा बुर्ज, गोरखपुर, बसंर इत्यादि गांव में आज भी मौजूद हैं।

लोहगढ़ किले के दक्षिण की ओर लड़ाई का मैदान बहुत ऊंचा-नीचा और घने जंगल वाला था और इधर से लोहगढ़ किले तक पहुंचने से पहले सिक्खों के 52 किलेबंदी वाले मोर्चे पार करने पड़ने थे जिन पर 'बंदूके' और 'तोपें' तैनात की हुई थी। मुग़ल फ़ौज के पास लोहगढ़ किले को घेरने की कोई भी योजना नहीं थी। सिक्ख फ़ौजों की हथियार और रसद की सप्लाई को रोकने के लिए मुग़ल नाकामयाब रहे। फारसी के अलग-अलग स्त्रोत बताते है कि मुग़ल फ़ौज को हथियार और रसद की सप्लाई की कमी होने लगी क्योंकि जो वणजारों के टाडों ने मुग़लों को रसद सप्लाई करनी थी वह सिक्ख जरनैल बनकर मुग़ल फ़ौज के विरूद्ध लड़ रहे थे।

इस कारण सिक्खों का यहां मुग़लों के आगे हार मानना बिल्कुल ग़लत लिखा हुआ है। क्योंकि यहां सिक्खों की अनाज और अन्य जरूरी सप्लाई कभी बंद नहीं हुई। यहां तो बहुत पहले ही अनाज के भंडार भरकर रख लिए गए थे क्योंकि मुग़लों के साथ लम्बी लड़ाई होने का अनुमान पहले से ही था। इसके अतिरिक्त लोहगढ़ के पिछली ओर जो ऊंचे शिवालिक के पहाड़ हैं वह हिस्से मुग़लों की पहुंच से परे थे। उस तरफ से निरंतर सिक्खों के लिए गुप्त रास्तों के द्वारा सप्लाई आती रहती थी। यहां से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि लोहगढ़ किले की संरचना के समय गुरु साहिबान और भाई लक्खी शाह वणजारा ने मुग़लों द्वारा लड़ी जाने वाली लड़ाईयों की घेराबंदी का पूरा ध्यान रखा होगा। इसलिए मुग़ल भारी संख्या में होने के बावजूद भी सिक्खों के डिफेंस क्षेत्र को भेद न पाए क्योंकि इस भारी जंगली और ऊंची-नीची धरती से होते हुए लोहगढ़ किले को जीत पाना बहुत कठिन था। इसके अतिरिक्त सिक्ख गुरिल्ला 'ढाई-फट्ट' की लड़ाई लड़ते थे। जिन्होंने दुनिया की सबसे ताकतवर फ़ौज को उलझाए रखा था। काफी ख़ान लिखता है कि इस लड़ाई का वर्णन करना बहुत कठिन है। फकीरों जैसे भद्दे कपड़ों वाले इन सिक्खों ने शाही फ़ौजों में दहशत मचाई हुई थी।[110] मुग़ल बादशाहत यह हालात देखकर अपना हौंसला हार चुकी थी।

---

110 *इलियट और डोजन, ओ.पी. भाग 7, पृष्ठ 423

मौके की नजाक़त को देखते हुए बादशाह ने अपनी फ़ौज को छह हिस्सों में बांट दिया। राजकुमार रफीउसान ने 31000 फ़ौज की कमान संभाली और 'बुख्शी-उल-मुल्क जुलफीकर ख़ां' को उसकी सहायता के लिए लगा दिया। बाकी के तीन राजकुमारों को 11-11 हज़ार फ़ौज का नेतृत्व दिया। सात हज़ार सैनिकों के छठे भाग का नेतृत्व महाबत ख़ान (खान-खाना के पुत्र) को दिया।[111] हिंदू राजाओं की फ़ौज की कमान छतरसल बुंदेला और उदय सिंह बुड़ेला के नेतृत्व में शाही फ़ौज बादशाह के साथ मिली। यह सारी फ़ौज जो एक लाख से ज्यादा थी जोकि लोहगढ़ के आसपास खड़ी थी।[112]

एक शाही अफसर 'मिर्जा रूकण' ने बताया कि किला लोहगढ़ को जाने के रास्ते पर भारी लड़ाई चल रही है। मुग़ल फ़ौज का बहुत नुक्सान हो रहा था। एक रात को मुग़ल बादशाह के कैम्प पर सिक्ख फ़ौज ने भारी तादात में हमला कर दिया और इस हमले में भारी मात्रा में मुग़ल सैनिक मारे गए। इस बात से बादशाह बहुत घबरा गया और उसने अपना शिविर 12 कोस पीछे हटकर थानेसर में लगाया। कामवर ख़ान जोकि शाही शिविर के साथ ही घूम रहा था। लिखता है कि ऊंठों पर चढ़े राजपूत सिपाही सभी इलाकों में घूम रहे थे। वह हज़ारों की संख्या में थे परन्तु बादशाह के पास उसके चारों पुत्र और कुछ दरबारी थे। इसका अर्थ है कि राजपूत राजे मौके की तलाश में थे कि बादशाह जैसे ही कोई गलत कदम उठाऐ। उसी समय ही उसे ख़त्म किया जा सके। मुग़ल तो अपनी भारी संख्या में हो रहे जानी नुक्सान से बहुत भयभीत थे। बंदा सिंह बहादुर और उसके सिक्ख अपने 52 किलों से मुग़लों पर तोपों के गोले दागते हुए मुग़लों का काफी नुक्सान कर रहे थे। इस तरह दोनों ओर से काफी नुक्सान हो रहा था। रुस्तम दिल ख़ान बहादुर ने लोहगढ़ किले से तीन मील दूर स्थान पर घेरा डाला हुआ था। जरनैल बंदा सिंह बहादुर इसी इमारत में मौजूद थे और यही इमारत लोहगढ़ किला है।[113] इस स्थान पर सिक्ख फ़ौज और मुगलों के बीच में भारी जंग हुई और मुग़ल फ़ौज का भारी नुकसान हुआ। मुग़ल फ़ौज इस जगह से भाग खड़ी हुई। मुग़लों का कोई भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के निकट नहीं पहुंच सका क्योंकि वह (बंदा सिंह बहादुर) बहुत ही तेज़-तरार थे। जोकि हवा की तरह एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते थे। पहाड़ों में जरनैल बंदा सिंह बहादुर भारी फ़ौज के साथ 60 किलोमीटर प्रतिदिन

---

111 *कामवर ख़ान, तजकेरातुल सलातिन चुगटा, पी. अली नदीम रिजवी द्वारा अनुवादित

112 *पंचोली जगजीवन दास का जयपुर के शासक को लिखा पत्र, 26 दिसंबर, 1710, सिरियल न 1, अरजदाशत नंबर 195, (राजस्थानी दस्तावेजों में दिए हवाले, बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित)

113 *फारसी के स्त्रोत का आकंलन करने उपरांत पता चलता है कि यह जगह मौजूदा कपालमोचन थी और सिक्खों के द्वारा सताहरवीं शताबदी के दौरान यहां भारी मात्रा में किलाबंदी की गई थी। यहां पर गुरू नानक साहिब का दौरा भी हुआ और गुरू गोबिंद सिंह भी पौंटा साहिब से आते हुए यहां पर रूके। आज यहां दोनों गुरू साहिबों के आगमन पर दो गुरूद्वारा सुशोभित है जिसकी सेवा संभाल एस.जी.पी.सी के पास है। गुरू नानक साहिब ने सोलहवी शताबदी की शुरूआत में दौरा किया था और इस इलाके में कोई भी आबादी मौजूद नही थी, इस बात से यह बिलकुल स्पष्ट है कि गुरू नानक साहिब का इस इलाके में दौरा हलीमी राज की स्थापना और किला लोहगढ़ के निर्माण से संबंधित है।

के हिसाब से रास्ता तय कर रहा था। मुग़ल फ़ौज 20 किलोंमीटर प्रतिदिन से अधिक पहाड़ी क्षेत्र में रास्ता तय नही कर सकती थी। इसलिए जरनैल बंदा सिंह बहादुर तक मुग़ल फ़ौज का पहुंचना लगभग असंभव था।

कोई भी मुग़ल जरनैल लोहगढ़ किले के नज़दीक पहुंचने के लिए सक्षम नही था। बादशाह लोहगढ़ के क्षेत्र में आकर स्वंय युद्ध लड़ने का साहस नही जुटा पा रहा था। वैसे भी उस समय बादशाह की आयु 70 वर्ष से अधिक हो चुकी थी। बादशाह थानेसर के नजदीक सुरक्षित स्थान पर बैठकर लोहगढ़ में हो रही जंग की मुआना रिपोर्ट लेता रहा। यह कहना भी ग़लत नहीं होगा कि मुग़ल जरनैल अपनी साख बचाने के लिए बार-बार बादशाह को यह रिपोर्ट देते रहे कि उन्होंने लोहगढ़ किला फतेह कर लिया है। जबकि सिक्ख मोर्चाबंदी के चलते हुए लोहगढ़ किले के नज़दीक जाना मौत को दावत देने से कम ना था।

इरवन लिखता है कि मुग़ल और पठान सिपाही बंदा सिंह बहादुर की अफवाहों से बहुत घबराए हुए थे। उन्होंने सुना हुआ था कि बंदा सिंह बहादुर पर तीर और तलवार के वारों का प्रभाव नहीं होता। बादशाह ने लोहगढ़ क्षेत्र पर हमला नवंबर 1710 में आरंभ किया और मार्च 1711 तक भी मुग़ल फ़ौज को कोई सफलता हासिल नहीं हुई। यह 4 महीने का समय मुग़ल फ़ौज के लिए काफी दर्दनाक था। क्योंकि जो लाखों की मुग़ल फ़ौज लोहगढ़ क्षेत्र में लड़ रही थी। उनके लिए रसद की कमी पड रही थी। सर्दी की बरसातों ने कई मुग़ल सैनिकों को बीमार कर मौत की नींद सुला दिया। ऊबड़-खाबड़ धरती जिस पर घना जंगल था। मुग़ल फ़ौज के लिए इस धरती पर लड़ना आसान नही था और न ही कभी मुग़ल फ़ौज को ऐसी कार्यवाही को लेकर कोई प्रशिक्षण दिलवाया गया था। इतने बड़े संघर्ष के उपरांत बादशाह बहादुर शाह को एक बात समझ आ गई थी कि लोहगढ़ किले पर विजय प्राप्त करने के लिए मुग़ल फ़ौज के पास पर्याप्त मात्रा में साधन नही है। इसलिए अपनी रणनीती बदलते हुए बादशाह ने अपनी पूरी फ़ौजी ताकत केवल जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ने पर लगा दी। मुग़ल लेखकों के अनुसार मई-जून 1711 में मुग़लों और सिक्खों के बीच कई लड़ाईयां हुई। परन्तु वह जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ नहीं पाए। कारण स्पष्ट था कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर एक शूरवीर योद्धा के साथ-साथ लोहगढ़ क्षेत्र और जम्मू से बरेली तक पहाड़ियों के निपुण जानकार थे। इन पहाड़ियों में स्थित सभी खुफिया मार्गों की उन्हें पूर्ण जानकारी थी। जैसे कि पहले भी व्यक्त किया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर की रफ्तार मुगल फौजों की तुलना में तीन गुणा ज्यादा थी इसलिए मुग़ल उन्हें लोहगढ़ क्षेत्र में पकड़ नही पाए। इतनी जंग के चलते मुग़ल राज का खजाना बड़ी तेजी से खाली होने लगा और फिर भी बादशाह को कोई बड़ी कामयाबी हाथ नहीं लगी।

'असगर-अल-समाधी' जो उस समय का लेखक है, लिखते है कि बंदा सिंह बहादुर और उसके सैनिक चीते की तरह थे। मुग़ल फ़ौज दिन में हमला करती थी और सिक्ख उस समय केवल मुग़ल फ़ौज को रोकते थे। दूसरी तरफ सिक्ख फ़ौज मुग़लों पर रात को हमला करती थी। मुग़ल कैम्पों से हथियार, रसद अपने कब्ज़े में लेकर लोहगढ़ पहुंच जाते थे। पहाड़ियों के

शिखरों पर उन्होंने रोशनी टावर बनाऐ हुऐ थे। यह रोशनी टावर बड़े-बड़े दिए थे जिसमें 100 लीटर से ज्यादा तेल या जलाने की साम्रागी एक साथ डाली जा सकती थी। इन दियों से इतनी भारी रोशनी होती थी कि इसके सहारे सिक्ख फ़ौजें लोहगढ़ किले में रात को वापिस प्रवेश कर जाती थी। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी के अनुसार खाना ख़ान और मुग़ल राजकुमारों का अनुमान था कि वह लोहगढ़ किले को एक वर्ष से पहले नहीं जीत सकते।[114] 04 जनवरी, 1711 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर चम्बे जाते है और वहां के राजे की बेटी बीबी सुशीला कौर से विवाह करते हैं। इस बात की भनक मुग़ल फ़ौज को नही लगती। 04 फरवरी को खाना ख़ान, मुहिन ख़ान 8 हज़ार घुड़सवार लेकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर को ढूढ़ने के लिए पहाड़ों में निकलता है। परन्तु उसे कोई सफलता हासिल नहीं होती। 01 मार्च, 1711 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर सहारनपुर पर धावा बोलकर सहारनपुर के सभी परगना और किलों को अपने कब्ज़े में ले लेते है। अब बादशाह के पास कोई चारा नही बचा कि वह अपनी समस्त फ़ौज लेकर सहारनपुर की सरकार को जरनैल बंदा सिंह बहादुर से बचाने के लिए क्या करे? क्योंकि उनकी रवानगी से पहले ही जरैल बंदा सिंह बहादुर ने सहारनपुर पर कब्जा कर लिए। 06 मार्च, 1711 को एक नई सूचना बादशाह को मिलती है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर 40 हज़ार घुड़सवारों के साथ कुल्लू की पहाड़ियों में देखे गए है। उनके इरादे अब लाहौर के ऊपर हमला करने के हैं। इस पूरे विवरण से एक बात स्पष्ट होती है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर थिएटर ऑफ वॉर को स्फिट करने में निपुण थे। मुग़ल फ़ौज इतनी तेजी से अपने साधन लड़ाई के लिए स्थानांतरण नहीं कर सकती थी। जिस कारण बादशाह बहादुर शाह के करोड़ों रूपये खर्च करने के बाद भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर और लोहगढ़ को लेकर केवल मायूसी हाथ लगी। 03 अप्रैल, 1711 को बादशाह ने फैसला लिया कि वह लोहगढ़ पर हमला वापिस लेकर अपनी सारी फ़ौज के साथ लाहौर की तरफ रवानगी करेगें। ताकि लाहौर का क्षेत्र जरनैल बंदा सिंह बहादुर से बचाया जा सके।

सिक्ख सिपाहियों की सप्लाई का प्रबंध

गुरु नानक साहिब के समय से लोहगढ़ किलाबंदी की योजना तैयार की गयी और नाहन में वणजारे सिक्ख गुरु नानक साहिब के आगमन से पहले ही मौजूद थे। भाई मनी सिंह के पूर्वजों का इस इलाके पर दबदबा था, और उनको इलाके की भूगोलिक व प्राकृतिक जानकारी भी थी। पन्द्रहवीं शताबदी में वणजारे व्यापार करने के साथ-साथ शूरवीर योद्धा भी थे और मौके की सरकारों की अनुमति से इन वणजारों के पास हज़ारों की तादात में फ़ौज रहती थी। ताकि वह अपनी पूंजी और टाडों की सुरक्षा कर सकें। अध्याय-22 में थानेसर में दस सिक्ख गुरु साहिबान के प्रचार दौरे और बाद में हलीमी राज की स्थापना हेतू लोहगढ़ में दौरे का विस्तारपूर्वक विवरण दिया गया है। इसके अतिरिक्त पीर बुद्धु शाह के पूर्वज सढ़ौरा में बड़ा गढ़ तैयार करके गुरु नानक सहिब के समय से रहना आरंभ कर चुके थे। पीर दस्तगीर भी गुरु नानक साहिब के पीछे

---

114 *मुहम्मद कासिम औरंगाबाद, अहवाल-उल-खवाकेन, (डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों), पन्नें 34-37

चलकर सढ़ौरा में आकर बस गया। जिसका विवरण अध्याय-21 पर दिया गया है। लगभग 200 साल तक गुरु नानक साहिब की जोतें, सूफी संत और वणजारें सिक्ख लोहगढ़ में हलीमी राज की स्थापना के लिए कार्य करते रहे।

जैसे कि अध्याय-1 में इस बात की जानकारी दी गई है कि सातवें गुरु हर राय साहिब 13 वर्ष सन् 1645 से 1657 तक थापलपुर गांव में 2200 हथियारबंद घुड़सवारों के साथ ठहरे थे। जो लोहगढ़ क्षेत्र में आता है। विडंबना की बात यह है कि इस पूरे मुद्दे को लेकर सिक्ख इतिहासकार मुंह में दही जमाए बैठे है। जैसे मुग़ल हिंदू राजाओं को भी परेशान करते थे। गुरु घर के प्रति भी दवेश भावना रखते थे। गुरु नानक साहिब दूरदृष्टि से इस बात को भाप गए थे कि मानवतावादी विचारधारा को लागू करना आसान नही होगा और इसके लिए बड़े युद्ध की तैयारी करने की आवश्यकता है। लोहगढ़ का क्षेत्र कुदरती भण्डारों से भरपूर था और इस क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में पानी और खाने के लिए रसद उपलब्ध थी। इसके अतिरिक्त किलाबंदी के लिए पत्थर और चूना मौके पर ही मौजूद था। इसलिए यह जगह हर लिहाज़ से ख़ालसा राज की स्थापना के लिए उचित थी। सन् 1710 में जब मुग़ल फ़ौज ने सिक्ख फ़ौज के साथ युद्ध पानीपत से आरंभ किया और सिक्ख फ़ौज बड़ी रणनीति से मुग़ल फ़ौज को लोहगढ़ क्षेत्र में ले आई जहां पर सिक्ख फ़ौज की पीने के पानी और खाद्य साम्रगी की पूरी तैयारी थी। मुग़ल फ़ौज के पास इन संसाधनों की कोई व्यवस्था नही थी। इसलिए बादशाह बहादुर शाह के समय लोहगढ़ में मुग़ल फ़ौज को कोई बड़ी कामयाबी हाथ नही लगी। इस कारण मुग़लों की फ़ौज पतन की ओर जानी शुरू हो गई।[115]

दीवान भिखारी दास ने महाराजा जय सिंह को सूचित किया कि भारी बारिश के कारण शाही शिविर में अनाज की बहुत कमी आ गई है। भारी संख्या में घोड़ों की मृत्यु हो गई है और अन्य जंगली जानवरों के मरने के कारण लड़ाई के मैदान में भारी बदबू फैल गई है और बीमारी बड़ रही है।[116] इन वणजारों ने बुरे हालातों में भी सिक्खों के लिए अनाज की कमी नहीं आने दी।[117] अनाज की अधिक कमी ने मुग़लों पर बुरा प्रभाव डाला।

इसके अतिरिक्त सिक्ख फ़ौज के लिए पहाड़ों के रास्ते घोड़े और हथियार पर्याप्त मात्रा में पहुंच रहे थे। 'अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला' में इन तथ्यों को महत्वपूर्ण संदर्भ और बादशाह बहादुर शाह के राज्यकाल के पांचवे वर्ष यानि सन् 1710 में जगजीवन दास ने रिपोर्ट दी कि कुछ लोग सिक्खों के लिए घोड़े और बारूद खरीदते थे और उनको कोइस्तान की पहाड़ियों के रास्ते लाते थे। अगर कोई उनको रोकता तो वह किसी इलाके के ज़मींदारों के लिए कहकर निकल जाते थे। इस कार्यवाही पर बादशाह ने पड़ताल करने के भी हुक्म दिए थे।[118]

---

115 *मुजफ्फर आलम मुग़ल उत्तरी भारत में साम्राज्य का संकट (पृष्ठ 163)

116 *बलवंत सिंह ढिल्लों, बंदा सिंह बहादुर और राजस्थानी दस्तावेज, वकील रिजर्व नं. 2, तारीख 01-09-1711

117 *ख़ाफी ख़ान, इलियट और डोजन, भाग 7. पृष्ठ 454

118 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 28-10-1711 की रिपोर्ट

लोहगढ़ और इसके मोर्चों पर पानी का प्रबंध

लड़ाई के समय पानी की बहुत जरूरत होती है। पानी वाले कुएं तो सभी लोहगढ़ किले में ही थे। जहां मुग़लों की पहुंच नहीं थी। किसी ने झूठी अफवाह फैला दी कि सिक्ख फ़ौज ने लोहगढ़ क्षेत्र के कुओं में जहर डाल दिया है और इसलिए बहादुर शाह ने हुक्म दिया कि कोई भी मुग़ल फ़ौजी सिक्ख मोर्चो के कुओं से पानी न पीए। इस कारण मुग़ल फ़ौजियों की परेशानी और बढ़ी। यहां पर यह भी व्यक्त किया जाना उचित होगा कि किसी भी जंग में पानी सबसे महत्वपूर्ण ज़रूरत है और यदि यह उपलब्ध नही है तो कोई भी जंग जीती नहीं जा सकती। दूसरी और सिक्ख फ़ौजियों के पास पर्याप्त मात्रा में पानी पहाड़ों में उपलब्ध था। अग्रिम 52 मोर्चो में भी भाई लक्खी शाह वणजारे के लगाए कुएं मौजूद थे। इसलिए सिक्ख फ़ौज हर समय लोहगढ़ में मुग़ल फ़ौज पर हावी रही।

इतिहासकारों के द्वारा लोहगढ़ की लड़ाई के बारे में ग़लत जानकारी देना

अधिकतर इतिहासकारों ने लिखा है कि मुग़ल फ़ौजों ने सढ़ौरा जीतने के उपरांत लोहगढ़ पर 30 नवंबर, 1710 को हमला किया और अगले ही दिन पहली दिसंबर को कब्ज़ा कर लिया। बंदा सिंह बहादुर अपने बचे-खुचे कुछ साथियों सहित नाहन की पहाड़ियों से निकल गए। लोहगढ़ किले पर कब्ज़ा करने की कहानी से सम्बन्धित लगभग यही या इसके साथ मिलता-जुलता विवरण कई इतिहासकारों की लेखनी में मिलता है। सभी इतिहासकारों ने वास्तव में लोहगढ़ की जंग का हवाला मुग़ल या फारसी स्त्रोतों के आधार पर दिया है। इन्हीं फारसी स्त्रोतों के आधार पर अंग्रेज लेखक इरविन की पुस्तक 'लेटर मुग़लज़' के अनुसार 29 नवंबर बुधवार को बादशाह, लोहगढ़ किले से कुछ दूर सोम नदी के किनारे पर गांव 'कम्पो' की हद में पहुंच गया। इन ऐतिहासिक स्त्रोतों के अनुसार 30 नवंबर मुग़ल फ़ौज के द्वारा लोहगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया गया था। जिसकी विस्तारपूर्वक जानकारी निम्नलिखित प्रकार से हैः-

1. रफीउशान इतिहासकार लिखता है कि लोहगढ़ से एक किलोमीटर हटकर बंदा सिंह बहादुर जो दूसरी पहाड़ी पर डेरे लगाए हुए थे और बख़्शी-उल-मुलक जुल्फिकार ख़ान की डयूटी लगाई गई। वह जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़े।
2. ख़ानखाना बख़्शी महाबत ख़ान और ख़ान ज़मान बहादुर को लोहगढ़ को कब्ज़े में लेने की बादशाह ने डयूटी लगाई और इन मुग़ल जरनैलों ने लोहगढ़ पर कब्ज़ा कर बादशाह को रिपोर्ट पेश की।
3. हिंदू राजा छत्रसाल बुंदेला और इस्लाम ख़ान 'मीर आतिश' ख़ानखाना की अग्रिम फ़ौज बन कर आगे बढ़े और लोहगढ़ किले पर कब्ज़ा कर लिया।[119]

---

119 *छत्रसाल राजा रुद्र प्रताप देव के साथ सहमत था। रुद्र प्रताप के पोत्रों ने अकबर के मंत्री अबू फज़ल का कत्ल कर दिया था। छत्रसाल चंद्रा राय का पुत्र था। सन् 1671 में छत्तरसाल केवल 25 घुड़सवारों की एक छोटी सी इकाई का प्रमुख था। उसने बहुत मेहनत की और एक प्रमुख लड़ाकू बन गया बाद में 21 जनवरी, 1714 को फरुखशियर ने उसको छह हज़ार व्यक्ति और चार हज़ार घुडसवार का मनसब सौंपा। यह ग़ैर-मुसलमानों के लिए बहुत ऊंचा रुतबा था। उसकी मौत के समय वह पूर्वी बुन्देलखंड के अर्ध का मालिक था।

4. हमीद-उद्-दीन ख़ान, अजीमुशान शाह बहादुर और जहान शाह बहादुर तीनों दलों की मदद से लोहगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया।[120]

मुसलमान लेखक कामवर लिखता है कि ख़ानखाना (मुनईम ख़ान) ने 5 हज़ार साथियों सहित सिक्खों के पहाड़ की शिखर पर बने मोर्चों पर हमला किया। तोपों और बंदूकों से लोहगढ़ क्षेत्र में भयंकर जंग हुई। ख़ानखाना ने लोहगढ़ का किला सिक्ख फ़ौज से खाली करवा लिया।[121] इस हालत को देख कर मुग़ल और पठान फ़ौजी बड़े डरे हुए लोहगढ़ किले के नजदीक गए क्योंकि उनका अब तक बहुत जानी नुक्सान हो चुका था।

इरविन लिखता है कि बंदा सिंह बहादुर के बारे सुनी अफवाहों से मुग़ल फ़ौजी बहुत डरे हुए थे। उनको भय था कि बंदा सिंह जादू जानता है। वह ऐसा जादू जानता है जिसके साथ वह दुश्मन के नेजों और तलवारों के वारों को बेअसर कर सकता है। इन अफवाहों के कारण बादशाह और बड़े जरनैल परेशान व बुज़दिल जैसे हो गए थे।[122] सिक्खों और शाही फ़ौजों में लोहगढ़ क्षेत्र में अनेक छोटी-छोटी जंग नवंबर, 1710 के बाद चलती रही और सिक्ख फ़ौजें लोहगढ़ के किलों से बाहर निकलकर बार-बार मुग़ल फ़ौज पर हमला करते रहे थे और लंबे संघर्ष के पश्चात सिक्ख फ़ौज शहीदी प्राप्त करने से पीछे नहीं हटी। साथ-साथ बहुत से मुग़ल फ़ौजी भी मारे गए।[123]

ख़ानखाना को मैदाने जंग में अड़ा देखकर शहज़ादा रफी-उद्-शाह और रुस्तम दिल ख़ान को कुछ हौसला मिला और इन्होनें भी लोहगढ़ क्षेत्र में सिक्ख फ़ौज के साथ जंग शुरू कर दी। ख़ानखाना का किला लोहगढ़ पर हमला बादशाह बहादुर शाह के हुक्म की उल्लंघना थी। क्योंकि बादशाह ने हिदायत जारी की हुई थी कि कोई मुग़ल जरनैल लोहगढ़ किले की ओर न बढ़े और सिक्खों को थकाकर उनका राशन और हथियार खत्म कर, उनको काबू किये जाने की रणनीती तैयार की गई थी। आदेश की हुक्म-अदूली पर बादशाह अपने जरनैलों पर काफी नाराज हुआ और रणनीति फेल करने वाले जरनैलों की सजा मुकरर करने लगा। उधर सिक्ख हथियार कम होने के कारण एक-एक करके गोले फैंक रहे थे। मुग़ल फ़ौजों के जरनैलों ने इससे अनुमान लगा लिया था कि सिक्खों के पास बारूद कम है। शाम से पहले ही सिक्खों का बारूद खत्म हो गया। अब वह मोर्चों में से निकले और उन्होंने मुग़ल फ़ौजों पर तलवारों के साथ हमला आरंभ कर दिया। इस कारवाई में अनेकों सिक्ख शहीद हो गए। इस समय बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ किले में बैठा था। शाही फ़ौज लोहगढ़ को घेरे बैठी थी। कामवर लिखता है कि जब सूर्य अभी उदय ही हुआ था कि खानाख़ान ने अपने 5000 साथियों सहित पहाड़ी की शिखर पर सिक्ख बैरकों पर धावा बोल दिया। यहां जबरदस्त

---

120 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखबुल लुबाब (जिल्द 2, पृष्ठ 671-672)

121 *तजकिरातुल सलातिन चुग्गाता (पृष्ठ. 153)

122 *इलियट और डोजन, ओ.पी. भाग 7, पृष्ठ 555-556, (ख़ाफी ख़ान, जिल्द 2, पृष्ठ 671, इरविन, लैटर मुग़लज, जिल्द पहली, पृष्ठ 111)

123 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखबुल लुबाब, जिल्द 2, पृष्ठ 669-670, एलियट एंड डाऊसन, जिल्द 7, पृष्ठ 423-424, कामवर, पृष्ठ 153

तोपों और तीरों की जंग लड़ी गई। खानाख़ान किले के बहुत नजदीक पहुंच गया। इस समय दोनों ओर बहुत भारी नुक्सान हुआ था।[124]

सिक्खों को अब एहसास हो गया था उनका भला किले में से निकल जाने में ही है। रात के समय उन्होंने बहुत सारा बारूद भरकर इमली के तने के साथ बनाई गई तोप चलाई जिससे धरती कांप गई। इन धमाकों के साथ सभी शाही फ़ौजी डरकर छिप गए। सिक्खों ने इसका लाभ उठाया और किले में से निकल कर पहाड़ों की ओर चले गए। इनमें ही बंदा सिंह बहादुर भी थे। इस लड़ाई में 1500 सिक्ख और उनके दो प्रमुख मारे गए थे।[125]

अगली सुबह (1 दिसंबर, 1710) सूर्योदय होते ही राजा उदित सिंह बुंदेला और रुस्तम दिल ख़ान बहादुर ने एक बड़ा हमला किया और किले के अंदर दाखिल होकर इस पर कब्ज़ा कर लिया। गुलाब सिंह बख्शी जिसने बंदा सिंह बहादुर की पोशाक पहनी हुई थी। केवल तीस अन्य सिक्ख ही उनके हाथ लगे। खाफ़ी ख़ान लिखता है कि बाज़ बचकर निकल गया और उल्लू पकड़ा गया है।[126] जब बहादुर शाह को पता चला कि बंदा सिंह बचकर निकल गया है तो वह बहुत क्रोधित हुआ और उसने गुस्से में कहा कि कैसे एक गीदड़ इन कुत्तों के हाथों बचकर भाग गया।[127]

मोहम्मद कासिम औरंगाबादी लिखता है कि बंदा सिंह बहादुर की मोर्चाबंदी को तोड़ना मुश्किल दिखाई दे रहा था। अनुमान है कि उपरोक्त मसला एक वर्ष से कम समय में हल नहीं होगा।[128] ईश्वरीय उत्साह ने काम किया और लंबे समय के मामले का एक क्षण में समाधान कर दिया। मुग़ल फ़ौज भी बहुत थक कर टूट चुकी थी। इसलिए आज ठहर जाना चाहिए। ईश्वर ने चाहा तो हम कल को सूर्योदय होते ही एक क्षण में कब्ज़ा कर लेंगे। अगर हम आज हमला करते हैं तो मुमकिन है कि वह बंदा सिंह अन्य रास्ते से फरार हो जाये और मेहनत बर्बाद चली जाये। अगर वह बंदा सिंह बहादुर यहां से भाग जाये तो उसके लिए दो ही रास्ते हैं। पहला बर्फी राजे (नाहन) की सरहद की ओर और दूसरा, अफगान (जम्मू कश्मीर) की सरहद की ओर। बादशाह के तरफ से हुक्म किया गया कि उनको अपनी सरहदों की ओर न आने दे और पिछले रास्ते बंद कर दे। जब चारों ओर से पूरी मजबूती हो जाये तो ऐसा हमला करें कि कोई भी सैनिक बच न पाए परन्तु उपरोक्त किला उनकी सोच के अनुसार फतेह न हुआ। नहीं तो कुछ भी शेष ना बचता। जबकि उस बुरे व्यवहार वाले काफिर (बंदा सिंह बहादुर) की जिंदगी कुछ अन्य दिनों के लिए बच गई होगी। वृद्ध होने के बावजूद ख़ानखाना भी धोखा खा गया।

---

124 *ताजकीरा सालतिन चुग्गाता, पृष्ठ. 153
125 *इलियट और डोजन, जिल्द 7, पृष्ठ 424
126 *इलियट और डोजन, ओ.पी. भाग 7, पृष्ठ. 555-556
127 *इलियट और डोजन, ओ.पी. भाग 7,
128 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन

लोहगढ़ किला मुग़लों के हाथ ना आना और बंदा सिंह बहादुर का लाहौर पर हमला (मुग़लों के दस्तावेजों के अनुसार)

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने दो सौ सैनिक उस किले में छोड़े और बर्फी राजे की सरहद के रास्ते बाहर निकल गया। जो शख़्स उसने किले की चौंकीदारी के लिए पीछे छोड़े थे वे मुसीबत के जाल में फंसे रह गए। उस दिन सुर्योदय होते ही शहज़ादे ने हमला करने का हुक्म दिया। जांबाज़ सैनिक किले की दीवारों के साथ सीढ़ियां लगाकर और लटकते हुए (किले के) अंदर जा घुसे। परन्तु जैसे उन्होंने किले की मजबूती के बारे सुना था उनको वह मजबूती नज़र नहीं आई। बंदा सिंह बहादुर के जिन आदमियों ने तलवारों के साथ मुकाबला किया वह एक पल में कत्ल हो गए। उपरोक्त किला तेज-प्रताप के गाजी लश्कर के कब्ज़े में आ गया। प्रत्येक शख़्स के हाथ असंख्य लूट का माल लगा। एक सप्ताह तक लश्कर के टोले बनाकर पहाड़ी इलाकों में दाखिल होते रहते थे और काफिरों की कौम का जो आदमी भी उनको मिलता उसे कत्ल कर देते थे। वह बहुत अधिक लूट का माल इकट्ठा करके अपने घरों को ले आते थे। मखमल, बानात, किमख़ाब, खुतन और लाहौर के बुने हुए कपड़े, लाचे, अक्सर अनोखी वस्तुएं, नकदी, बांदी और गुलाम के बिना ऐसा कोई घर नहीं बचा था। सुस्त, सखी, अफीमची, पोस्ती, बीमार, नमक हरामी, कमज़ोर और बुज़दिल या धार्मिक इन्सान जो लड़ाई के मैदान में नहीं गए थे। वह उपरोक्त चीज़ों से वंचित रह गए थे।[129]

किले पर कब्ज़ा किये जाने के पश्चात के हालतों के बारे में कामवर बयान करता है। हम सलाह करके किले के अंदर जा घुसे और लूटमार का तमाशा देखने लगे। बादशाही लश्कर के मारखोर बेग़ैरत अफगान और बलोच हाथापाई करके औरतों और बच्चों को पकड़-पकड़ कर लेकर जा रहे थे। माल सामान लूट रहे थे। इनके हाथों बारुदखाने में आग लगी जिसके साथ असंख्य लोग मारे गए। इनमें सुच्चानंद का पुत्र व बहुत से मुसलमान कैदीयों की लाशें मलबे नीचे दबी हुई पड़ीं थीं।

मुग़ल फ़ौजों को लोहगढ़ किले से पांच हाथी, तीन तोपें, 17 छोटी तोपें, सात बंदूकें, एक शामियाना और कुछ चांदी के चोबे ही हाथ आए। लोहगढ़ के जमींदार कुंदन से 8 लाख रुपए और अशर्फीयां वसूल हुई।[130]

1 दिसंबर को लूट का सारा माल-असबाब बादशाह के खेमे में लाया गया। इस लड़ाई में वीरता दिखाने के लिए 2 दिसंबर को बादशाह ने जमदात-उल-मुल्क और बख्शी-उल-मुमालिक की बहुत तारीफ की। ऐसे ही ज़ोरावर ख़ान, रणबाज ख़ान और शेर ख़ान को बहादुरी के लिए खिल्लतें दी गई।[131]

---

129 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादीः अहवाल-उल-खवाकीन, संपादक बलवंत सिंह ढिल्लों, पत्रें 40-43

130 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखबुल लुबाब, जिल्द 2, पृष्ठ 672-673

131 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-12-1710 की रिपोर्ट

क्या लोहगढ़ किले को एक दिन में जीत लिया गया था?

उपरोक्त उल्लेख मुग़लों की लिखतों के आधार पर है या फिर अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला (जैपुर के राजे को लिखे पत्रों) के आधार पर है और इन पत्रों में भी जो कुछ लिखा जाता था वह बादशाह के शिविर से मिली जानकारी के आधार पर ही होता था। इस कारण यह विवरण सभी मुसलमान लेखक ने एक तो बादशाह को खुश करने के लिए और दूसरा सिक्खों को कमजोर साबित करने के लिए लिखा था। हमनें देखा है कि लोहगढ़ का किला 28-30 किलोंमीटर लंबा और 10-15 किलोंमीटर चौड़ा था। इसके इर्द-गिर्द लगभग डेढ़ कोस तक जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मोर्चे बनाए हुए थे। क्या इस किले को एक-दो दिन में कब्ज़े में लिया जा सकता था? यह नामुमकिन है। एक दिन में तो ज्यादा से ज्यादा एक पहाड़ी पर जीत हासिल की जा सकती थी। यहां तो दर्जनों पहाड़ियां थी। हर पहाड़ी पर बुर्ज और मोर्चे बने हुए थे।

सन् 1735 की रचना अहवाल-उल-खवाकीन का लेखक मुहम्मद कासिम औरंगाबादी (पृष्ठ 34 से 37) लिखता है कि ख़ानखाना (मुनायम ख़ान) की नेक सलाह के साथ शहज़ादे की राय भी यही थी कि बंदा सिंह बहादुर की मोर्चेबंदी को तोड़ना बेहद मुश्किल दिखाई दे रहा था। मन में यह बात भी आ रही थी कि इस मसले का एक वर्ष से कम समय में समाधान नहीं होगा।[132]

इतनी बड़ी लोहगढ़ की किलेबंदी को इतिहासकारों ने झूठ बनाकर पेश किया। यह सब कुछ मुग़लों का मनोबल बढ़ाने के लिए और मुग़ल सल्तनत की बेबसी को छुपाने के लिए किया गया।

मुग़ल फ़ौज को सिक्खों ने लोहगढ़ किले के निकट नहीं आने दिया। मोहम्मद कासिम औरंगाबादी पृष्ठ 11 अहवाल उल खवाकिन में लिखता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर के हाथों अनोखी घटनाओं का उल्लेख करना इस्लाम का अपमान है। वह यह भी लिखता है कि जो भी किले में प्रवेश करने के लिए आगे बढ़ता उसे अपनी जान गंवानी पड़ती थी।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'गुरमत प्रकाश' के मई, 2011 अंक के पृष्ठ 53 में प्रोफेसर बलवंत सिंह लिखते हैं कि लोहगढ़ किला हुनर व कला की जीती जागती मिसाल है। जिस पर विजय पाने के लिए 60000 की मुग़ल फ़ौज भी कम थी।

लोहगढ़ किले पर कब्ज़े का झूठा प्रचार

यह दावा करना कि अगले ही दिन हमला करके कुछ ही घंटों में मुग़ल फ़ौजों ने किले पर कब्ज़ा कर लिया हास्यप्रद लगता है। ऐसा लगता है कि उन्होंने सितारगढ़ और एक अन्य पहाड़ी जो लोहगढ़ किले के एक हिस्से की आरंभिक परन्तु एक छोटा सा हिस्सा था पर कब्ज़ा किया था। बादशाह को खुश करने के लिए यह प्रचार किया था कि उन्होंने लोहगढ़ किले पर कब्ज़ा कर लिया है। कामवर ख़ान, खाफी ख़ान और मुहम्मद कासिम औरंगाबादी जो इस लड़ाई के चश्मदीद गवाह होने का दावा करते हैं। मुग़लों की ताकत और शान का प्रचार करने मुसलमानों के हौसले बढ़ाने और सिक्खों के विरूद्ध प्रचार करने व सिक्खों को कमज़ोर साबित करने के लिए

---

132 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पन्नें 34-37

तथा बादशाह को खुश करने के लिए यह झूठा प्रचार किया। हकीकत यह है कि यह किला इतना विशाल (चौड़ा और लंबा) और अनेक पहाड़ियों में बना हुआ था कि इस पर 6-7 वर्ष में भी पूरी तरह से विजय प्राप्त नहीं की जा सकी थी।

असलीयत यह है कि सढ़ौरा से लोहगढ़ पहुंचने के लिए बड़ा कठिन मोर्चा था। इन रास्तों में सिक्खों के कई गांव थे। जैसे कि बकाला, अज़ीजपुर कलां, बंदा बहादुर, नौशहरा, बुढ़ी, रामपुर, रणजीतपुर, मछरौली, मारवा, कपुरी, जुड़डा, सुंदर बहादुर पुर, ताहरपुर, तारूवाला, बसातीयांवाला, नगली, मुहिदीनपुर इन सभी गांवों में ही गढ़ियां/किले बने हुऐ थे। इन किलों में बुर्ज और पक्के मोर्चे कायम थे। दूसरे शब्दों में लोहगढ़ पहुंचने से पहले मुग़ल फ़ौज को कईं लड़ाईयां लड़नी पड़ती। उधर बंदा सिंह बहादुर को पता चल चुका था कि बादशाह ने बहुत बड़ी फ़ौज के साथ इलाके को घेरा हुआ है। हालांकि पहाड़ों का हिस्सा जरनैल बंदा सिंह बहादुर के लिए पूरी तरह महफूज था और ऐसे ही कलेसर का जंगल भी बढ़िया रक्षक था। पहाड़ों की इतनी परतें और चोटियों को मुग़ल फ़ौजों के लिए कई वर्षो तक भी जीत पाना मुमकिन नहीं था। मुग़ल फ़ौज कईं महीने लंबे घेरे के पश्चात सढ़ौरा व गुरदास नंगल के किलों को बहुत मुश्किल से जीत पाने में कामयाब हुई थी। उन किलों के मुकाबले लोहगढ़ किला बहुत विशाल था और बहुत बड़े क्षेत्र में था।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ क्यों छोड़ा

कई दिनों के परिश्रम के बाद मुग़ल फ़ौज काफी नुक्सान करवा चुकी थी। लेकिन लोहगढ़ किले तक पहुंच न सकी। बादशाह ने मोर्चों के बारे जानकारी लेने का हुक्म दिया लेकिन खानाख़ान ने बिना योजना के लोहगढ़ से पहले मोर्चो पर हमला कर मुग़ल फ़ौज का भारी नुक्सान करवाकर इन चौंकियों पर कब्ज़ा कर लिया था। बादशाह का एक ही लक्ष्य रह गया था कि किसी तरह बंदा सिंह बहादुर को काबू किया जाये। इधर बंदा सिंह को पता चल गया कि मुग़ल फ़ौजें दुविधा में घबराई हुई है और इस हालत में लोहगढ़ में लड़ाई करना फायदेमंद नहीं होगा। इस कारण बंदा सिंह बहादुर ने लम्बी लड़ाई लड़ने के अतिरिक्त एक ओर मुग़ल फ़ौजों को उलझाऐ रखा और दूसरी ओर पंजाब व जम्मू की ओर निकल कर मुग़ल फ़ौजों का ध्यान उधर बांटनें की योजना बनाई। इसलिए वह किले में से निकल कर अन्य पहाड़ों की ओर निकला। बंदा सिंह बहादुर अपने जरनैलों सहित 40000 सिक्ख फ़ौजें लेकर नाहन रियासत में से निकल कर शिवालिक की पहाड़ियों की ओर गया और उसने लाहौर पर हमला करने की योजना बनाई।[133]

लोहगढ़ की एक-दो पहाड़ी जीतने के उपरांत के हालात

जिस जीत को मुग़ल लोहगढ़ की जीत कहते थे। वह वास्तव में गांव लोहगढ़ की पहली पहाड़ीओं पर कब्ज़ा करने की घटना है। मुग़लों ने बादशाह को इन पहाड़ीयों की जीत को लोहगढ़ की जीत बताकर पेश किया। यह छोटी सी लड़ाई 30 नवंबर, 1710 को हुई थी। मुग़ल

133 *बंदा सिंह बहादुर के बारे राजस्थानी दस्तावेज (संपादित डा. बलवंत सिंह ढिल्लों), वकील की रिपोर्ट नंबर 351, तारीख 6 मार्च, 1711

जरनैलों ने दो पहाड़ियों पर कब्ज़ा करने को लोहगढ़ किला विजयी ऐलान करके बादशाह को खुश करने की कोशिश की परन्तु बहादुर शाह को आज तक भी यह नहीं बताया गया था कि बंदा सिंह पहाड़ियों के रास्ते निकल गया है। खाफी ख़ान के अनुसार जब बंदा सिंह के बचकर निकल जाने की ख़बर बहादुर शाह को मिली तो वह बहुत क्रोधित हुआ और उसने कहा 'इतने कुत्तों के घेरे में से गीदड़ बच कर निकल गया'। बादशाह के इस क्रोध का इशारा ख़ानखाना (मुनायम ख़ान) की ओर था। क्योंकि उसने ही बादशाह के हुक्म की परवाह किये बिना अपनी मर्जी के साथ हल्ला बोल दिया था। यह सुनकर ख़ानखाना शर्मिंदा होकर दरबार में से उठकर चला गया। ख़ानखाना ने यह बात दिल को लगा ली और वह बीमार पड़ गया। बादशाह के काफिले के साथ चलते ही ढाई महीने के पश्चात वह सढ़ौरा के नजदीक गांव बढ़ौली में मर गया। इस ख़ानखाना को मुग़लिया सल्तनत का उस समय का सबसे बड़ा मनसबदार सात हज़ार व्यक्ति और सात हज़ार सवार, जिसमें से पांच हज़ार दो-असपा था। ख़ानखाना अब तक अपने कारनामों के कारण एक करोड़ रुपए के लगभग ईनाम हासिल कर चुका था।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के बच निकलने के अफसोस के तौर पर बादशाह ने ढ़ोल, नगाड़े और नाच-गाना बंद करवा दिए और वह उचाट होकर बैठ गया। बंदा सिंह बहादुर के किले में से बचकर निकलने और गुलाब सिंह के पकड़े जाने के बारे में खाफी ख़ान लिखता है कि बाज़ उड़ गया था और उल्लू पकड़ा गया था।[134] मुहम्मद कासिम औरंगाबादी (अहवाल-उल-खवाकीन) के अनुसार बड़े शहज़ादे और ख़ानखाना ने किले को जीतने के उपरांत तुरंत ही बादशाह को हरकारा भेजकर दरखास्त भेजी। जिसको पढ़कर बादशाह बहुत खुश हुआ और अल्लाह के शुकराने के तौर पर सज्जदे किये। बंदा सिंह बहादुर के निकल जाने के कारण वह उचाट होकर रह गया। बादशाह ने पूछा कि वह किस रास्ते से बाहर निकल गया? पश्चात में शहज़ादा और ख़ानखाना आ गए और उन्होंने बंदा सिंह बहादुर के वहां से भाग जाने का हाल विवरण के साथ बताया और कहा कि वह बर्फी राजा (नाहन का राज) के इलाके की ओर निकल गया है। इस पर बादशाह ने हुक्म किया कि बर्फी राजा को बिना किसी विलंब के उपस्थित किया जाये।[135] शायद मोहम्मद कासिम औरंगाबादी मुनायम ख़ान के साथ सहानुभूति रखता था परन्तु अपनी लिखित के 32 पन्ने पर वह मुनायम ख़ान के पुत्र महाबत ख़ान को उसकी ओर से अमीनगढ़ की लड़ाई में सिक्खों से पराजित होने के कारण निंदा करता है, मुकाबलों को बरदाश्त न करता हुआ 'केकड़े की तरह मुंह फेर लिया' की संज्ञा देता है।

3 दिसंबर, 1710 को बादशाह ने दरबार लगाया और सिक्खों के विरूद्ध लड़ाई में भूमिका निभाने वालों को इनाम दिए, जमदात-उल-मुल्क और बख्शी-उल-मुमालिक को रेशमी पोशाक और पगड़ी, हमीद-उद्-ख़ान को कपड़े के चार थान की रेशमी पोशाक, बख्शी-उल-मुल्क,

---

134 *(इलियट और डोजन, जिल्द 7, पृष्ठ 555-556)

135 *अहवाल -उल-खवाकीन के लेखक मुहम्मद कासिम औरंगाबादी पृष्ठ 34-37 के अनुसार, बंदा सिंह के पकड़े ना जाने पर बादशाह, मुनायम ख़ान खानखाना के साथ केवल क्रोधित ही नहीं हुआ था, बल्कि ख़ाफी ख़ान मुताबिक बहुत ही गुस्से में उसे 'कुत्तो' के साथ तुलना की थी।

महाबत ख़ान और इस्लाम ख़ान बहादुर को स्पैशल रेशमी पोशाक और राजा उदित सिंह को भी बढ़िया रेशमी पोशाक दी गई। राजा छत्रसाल को जिगाह, कलगी और चूड़ामणी जट्ट को हाथी भेंट किया गया। हामिद ख़ान को जोड़ा-जामा भेंट किया गया।[136] यह चूड़ामनी जाट एक हिंदू जरनैल था जो बहादुर शाह के बागी भाई तारा आजम का साथी था। परन्तु जनवरी, 1709 की लड़ाई में तारा आजम की पराजय और मौत के पश्चात इसने तारा आजम का खजाना लूट लिया था और बहादुर शाह के साथ आ गया था।

इसके साथ ही बादशाह ने ज्ञान चंद (राजा कमायूं), फतेह शाह (राजा गढ़वाल) और भूप प्रकाश उर्फ 'राजा बर्फी' (राजा नाहन) के नाम फुरमान भेजे कि बंदा सिंह बहादुर डाबर (लोहगढ़) से निकल गया है। अगर आपकी सीमा में पहुंचे तो उसे गिरफ्तार करके हजूर के दरबार में पेश किया जाए। बादशाह ने हामिद ख़ान को बंदा सिंह बहादुर की तलाश में भेज दिया और कहा कि वह न पकड़ा जा सके तो नाहन के राजे भूप प्रकाश को पकड़ कर ले आए। क्योंकि बंदा सिंह बहादुर उसके इलाके में गऐ थे बादशाह ने यह भी हुक्म दिया कि नाहन राजा को गिरफ्तार करके पिंजरे में डालकर दिल्ली लाया जाऐ। यह वही पिंजरा था जिसमें बंदा सिंह बहादुर को डालकर लाने के लिए वहां लाया गया था।[137]

6 दिसंबर, 1710 को बादशाह ने हुक्म जारी किया कि शाही फ़ौज के हिंदू अफसरों में से कोई भी गुलामों और औरतों की खरीद नहीं कर सकता। न ही बागियों के माल की लूट-मार कर सकता है। यह अधिकार केवल मुसलमान को ही हासिल था। बादशाह ने यहां तक कहा कि अगर किसी हिंदू अफसर ने कोई गुलाम या औरत पकड़ी हो तो उसे छोड़ दे। गौरतलब है कि बहादुर शाह की मदद करने वालों में से बहुत से लोग हिंदू राजे और चौधरी थे परन्तु उनके साथ भी बहादुर शाह का व्यवहार ऐसा ही था।

6 दिसंबर, 1710 को ही बादशाह को बताया गया कि लोहगढ़ किले में से सिक्खों का दबाया हुआ खजाना मिल गया है। इसमें 5 लाख रुपए और 3400 अशर्फियां शामिल हैं।[138]

सिक्खों को कत्ल करने का हुक्म जारी करना

10 दिसंबर, 1710 को बादशाह ने बख्शी-उल-मुमालिक महाबत ख़ान को हुक्म जारी किया कि बादशाह के नाम पर शाहजहांनाबाद (दिल्ली) के आसपास के फ़ौजदारों को हुक्म जारी करे कि 'जहां भी कोई नानकपंथी (सिक्ख) दिखाई दे उसे कत्ल कर दिया जाये'। बाद में 26 मार्च, 1711 को बादशाह ने यह हुक्म भी जारी किया कि सिक्खों को 'सिक्ख' नहीं बल्कि 'सिक्ख-चोर' लिखा जाये।[139]

---

136 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 3 दिसंबर, 1710 की रिर्पोट

137 *इलियट और डोजन, जिल्द 7, पृष्ठ 425

138 *कुछ काग़ज़ों में 30 नवंबर, 1710 की तारीख का उल्लेख किया गया है. अंतर यह है कि जूलियन और ग्रैगोरियन कैलंडरों का प्रयोग किया जा रहा है।

139 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 26 मार्च, 1711

राजा नाहन की गिरफ्तारी

26 दिसंबर, 1710 में बादशाह ने रुस्तम दिल ख़ान को हुक्म जारी किया कि नाहन राजा भूप प्रकाश को पकड़ कर पेश किया जाये। उसने हामिद ख़ान को नाहन के राजा को लाने के लिए भेज दिया। हामिद ख़ान ने राजा भूप प्रकाश को बादशाह का पैगाम दिया। उसने उसे यह भी कहा कि यह महाबत ख़ान का वादा है कि उसका कुछ भी नहीं बिगड़ेगा। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी के अनुसार हामिद ख़ान नाहन के नाबालिग राजा भूप प्रकाश को ले आया। ख़्वाजा कुतुबदीन, हरकारा दियानत राव और ओमा पंडित उसे लेकर बादशाह के दरबार पहुंचे। भूप प्रकाश ने बादशाह को एक सौ मोहर, चार बाज, पांच जुर्रे (नर बाज, शिकारी पक्षी), नौ किताश और पांच सौ जदवार पेश की।[140] बादशाह ने उसे इसके बदले जोड़ा-जामा भेंट किया और दरबार में रहने का हुक्म भी दिया।

अगले दिन उसे बंदा सिंह बहादुर को गिरफ्तार करवाने की शर्त पर रिहाई की पेशकश की। बादशाह ने राजा नाहन को हुक्म किया कि 'काली कंबली वाले' (बंदा सिंह बहादुर) जो उसकी सरहद में छिपे हुए हैं और उनको ढूंढ कर दें। अन्यथा उस पिंजरे जो उस बदकिस्मत (बंदा सिंह बहादुर) के लिए तज़वीज किया हुआ है को कबूल करे।[141] धन्य हैं, ईश्वर! उपरोक्त पिंजरा किसके लिए रखा हुआ था और किसके काम आया। तकदीर बदली नहीं जा सकती।

बादशाह ने उसकी मां को भी पैगाम भेजा कि वह बंदा सिंह बहादुर को पकड़वा दे और अपना पुत्र ले जाये। इस पर नाहन के राजे की मां ने 35 सिक्ख गिरफ्तार करवा कर भेजे। बादशाह ने वह सभी मरवा दिए परन्तु बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी तक राजा नाहन को छोड़ने से मना कर दिया।

राजा नाहन भूप प्रकाश को महाबत ख़ान की कैद में रखा गया था। 17 मार्च को बादशाह ने निजी सिपाहियों द्वारा महाबत ख़ान को हुक्म भिजवाया कि भूप प्रकाश को उस कांटों वाले पिंजरे में डाल दे जो बंदा सिंह बहादुर के लिए बनवाया गया था। इस पर महाबत ख़ान ने अर्ज की कि राजा बेकसूर है और बंदा सिंह बहादुर पहले ही उसके इलाके से जा चुका है। इस पर बादशाह ने कहा कि अगर हमने उस भूप प्रकाश को दण्डित न किया तो सभी जमींदार पहाड़ी राजे सिक्ख बन जाएंगे। तू उसे जरूर सजा दे। महाबत ख़ान ने फिर कहा कि पिंजरे के अंदर तीखे और सख़्त कील हैं और जैसे ही राजे को उस में डाला जाएगा उसकी मृत्यु हो जायेगी। इस पर बादशाह ने कहा कि अगर उसकी मृत्यु हो जायेगी तो वह निश्चित रूप से जहनुम्म नरक में जाएगा। इसके उपरांत महाबत ख़ान ने कोई अपील नहीं की। वास्तव में महाबत ख़ान ने राजा नाहन को इस वादे के साथ बादशाह के पास पेश होने के लिए लाया था कि उसका (राजा) का कोई नुक्सान नहीं होगा। परन्तु बादशाह ने महाबत ख़ान की बात मानने से इंकार कर दिया था। इस हालत में महाबत ख़ान ने मजबूर होकर राजा को पिंजरे में बंद कर दिया। परन्तु यह करने से

---

140 *जुररा, कितश और जदवार शिकार के सभी पक्षी हैं। अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 12-12-1710 की एंट्री

141 *मुहम्मद कासिम औरंगाबाद, अहवाल-उल-खवाकेन, पृष्ठ. 37 (संपादित डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों)

पहले उसने पिंजरे के अंदर के कील टेड़े कर दिए जिससे वह भूप प्रकाश को न चुभ सके।[142]

पंचोली जगजीवन दास के अनुसार जब राजा भूप प्रकाश और उसका दीवान (वज़ीर) वहां पहुंचे तो ख़ानखाना ने उससे पूछा की बंदा सिंह कहां है। इस पर भूप प्रकाश के दीवान ने बताया कि बंदा सिंह उसकी रियासत में से बाहर जा चुका है। इस पर ख़ानखाना ने कहा कि वह झूठ बोलता है और उसने दीवान का अपमान किया और उसे हथकड़ी लगाकर पैरों में बेड़ियां डालकर और गले में लोहे का पटा डालकर एक पिंजरे में बंद कर दिया। राजा नाहन के भी हथियार उतरवा कर उसे भी एक चौंकी (छोटा शिविर) में कैद कर दिया गया। उसके आसपास फ़ौज का पहरा लगा दिया गया। राजा छत्रसाल ने भी राजा नाहन को यह वादा दिया था कि उसका कुछ नहीं बिगड़ेगा। बाद में जब राजा छत्रसाल ने देखा कि बादशाह ने नाहन के राजे को कैद करने का हुक्म दिया है तो वह बादशाह को छोड़ वापिस अपने वतन चला गया।[143]

दीवान भिखारी दास के अनुसार जब नाहन के राजे को ख़ानखाना ने पूछा कि बंदा सिंह कहां है तो उसने जानकारी न होने की बात कहते कहा कि मेरा दीवान जो गुरसिक्ख है उसे बंदा सिंह की जानकारी हो सकती है। इस पर दीवान को गिरफ्तार कर लिया गया और बुरी तरह पीटा गया। दूसरे दिन बादशाह ने कहा कि दीवान की मारपीट करने से कुछ हासिल नहीं होगा। इसकी बजाय राजा नाहन को गिरफ्तार कर लो और उसको कहें कि अगर वह बंदा सिंह को पेश नहीं करता तो उसकी रियासत को तबाह कर दिया जाऐगा।[144]

22 जनवरी, 1711 को बादशाह सढ़ौरा के निकट था तो एक हरकारे ने उसे ख़बर दी कि नाहन के राजा भूप प्रकाश की मां ने बंदा सिंह को पकड़ लिया है। वह उसे बादशाह के पास पेश करने के लिए ला रही है। वह इस समय शाही शिविर से 12 कोस की दूरी पर है और उसने कहा है कि महाबत ख़ान को आगे होकर उसे लाने के लिए भेज दिया जाये। इस पर बादशाह ने निजी सेवकों को हुक्म देकर महाबत ख़ान की ओर भेज दिया जिसे कहा गया था कि वह बंदा सिंह बहादुर को लोहे के उस पिंजरे में बंद करके लेकर आए जो उसके लिए विशेष तौर पर बनवाया गया था। बादशाह ने यह भी कहा कि बंदा सिंह की पत्नी जोकि उसके साथ पकड़ी गई है को रथ में बिठा कर लाया जाये। कुछ समय बाद बादशाह ने ख़ानखाना को कहा कि वह कुछ और हरकारे भेज दे। बोले कि बंदा सिंह को जल्दी लाया जाये। 24 जनवरी को बादशाह ने हुक्म दिया कि राजा नाहन की मां जो कि वह बंदा सिंह को गिरफ्तार करके ला रही थी के लिए एक लाख रुपए के गहने बनवाऐ जाएं।[145] परन्तु कुछ देर बाद बादशाह को पता चला कि नाहन की फ़ौज जरनैल बंदा सिंह बहादुर को गिरफतार करने के असक्षम रही हैं और बादशाह ने हुकुम दिया कि

---

142 *भिखारी दास द्वारा राजा जय सिंह सवाई को 17 मार्च, 1711 को भेजी अर्जदाशत, क्रमांक नंबर 13, वकील रिपोर्ट नंबर 45)। राजस्थानी दस्तावेज बंदा सिंह पर बहादुर, डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित

143 *राजस्थानी दस्तावेज, पंचोली जगजीवन दास द्वारा 26 दिसंबर, 1710 को राजा जयपुर को लिखी चिट्ठी, सिरियल नंबर 1, अर्जदाशत 195, बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित

144 *दीवान भिखारी दास द्वारा राजा जयपुर को 10 जनवरी, 1711 को लिखी चिट्ठी, क्रमांक 2, वकील रिपोर्ट नंबर 11

145 *पंचोली जगजीवन दास द्वारा 24 मार्च, 1711 को राजा जयपुर को लिखी चिट्ठी, नंबर 16, वकील रिपोर्ट नंबर 48

नाहन का राजा की कैद ज्यों की त्यों कायम रहेगी।

20 मार्च, 1711 के दिन बादशाह ने राजा नाहन को पिंजरे में ही दिल्ली लेकर जाने और वहां सलीमगढ़ किले में बंद करने का हुक्म जारी किया।[146] बादशाह ने हुक्म किया कि इनको दिल्ली में लाल किले के पीछे बने हुए सलीमगढ़ किले के किलेदार के हवाले करने के उपरांत इसकी रसीद भी उस बादशाह तक पहुंचायी जायें। बाद में नाहन के राजा ने जयपुर और जोधपुर के राजाओं को दो बार पैगाम भेजकर अपनी रिहाई में मदद की विनती की। इस पर उन्होंने उसको जवाब भेजा कि हम मदद नहीं कर सकते और तेरी रिहाई एक ही सूरत में हो सकती है कि तू किसी तरह बंदा सिंह को गिरफ्तार करवा दे। फरवरी, 1716 में बंदा सिंह बहादुर को भी इसी पिंजरे में दिल्ली ले जाया गया था और सलीमगढ़ किले में ही कैद रखा गया था।

फूटकल

बहादुर शाह की मौत के उपरांत में नये बादशाह जहांदार शाह ने 2 जुलाई, 1712 को नाहन के नाबालिग राजा को कैद से अपने दरबार में बुलाया। उसे बैठने की इजाजत न दी गई और खड़ा रखा गया। उसे किसी जिम्मेवार शख़्स की जमानत पर रिहा करने का हुक्म दिया गया और उस द्वारा वफादारी दिखाने पर उसे रेशमी पोशाक भेंट की गई।

146 *दीवान भिखारी दास द्वारा राजा जयपुर को 27 जनवरी, 1711 के दिन लिखी चिट्ठी, सिरियल नंबर 5, वकील रिपोर्ट नंबर 25। एक लाख रुपए के गहने बनाने की बात अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की 22 जनवरी की प्रविष्टि में भी लिखी मिलती है।

अध्याय 7

मुग़ल बादशाह द्वारा सिक्खों के विरूद्ध अन्य मुहिम का फैसला

01 जनवरी, 1711 को मुहम्मद अमीन ख़ान सिक्खों के सिरों की 6 बैलगाड़ियां लेकर सढ़ौरा से थानेसर पहुंचा और उसने बादशाह के पास शमश ख़ान की शिकायत भी कि वह योजनाओं अनुसार सिक्ख फ़ौज पर हमला नहीं कर रहा। उसे वास्तव में शमश ख़ान पर इस बात का गुस्सा था कि उसने सरहिंद पर कब्ज़ा करके श्रेय स्वयं क्यों लिया था।[147] 9 फरवरी, 1711 को बादशाह ने हमीद ख़ान को रेशमी पोशाक देकर सिक्खों के विरूद्ध सढ़ौरा भेज दिया। उसे पांच हज़ार सवारों की फ़ौज भी दी गई। 6 मार्च को बादशाह को गाज़ी ख़ान का पैगाम मिला कि बंदा सिंह की 40,000 फ़ौजें पहाड़ों के रास्ते लाहौर की ओर आ रही हैं। इस पर बादशाह ने ख़ानखाना के पुत्र बख्शी-उल-मुल्क महाबत ख़ान को भी सिक्ख फ़ौज का पीछा करने के लिए पहाड़ों में भेजा और उसके साथ 14 हज़ार घुड़सवार फ़ौज भेजी गई।[148] दो दिन बाद बादशाह ने हमीद ख़ान बहादुर और इसफंदयार ख़ान को रुस्तम दिल ख़ान के नेतृत्व में 15 हज़ार फ़ौज देकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पीछा करने के लिए भेजा। जैसे कि पहले भी व्यक्त किया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर और सिक्ख फ़ौज की रफतार पहाड़ों में 60 किलोंमीटर प्रतिदिन से भी अधिक थी और हर 7-8 किलोंमीटर के दूरी पर सिक्ख किले पहाड़ों मे मौजूद थे जोकि सिक्ख फ़ौज को हथियार, रसद इत्यादि के साथ-साथ रास्ते की रुकावटों की जानकारी दे रहे थे। उधर मुग़ल फ़ौज की रफतार पहाड़ों में 20 किलोंमीटर से अधिक नही थी। जिस कारण उनका जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ पाना लगभग ना मुम़किन था। यह भी ख़बर मिली कि बंदा सिंह कुल्लू और भुंतर के निकट है और उसके साथीयों ने पहाड़ों से उतर कर रोपड़ के इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया है।[149]

सिक्खों के विरूद्ध इतनी बड़ी मुहिम शुरु करने के बावजूद भी बादशाह को यकीन नहीं हुआ कि यह सिक्ख विद्रोह पर काबू पा लेगा। लोहगढ़ क्षेत्र में बादशाह को अपनी शाही फ़ौज के साथ बैठे लगभग पांच महीने का समय बीत गया परन्तु कोई भी बड़ी कामयाबी (जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध) मुग़ल बादशाह के हाथ नही लगी। हज़ारो की तादात में मुग़ल सैनिक सिक्ख

---

147 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-01-1711

148 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 06-03-1711

149 *पंचोली जगजीवन दास द्वारा राजा जयपुर को 6 मार्च, 1711 को लिखी चिट्ठी, सीरियल नंबर 10, वकील रिपोर्ट नंबर 351

फ़ौज के द्वारा मौत की नींद सुला दिए गए और इतनी बड़ी मुहिम को चलाने के कारण शाही खजाना भी खाली हो रहा था। बादशाह की प्रशासनिक व राजनीतिक पकड़ भी भारतवर्ष पर कमज़ोर होनी लगी। उधर जरनैल बंदा सिंह बहादुर थियेटर-ऑफ-वॉर को निरंतर बदल रहे थे और जम्मू से लेकर नेपाल तक मुग़लों के विरूद्ध युद्ध ज़ोरों-शोरों से चल रहा था। लाहौर सूबे पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर का आक्रमण कर देना। मुग़ल बादशाह के लिए चिन्ता का विषय बन गया और 14 मार्च, 1711 को बादशाह ने ऐलान किया कि वह स्वयं भी लाहौर जाकर रहेगा। वहां से बंदा सिंह के विरूद्ध मुहिम की निगरानी करेगा। बादशाह ने अपने सभी ख़बर-नवीसों, जासूसों इत्यादि को हिदायतें कर दी कि वह बंदा सिंह और उसकी फ़ौजों की पल-पल की ख़बर भिजवाए। इससे बादशाह को जानकारी मिल रही थी कि बंदा किस समय पर कहां है? क्या कर रहा है? और उनकी अगली कारवाई क्या होगी। इन ख़बरें भेजने वालों के नाम अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला में मिलते हैं उनमें शामिल हैं- ओमा पंडित, आस्कर राव, अब्दुल रहमान, अब्दुल रहीम, अलताफ ख़ान, इरादतमन्द ख़ान, शंकर राव, केशो राव, जगजीवन दास, दिआनत राव, शंकर राव, भगवती दास इत्यादि। यह सभी लाहौर, सरहिंद, गुजरात, दिल्ली, जम्मू, अजमेर, बरेली आदि इलाकों से ख़बरें भेजते रहते थे।[150] जब इनमें से कोई सिक्खों के मरने या नुक्सान होने की ख़बर भेजता था तो बादशाह उसे ईनाम देकर सम्मानित करता था। इसके साथ ही बहादुर शाह ने सिक्खों के विरूद्ध मुहिम में आगे बढ़ कर हिस्सा लेने वालों को बड़े इनाम, सम्मान, मनसब और जागीरें देनी शुरू कर दीं। उसने बहुत से मुग़ल जरनैलों को फ़ौजें देकर सिक्खों के विरूद्ध भेजना शुरू कर दिया। 20 मार्च, 1711 को बादशाह ने हिंदू चौधरियों, चूड़ामणी जाट और किशन सिंह नरोका को भी खिल्लतें देकर महाबत ख़ान के साथ सिक्ख फ़ौज के विरूद्ध लोहगढ़ भेजा।[151] 20 मार्च, 1711 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर और जालंधर व जम्मू के फ़ौजदार के बीच बड़ी जंग हुई जिसमें यह दोनों फ़ौजदार मारे गए। इसके अतिरिक्त सिक्खों ने मुग़ल फ़ौजों को मारकर बटाला शहर पर कब्जा कर लिया।

21 मार्च, 1711 को मुग़ल बादशाह के द्वारा आदेश दिया गया कि राजा अजीत सिंह जोधपुर, राजा जय सिंह जयपुर, शहजादा अजीजूदीन जल्द से जल्द फ़ौज लेकर लोहगढ़ पहुंचे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के खिलाफ मुहिम शुरू करें। 22 मार्च, 1711 को बादशाह थानेसर (लोहगढ़ क्षेत्र) से लाहौर की ओर चल पड़ा। 24 मार्च को बादशाह के दरबार में चर्चा थी कि गुरु का चक्क (अमृतसर) से शाहदरा (लाहौर में दाखिल होने का पड़ाव) तक भी बंदा सिंह बहादुर का राज कायम हो चुका था।[152] 18 अप्रैल, 1711 के दिन बादशाह को बताया गया कि

150 *यह नाम अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की अलग-अलग इंदराजों में मिलते हैं।

151 *राजस्थानी दस्तावेज डॉ. बलवंत सिंह ढ़िल्लों द्वारा संपादित

152 *पंचोली जगजीवन दास द्वारा राजा जयपुर को 24 मार्च, 1711 को लिखी चिट्ठी, सीरियल नंबर 16, वकील रिपोर्ट नंबर 48।

सिक्ख फ़ौज ने सढ़ौरा के नज़दीक मुग़ल फ़ौज के पशु छीन लिए हैं। यह कार्यवाही बंदा सिंह बहादुर के साथी वणजारा सिक्खों के द्वारा की गई थी। इस कार्यवाही में नाहन रियासत के लोगों का भी हाथ था।[153]

बादशाह द्वारा रोपड़ में छावनी कायम करनी

23 अप्रैल, 1711 को जब बादशाह सतलुज दरिया की ओर बढ़ते हुए तख़्त पर बैठने की चौथी वर्षगांठ (वह 23 अप्रैल, 1707 को तख़्त पर बैठा था) का जश्न मनाने का ऐलान किया। उसने हुक्म किया कि इसके लिए लाहौर में एक ऊंचा मंच बनाया जाये। बादशाह ने जश्न मनाने का हुक्म तो जारी कर दिया था परन्तु अंदर से बादशाह का मन बहुत चिंतित था। क्योंकि सिक्ख क्रांति के चलते हुए मुग़ल साम्राज्य बादशाह की आखों के सामने ख़त्म हो रहा था। बादशाह को यह भ्रम हो गया था कि मुग़ल फ़ौजों ने लोहगढ़ जीत लिया है। जबकि हकीकत में मुग़ल फ़ौज लोहगढ़ के अग्रिम मोर्चे को भी नही जीत पाई थी। सिक्ख फ़ौज उस दिन तक भी लोहगढ़ में मौजूद थी और सिक्ख फ़ौज का अग्रिम मोर्चे जोकि करनाल से लेकर चंडीगढ़ तक फैले हुए थे पर कब्ज़ा ज्यों की त्यों कायम था। बादशाह को ख़बरें मिल रही थीं कि सिक्ख फ़ौजे पूरे पंजाब और अवध क्षेत्र में घूम रही थी। इस इलाके की आम जनता सिक्ख फ़ौज का सहयोग कर रही थी। दूसरी ओर मुग़ल फ़ौज ने डर कर यह इलाका खाली कर दिया था। बादशाह को यह ख़बरें भी मिल रही थी कि बंदा सिंह बहादुर ने पहाड़ी राजाओं से ताल-मेल कर लिया है। उसे यह भी ख़बर मिल चुकी थी कि बंदा सिंह बहादुर ने जम्मू की सरहदी चौंकी, रायपुर और बहरामपुर की चरागाह में सुल्तानपुर के फ़ौजदार शमश ख़ान और उसके चाचा कुतबदीन खेशगी उर्फ बायजीद ख़ान (फ़ौजदार जम्मू) को हराकर मार दिया गया।

बादशाह को पता चला कि बंदा सिंह ने बटाला और कलानौर पर भी कब्ज़ा कर लिया है। वह शाहदरा-लाहौर तक पहुंच चुके है। किसी भी समय पर लाहौर पर कब्ज़ा कर सकते है। यह सोच कर बादशाह अब दहल गया और 22 अप्रैल, 1711 को बादशाह ने शहज़ादे और दीवान को कहा कि रोपड़ के सैन्य शिविर के साथ लाहौर की तरफ कूच किया जाए। बादशाह ने रोपड़ का नाम जहांगीरपुर रखने का ऐलान भी किया। उसने कहा कि यह एक बहुत अहम जगह है और यहां से लाहौर और शाहजहांनाबाद (दिल्ली) का फासला बराबर का है। बादशाह ने ऐलान किया कि रोपड़ में सैन्य छावनी बनाई जाए ताकि पहाड़ों को जाने वाला रास्ता बंद किया जा सके और सिक्ख फ़ौज पर नियत्रण बनाया जाए। ऐसा करने से पहाड़ी राजा बंदा सिंह की मदद के लिए नही आ सकेंगे और न ही बंदा सिंह पहाड़ों की ओर बचकर निकल सकेंगे।[154] इससे स्पष्ट होता है कि

153 *भिखारी दास द्वारा राजा जयपुर को 18 अप्रैल, 1711 को लिखी चिट्ठी, सीरीयल नंबर 20, वकील रिपोर्ट नंबर 51।

154 *भिखारी दास द्वारा राजा जयपुर को 26 अप्रैल, 1711 को लिखी चिट्ठी, सिरियल नंबर 21, वकील रिपोर्ट नंबर 52 दस्तावेज बंदा सिंह बहादुर, डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित

बादशाह समझता था कि बंदा सिंह को जल्दी से हराया नहीं जा सकता क्योंकि वह बहुत बड़ी ताकत है जिसका मुकाबला बहुत लम्बे समय तक करना पड़ेगा। उसे यकीन था कि बंदा सिंह शाही फ़ौजों के लोहगढ़ इलाके से दूर चले जाने की ख़बर मिलते ही जरनैल बंदा सिंह बहादुर वापिस आ जायेगा। बादशाह की हालत औरंगज़ेब वाली थी जिसने दक्षिण की बगावत से डरते आगरा और दिल्ली छोड़ कर औरंगाबाद में डेरे लगाऐ हुए थे।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर की दिल्ली पर कब्ज़े की अफवाह

20 मई 1711 को बादशाह को भगवान दास हरकारे द्वारा भेजी रिपोर्ट मिली। जिसमें बताया गया था कि बंदा सिंह बटाला की ओर से फिर आए और उस समय वह उस नगर से केवल 2 कोस (6 किलोमीटर) दूर गांव अचल (अब बटाला में) में है। यह भी ख़बर पहुंची कि राम सिंह नाम का एक सिक्ख सात हज़ार फ़ौज के साथ, जम्मू की पहाड़ियों से आकर बंदा सिंह बहादुर के साथ शामिल हो गया है। इसके अतिरिक्त जो कोई भी मुसलमान या हिंदू उनके पास आता है तो उसे नौकरी दे दी जाती है। बंदा सिंह बहादुर ने इन सभी को कहा कि अगर मुग़ल फ़ौज उधर आए तो उसका मुकाबला किया जाये अन्यथा लक्खी जंगल और अजमेर की ओर से शाहजहांनाबाद (दिल्ली) जाकर उस पर कब्ज़ा कर लिया जाये। इस ख़बर के साथ बादशाह बहुत बेचैन हो गया। 25 मई, 1711 को बहादुर शाह ने ईसाख़ान को पूर्वी दुआब का डिप्टी प्रमुख बना दिया और वायदा किया कि वह इस क्षेत्र में सिक्ख फ़ौज का सफाया कर देगा।

पुरसरूर के निकट सिक्खों और मुग़लों के बीच लड़ाई

मई 1711 के अन्तिम दिनों में सिक्ख फ़ौजें पुरसरूर (पसरूर) से 20-22 किलोमीटर दूर थी। 30 मई को बादशाह द्वारा विशेष मुहिम पर भेजे मुहम्मद अमीन ख़ान (चैन बहादुर) और ग़ाजी ख़ान (रुसतम-जंग) को ख़बर मिली कि सिक्ख पसरूर के पास पड़ाव कर रहे हैं।[155] बादशाह ने इन्हें सिक्खों को खत्म करने के लिए विशेष तौर पर तैनात किया हुआ था। ख़बर मिलते ही शाही फ़ौजों के यह दोनों जरनैल लगातार 30 कोस (100 किलोमीटर) रास्ता तय करके पसरूर पहुंचे और पहली जून को इन शाही फ़ौजों की सिक्ख फ़ौजों के साथ टक्कर हुई। इस दौरान खूब भयंकर लड़ाई हुई। इस लड़ाई में दोनों फ़ौजों का जबरदस्त नुक्सान हुआ। इस लड़ाई में मुग़ल जरनैल ईसा ख़ान (पुत्र दौलत मुईन) भी शामिल था। ऐसा लगता है कि यह ईसा ख़ान मंझ नहीं बल्कि दौलत मुईन का पुत्र था। उसका हाथी भी इस लड़ाई में गोली से जख़्मी हो गया। मुग़ल फ़ौज की संख्या और अधिक होने के कारण सिक्खों ने टक्कर लेने की बजाय जम्मू के हिंदू राजे ध्रुव देव के इलाके में पहाड़ों की ओर कूच कर लिया।

---

155 *पुराने जमाने में, इस शहर का नाम पोरस-अर्ध था। जिसके नाम पर राजा पोरस (330 ओ.ई.), जो बाद में परसरूर और आखिर में पसरूर बन गया।

जब ध्रुव देव को सिक्खों के उधर आने का पता चला तो उसने अपनी सारी फ़ौज सिक्खों के पीछे भेज दी। रजौरी के जमींदार असमत-उला-ख़ान ने भी अपनी फ़ौजें बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध भेजी। सिक्ख ऐसे हालात देखकर पहाड़ों में स्थित अपने किलों में चले गए। इस दौरान परोल और कठुआ में भी सिक्ख फ़ौजों को भारी नुक्सान हुआ। इस लड़ाई में शहीद होने वाले 500 सिक्खों के सिर काट कर बादशाह को भेजे गए। इस समय पर यह अफवाह भी फैलाई गई कि बंदा सिंह बहादुर भी शहीद हो गया है। इस पर मुग़ल फ़ौजें शहीद हुए सिक्खों में से बंदा सिंह का मृतक शरीर ढूढ़ रहे थे। परन्तु उनका भ्रम जल्द ही मिट गया।

इस जंग की ख़बर बादशाह को 4 जून, 1711 को मिली। बादशाह ने इस लड़ाई में बहादुरी दिखाने के बदले मुहम्मद अमीन ख़ान को रेशमी पोशाक, एक हीरों के साथ जड़ी हुई तलवार और मछली और शेर का एक निशान (emblem) और गाज़ी ख़ान को एक रेशमी पोशाक, एक तलवार और मछली और घोड़े का एक निशान देने का ऐलान किया और उनको पैगाम भेजा कि वह बादशाह को आकर मिले व ईनाम हासिल करे। बादशाह ने दौलत मुईन और उसके पुत्र ईसा ख़ान को भी इनाम में तलवारें भेजने का ऐलान किया।[156] 7 जून, 1711 को बादशाह को पता चला कि जम्मू का राजा ध्रुव देव और रजौरी का ज़मींदार सईअद असमत-उला ख़ान सिक्ख फ़ौजों का पीछा कर रहे थे और मुहम्मद अमीन ख़ान और गाज़ी ख़ान बहादुर भी उनके साथ थे और उन्होंने सिक्ख फ़ौजों पर घेरा डाल लिया। बादशाह को यकीन दिलाया जा रहा था कि बंदा सिंह को जल्दी ही पकड़ लिया जायेगा। परन्तु बादशाह की खुशी थोड़े समय तक ही रही क्योंकि इस घेरे में से भी सिक्ख फ़ौजों ने मुग़ल फ़ौज को भारी नुकसान किया और बच कर निकल गए। इसके अतिरिक्त सिक्ख फ़ौजों ने वजीराबाद के इलाके में फ़ौजदार अजहर ख़ान पर ज़बरदस्त हमला किया और मुग़ल फ़ौज का भारी नुकसान पहुंचाया। अपनी इज्जत बचाने के लिए वज़ीराबाद के फ़ौजदार ने मरे हुए सिक्ख फौजियों के सर काट कर बादशाह को भिजवाए।

बादशाह ने वज़ीराबाद के फ़ौजदार अज़हर ख़ान को इस कारनामे के बदले रेशमी पोशाक भेंट की।[157] इस समय पर बादशाह लाहौर की ओर आ रहा था। वह 9 जून, 1711 को बजवाड़ा पहुंचा। उस समय बजवाड़ा एक बड़ा कस्बा था और होशियारपुर एक छोटा सा गांव था। वह कुछ दिन यहां ठहरा और फिर लाहौर की ओर चल पड़ा। मुग़ल फ़ौज संख्या में काफी कम हो गई थी इसलिए 13 जून, 1711 को बादशाह ने चार रुपए महीना तनख्वाह पर दो हज़ार पैदल फ़ौजी और 25 रुपए महीना पर दो हज़ार घुडसवार भर्ती करने का फरमान जारी किया। 16 जून, 1711 को बादशाह को ख़बर मिली कि सिक्ख फ़ौजें वजीराबाद से पहाड़ों की ओर निकल गई हैं। सढ़ौरा की ओर जा रही हैं। उसे बताया गया कि बंदा सिंह पहाड़ों में से जा रहा है और उनकी लोहगढ़ पहुँचने की योजना है। इस पर उसने बड़े शहज़ादे जहांदार ख़ान और ईसा

---

156 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 04-06-1711 की रिपोर्ट

157 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 07-06-1711 की रिपोर्ट

ख़ान नायब फ़ौजदार बिसत दोआब जालंधर की जिम्मेदारी लगाई कि वह सढ़ौरा की ओर जाकर सिक्खों को घेरे। परन्तु सिक्ख फ़ौजें तो उस समय पहाड़ों में सुरक्षित चल रही थी और लोहगढ़ पहले से ही सिक्ख फ़ौज के कब्ज़े में था। उसमें सिक्ख फ़ौजी मौजूद थे। जब मुग़ल फ़ौजें सढ़ौरा पहुंची तो उनको बंदा सिंह की कोई खबर नही मिली।

वास्तव में यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर की रणनीति का हिस्सा था। वह मुग़ल फ़ौजों को उलझा कर दो हिस्सों में बांटना चाहते थे। इससे बेचैन होकर अब बहादुर शाह ने स्वंय लाहौर बैठ कर बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध जंग लड़ने का ऐलान किया। बादशाह को बेचैन हुआ देख कर मुग़ल सिपाही भी डरने लगे। लगभग हर रोज 'बंदा आ गया! बंदा आ गया!!' की अफवाहों के साथ मुग़ल फ़ौजियों के हौंसले पस्त हो रहे थे। हालात यह थे कि बंदा सिंह का नाम सुन कर ही मुग़ल फ़ौजी डर जाया करते थे। उनके मस्तकों पर पसीना आ जाया करता था। 17 जुलाई, 1711 को बहादुर शाह को गाज़ी ख़ान का भी संदेश मिला कि बंदा सिंह उसके घेरे में आ रहा है। गाज़ी ख़ान के पास पहले से ही 2 हज़ार फ़ौज थी पर उसे और अधिक फ़ौजी सहायता भेजी जाये ताकि बंदा सिंह को पकड़ा या मारा जा सके। अमीन ख़ान जोकि बादशाह के पास बैठा हुआ था। उसने बादशाह को कहा कि गाज़ी ख़ान अधिक पैसा, बारूद और हथियार लेना चाहता है। इस कारण बादशाह ने उसकी मांग अनसुनी कर दी।[158] 19 जुलाई, 1711 को बादशाह काहनूवान पहुंचा[159] और 30 जुलाई को वह कलानौर था और अगले दिन वह लाहौर की ओर चल पड़ा।[160]

---

158 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 17-07-1711 की रिपोर्ट

159 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 19-07-1711 की रिपोर्ट

160 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 30-07-1711 की रिपोर्ट

अध्याय 8

लोहगढ़ किला छोड़ने के उपरांत जरनैल बंदा सिंह बहादुर की कार्यवाही

जैसे कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि नवंबर, 1710 से मार्च, 1711 तक मुग़ल फ़ौज ने लोहगढ़ क्षेत्र पर आक्रमण किया परन्तु मुग़ल बादशाह को कोई बड़ी सफलता हाथ नहीं लगी। दूसरी ओर सिक्ख फ़ौजें जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में थियेटर-ऑफ-वॉर को बदलने में माहिर थी। पहाड़ों के रास्ते चलकर लाहौर से लेकर बरेली तक मुग़लों के विरूद्ध युद्ध छेड़े हुए थे। मुग़ल बादशाह ने जब अपनी पूरी ताकत लोहगढ़ क्षेत्र में झोंक दी तब योजनाबद्ध तरीके से बंदा सिंह बहादुर ने लाहौर पर धावा बोल दिया। इतनी बड़ी फ़ौज को लेकर लोहगढ़ से लाहौर जाना बादशाह के लिए चिंता का विषय था क्योंकि पहले ही लोहगढ़ की लड़ाई में शाही खजाने पर बहुत भारी बोझ पड़ा था। अब लाहौर जाने से यह बोझ और बढ़ने वाला था। मुग़ल राज की वित्तीय स्थिति दिन प्रतिदिन खराब हो रही थी। मैदाने-ए-जंग लोहगढ़ क्षेत्र के आंखों देखा हाल लिखने वाले लेखक मुग़लों के कारिंदे थे। इसलिए उनके द्वारा झूठा इतिहास लिखा गया कि मुग़ल फ़ौजों ने लोहगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया है। इस विषय बारे विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय 6 में पहले ही दी जा चुकी है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर निरंतर लोहगढ़ क्षेत्र में मौजूद नहीं थे। क्योंकि वह जम्मू से लेकर बरेली तक लड़ रही सिक्ख फ़ौजों में पर्यवेक्षण कर रहे थे और सुनिश्चित कर रहे थे कि योजनाबद्ध तरीके से मुग़लों की इस क्षेत्र में पड़ने वाली हर कोतवाली, परगना और सरकार पर हमला किया जाए। मार्च, 1711 में मुग़ल बादशाह को खबर मिलती है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर नाहन से बिलासपुर, मंडी, कुल्लू, कांगड़ा व चम्बा होते हुए उधमपुर, जम्मू पहुंच चुके हैं साथ ही लाहौर पर हमला करने की तैयारी में है।

पहाड़ी रियासतों को अधीन करना और बिलासपुर पर हमला

जरनैल बंदा सिंह बहादुर एक महान योद्धा के साथ-साथ एक महान नीतिकार भी थे। जिसके चलते हुए वह चाहते थे कि राजस्थान के राज़पूत राजा और पहाड़ी क्षेत्र के राजा उनके साथ मुग़ल राज के खिलाफ लड़ाई में शामिल हो ताकि जल्द से जल्द मुग़ल राज की जड़ें उखाड़ दी जाए। लोहगढ़ से निकल कर जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पहाड़ी इलाकों में पड़ने वाली समस्त रियासतों के साथ मुग़लों के खिलाफ, सैनिक समझौता और तालमेल स्थापित करने का फैसला लिया। इस योजना के चलते हुए ज़्यादातर पहाड़ी राजे जरनैल बंदा सिंह बहादुर से सहमत हो गये। परन्तु कुछ पहाड़ी राजे जैसे बिलासपुर, कुल्लू, कुमाऊ इत्यादि अभी भी मुग़लों के प्रभाव में

सिक्ख फ़ौजों के विरूद्ध लड़ाई लड़ रहे थे। सन् 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में सिक्ख फ़ौज ने पहला हमला कहिलूर रियासत की राजधानी बिलासपुर पर बोल दिया। यहां के राजा अजमेर चंद गुरु गोबिंद सिंह के समय पर आनंदपुर और निर्मोहगढ़ पर 10 बार हमले कर चुका था। सरहिंद और लाहौर की फ़ौज को आनंदपुर और निर्मोहगढ़ पर हमले के लिए लाने वाला भी वही था।5-6 दिसंबर, 1705 को आनंदपुर से चले जाने के लिए गुरु गोबिंद सिंह को जोर दिया और उनके साथ झूठे वादे किए। सत्य तो यह है कि सिक्खों की मुश्किलों का मुख्य जिम्मेदार राजा अजमेर चंद था। इसलिए कुछ लोगों का मानना है कि वज़ीर ख़ान की तरह इसको सजा देना आवश्यक था।

ऐतिहासिक घटनाओं का अध्ययन करने पर पता चलता है कि बंदा सिंह ने अजमेर चंद पर हमला करने से पहले उसे साथ आने का पैगाम भेजा। उसने इस पेशकश को मानने की बजाए कांगड़ा के राजा व जालंधर, दोआबा के फ़ौजदारों से मदद मांगी। अजमेर चंद ने बिलासपुर के किले को अच्छी तरह मज़बूत कर लिया। बिलासपुर का किला पहाड़ों में घिरा होने के बावजूद सिक्ख फ़ौजों ने एक ज़ोरदार हमले के आगे ज्यादा देर तक टिक नहीं पाया।[161] एक तरफ तो जरनैल बंदा सिंह बहादुर की अगुवाई में सिक्ख फ़ौज लड़ रही थी जोकि गुरु नानक साहिब की विचारधारा अपनाकर जीवन मरण के सवाल से उपर उठकर मानवता के हक में क्रांति ला रही थी। दूसरी तरफ बिलासपुर राजा की नियुक्ति की गई। पहाड़ी फ़ौज जो केवल रोजगार के दृष्टिकोण से लड़ाई लड़ रही थी। सिक्ख फ़ौज और बिलासपुर के राजा अजमेर चंद के बीच लड़ाई हुई परन्तु जल्द ही अजमेर चंद ने हथियार फैंक दिए। इस लड़ाई में 1300 पहाड़ी फ़ौजी मारे गए। इन सिपाहियों के शवों का संस्कार करने की जगह गहरी खाई में दफन कर दिया गया। सिक्ख सैनिकों में से बहुत कम शहीद हुए थे। प्रश्न उठता है कि बंदा सिंह ने अजमेर चंद को सुच्चा नंद की तरह सजा क्यों नहीं दी? एक विचार यह भी है कि अजमेर चंद ने सिक्खों की गुलामी कबूल कर ली थी। हथियार फैंक दिए थे। कुछ इतिहासकारों के अनुसार अजमेर चंद व वज़ीर ख़ान और सुच्चा नंद का जुर्म एक जैसा नहीं था फिर अजमेर चंद को भी वहीं सजा क्यूं मिलनी चाहिए थी। जो वज़ीर ख़ान और सुच्चा नंद को मिली। वह सोचते थे कि अजमेर चंद ने आनंदपुर साहिब पर हमले जरूर किये थे परन्तु सरहिंद वासियों ने तो बेगुनाह बच्चों व माता गुजरी जी पर जुल्म कर शहीद किया था। यहां पर यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि गुरु नानक साहिब की विचारधारा अनुसार निजी कारणों से किसी के विरूद्ध बैर विरोध नहीं रखा जा सकता जिसके चलते हुए उस व्यक्ति विशेष से बदला लिया जाए। गुरु नानक साहिब की विचारधारा अनुसार यदि कोई भी व्यक्ति किसी समय गुरमत विचारधारा को अपनाता है तो उस व्यक्ति को मीत/मित्र/भाई बनाने का प्रावधान है।

---

161 *पुराना बिलासपुर गोबिंद सागर झील के नजदीक था और अब दूसरे स्थान पर एक नया शहर स्थापित हो गया है।

मंडी के राजे का सम्मान

बिलासपुर की जीत के पश्चात जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने कुछ अन्य पहाड़ी राजाओं को साथ आने का पैगाम भेजा और लगभग सभी पहाड़ी राजाओं द्वारा मुग़लों के खिलाफ जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ आने के पैगाम को कबूल किया। मंडी के राजा सिद्धसेन बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में शामिल हुए। यह रियासत गुरु नानक साहिब के समय से ही गुरमत विचारधारा को अपना चुकी थी। मंडी के राजे को सम्मान के साथ जरनैल बंदा सिंह बह्ादुर ने रेशमी पोशाक देकर सम्मानित किया। नाहन का राजा पहले ही बंदा सिंह का साथ दे रहा था और इसी कारण से (26-12-1710) बादशाह बहादुर शाह ने नाहन राजा भूप प्रकाश को कैद कर लिया था और उसकी रिहाई के लिए बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी की शर्त रखी थी। यह अलग बात है कि बाद में नाहन के राजा ने फरूखसियर के साथ समझौता कर लिया था और सिक्खों के विरूद्ध मुहिम में शामिल हो गया।

जरनैल बंदा सिंह बह्ादर का चम्बा में विवाह

कुल्लू का राजा शुरूआत में मुग़लों के साथ था और दिसंबर, 1700 तक आते-आते कुल्लू के राजा ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ आने का फैसला लिया। ख़ास बात यह है कि इस समय बहादुर शाह ने पूरी ताकत से लोहगढ़ पर हमला किया पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कोई मुकाबला नहीं था। वह इसके बावजूद भी पहाड़ी राजाओं को अपने पक्ष में करने में कामयाब हुए। जनवरी, 1711 में बंदा सिंह बहादुर चम्बा पहुंच गया। जहां राजा उदय सिंह ने अपनी बेटी सुशील कुंवर (बाद में सुशील कौर) की शादी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ करवाई। चंबा के राजे उदय सिंह के पूर्वज गुरु नानक साहिब के समय से ही उनके साथ जुड़ गए थे। हलीमी राज की स्थापना में योगदान दे रहे थे। इसके उपरांत सुशील कौर सदैव ही बंदा सिंह के साथ रही और उन्होंने जनवरी, 1712 में लोहगढ़ में ही भाई अजय सिंह को जन्म दिया था। सुशील कौर को भी बंदा सिंह बहादुर के साथ गुरदास नंगल की गढ़ी में से दिसंबर, 1715 में गिरफ्तार कर दिल्ली ले जाया गया था। उसके अंतिम समय या मौत के बारे किसी स्त्रोत में उल्लेख नहीं मिलता और जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पूरे परिवार और 17 सिक्ख जरनैलों के साथ 9 जून, 1716 के दिन दिल्ली में शहीद किया गया।

जम्मू और सुल्तानपुर लोधी के फ़ौजदारों को मारना

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मार्च, 1711 को सीबा, नूरपुर और जसवान के पहाड़ी राजाओं को साथ आने का पैगाम भेजा। यहां से बंदा सिंह बहादुर ने सिक्ख फ़ौजों को फिर जत्थेबंद किया। कुछ समय रियासी जम्मू-कश्मीर में साधन जुटाने उपरांत फिर पंजाब की ओर मुंह कर लिया। वह मार्च, 1711 के पहले सप्ताह जम्मू की सरहदी चौंकी रायपुर और बहरामपुर

की सीमा में पहुंच गया। इन्हीं दिनों जालंधर, दुआब की राजधानी सुलतानपुर का फ़ौजदार शमस ख़ान अपने चाचा कुतबदीन खेशगी उर्फ बायजीद ख़ान (फ़ौजदार जम्मू) के पास आया हुआ था। जब उसे पता चला कि सिक्ख फ़ौजें इन पहाड़ों में घूम रही हैं तो उन दोनों ने फ़ौज लेकर सिक्खों की ओर कूच कर दिया। उन्होंने पहले भी सन् 1710 की अक्तूबर-नवंबर में सिक्ख फ़ौजों के खिलाफ राहों और सरहिंद में जंग लड़ी थी। उनके मन में सिक्ख फ़ौज को लेकर काफी दहशत थी परन्तु बादशाह के हुक्म के चलते हुए वह अपनी फ़ौज के साथ जरनैल बंदा सिंह बहादुर को ढूढ़ने के लिए चल पड़े। पहाड़ी इलाके में सिक्ख फ़ौज के साथ मुग़लों का मुकाबला आसान बात नहीं थी इस कारण थोड़ा सा मुकाबला होने के उपरांत मुग़ल फ़ौजें पीछे हट जाती थी। और फिर से बादशाह के हुक्म अनुसार बायजीद ख़ान और शमस ख़ान जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पहाड़ों में ढूढ़ने के लिए निकल जाते थे। वास्तव में यह जरनैल लुक्का छिपी का खेल खेल रहे थे ताकि किसी तरीके से उनकी जान बच सके। एक दिन सिक्ख फ़ौज ने इन पर जम्मू के इलाके में अचानक हमला कर दिया जिसमें शमस ख़ान मौके पर ही मारा गया और बायजीद ख़ान बुरी तरह जख्मी हो गया और उसकी भी तीन दिन पश्चात मृत्यु हो गई। इनके शवों को कसूर में ले जाकर दफ़न किया गया। इस लड़ाई में सिक्ख फ़ौजों को शमस ख़ान और कुतबदीन के डेरों से बहुत से हथियार और अन्य सामान भी हाथ लगा। इनकी मौत की ख़बर बादशाह को 18 मार्च, 1711 को मिली थी जब वह रोपड़ के निकट था और इस ख़बर से बादशाह निराश हो गया।[162]

12 मार्च, 1711 के दिन बादशाह को ख़बर मिली कि शमस ख़ान और कुतुब ख़ान (बायजीद ख़ान) की सिक्खों के साथ जबरदस्त लड़ाई हो रही है। कुछ दिन बाद दूसरी सूचना आई कि जिसमें बताया गया कि दोनों में से एक मर चुका है और दूसरा अभी लड़ रहा है। बादशाह ने इस ख़बर की तस्दीक करने के लिए हिदायत दी। 20 मार्च को भिखारी की चिट्ठी में बताया गया कि यह दोनों सिक्खों के हाथों मारे गए हैं।[163] बादशाह को दी गई सूचना के अनुसार सिक्ख फ़ौजों की संख्या 40 हज़ार से अधिक थी। अब बायजीद ख़ान कुतबदीन खेशगी की मृत्यु हो जाने के कारण बादशाह ने सरहिंद के सूबेदार फिरोज ख़ान मेवाती को सरहिंद से बदल कर जम्मू का फ़ौजदार लगा दिया। उसकी जगह गाज़ी ख़ान 'रुस्तम जंग' को सरहिंद का सूबेदार बना दिया। मारे गए बायजीद ख़ान (पुत्र सुल्तान अहमद ख़ान) के पास एक हज़ार व्यक्ति और 500 घुड़सवार का मनसब था। जोकि उसके साथ ही मारे गए। उसके भतीजे शमस ख़ान (पुत्र पीर ख़ान, पोता सुल्तान अहमद ख़ान) के पास 500 व्यक्ति और एक सौ सवार का मनसब था। वह जालंधर बिसत में सुलतानपुर का पूर्व फ़ौजदार था। सन् 1710 के आरंभ में उसे इस पद से हटा दिया गया था। 4 अगस्त, 1710 को बादशाह ने नकोदर में लूटमार करने का दोषी मानते उसका मनसब भी एक सौ व्यक्ति और एक सौ सवार कम कर दिया। उसका खिताब 'खिताब

162 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 23-04-1711 की प्रविष्टि

163 *दीवान भिखारी दास की चिट्ठी, वकील रिपोर्ट नंबर 45,46

खानी' भी वापिस ले लिया था। परन्तु सन् 1711 में राहों और सरहिंद में सिक्खों को हराने और इसके उपरांत भी सिक्खों के विरूद्ध जबरदस्त मुहिम चलाने के कारण उसे और उसके चाचा कुतब़दीन खेशगी (बायजीद ख़ान) दोनों को फिर से उनके पद पर बहाल कर दिया गया था। मआसरुल उमरा का लेखक लिखता है कि शमस ख़ान ने सिक्खों के साथ 22 बार टक्कर ली और बहाली से एक महीने के भीतर ही वह सिक्खों के हाथों मारा गया। इसके उपरांत सिक्ख फ़ौजों ने लाहौर की ओर कूच कर लिया। 7 मार्च की सूचना के अनुसार बंदा सिंह लाहौर शहर के निकट पहुंच चुके थे।[164]

बहादुर शाह सिक्खों के विरुद्ध मुहिम के लिए इतना चिंतित था कि वह हर जरनैल, अधिकारी, चौधरी और दूसरों को जंग में हिस्सा लेने के लिए और सिक्खों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए उत्साहित करता था। वह तोहफे, सम्मान, खिलतें, मनसब और जागीरें उन लोगों को दे रहा था जिन्होंने सिक्खों के विरुद्ध कार्यवाहियों में हिस्सा लिया था।20 मार्च, 1711 को उसने हिंदू नेता, चूड़ामनी जाट और किशन सिंह नारोका को सम्मान की खिलतें दे कर महाबत ख़ान के साथ मिलकर सिक्खों का अंत करने के लिए भेजा।2 अप्रैल को उसने सैफ ख़ान को सुलतानपुर का चीफ नियुक्त किया और उसका मनसब 600 घोड़े बढ़ाया। उसने लक्खी जंगल इलाके का प्रबंध सुलतान ख़ान को दिया और उसका मनसब चौदह सौ घोड़े कर दिया और उसको 80 हज़ार दाम भी सिक्खों के विरुद्ध मुहिम के लिए दिए।[165]

बटाला और कलानौर पर सिक्खों का कब्ज़ा

अप्रैल, 1711 में सिक्ख फ़ौजों ने कलानौर और बटाले की ओर कूच कर लिया था। अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला अनुसार जब बंदा सिंह बहादुर की बटाला के निकट पहुंचने की ख़बरें आईं तो शहर के आसपास के बहुत से अमीर, वज़ीर अपना माल-असबाब संभाल कर अपने परिवारों सहित शहर छोड़ कर लाहौर को भाग गए। तब बटाला में सईअद मुहम्मद फज़ल कादरी और शेख अहमद (शैखुल हिंद) दो प्रसिद्ध व्यक्तित्व रहते थे। सईअद मुहम्मद फज़ल कादरी जिसने एक बड़ा मदरसा भी कायम किया हुआ था वो भी सिक्खों के साथ थे।[166] जरनैल बंदा सिंह बहादुर का बटाला पहुंचने पर स्वागत किया गया और इनके साथियों ने सिक्ख फ़ौज में शामिल होकर मुग़लों के खिलाफ मुहिम छेड़ दी। इतिहासकार लिखते है कि 5000 मुसलमान बटाला, कलानौर की धरती से जरनैल बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज में शामिल हुए। परन्तु इस क्षेत्र

164 *दीवान भिखारी दास की चिट्ठी, वकील रिपोर्ट नंबर 311

165 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 02-04-1711 की प्रविष्टि

166 *सईअद मुहम्मद फ़ज़ल कादरी, पीर दस्तगीर बगदाद के वशंज थे और पीर दस्तगीर गुरू नानक साहिब के बगदाद दौरे के बाद हलीमीराज की स्थापना के संदर्भ में भारत आ गए थे। उनके परिवार के सदस्य जम्मू से लेकर बरेली की पहाड़ियों में जाकर बस गए जिसमें से कलानौर और साढौरा मुख्य केन्द्र थे।

के रहने वाले शेख अहमद जिसको 'खुल हिंद' कहा जाता था एक मुस्लिम धार्मिक नेता बंदा सिंह बहादुर को टक्कर देना चाहता था और इसने जरनैल बंदा सिंह बहादुर के खिलाफ जिहाद का नारा भी दिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बटाला पर हमला करने से पहले 6 किलोंमीटर दूर अचल-बटाला पहुंच कर पड़ाव किया। अगले दिन सिक्ख फ़ौजों ने बटाले पर हमला कर दिया और शेख अहमद ने शहर से बाहर आकर सिक्ख फ़ौजों के साथ टक्कर ली परन्तु वह बहुत जल्द मारा गया। इसके पश्चात सिक्ख फ़ौजें द्वार तोड़ कर शहर में दाखिल हुई और ज़ालिम हाकिमों और अमीरों की जायदादों को ज़ब्त कर लिया।20 अप्रैल, 1711 की रिपोर्ट के अनुसार सिक्खों का बटाला पर मुकम्मल कब्ज़ा हो चुका था।[167]

बटाला के पश्चात सिक्ख फ़ौजों ने कलानौर पर भी कब्ज़ा कर लिया। कलानौर उस समय लाहौर के उपरांत माझे का सबसे बड़ा शहर था। यह वही शहर था जहां सन् 1555 में अकबर की ताजपोशी हुई थी। इस शहर में एक शानदार किला और बहुत सी बड़ी-बड़ी हवेलियां थी। यहां का फ़ौजदार सुहराब ख़ान था और कानूगो हिंदू था जिसका नाम संतोष राय था। यह दोनों बंदा सिंह बहादुर के हमलों को बरदाश्त न कर पाए। संतोष राय के भाई अणोख राय ने भी कुछ समय बंदा सिंह बहादुर का मुकाबला करने की कोशिश की। परन्तु तीनों ही बुरी तरह जख़्मी होकर प्राण बचाकर लाहौर की ओर भाग गए। उनके स्थान पर बंदा सिंह बहादुर ने सिक्खों को फ़ौजदारी व अन्य पदों पर लगा दिया। अप्रैल, 1711 के बाद बंदा सिंह बहादुर कलानौर में ही रहा। कलानौर एक बड़ा शहर था। इस शहर के बारे में यह प्रचलित था कि जिसने नहीं देखा लाहौर वो देख ले कलानौर। यह शहर इतना बड़ा था कि इसमें सैंकड़ों मस्जिदें थी और यहां हजारों शायद एक लाख से भी अधिक मुसलमान रहते थे। बंदा सिंह बहादुर ने कलानौर पर कब्ज़ा करने के पश्चात भी किसी मस्ज़िद को कोई नुक्सान नहीं पहुंचाया। उन्होनें एक बार दरबार लगा कर यह स्पष्ट भी किया कि उसकी लड़ाई मुसलमानों के विरूद्ध नहीं बल्कि ज़ालिम मुग़ल हाकिमों के विरूद्ध थी।

7 अप्रैल, 1711 को बहादुर शाह जो कि बनूड़ के निकट पहुंचा जब उसको बताया गया कि सिक्खों ने ब्यास दरिया के नजदीक पनाह ली हुई है, वह लाहौर से 40-45 मील दूर है और उन्होंने अपना किला भी बना लिया है। अखबार-ऐ-दरबर-ऐ-मउला के अनुसार सिक्खों ने रावी दरिया के आस-पास पहाड़ों के निकट 25 किलोंमीटर लंबे और 10 किलोंमीटर चौड़े इलाके में अपनी चौंकी भी कायम कर ली हैं और इन इलाकों के जमींदार भी उनका साथ दे रहे हैं।[168]

15 अप्रैल, 1711 को बादशाह को बताया गया कि बिलासपुर का राजा सिक्खों का मित्र बन गया है। उसने सिक्खों को भरोसा दिया है कि यदि मुग़ल फ़ौजों ने उनका पीछा किया तो वह सिक्खों को सुरक्षा देगा और मुग़लों को अपनी सीमा में घुसने नहीं देगा।[169]

---

167 *दीवान भीखारी दास की चिट्ठी, वकील रिपोर्ट नंबर 46

168 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 07-04-1711 की प्रविष्ट

169 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 15-04-1711 की प्रविष्टि

25 अप्रैल, 1711 को बहादुर शाह ने अशरफ ख़ान को हरियाणा आजकल होशियारपुर जिले का आर्मी चीफ नियुक्त किया व उसको बंदा सिंह बहादुर के पीछे लगा दिया। उसी दिन उसने आईम ख़ान को तोपों का प्रभारी बनाकर सतलुज के इलाकों में भेज दिया जोकि सिक्खों के विरुद्ध एक सख्त कार्यवाही थी।[170]

दूसरी और जरनैल बंदा सिंह बहदुर के हलीमी राज के ऐलान पर समान्य मुसलमानों ने बड़ा सुकून महसूस किया। क्योंकि आम आदमी उस समय पर ज़ालिम हाकिमों से बहुत दुखी था। इस कारण उनके दिल में बंदा सिंह बहादुर और ख़ालसा फ़ौज के लिए सहानुभूति और अकीदत पैदा हो गई। इसके साथ ही हज़ारों मुसलमानों ने बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज में नौकरी करने की ख़्वाहिश का इज़हार किया। बंदा सिंह बहादुर ने बिना किसी भेदभाव के मुसलमानों को भी फ़ौज में नौकरियाँ दी। बाद में 28 अप्रैल, 1711 को ख़ानदानी बादशाह ने रूपड़ (रोपड़) के नजदीक सतलुज दरिया पार किया तो उसे हिदायत उल्ला ख़ान ने बंदा सिंह बहादुर के बारे भगवती दास हरकारे की रिपोर्ट पेश करते बताया कि नानकपंथी (बंदा सिंह बहादुर) का डेरा 19 तारीख (26 अप्रैल, 1711) तक कलानौर के कस्बे में था। उसने वादा किया है कि वह मुसलमानों को कोई तकलीफ नहीं देंगे। जो कोई भी मुसलमान उसके साथ जा मिलता है वह उसका वेतन नीयत करके उसका ख्याल भी रखता है। उसने उनको खुतबा और नमाज़ की अनुमति भी दी हुई है। बादशाह बहादुर शाह को ख़बर दी गई कि पांच हज़ार मुसलमान उस बागी सिक्ख नेता के पास नौकर हो गए हैं। अजान और नमाज़ की अनुमति के उपरांत मुसलमान इन बागियों की फ़ौजों में सकून महसूस कर रहे हैं।[171]

24 मार्च, 1711 की एक ख़बर के अनुसार सिक्खों ने गुरु का चक्क (अब अमृतसर) पर अपना अधिकार कर लिया था। रावी दरिया के दूसरे किनारे शाहदरा (लाहौर के बाहरवार) तक अधीन कर लिया था।[172] बेशक बादशाह को कभी-कभी सिक्खों की हार की ख़बर भी मिल जाती थी परन्तु वह अभी भी बहुत डरा हुआ था। उसे बंदा सिंह बहादुर का कुछ भी पता नहीं चल रहा था। उसे 13 मई, 1711 को केशो राव हरकारे की भेजी ख़बर से यह भी पता चला कि सिक्खों ने रावी और ब्यास के इलाकों में पक्के थाने कायम कर लिए थे। इलाके के बहुत से पठान जरनैलों और जागीरदारों को कत्ल करके उनके खजाने और हथियार कब्ज़े में कर लिए थे। बहादुर शाह को अपने मारे गए जरनैलों का बहुत अफसोस रहने लगा और दिन प्रतिदिन बादशाह की चिन्ताएं बढ़ती रही।

सिक्खों के विरूद्ध मुहिम में कारगुजारी दिखाने के बदले बादशाह ने जम्मू के जमींदार कृपाल देव, नूरपुर के जमींदार दया धम्मा, जमींदार उदित सिंह बुंदेला, कोटला के जमींदार सादात ख़ान, तालावाड़ के जमींदार और 11 अन्य जमींदारों (जिनमें से बहुत से हिंदू थे) को खिल्लतें

170 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 25-04-1711 की प्रविष्टि

171 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 28-04-1711 की प्रविष्टि

172 *पंचोली जगजीवन दास वकील की रिपोर्ट, नंबर 48

दी। इन जमींदारों को गुरज-बरदार मालिक सुलतान और रजौरी के जमींदार सईअद अजमतुल्ला ख़ान के द्वारा हुक्म भेजे गए कि वह नानक पंथियों (सिक्खों) को खत्म करने की मुहिम में शामिल हो। 28 अप्रैल को बादशाह को ख़बर दी गई कि 20 अप्रैल को सिक्ख फतेहबाद में गोबिंदवाल से 6 किलोमीटर दूर थे। वहां के थानेदार और जमींदार ईसा मसीह ख़ान जो पश्चात में दोआबा का नायब बनाया गया ने मिलकर इन सिक्खों के साथ जबरदस्त टक्कर ली जिसमें बहुत से मुग़ल और सिक्ख मारे गए थे।[173] बादशाह को यह भी बताया गया कि पांच हज़ार पठान सिक्खों के साथ लड़ने के लिए तैयार कर लिए गए हैं।

5 मई, 1711 को बादशाह ने मुहम्मद अमीन ख़ान को शाबाशी दी और सिक्खों के विरूद्ध मुहिम में भूमिका निभाने पर रेशमी पोशाक भेंट की।[174] उसे फिर से सिक्खों के विरूद्ध मुहिम पर भेजा और उसके साथ 09 हज़ार फ़ौजी दिए गए। मई, 1711 के पहले सप्ताह बंदा सिंह बहादुर को पता चल गया कि बादशाह की फ़ौज ने सतलुज पार कर लिया है।[175] इस पर बंदा सिंह बहादुर ने कलानौर और बटाला पर अपने सिक्ख जरनैलों को मोर्चा सौंपकर स्वंय लक्खी जंगल की ओर कूच किया ताकि राजस्थानी राजपूत राजाओं से संपर्क कर उनको भी मुग़लों के खिलाफ इस मुहिम में शामिल किया जा सके।[176] यहां से उन्होंने जम्मू की ओर पहाड़ को निकलना था।14 मई, 1711 को बादशाह ने तलवन के जमींदार मुग़ल बेग़ ख़ान, दुर्लब ख़ान, अब्दुल समद ख़ान और इनायत ख़ान को भी बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम पर भेज दिया। इसके अतिरिक्त इनाम ख़ान वालाशाही को भी हुक्म हुआ कि वह मोहम्मद अमीन ख़ान के साथ शामिल हो जाये और सिक्खों के खात्मे में हिस्सा डाले।[177] 15 मई, 1711 को बादशाह ने अब्दुस समद ख़ान (समधी मोहम्मद अमीन ख़ान और पिता जकरिया ख़ान) को भी मोहम्मद अमीन ख़ान के साथ सिक्खों के विरूद्ध मुहिम के लिए भेज दिया।[178] 18 मई, 1711 को बादशाह को भगवान दास हरकारे की भेजी सूचना से पता चला कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ब्यास दरिया से सात कोस (22 किलोमीटर दूर), गांव अल्हाब में पड़ाव कर रहे थे। जब शाही फ़ौजों को इसका पता चला तो उन्होंने दरिया पर पुल बनाने की कोशिश की परन्तु सिक्खों के तीरों और बंदूकों की बौछार ने उनको पुल बनाने ही नहीं दिया।

19 मई, 1711 को बादशाह ने हुक्म जारी किया कि मोहम्मद अमीन ख़ान को 10 बंदूकों, 300 तीर, 50 मन सिक्का, 7 जज़ीरे, दो हज़ार बंदूकची और भेजे जाए। इसी दिन

173 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 28-04-1711 के प्रविष्टि
174 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 05-05-1711 की प्रविष्टि
175 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 09-05-1711 की प्रविष्ट
176 *अख़बाराति-दरबारे-मउला की 9 मई की रिपोर्ट
177 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 14-05-1711 की प्रविष्टि
178 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 15-05-1711 की प्रविष्टि

बादशाह ने उसे एक लाख रुपए खजाना खास में से अग्रिम राशि भी जारी की।[179] बादशाह ने दौलत बेग़ ख़ान, सालेह ख़ान और फतेह उल्ला ख़ान को भी मुहम्मद अमीन ख़ान के साथ मुहिम पर जाने के लिए मंजूरी दी। इस दिन सरबराह ख़ान, इस्लाम ख़ान बहादुर, कुलीच मुहम्मद ख़ान बहादुर, महाबत ख़ान बहादुर, मुखलिस ख़ान बहादुर, अजनबी ख़ान बहादुर, बख्शी-उल-मुल्क और मिर्जा शाह निवाज़ ख़ान को भी सिक्खों के विरूद्ध मुहिम पर जाने का हुक्म हुआ। बादशाह बहादुर शाह के द्वारा अपनी सारी दौलत झोंक देने के बाद भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कुछ अता पता नहीं था और सिक्ख फ़ौज की ताकत दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी और मुग़ल फ़ौज के हौंसले दिन प्रतिदिन गिरते जा रहे थे। यह निरंतर बादशाह के लिए गंभीर चिंता का विषय बनता गया।

---

179 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 19-05-1711 की प्रविष्टि

अध्याय 9

बहादुर शाह का लाहौर रहने का फैसला

01 अगसत, 1711 को बहादुर शाह लाहौर पहुंच गया और अपने साथ भारी मात्रा में मुग़ल फ़ौज लेकर पहुंचा। बादशाह अपना शिविर लाहौर के शाही किले की बजाय गांव आलोवाल की शालीमार चारागाह की तरफ ले गया। बादशाह के सबसे बड़े पुत्र शहजादा अजीमउशान ने गांव अवान की चारागाह में अपना शिविर लगाया। बादशाह का सुरक्षा घेरा काफी मजबूत था। बादशाह के अन्य तीनों पुत्र इस मैदाने जंग में पहुंच गए। शहज़ादा मुअजुदीन ने परवेज़ाबाद मंडी के पास शहजादा रफी-उश-शान ने धरमू के बाग के पास और शहजादा मुहम्मद जहान शान ने शाहमीर खुश के मैदान में मोर्चा संभाला।[180] बड़े शहज़ादे अजीमुन शाह के पास इकत्तीस हज़ार और दूसरे तीनों शहज़ादों के साथ 11-11 हज़ार फ़ौज थी। इस समय तक लाहौर के मुग़ल सिक्ख फ़ौजों से डरते हुए इधर-उधर छुपे बैठे थे। बादशाह के आने के बाद उनको राहत की सांस मिली। कुछ महीने पहले ही सिक्खों के विरूद्ध जिहाद खड़ा करके हज़ारों मुगलों ने हैदरी झंड़े के नीचे सिक्ख फ़ौजों के साथ तीन लड़ाईयां, लाहौर के इलाके में लड़ी परन्तु तीनों लड़ाईयों में मुग़ल सिक्खों के हाथों बुरी तरह पराजित हुए। इन लड़ाईयों में जिहाद के कई प्रमुख धार्मिक नेता और कई मुग़ल जरनैल मारे गए। सिक्खों के विरूद्ध जिहाद खड़ा करने और पराजित होकर घर बैठ जाने वाले सैयद इनायुल्ला, अताउला और मुहम्मद तकी ने बादशाह से मिलकर फिर से पूरी मदद का यकीन दिलाया। बादशाह से हौंसला मिलने के पश्चात इन जिहादियों ने सामान्य ग़ैर-मुस्लमानों से अपनी हार और बेइज्जती का बदला लेना शुरू कर दिया। इस मुहिम में बहुत सारे सिक्ख भी कत्ल कर दिए गए। इसके अतिरिक्त बहुत सारे हिंदूओं को सिक्ख फ़ौजों के मददगार कह कर कत्ल कर दिया गया।

कुछ दिनों बाद बादशाह ने लाहौर की तरफ जाने का फैसला लिया और 20 अगस्त, 1711 को वह लाहौर पहुंचा। लाहौर के कादरी सूफी पीरों ने सिक्खों के हक में बादशाह के खिलाफ बगावत कर दी और मजबूरन बादशाह को इन सूफी पीरों के खिलाफ अपनी फ़ौज का इस्तेमाल करना पड़ा। इन सूफी पीरों के दवाब में लाहौर के मुलानों ने बादशाह के हक में शाही खुतबा पढ़ने से मना कर दिया। यार मौहमम्द ख़ान कलंदर फारसी के स्त्रोत दस्तूर-उल-ईंशा में लिखता है कि अगस्त, 1711 में शाही खुतबे की आवारत को लेकर लाहौर के मुलानों ने बहादुर शाह के विरूद्ध बवाल खड़ा कर दिया। वकील रिपोर्ट न. 265, दिनांक 26 अगस्त,1711 को बादशाह बहादुर शाह ने महतब ख़ान को आदेश दिया कि वह शहज़ादा अलि इतवात (जहांदार

---

180 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-8-1711 की प्रविष्टि।

शाह) के साथ जामा मस्जिद लाहौर जाए और वहां के इमाम को बादशाह के हक में खुतबा पढ़वाए।क्योंकि यह दस्तूर तैमूर से औरगज़ेब तक चला आ रहा था। जिस तरीके से बादशाह खुतबा पढ़वाना चाहता था मुलानों ने फिर से मना कर दिया और यह कह दिया कि वह मर जाएगें लेकिन खुतबा नही पढ़ेगें। बादशाह ने यह ख़बर पाकर अगले जुम्मे की नमाज़ तक शाही खुतबा पढ़वाने का फरमान स्थगित कर दिया। परन्तु अगले शुक्रवार को 10 हज़ार मुस्लमान बादशाह के खिलाफ खड़े हो गए और उनके हाथों में पत्थर थे। जोकि वह मुग़ल फ़ौज पर बरसाने के लिए तैयार थे। माहौल खराब होता देखकर बादशाह ने शाही खुतबा पढ़वाने का फरमान वापिस ले लिया।

वचन सिंह कछवाहा और बदन सिंह बुंदेला जो बादशाह के साथ बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम में हिस्सा लेने के लिए अपनी फ़ौजें लेकर लाहौर आए हुए थे। उन्होंने बादशाह को आग्रह किया कि मुग़ल फ़ौज हिंदूओं के विरूद्ध लूटपाट, कत्लेआम ना करें। केवल यह कार्यवाही सिक्खों के विरूद्ध ही अमल में लाई जाए। क्योंकि यह क्रातिंकारी मुहिम केवल नानक परस्तों के द्वारा की जा रही है। बादशाह ने इस आग्रह को मान लिया और अब केवल हिन्दु और सिक्खों की अलग-अलग से पहचान की जानी थी। बादशाह को पहले से ही पता था कि सिक्ख कभी भी केस दाढ़ी की बेअदबी नहीं करते और सिक्खों और हिंदूओं को अलग-अलग पहचानने की एक ही विधि यह है कि हिंदूओं को 'गंजा' कर दिया जाये। इस विचार के साथ बादशाह ने फरमान जारी कर दिया कि शाही लश्कर के सभी हिंदू अपनी दाढ़ीयाँ और केश मुड़वा दे। जिससे उनको कोई सिक्ख न समझ ले। इस पर सभी हिंदूओं ने अपनी दाढ़ीयाँ, मूछें और बाल मुनवा दिए (तारीखे मुहम्मद शाही)। दिल्ली के फ़ौजदार यार मुहम्मद ख़ान कलंदरी की दस्तूर-उल-इनशा रुक्काति अमीनुदौला, रुक्का पांचवा के मुताबिक हिंदूओं ने स्वयं हजामत नहीं करवाई थी। बल्कि यह कार्यवाही बादशाह के हुक्म पर जबरदस्ती की गई। शाही हुक्म हुआ कि भारतवर्ष में सभी हिंदूओं की दाढ़ियां काट दीं जाएं और सभी सूबों में यह हुक्म लागू कर दिया जाये कि कोई अधार्मिक (ग़ैर मुसलमान) लम्बी दाढ़ी न रखे और अगर कोई ऐसा मिल जाये जिसने दाढ़ी रखी हुई हो तो उसकी दाढ़ी काट दी जाये। बादशाही शिविर में इस हुक्म ने यह रुप इख्तियार कर लिया कि फ़ौजों ने दो-आदम कद नाइयों को साथ रखना शुरू कर दिया। गलियों और बाजारों में ग़ैर मुसलमान को देखते बेइज्ज़ती के साथ उनकी दाढ़ी काट लेते और उनकी पगड़ी और वस्त्र उतार देते। बादशाह के दरबार में हिन्दू अपनी हजामतें करवा कर ही दरबार आते।

23 अगस्त, 1711 को बादशाह ने मुहम्मद अमीन ख़ान को दो लाख रुपए दिए और सिक्खों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए आदेश भी दिए। 27 अगस्त, 1711 को बहादुर शाह को ख़बर मिली कि बंदा सिंह बहादुर ने रावी और ब्यास दरिया पार कर लिया है। वह लोहगढ़ जाने के लिए रोपड़ की ओर जा रहा था।14 सितंबर,1711 को बहादुर शाह को सूचना मिली कि बंदा सिंह बहादुर चार हज़ार सिक्ख सिपाहियों सहित सतलुज दरिया 7 सितंबर को पार कर चुके

थे। बादशाह ने मुहम्मद अमीन ख़ान को संदेश भेजा कि वह कीरतपुर की ओर जाएं और सिक्ख फ़ौजों के साथ मुकाबला करें। बादशाह ने दो हज़ार मुग़ल सिपाही मुहम्मद अमीन की सहायता के लिए भेजे। परन्तु दरिया में बाढ़ आने के कारण मुहम्मद अमीन 5 अक्तूबर, 1711 को दरिया पार ना कर पाया। जब बंदा सिंह बहादुर को यह ख़बर मिली तो वह पहाड़ियों के रास्ते कुल्लू रियासत की ओर जा रहे थे।

लाहौर में बहादुर शाह को मुग़ल जासूसों द्वारा बंदा सिंह बहादुर और सिक्खों की गतिविधियों की पल-पल की जानकारी भेजी जा रही थी। अब बहादुर शाह ने आम सिक्खों और उनके परिवारों को भारी संख्या में गिरफ्तार कर कत्ल करने के हुक्म जारी कर दिए थे। मुग़लों ने बादशाह से इनाम प्राप्त करने की लालसा में सिक्खों के परिवार पकड़वाने शुरू कर दिए। यहां तक कि लाहौर और अन्य इलाकों के मुख़बरों ने सिक्खों को पकड़वाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

चालीस सिक्खों का कत्ल

मुलतान के मुग़ल मनसबदार ने रियासत के अलग-अलग हिस्सों में से 40 सिक्खों को पकड़ लिया। जिनमें अधिकांश वणजारे सिक्ख थे। इन सिक्खों को बादशाह के सामने पेश होने के लिए लाहौर भेजा गया।11 अक्तूबर, 1711 को बादशाह ने हुक्म दिया कि इनको इस्लाम कबूल करने के लिए कहो। अगर यह न करें तो इनको जीवित ही धरती में दफना दो। इनमें से गुरु नानक विचारधारा को छोड़ने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ। इसलिए इन सभी को जीवित ही बादशाह के शिविर के समीप आलोवाल गांव में दफना दिया।[181] यह सिक्ख सहज सिंह चौहान, डोगर सिंह, हीरा सिंह, दयाल सिंह, केशो सिंह भट्ट, देसा सिंह, नरबुद्ध सिंह, तारा सिंह, सेवा सिंह, देवा सिंह, जेठा सिंह, जेठा सिंह परमार, हरी सिंह, रूप सिंह, पर्सन सिंह, अनूप सिंह, केहर सिंह, चन्नण सिंह, धर्म सिंह, और अन्य थे। भट्ट बही तलाउंडा की एक लेख में परगना जींद में कुछ नाम बताए गए हैं। जिसमें सभी 40 सिक्खों के नाम उपलब्ध नहीं हैं। अन्य विवरण के लिए अध्याय 25 देखें।

2 नवंबर, 1711 को बहादुर शाह ने होशियार ख़ान पुत्र इरादत ख़ान को जालंधर-दुआब की फ़ौज का कमांडर बना दिया। उसको सिक्खों के विरुद्ध मुहिम पर भेजा।5 नवंबर को मुहम्मद अमीन ख़ान का पत्र बादशाह को मिला जिस में लिखा था कि सिक्ख रात को हमारे शिविरों पर हमला करते हैं। कृपा करके 5000 घुड़सवार फ़ौजी सिक्खों का पीछा करने के लिए भेजे। अगले ही दिन बहादुर शाह ने पांच हज़ार घुड़सवार मुग़ल फ़ौजी और 300 अनुभवी हथियार बंद रोपड़ भेज दिए। जिनका नेतृत्व होशियार ख़ान (जो जालंधर फ़ौज का प्रभारी था) के पास

181 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 11-11-1711 की प्रविष्टि

था।[182] 12 नवंबर, 1711 को जैन-उदीन-अहमद ख़ान को सरहिंद का नया फ़ौजदार नियुक्त किया गया था और उसे एक हज़ार अनुभवी सिपाही देकर मुहम्मद अमीन ख़ान की सहायता के लिए भेजा गया।14 नवंबर, 1711 को बादशाह को खबर मिली कि शाही फ़ौजों ने चार घंटे सिक्खों के साथ बहुत भयानक लड़ाई की जिसमें शाही फ़ौजी सिपाहियों का जान-माल का बहुत नुक्सान हुआ। दिसंबर, 1711 में मुग़ल बादशाह ने सिक्खों को जड़ से खत्म करने का हुक्म दे दिया था। हर मुग़ल अफसर, धार्मिक नेता और मनसबदार, चौधरी बादशाह के हुक्म को लागू करने के लिए सिक्खों के पीछे लग गए।

बिलासपुर में शहादतें

दिसंबर, 1711 में सिक्ख फ़ौजें कहिलूर रियासत में दाखिल हो गई थी। इनमें जरनैल बंदा सिंह शामिल नहीं था। 28 दिसंबर को मुहम्मद अमीन ख़ान की फ़ौजों ने बरसाना नदी के किनारों पर मोर्चा लगाया हुआ था। जब सिक्खों को इस बात का पता चला तो उन्होंने मुग़ल फ़ौजों पर हमला कर दिया। इस मौके पर तीरों और बंदूकों की भारी जंग हुई। इस जंग में लगभग पांच सौ सिक्ख शहीद हुए। शहीद होने वाले सिक्खों में केसो सिंह पुत्र भाई चित्र सिंह और बाघ सिंह दोनों पुत्र भाई उदय सिंह और पोते भाई मनी सिंह भी शामिल थे। शाम के पश्चात सिक्ख दरिया पार करके बिलासपुर की ओर निकल गए। इस जंग में मुग़लों का भारी नुकसान हुआ परन्तु बहादुर शाह को खुश करने के लिए इसको मुग़ल फ़ौजों की जीत बताया गया। मुहम्मद अमीन ख़ान ने ईनाम प्राप्त करने के लिए शहीद हुए पांच सौ सिक्खों के सिर कटवा कर बादशाह को भेजे। बादशाह के पास यह सिर 12 जनवरी, 1712 को पहुंचे तो उसने इन सिरों की नुमायश लगाने के लिए कहा। फिर 18 जनवरी को इन सिरों के मीनार बनाने के हुक्म जारी किये गए। बादशाह ने मुग़ल फ़ौज की इस सफलता पर मुज़रा करवाने का हुक्म जारी किया। इसके साथ ही उसने नजूमियों द्वारा बताए जाने की सलाह अनुसार एक घोड़ा, एक जंगली भैंसा, एक गुलाम, कुछ जड़ाऊ और सोने की चीजें इत्यादि दान-पुण्य की और इन सब चीजों के सिर-वारने करने उपरांत अधिकारियों को भेंट किया परन्तु यह सब करने के बावजूद बहादुर शाह सिक्खों से काफी भयभीत होकर डरा हुआ था जिस कारण वह बीमार रहने लगा।[183]

22 जनवरी, 1712 को बादशाह को बताया गया कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर कीरतपुर से निकल कर कहिलूर (बिलासपुर) रियासत में चला गया था। बस्सी अफगानों कीरतपुर से पच्चीस किलोमीटर दूर में पड़ाव कर रहा था। बिलासपुर के राजे अजमेर चंद ने उसे पनाह दी हुई है। बादशाह को यह भी बताया गया कि बंदा सिंह बहादुर को पनाह देने के जुर्म में मुग़ल

---

182 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 05-11-1711 की प्रविष्टि

183 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-08-1712 की प्रविष्टि

जनरल फिरोज जंग ख़ान ने कीरतपुर और कल्याणपुर गांवों को जला कर राख कर दिया था। फिरोज जंग ने स्वयं गांव निर्मोह कीरतपुर से पांच किलोंमीटर दूर शिविर लगाऐ हुए थे। वह यहां से सिक्खों पर निगाह रख रहा था। यह वही पहाड़ था जहां गुरु गोबिंद सिंह ने अक्तूबर, 1700 में कुछ दिन व्यतीत किये थे।

हातिम ख़ान का सिक्खों के हाथों मारा जाना

दिसंबर 1711 के दूसरे सप्ताह में जोधपुर और जयपुर के हिंदू राजे राजस्थान को वापिस चले गए थे।25 दिसंबर, 1711 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर को इस बारे पता चल गया था। बादशाह ने इन राजाओं को जाते समय इनकी अनुपस्थिति में ही चार हज़ारी और साढ़े तीन हज़ारी मनसब प्रदान कर दिए थे। शहज़ादा अजीमउशान ने इनको मनसब के परवाने पेश करने और विदाई देने के लिए फ़ौजदार हातिम ख़ान को इनके पीछे भेजा था। जब हातिम ख़ान वापिस आ रहा था तो सिक्ख फ़ौजों ने उसे झज्जर के निकट घेर कर मार दिया। इसकी ख़बर बादशाह को 01 फरवरी, 1712 को मिली थी।[184] इन्हीं दिनों जरनैल बंदा सिंह बहादुर बिलासपुर के इलाके में मौजूद थे और सिक्खों के एक जरनैल ने आनंदपुर साहिब से 14 किलोंमीटर दूर जिन्दबड़ी जो किसी जमाने में इधर एक बड़ा परगना रहा था में दोआबा के फ़ौजदार होशदार ख़ान की फ़ौज पर हमला कर दिया और अनेकों मुग़ल सिपाही मार गिराए।

23 जनवरी, 1712 को बादशाह ने जम्मू के फ़ौजदार फिरोज़ ख़ान बहादुर को भी सिक्खों का पीछा करने के लिए हुक्म भेज दिया।[185] फरवरी, 1712 के पहले सप्ताह बंदा सिंह बहादुर स्वयं बिलासपुर के इलाके में ही मौजूद थे। दोआबे का फ़ौजदार होशदार ख़ान झज्जर में पहुंच गया था और मुहम्मद अमीन ख़ान गांव भलोवाल में था। इन दोनों की फ़ौजें गांव जिन्दबड़ी और झज्जर में भी बैठीं थीं और सिक्खों पर निगाह रख रही थीं। इस समय तक मुहम्मद अमीन ख़ान के नेतृत्व में बीस हज़ार से भी अधिक मुग़ल फ़ौज बंदा सिंह बहादुर के पीछे लगी हुई थी। परन्तु वह अभी तक उनके नज़दीक नहीं पहुंच पाए थे। बेशक मुहम्मद अमीन ख़ान को कोई बड़ी कामयाबी नहीं मिली थी। परन्तु फिर भी बहादुर शाह ने 13 फरवरी, 1712 को उसे 'ग़ाजी-उद्-दीन ख़ान बहादुर' का खिताब दिया।

बहादुर शाह का पागल होना और उसकी मौत

अकेला अमीन ख़ान ही नहीं बल्कि बादशाह ने पचास बड़े और दर्जनों छोटे जरनैल और हज़ारों फौजी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पीछे लगाई हुई थी। उनकी सिक्ख फ़ौजों के साथ

---

184 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-02-1712 की प्रविष्टि

185 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 23-01-1712 की प्रविष्टि

बहुत झड़पें हुई थी। जिसमें दोनों गुटों का काफी नुक्सान हुआ। बादशाह ने कई करोड़ों रुपए और असीमित हथियार भी दांव पर लगाए हुए थे। परंतु बंदा सिंह बहादुर का अंत करने में कामयाबी हासिल न हुई। जहां एक और बहादुर शाह को 1708 में अपने भाइयों को हराने और खत्म करने में कामयाबी हासिल हो चुकी थी। वह दक्षिण की बगावत को दबा चुका था। उसने राजपूतों को काबू कर लिया था और यह सभी मुख़ालिफ़ बड़ी-बड़ी फ़ौजें और बेपनाह ताकत वाले थे। दूसरी ओर सिक्ख फ़ौज के बारे में बादशाह ने ना पहले सुना और ना उसके पास कोई सिक्ख फ़ौज से सबंधित पुख्ता जानकारी थी। सिक्खों के पास भारी मात्रा में नवीनत्तम हथियारों और घोड़ों की फ़ौज थी। जम्मू से लेकर बरेली तक किलेबंदी के जाल का तोड़ मुग़ल फ़ौज के पास नहीं था। सिक्ख फ़ौज के पहले हमले के कुछ दिन तक बादशाह यह समझता रहा कि सिक्ख विद्रोह कुछ दिनों में ही खत्म कर दिया जाएगा। परन्तु बादशाह की ग़लतफहमी जल्द ही खत्म हो गई। बंदा सिंह बहादुर उसके फ़ौजियों के हाथ न आ सका। दर्जनों लड़ाईयों में हज़ारों सिक्खों के मारे जाने के उपरांत भी उनकी संख्या न घट पाई और उनके हमले न रुके। इन सभी ख़बरों के साथ बादशाह घबराया रहता और कई बार तो 'बंदा-बंदा' कहकर बड़बड़ाने लगता था। बादशाह की बैचेनी का कोई अंत नही था। धीरे-धीरे बादशाह पागलपन की ओर अग्रसर हो गया था। लोग बादशाह की बदहाली पर यह कहने लगे कि वज़ीर ख़ान को बचाने के लिए गुरु गोबिंद सिंह के साथ धोखा करने का यही परिणाम सामने आ रहा है।

इन्हीं दिनों बादशाह को शिकायत की गई कि सिक्ख जोगी, सन्यासी, बैरागी इत्यादि का भेष बदलकर मुग़ल लश्कर के आसपास घूमते रहते हैं। मुग़ल फ़ौज की ख़बरे बंदा सिंह बहादुर तक पहुंचाते रहते हैं। बादशाह ने हुक्म जारी किया कि इनको शहर में से निकाल दिया जाये। लश्कर के नजदीक आने वाले जोगी, सन्यासियों, बैरागियों को कत्ल कर दिया जाये। बादशाह ने यही हुक्म 28 अक्तूबर, 1711 के दिन भी जारी किया था। इन दिनों बहादुर शाह ने फिर से हुक्म जारी किया था कि जहां कहीं कोई सिक्ख मिले उसे कत्ल कर दिया जाऐ। जो यह नहीं करेंगे सिक्ख समझे जाएंगे और कत्ल कर दिए जाएंगे। जनवरी 1712 के दूसरे सप्ताह बहादुर शाह की तबीयत खराब होनी शुरू हो गई। बादशाह के दिल में सिक्खों का डर बुरी तरह समा गया। वह इतना डरा हुआ था कि वह हर एक के साथ गुस्से और शक की निगाह के साथ और पागलों की तरह बर्ताव करता था। सबसे पहले पागलों जैसा व्यवहार उसने मुनायम ख़ान जिसको उसने ख़ानखाना बहादुर, ज़फरजंग, वफादार, वज़ीर-वाला के खिताब दिए हुए थे।30 नवंबर,1710 को जब बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ में से बच कर निकल गए तो उनकी बहादुर शाह ने 'कुत्ते' के साथ तुलना की। यह ख़ानखाना इस बेइज्जती के पश्चात बीमार होकर 18 फरवरी, 1711 को रास्ते में ही मर गया था।18 फरवरी, 1711 को इस घटना के 80 दिन के भीतर उसकी मौत हो गई। जब वह सम्राट के काफिले के साथ जा रहा था।

बहादुर शाह का दूसरा बड़ा बेवकूफाना हुक्म सरहिंद के फ़ौजदार ग़ाजी ख़ान रुसतम-

जंग को 23 अप्रैल, 1711 को सरहिंद का फ़ौजदार बना कर सिक्खों का 'मलियामेट' करने के लिए उनका पीछा करने के लिए भेजा हुआ था। परन्तु जब वह मुहम्मद अमीन ख़ान से नाराज हो गया और सिक्खों के विरूद्ध मुहिम छोड़ कर घर आ बैठा। तब बादशाह ने 22 अगस्त को उसका सब कुछ छीन कर उसके पैरों में बेड़ीयां डाल कर जेल में कैद कर लिया था। बहादुर शाह ने ऐसी अनेकों अजीब हरकतें की थी। अब बहादुर शाह बेहद परेशान हो गया और वह बंदा सिंह बहादुर व सिक्ख के नाम से भी डरने लगा था। 07 दिसंबर, 1711 में महतब ख़ान ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ने के लिए राजस्थानी राजाओं को सढ़ौरा में कुछ और दिन रहने के लिए कहा। परन्तु यह राजा कुछ दिन बाद सढ़ौरा से वापिस लौट आए।28 दिसंबर, 1711 को सिक्ख फ़ौज और मुग़लों के बीच बिलासपुर में जंग हुई। जिसमें भाई केशो सिंह और भाई बाघ सिंह वणजारां जैसे सिक्ख जरनैलों ने शहादत प्राप्त की।30 दिसंबर, 1711 को अजीत सिंह पातल को गुरु का चक्क अमृतसर का दायित्व सौंपा गया और बहुत सारा पैसा भी दिया गया। मुग़लों ने इस गद्दार का इस्तेमाल जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध किया। जनवरी, 1712 में बहादुर शाह का दिमाग बिल्कुल ही बेचैन हो गया और उसने पागलों जैसा बर्ताव शुरू कर दिया। जनवरी, 1712 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पुत्र अजय सिंह का जन्म लोहगढ़ में हुआ।15 जनवरी, 1712 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ के रास्ते पहाड़ों में पहुंचे और यहां पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर की मुग़ल फ़ौज से लड़ाई हुई।जल्द ही मुग़ल फ़ौज मैदाने जंग छोडकर भाग खड़ी हुई।12 फरवरी, 1712 को बहादुर शाह ने एक अजीब हुक्म जारी करके शहर के सभी कुत्ते मारने के लिए हिदायत कर दी। इस मुहिम के चलते प्रतिदिन सैंकड़ों कुत्ते मारे गए और बहुत सारे कुत्ते डर कर दरिया रावी पार करके भाग गए। वह बंदा सिंह बहादुर और सिक्खों से इतना डरा हुआ था कि वह उनको कुत्ता (कुत्ते) बोला करता था। शायद कुत्ते मारने के हुक्म के साथ वह सिक्खों को मारने की बात करना चाहता था।

अगले कुछ सप्ताह उसकी बीमारी बढ़ती गई। 25 फरवरी, 1712 को बहादुर शाह ने अंतिम दरबार लगाया। अगले दिन तिल्ली की सूजन के साथ बादशाह का स्वास्थ्य बहुत ज्यादा खराब हो गया और बादशाह बिस्तर पर ही लेट गया। तीन हकीम हर समय उसके पास रहते थे। परन्तु उसके इलाज के पश्चात भी बादशाह के स्वास्थय में कोई सुधार नहीं हुआ।27-28 फरवरी, 1712 को लाहौर में ही उसकी मृत्यु हो गई। बहादुर शाह के शव को दिल्ली ले जाकर दफन करने के लिए ताबूत में डाल कर रख दिया गया। परन्तु मौलवी मुरादुल्ला, अब्दुल कादर और महफ़ूज़ ख़ान जिनकी सुपुर्दगी में बादशाह का शव था कई दिन शव दिल्ली न भेज सके। क्योंकि बादशाह के चारों पुत्रों में तख़त पर कब्ज़े की जंग शुरू हो चुकी थी। ऐसे बादशाह का शव कई दिन लाहौर में ही पड़ा रहा। अंतत: 43 दिन के पश्चात 12 अप्रैल, 1712 को बादशाह की

विधवा मेहर परवर, मुहम्मद ख़ान की हिफाजत से शव को दिल्ली ले गई।[186] शव 16 मई, 1712 को दिल्ली पहुंचा और ढ़ाई महीने इधर-उधर पड़ा रहने के उपरांत यह लाश कुतुब मीनार के पास बख़्तयार काकी की मज़ार के नज़दीक औरंगज़ेब की बनाई मस्ज़िद के आंगन में ही दफना दी गई।

बहादुर शाह की मौत के पश्चात उसके पुत्रों में खूनी-जंग

बहादुर शाह की मौत के उपरांत उसके पुत्रों में बादशाह बनने के लिए भारी जंग हुई। इस अवसर पर सिक्खों के विरूद्ध फ़ौजें लेकर निकले सभी जनरल सहित मुहम्मद अमीन ख़ान 'चैन बहादर' भी मुहिम बीच में छोड़कर लाहौर वापिस आ गया। 3 मार्च, 1712 के दिन जहांदार शाह के तीनों भाई दो-टूक फैसला करने के लिए मैदाने-जंग में आ गए। उस समय रावी दरिया लाहौर के किले के नज़दीक बहता था इस मौके पर घमासान जंग हुई। पहले अब्दुस समद ख़ान ने शहजादे अजीम-उस-शान को मार दिया। उसका शव उठवाकर जहांदार शाह के पैरों में जा फेंका। अजीम-उस-शान की मौत के पश्चात एक बार तो सन्नाटा छा गया। दो सप्ताह उपरांत 16-17 मार्च को बहादुर शाह के दोनों छोटे पुत्रों रफीउश्शान (रफी-उल-कादर) और जहान शाह (खुजिशता अख्तर) ने नया लश्कर भर्ती करके जंग किया। 17 मार्च को जब सबसे छोटा शहज़ादा जहान शाह अपने पुत्र फरखन्दा अख्तर के साथ अपने तंबू की ओर जा रहा था तो अब्दुस समद ख़ान ने तोप के साथ दोनों पिता-पुत्रों को उड़ा दिया। शहज़ादा रफीउश्शान अभी भी जंग के मैदान में डटा हुआ था।

अगले दिन सुर्योदय होते ही जहांदार शाह की फ़ौज ने बड़ा हल्ला किया। रफीउश्शान की ओर से नये भर्ती किए सिपाही जल्द ही मैदान से भाग गए। अब रफीउश्शान हाथी से उतर कर स्वयं जंग में कूद पड़ा और अपने दो भाईयों की तरह वह भी मारा गया। तीनों शहज़ादे और उनके पुत्रों के शव तीन दिन रावी दरिया के किनारे पर तपती रेत में पड़े रहे। चौथे दिन नये बादशाह जहांदार शाह ने इन शहज़ादों की गली-सड़ी लाशों को दफनाने का हुक्म दिया। इस तरह का व्यवहार जहांदार शाह ने अपने भाईयों के मृतक शरीरों के साथ किया। उसने अपने पुराने विरोधियों को सामान्य सम्मान भी नहीं दिया। यह जुल्म की आखिरी इंतहा थी।

जहांदार शाह द्वारा विरोधियों का कत्लेआम

जहांदार ने शासन संभालने के उपरांत अपने हिमायतियों और मददगारों को इनाम और अपने दुश्मनों और विरोधियों को सजाएं देनी शुरु कर दी। अमीर-उल-उमरा बहादुर, कोकलताश ख़ान बहादुर, ख्वाजा हसन ख़ान, शक्कर-उलाह-ख़ान और कुछ अन्य उमरों ने जहांदार शाह की बहुत मदद की थी। उसने इन सभी को इनाम और पद बख्शे। इसके उपरांत उसके दुश्मनों की

186 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 12-04-1712 की प्रविष्टि

बारी आई। उसने 20 मार्च को अपने भाई खुजिशता अख्तर के विशेष साथियों मुहम्मद रुस्तम उर्फ गजनफर ख़ान उर्फ गाजी ख़ान पूर्व सूबेदार सरहिंद और मुखलिस ख़ान पुत्र ख़ानखाना को कत्ल करने का हुक्म दिया।[187] इसी दिन शाम के समय पर हमीद-उद्-दीन ख़ान बहादुर आलमगीरी, सरफराज ख़ान बहादुर (बहरोज ख़ान) और उसके पुत्र, सेफ-उलाह-ख़ान, रहमान यार ख़ान, मुशर्रफ ख़ान (गुरज बरदार) और फकीर-उलाह-ख़ान को भी मौत की सजा दी गई। ये सभी मुग़ल सरकार के सबसे वरिष्ठ अधिकारी थे। इनके अतिरिक्त हमीद-उद्-दीन ख़ान बहादुर, महाबत ख़ान बहादुर खाना-ऐ-जमाना (ख़ान खाना का दूसरा पुत्र), अहतमान ख़ान पर उसका पुत्र लुत्फ-उलाह-ख़ान (खुजिशता अख्तर का डिप्टी), रहमान ख़ान यार, अताउलाह ख़ान, फतेह-उलाह ख़ान, मोहतम ख़ान, राय राईआं, ज़नी ख़ान, फिदवी ख़ान, अब्दुल करीर ख़ान, अकीदत ख़ान पुत्र अमीर ख़ान, मुहम्मद अली ख़ान (जहांदार ख़ान का बख्शी) इत्यादि 17 आदमियों को कैद कर दिया गया। इनकी संपत्ति भी ज़ब्त कर ली गई। परन्तु अगले ही दिन नये बादशाह ने लुत्फ-उलाह-ख़ान, राय राईआं और ज़नी ख़ान को माफ करने का ऐलान कर दिया। 21 मार्च को बादशाह ने मुखलिस ख़ान और हकीम मोइतमद-उल-मुल्क के बंद-बंद काटने का हुक्म जारी किया।[188] जहांदर शाह 23 मार्च, 1712 को औपचारिक तौर पर तख्त पर बैठा।

187 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 20-03-1712 की प्रविष्टि

188 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 21-03-1712 की प्रविष्टि

अध्याय 10

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लोहगढ़ और सढ़ौरा वापिस आना

बहादुर शाह की मौत की ख़बर मिलते ही जरनैल बंदा सिंह बहादुर रियासी से पंजाब की ओर चल पड़े। इस दौरान लाहौर के सूबेदार इस्लाम ख़ान ने उनका रास्ता रोकने की कोशिश की। परन्तु वह नाकाम रहा। इस्लाम ख़ान सरहिंद वापिस नहीं गया और उसने अपना शिविर सढ़ौरा और सरहिंद के बीच में ही लगा लिया। एक रात सिक्ख फ़ौज ने इस्लाम ख़ान के शिविर को घेर लिया और अंदर जा घुसे। इस्लाम ख़ान और अन्य मुग़ल जरनैलों का सिर काट दिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर मार्च 1712 के आरंभ में लोहगढ़ और सढ़ौरा में मौजूद थे और यमुनापार सिक्ख मोर्चो का निरन्तर दौरा किया करते थे। उसके पास 40-50 हज़ार फ़ौज थी।[189] सिक्ख फ़ौजों ने लोहगढ़ के 52 किलों पर अपना कब्ज़ा मज़बूती से कायम रखा हुआ था और मुग़ल फ़ौज और उनके साथी लोहगढ़ क्षेत्र में घूमने का जोखिम नही उठा रहे थे। इस क्षेत्र में वणजारे सिक्ख, सिकलीघर, लुबाने सिक्ख, भील सिक्ख और नोनिया सिक्खों की मज़बूत फ़ौज खड़ी थी। वणजारें ही जंग के दौरान प्रतिद्वंदियों फ़ौजों का हथियार व रसद मुहया करते थे। परन्तु इस सिक्ख क्रांति में मुखिया वणजारें सिक्ख थे। इस कारण मुग़ल फौज़ और उनके साथी राजाओं को रसद, जानवरों के चारे, पीने के पानी, हथियार, जख्मीओं के लिए दवा इत्यादि की भारी कमी का सामना करना पड रहा था। जिस कारण मुग़ल फ़ौज अपनी पूरी क्षमता से यह जंग नही लड़ पा रही थी। कई और अन्य कारणों से भी सिक्ख फ़ौज इस समय तक भी मुग़ल फ़ौज पर हावी थी। मुग़ल फ़ौज के उखड़े हुए कदमों की खबर जब मुहम्मद अमीन ख़ान तक पहुंची तो उसने फ़ौज को सढ़ौरा की ओर चलने का हुक्म दे दिया।[190] यही ख़बर अरजदासत सीरियल नंबर 58, वकील रिपोर्ट नंबर 267, तारीख 10 मार्च, 1712 के द्वारा भी दी हुई है।

सिक्खों के विरूद्ध मुग़लों की मुहिम एक बार तो रुक सी गई थी। मुहम्मद अमीन ख़ान जिसको सिक्खों का अंत करने की कमान दी गई थी। वह बादशाह की मौत के उपरांत लाहौर वापिस आया था। उसने हिदुस्तान के तख्त पर कब्ज़े की जंग में हिस्सा नहीं लिया था।21 मार्च को उसने दरबार में उपस्थित होकर नये बादशाह पर अपनी निष्ठा व्यक्त की।[191] जहांदार ख़ान ने

---

189 *भंडारी खिवसी की राजा जयपुर को 10 मार्च, 1712 को लिखी चिट्ठी, सीरियल नंबर 57, वकील रिपोर्ट नंबर 266 राजस्थानी दस्तावेज बंदा सिंह बहादुर, संपादित बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा

190 *भंडारी खिवसी द्वारा जयपुर के राजे को 10 मार्च, 1712 को लिखी चिट्ठी, सिरियल 57, वकील रिपोर्ट 266, राजस्थानी दस्तावेज बंदा सिंह बहादुर, संपादित बलवंत सिंह ढिल्लों।

191 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 21-03-1712 की प्रविष्टि

उसके मनसब[192] को बढ़ाकर सात हज़ार कर दिया। मुहम्मद अमीन ख़ान को 'चैन मुहम्मद, मुहम्मद अमीन ख़ान बहादुर, फिरोज जंग' का खिताब भी दिया गया। 29 मार्च, 1712 को नये बादशाह जहांदार शाह ने बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम के लिए मुहम्मद अमीन ख़ान की कमान के नीचे 9000 घुड़सवार सिपाही भेजने की मंजूरी दी।5 अप्रैल, 1712 को मुहम्मद अमीन ख़ान जहांदार शाह को अकेले मिला और बादशाह से जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध 10000 और घुड़सवार फ़ौज की मांग की जोकि बादशाह द्वारा मजूंर कर ली गई।9 अप्रैल, 1712 को मुहम्मद अमीन ख़ान और मुअरफ ख़ान बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम पर चल पड़े।[193]

अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला के अनुसार 23 अप्रैल, 1712 को मुहम्मद अमीन ख़ान ने बादशाह को बताया कि उसने मुग़ल फ़ौजियों को बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम के लिए तैयार किया हुआ है। उसने दो हज़ार घुड़सवार और तीन हज़ार पैदल सिपाहियों की और मांग की। इस पर बादशाह जहांदार शाह ने नये सिपाही भर्ती करने की अनुमति दी। इसमें 1500 घुड़सवार 25 रुपए महीने पर और 2 हज़ार पैदल सिपाही 4 रुपए महीने की तनख्वाह पर भर्ती किए गए।[194] इन्हीं दिनों जहांदार शाह लाहौर सें दिल्ली के लिए रवाना हो चुका था। वह 7 मई, 1712 को सुलतानपुर लोधी में था। यहां से दक्षिणी सराय नकोदर निकट, नूरमहल, फिलौर, लुधियाना, दोराहा और खेड़ा में पड़ाव करता हुआ वह 20 मई, 1712 को सरहिंद पहुंच गया। उस दिन इलाके के अमीर उसके पास पेश हुए और बताया कि बादशाह बहादुर शाह के समय बंदा सिंह बहादुर और उसके साथियों ने हमारे बहुत बंदे कत्ल कर दिए थे। अब भी इस इलाके में सिक्ख फ़ौज का दबदबा कायम है और हम यहां पर महफूज़ नही हैं। अगर हमें हिफाज़त नहीं मिल सकती तो हम लोग आपके साथ ही यहां से दिल्ली की और चल पडते है। यह सुनकर बादशाह ने उनको हिफाज़त देने का वायदा किया। 22 मई, 1712 को सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान ने बादशाह को बताया कि बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ में ही रह रहे हैं। बादशाह ने बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम के लिए सरहिंद के फ़ौजदार को 8000 नये घुड़सवार नियुक्त करने की अनुमति दी और सिक्ख फ़ौज के खिलाफ मुहिम तेज करने का आदेश दिया।[195]

29 मई, 1712 को बादशाह जहांदार शाह थानेसर में था। यहां के मुग़ल अफसरों ने उसे बताया कि जब बंदा सिंह बहादुर ने इस नगर पर हमला किया था तो हमने मजबूरन थानेसर शहर खाली कर दिया। गिने-चुने मुग़ल थानेसर शहर में बचे हैं। यहां पर सिक्ख थानेदार का ही

---

192 *मनसब फ़ौज के सरकारी अधिकारी का पद उदाहरण: सात हज़ार कार्यालय का मतलब है कि वह सात हज़ार सिपाही रखने का हकदार था। सिपाहियों की तनख्वाह राज के खजाने से दी जाती थी।

193 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29 मार्च, 5 और 9 अप्रैल, 1712 की प्रविष्टि

194 *इस इतिहास वाक्य से यह प्रमाण मिलता है कि मुग़ल फ़ौज दिन-प्रतिदिन कम हो रही थी क्योकि सिक्ख फ़ौज के द्वारा बहुत सारी मुग़ल फ़ौज का कत्ल कर दिया गया था और अब जरनैल बंदा सिंह बहादुर से टक्कर लेने के लिए नई फौजियों की नियुक्ति की जा रही थी।

195 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 20 मई व 22 मई, 1712 की प्रविष्टि

हुक्म चलता है। थानेसर शहर में अभी भी बहुत मसजिदें, मजारें और हवेलियां मौजूद खड़ी हैं और बंदा सिंह बहादुर ने इनको कोई नुकसान नही पहुंचाया। बादशाह के आगे यह भी रिपोर्ट पेश की गई कि आम मुस्लमान जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ हैं और केवल मुग़लों को ही जरनैल बदां सिंह बहादुर दुख-तकलीफ दे रहा है। बादशाह ने थानेसर के सिक्ख थानेदार को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया और उसके हुक्म की तामील करके 17 सिक्ख फ़ौजी गिरफ्तार किये गए। बादशाह ने हुक्म दिया कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का साथ छोड़ दो तो आप लोगों को जागीरें और रेशमी पोशाक दी जाएगी। हुक्म ना मानने पर इन सिक्ख फौजियों को बंद-बंद (शरीर के टुकड़े-टुकड़े) काटकर उनके शवों के टुकड़े नगर के बाहर की मीनार के निकट लटका दिए गए। इसी दिन बादशाह ने ऐलान किया कि जमदातुल्ल मुल्क और फ़ौजी नियुक्त करें और जल्द से जल्द सिक्खों के विरूद्ध मुहिम पर भेजे।[196]

8 जून, 1712 को बादशाह जहांदार शाह दिल्ली पहुंच गया। वह 11 जून को लाल किले में दाखिल हुआ और तख्त पर बैठा। 12 जून को बादशाह को बताया गया कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सरहिंद में अपना थाना कायम किया हुआ है।[197] 13 जून, 1712 को बादशाह को बताया गया कि कमाऊं के राजा जगत चंद, बंदा सिंह बहादुर के विरुद्ध मुहिम में मुग़लों का साथ दे रहा हैं। परन्तु गड़वाल का राजा फतेह शाह आज भी सिक्ख फौजियों के साथ मुग़लों के विरूद्ध लड़ाई लड़ रहा है। राजा जगत चंद को मुग़ल बादशाह के द्वारा मोतियों से जड़ी खिताब तलवार भेट में भिजवाई गई और राजा फतेह शाह को कैद करने के आदेश दिए गए।

बादशाह ने सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान को मुहम्मद अमीन ख़ान की फ़ौज की तनख़्वाहों का इंतजाम करने का जिम्मा सौंपा। बादशाह ने मुहम्मद अमीन ख़ान को बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुहिम के लिए तैनात किया हुआ था। इसके साथ ही बादशाह ने जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान के भतीजे अबू-उल-कासिम को सरहिंद का नायब (डिप्टी) फ़ौजदार नियुक्त कर दिया।[198]

24 जुलाई को बादशाह ने जलालाबाद के जलाल ख़ान (जिसने सिक्खों को जबरदस्त टक्कर दी थी) मुहम्मद अमीन को राजौरी का और मुहम्मद बाका को फतेहाबाद का आर्मी चीफ (सेना प्रमुख) नियुक्त किया गया।[199]

सढ़ौरा की दूसरी लड़ाई

अगस्त, 1712 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ में मौजूद थे। मुहम्मद अमीन ख़ान ने एक बड़ी फ़ौज के साथ लोहगढ़ की ओर कूच किया। लोहगढ़ पहुंचने से पहले उसे सढ़ौरा और

---

196 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29-05-1712 के प्रविष्टि

197 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला,12-06-1712 के प्रविष्टि

198 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 11 व 12 जून, और 12-07-1712 की प्रविष्टि

199 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 24-07-1712 की प्रविष्टि

लोहगढ़ के बीच बने 52 से ज्यादा मोर्चो पर लड़ना था। अखबार ऐे-दरबारे-मुअल्ला के अनुसार पहली सितंबर, 1712 को बादशाह जहांदार ख़ान को मुहम्मद अमीन ख़ान की खबर पहुंची। जिसमें बताया गया था कि बहुत सारे सिक्ख अगस्त, 1712 के आरंभ में पहाड़ों से नीचे उतरकर सढ़ौरा के किले में आ गए थे। उन्होंने सढ़ौरा में पक्की गढ़ी में अपने मोर्चे जमा रखे हैं। बादशाह को बताया गया कि सिक्ख प्रतिदिन गढ़ी से निकलते थे और मुग़ल फ़ौजी उन पर हमला करते थे। ऐसे प्रतिदिन लड़ाई होती थी और बादशाह को यह भी बताया गया था कि 17 अगस्त को बंदा सिंह बहादुर पहाड़ों से उतर कर सढ़ौरा आया और दोनों गुटों में जबरदस्त जंग हुई। इस लड़ाई में मुग़ल फ़ौज की संख्या कम होने के कारण मुग़लों का बहुत भारी नुक्सान हुआ था और कई मुग़ल जरनैल भी मारे गए।[200]

मुहम्मद अमीन ख़ान की विनती पर 8 सितंबर, 1712 को बादशाह ने लोहगढ़ की ओर दो तोपें रवाना करने का हुक्म जारी किया। बादशाह ने दरोगा-ऐ-तोपखाना को हुक्म दिया कि वह दो तोपों को सढ़ौरा भेज दे।[201] परन्तु छह महीने के घेरे के उपरांत भी सढ़ौरा मुग़लों के कब्ज़े में न आ पाया।

अक्तूबर के आरंभ में सिक्खों ने बनूड़ के निकट 'छत' परगने पर हमला करके काज़ी और मुतसद्दी को कत्ल कर दिए। सरहिंद के फ़ौजदार का डिप्टी जान बचा कर भाग गया। फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान भी सिक्खों के विरूद्ध कोई कार्यवाही न कर सका। बहादुर शाह को मरे आठ महीने हो चुके थे और इस समय के दौरान सिक्खों ने लोहगढ़, सढ़ौरा और जम्मू से बरेली तक फिर अपना बोलबाला कायम कर लिया था।[202]

---

200 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-09-1712 की प्रविष्टि

201 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 08-09-1712 के प्रविष्टि

202 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 15-10-1712 के प्रविष्टि

अध्याय 11

मुग़लों का सिक्खों के विरुद्ध तीसरा संग्राम

जहांदार ख़ान का कत्ल और फरख्खसियर का बादशाह बनना

27 मार्च, 1712 को पटना में जहांदार शाह के भतीजे फरख्खसियर (पुत्र अजीमउशान) ने स्वयं को बादशाह घोषित कर दिया। हुसैन अली ख़ान जो कि बिहार सूबे का नायब सूबेदार था और फरख्खसियर द्वारा बादशाहत का ऐलान करते समय वह इस अवसर पर मौजूद नहीं था। इस समय फरख्खसियर की मां हुसैन अली ख़ान की मां के पास गई और उसे कहा कि वह अपने पुत्र को फरख्खसियर की मदद करने के लिए कहे। उसने कहा कि हुसैन अली और उसके भाई अब्दुला ख़ान (कुतुब-उल-मुल्क) को सरकारी पद फरख्खसियर के पिता ने ही दिलाऐ थे इस कारण उनको भी हमारी मदद करनी चाहिए। पहले तो हुसैन अली ख़ान की मां ने कोई वायदा न किया परन्तु जब उसने रोना-पीटना और मिन्नतें करनीं शुरू की तो वह मान गई।[203] कुछ दिनों के उपरांत हुसैन अली भी पटना पहुंच गया। अब फरख्खसियर अपनी मां को लेकर उसके पास पहुंचा और कहने लगा कि या तो मुझे गिरफ्तार करके बादशाह के पास भेज दो या बादशाह का पद दिलाओ। मैं हकूमत की असली कमान आपको सौंप दूंगा। उसने दो बड़े पद- 'फ़ौज का प्रमुख और बख्शी' दोनों भाईयों को देने का मान लिए। पहले हुसैन अली और फिर उसका भाई अब्दुला जो इलाहाबाद सूबे का नायब सूबेदार था वह भी फरख्खसियर के साथ मिल गया क्योंकि जहांदार शाह उसकी वफादारी पर संदेह करता था। नवंबर 1712 में फरख्खसियर फ़ौज लेकर दिल्ली की ओर चल पड़ा।

17 नवंबर, 1712 को वह आगरा के निकट शामूगढ़ के मैदान में पहुंच चुका था। यहां जहांदर शाह के कई जरनैल बहाने के साथ दिल्ली से खिसक कर फरख्खसियर के साथ आ मिले। शामूगढ़ मैदाने जंग में कोकलताश ख़ान मारा गया और 'रुसतमे हिंद' जख्मी हो गया। शाम के समय जहांदार ख़ान स्वयं भी भाग गया और केवल जुल्फकार ख़ान ही मैदान में डटा रहा। अंतत वह भी मुकाबला न कर सका और दिल्ली को भाग गया। उधर फरख्खसियर 11 जनवरी, 1713 को दिल्ली पहुंच गया और असद् ख़ान ने फरख्खसियर को बादशाह जहांदार शाह के छिपने की जगह के बारे में बता दिया। फरख्खसियर ने सैफ़ ख़ान को जहांदार शाह और जुलफदार ख़ान के सिर काट कर लाने के लिए कहा। 31 जनवरी, 1713 को जहांदार शाह मारा गया और फरख्खसियर दिल्ली के तख़्त पर काबिज़ हो गया। फरख्खसियर जहांदार शाह पर इतना ख़फा था कि उसने 20 जून को यह हुक्म भी जारी किया कि 'जहांदार की हकूमत का

203 *इरविन, पत्र मुग़लज, पृष्ठ 206

समय लिखतों में से निकालकर हजरत बादशाह (फरख्खसियर) का राज-वर्ष उसके पटने में गद्दी पर बैठने के दिन 29 सफर 1124 यानि 27 मार्च,1712 से माना जाये।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरुद्ध मुग़लों की नयी मुहिम

फरख्खसियर ने प्रशासन का पूरा नियंत्रण करने के उपरांत अपने दुश्मनों को सजा देने का फैसला किया। मुग़ल अहलकारों का पूरा ध्यान जरनैल बंदा सिंह बहादुर की मुहिम की ओर लगा हुआ था। जनवरी, 1713 के तीसरे सप्ताह के बीच का समय मुहम्मद अमीन ख़ान (जो सिक्खों के विरुद्ध 2 साल लड़ता रहा) फरख्खसियर की अदालत में जा उपस्थित हुआ। नये बादशाह को अपनी निष्ठा दिखाई और सरकार का साथ देने का वचन किया। मुहम्मद अमीन ख़ान ने दोनों समय राजगद्दी की लड़ाई में किसी तरफ भी हिस्सा नहीं लिया जिस कारण फरख्खसियर ने 13 फरवरी, 1713 को मुहम्मद अमीन ख़ान को दूसरे बख्शी के पद पर नियुक्त किया।

फरख्खसियर द्वारा अपने पिता के कातिल को माफ करना

अब्दुस समद ख़ान बादशाह जहांदार ख़ान का वफादार था। बहादुर शाह की मौत के पश्चात 3 मार्च, 1712 को हुई लड़ाई में अजीमुन शाह फरख्खसियर के पिता को जंग में मारने में प्रमुख हाथ था। जहांदार ख़ान ने उसे इसके बदले 'बहादुर' का खिताब भी दिया था। छह हजारी मनसब भी दिया था। वह फरख्खसियर के पहली श्रेणी के दुश्मनों में आता था।26 जनवरी, 1713 को मुहम्मद अमीन ख़ान बहादुर बादशाह के पास आया। उसे यकीन दिलाया और कहा कि अब्दुस समद ख़ान जो मुहम्मद अमीन ख़ान का समधी था अपने गुनाहों की माफी मांगना चाहता है। उसने यकीन दिलाया कि अब्दुस समद ख़ान बादशाह का गुलाम बनकर रहेगा। बादशाह ने उसे यकीन दिलाया कि वह अब्दुस समद ख़ान को क्षमा कर देगा। उसने अब्दुस समद ख़ान को अगले दिन अकेले मिलने के लिए कहा। हुक्म पहुंचने पर 27 जनवरी को अब्दुस समद ख़ान बादशाह फरख्खसियर के सामने पेश हुआ और अपने जुर्मों की माफी मांगी। बादशाह ने उसका माफीनामा कबूल कर लिया और उसे रेशमी पोशाक भी भेंट की।[204]

अब्दुस समद खान को माफी देकर सिक्खों के पीछे भेजना

फरवरी, 1713 को फरख्खसियर ने अब्दुस समद ख़ान को जम्मू का फ़ौजदार नियुक्त किया और सिक्खों के विरूद्ध सख्त कार्यवाही करने की हिदायत दी। 12 फरवरी को उसे जालंधर दोआब का फ़ौजदार भी बना दिया। 14 फरवरी को उसे लाहौर की सूबेदारी पर भी बहाल कर दिया गया और शर्त रखी कि वह बंदा सिंह बहादुर से सढ़ौरा और लोहगढ़ किले छीन ले। अब्दुस समद ख़ान अब सिक्खों के विरूद्ध मुहिम में चल पड़ा।[205]

---

204 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 26 और 27-01-1713 की प्रविष्टि

205 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 11-12 और 14-02-1713 की प्रविष्टि

फरख्खसियर को सिक्खों के बारे में सूचनाएं मिलनी

10 मार्च, 1713 को फरख्खसियर को बताया गया कि सिक्ख फ़ौज के द्वारा सरकार सरहिंद सभी परगनें और गांवों में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के अफसर बैठे हैं और उनके हुक्म अनुसार ही यहां पर शासन चल रहा हैं। जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान फ़ौजदार सरहिंद सिक्खों का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। उल्टा फ़ौजदार सरहिंद के सिपाही लोगों का दाना और जानवर ज़बरन छीन कर ले जाते थे। सिक्ख फ़ौजों ने कभी भी आम जनता को तंग नही किया। मुग़लों के जुल्म की वजह से सरहिंद के मुस्लमान वहां से भाग रहे थे।[206] फरख्खसियर को बताया गया कि बंदा सिंह ने पहाड़ की गुफाओं जोकि हिंदूस्तान के इलाकों और हकूमत से बाहर थी में से निकल कर लोहगढ़ को दुबारा मज़बूत कर लिया है। उस इलाके की बस्तीयों पर कब्ज़ा कर लिया है। उसका लश्कर रात को जाकर बीस से तीस कोस 60 से 90 किलोंमीटर तक मुग़ल लशकर में लूट-मार करते हैं। जो भी हमलावर उनको मिलता है उसका कत्ल कर देते हैं। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[207] लिखता है कि इस अनूठी घटना के पश्चात् बादशाह दहल गया और इतना वहमी हो गया कि लिखा नहीं जा सकता। इस अवसर पर कुतुब-उल-मुल्क, सैयद-हसन-अली- अब्दुला-ख़ान, अमीर-उल-उमरा सैयद हुसैन अली ख़ान, हामिद ख़ान, समसाम- उद्-दोला और अन्य बड़े सरदार उपस्थित थे। इस पर फरख्खसियर ने लाहौर के सूबेदार अब्दुस समद ख़ान को बंदा सिंह के विरूद्ध मुहिम पर भेजने का फैसला किया। अखबाराति -दरबारे-मुअल्ला मुताबिक 21 मार्च, 1713 को फरख्खसियर ने अमीर-उल-उमरा सैयद हुसैन अली ख़ान के द्वारा अब्दुस समद ख़ान को ख़त लिखवाया गया कि वह सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान के साथ मिलकर बंदा सिंह पर हमला करें।

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[208] के अनुसार बादशाह ने अपने हुक्म में यह भी लिखवाया था कि महान हकूमत के मददगार, बड़ी सल्तनत के विशेष शख्स, बड़े सरदारों के सरदार, महान रईसों के रईस सरदार, मुकम्मल दाने शख्स और पसन्दीदा सुरत वाला अबसुद समद ख़ान, बादशाही रहमतों का भागी बनकर जान ले कि वह शाही हुक्म के पहुंचते ही बिना किसी संदेह के कहर के मारे जरनैल बंदा सिंह बहादुर के खिलाफ मैदाने जंग के लिए निकल जाए। इनाम ख़ान बहादुर के नेतृत्व में फतेहमन्द फ़ौजें जिसमें सात हज़ार मुगल सवार और दस सरदार, जिनका नामवर विवरण सूची में अंकित किया गया है। हकूमत के उस काबिले-ऐतबार शख्स (अब्दुस समद ख़ान) की फ़ौजी सहायता के लिए रवाना कर दी हैं। हकूमत पर कुर्बान होने के लिए जरूरी बात यह है कि वह एक दूसरे की नेक सलाह के साथ कार्य करें। अकेले-अकेले, छोटे-बड़े का सम्मान ऐसे करें कि किसी को कोई शिकायत न हो। उस जमात (मुग़ल फ़ौज) का वेतन सरहिंद के खजाने से मुकर्रर किया गया। इस सम्बन्धित भी तसल्ली रख कर उपरोक्त मुहिम को

---

206 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 10-03-1713 की प्रविष्टि

207 *अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

208 *अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

कामयाब करने के लिए पूरी कोशिश करें। वह जान लें कि मुहिम के पूरा होने पर उनका पूरा सम्मान होगा व शाही बखशीशों का और भी अधिक हकदार होगा।[209]

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी अनुसार अमीर-उल-उमरा सैयद हुसैन अली ख़ान को भी आदेश हुआ कि वह सभी शाही फ़ौजों में से बहादुर और शानो-शौकत वाले इनाम ख़ान को फतेहमन्द फ़ौजों के साथ अब्दुस समद ख़ान की फ़ौजी मदद के लिए रवाना करे। उसके साथ जाने के लिए नामजद किये 13 जरनैल थे। जिनका नाम है खुशकिस्मत जानश ख़ान, दौलत बेग ख़ान हजारा, इरादत ख़ान, अरब अली ख़ान, मीर हुसैनी ख़ान, सैयद ज्वाद ख़ान बुखारी, मिर्जा मुहम्मद शफीय बरलास, नाज़र ख़ान खेशगी, वलीदाद ख़ान शेरजाद, शेर ख़ान, मिर्जा बेग तुर्क, मीर मुस्तफा और जहूर उला ख़ान।[210]

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का नाहन पर हमला

मार्च, 1713 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ के क्षेत्र में मौजूद थे। इन्हीं दिनों उन्हें पता चला कि नाहन का राजा मुग़लों के साथ सौदेबाजी करके आया था। उस (राजा नाहन) ने सिक्खों के विरूद्ध मुहिम शुरू कर दी थी। नाहन के राजा को सुधारने के लिए बंदा सिंह बहादुर ने 5-6 हज़ार सिक्खों को साथ लेकर डाबर लोहगढ़ से नाहन की ओर कूच कर दिया। जब नाहन के राजा को इसकी ख़बर मिली तो वह शहर से भाग गया और बंदा सिंह बहादुर ने वहां डेरा लगा लिया। नाहन के वासियों ने जरनैल बंदा सिंह से माफी मांगी व वफादारी के साथ रहने का आश्वासन दिया। इसके बाद जरनैल बंदा सिंह बहादुर व साथी किला लोहगढ़ में वापिस आ गए।[211]

सढ़ौरा की तीसरी लड़ाई

नाहन से लोहगढ़ वापिस आने से एक सप्ताह पश्चात जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने दस हज़ार फ़ौजी सढ़ौरा भेज दिए। सिक्ख फ़ौज किला लोहगढ़ के साथ साथ सढ़ौरा के किले में भी मज़बूती से बैठे थे। मोर्चा लगाया हुआ था। अब उन्होंने सढ़ौरा ही नहीं उतर भारत के सभी परगनों में अपना हुक्म चलाना शुरू कर दिया था। इस दौरान जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान फ़ौजदार सरहिंद ने इलाके को सिक्खों से महफूज़ रखने की बहुत कोशिश की परन्तु सिक्खों की ताकत के आगे वह टिक न पाया।[212] सन् 1713 में सढ़ौरा को घेरा डालने वाली मुग़ल फ़ौजों की संख्या कई हज़ारों में थी। अप्रैल, 1713 में कम से कम 7000 मुग़ल घुड़सवार सढ़ौरा पहुंचने के लिए शाहबाद खड़े थे। मुग़ल जरनैलों के अनुसार सिक्खों का मुकाबला करने के लिए इतनी मुग़ल

---

209 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 21-03-1713 की प्रविष्टि

210 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

211 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 16-03-1713 की प्रविष्टि

212 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 02-04-1713 के प्रविष्टि

फ़ौज काफी नहीं थी और अधिक फ़ौज मंगवाए जाने की मांग चल रही थी।[213] 22 जून, 1713 को अब्दुस समद ख़ान, जैन-उद्-दीन ख़ान और इनाम ख़ान, तीनों ने मिलकर बड़ी फ़ौज लेकर सढ़ौरा का किला घेरने की तैयारी की परन्तु लोहगढ़ के अग्रिम 52 किलों में से सिक्ख फ़ौज बार-बार इस फ़ौज पर हमला कर रही थी। शाहबाद से सढ़ौरा पहुंचना मौत से खाली नही था।[214]

सढ़ौरा नगर का उल्लेख करते हुए मुहम्मद कासिम औरंगाबादी लिखता है कि सढ़ौरा में पक्की ईंटों की बनी हुई अनेक इमारतें थी और यह एक बहुत बडा शहर था जिसमें सैयद मुस्लमान भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ मुग़ल फ़ौज के खिलाफ साथ दे रहे थे। जरनैल बंदा सिंह ने इस कस्बे के आसपास के सभी मुग़ल कोतवालियों को नष्ट कर दिया था। औरगांबादी के अनुसार सढ़ौरा का किला इतना मजबूत था कि तोप के गोलों से भी नुक्सान नहीं किया जा सका था। दीवारों में सेंध भी नहीं लगाई जा सकती थी।[215] मुग़ल फ़ौज का सढ़ौरा को जीत पाना बिल्कुल ना मुमकिन सा हो गया था।

अखबाराति-दरबारे-मुअल्ला के अनुसार 22 जून, 1713 को सिक्ख फ़ौज ने अचानक मुग़ल फ़ौज पर शाहबाद के नज़दीक हमला कर दिया।[216] इस लड़ाई में इनाम ख़ान और उसका भाई बका बेग ख़ान मारे गए। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी बताता है कि रात के समय सिक्खों ने फिर हमला किया और इस हमले में सैकड़ों मुग़ल फ़ौजी मारे गए और दूसरी ओर 152 सिक्ख फ़ौजी भी मारे गए।[217] मुहम्मद कासिम औरंगाबादी एक अन्य लड़ाई का ज़िक्र करता है जिसकी जानकारी इस ऊपरी लड़ाई के साथ मिलती है। उसके अनुसार यह लड़ाई 2 घड़ियां तकरीबन 50 मिनट हुई थी। इसमें मुग़ल फ़ौज में भगदड़ मच गई और रात के अंधेरे में लड़ाई लड़ने के लिए सिक्ख फ़ौज पूर्ण रूप से निपुण थी। इस हमले को आज की भाषा में गुरील्ला फाईटिंग बोलते हैं। ज्यादातर मुग़ल फ़ौज की नियुक्ति नई थी ताकि जोश के साथ जंग लड़ सकें परन्तु लोहगढ़ क्षेत्र में लड़ना उनके लिए लगभग असंभव था। इसलिए यह मुग़ल फ़ौज शाहबाद से आगे नहीं बढ़ पा रही थी और दूसरी ओर सिक्ख फ़ौज मुग़ल लशकर पर निरंतर हमला करके भारी नुकसान पहुंचा रही थी। दिन-प्रतिदिन मुग़ल फ़ौज की संख्या कम होने लगी। रसद और हथियारों की कमी से कठिनाई ओर बढ़ गई।

भाई फतेह सिंह की शहीदी

जब सढ़ौरा की लड़ाई चल रही थी तो इधर भाई फतेह सिंह के नेतृत्व में सिक्ख फ़ौज जम्मू-कश्मीर के इलाकों में मुग़लों पर हमला कर रही थी। अगस्त,1713 के दूसरे सप्ताह

213 *जेठमल द्वारा जयपुर के राजा जय सिंह सिवाई को अप्रैल 1713 में लिखी चिट्ठी, सिरियल नंबर 62, अर्जदाशत नंबर 145)

214 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 27 और 28-06-1713 की प्रविष्टि

215 *अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

216 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 28 जून, 1713 की प्रविष्टि

217 *अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 68

सिक्ख फ़ौजों ने भाई फतेह सिंह के नेतृत्व में बलोह के इलाके में मुहिम शुरू की।[218] सूबा कश्मीर के नाज़िम सादात ख़ान के नायब (डिप्टी) मुहम्मद अली ख़ान की फ़ौज ने बलोह के राजा दीनदार की फ़ौज़ के साथ मिलकर सिक्ख फ़ौजों के साथ लडाई लड़ी। सिक्ख फ़ौजियों ने मुग़लों के खिलाफ भारी जंग लड़ी जिसमें सैकडों मुग़ल सैनिक मारे गए। इस जंग में 2000 मुग़ल सिपाही और एक हज़ार सिक्ख भी भाई फतेह सिंह सहित जिसको जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने समाना का सूबेदार बनाया था शहीद हो गए। भाई फतेह सिंह का सिर काट कर कश्मीर प्रांत के नायब (डिप्टी) मुहम्मद अली ख़ान को भेजा गया। इसकी ख़बर बादशाह फरख्खसियर को 16 अगस्त,1713 को मिली। उसने इस नायब सूबेदार का मनसब 500 व्यक्ति और 100 सवार अधिक कर दिया।[219]

मुग़ल फ़ौज ने लोहगढ़ क्षेत्र से अगस्त, 1713 में पीछे हटने का फैसला लिया और दोबारा लोहगढ़ पर हमला 4 महीने के पश्चात 13 नवंबर, 1713 को किया गया।[220] इन दोनों फारसी के स्त्रोतों में मारे गए मुग़ल फ़ौजियों की संख्या नहीं बतायी। परन्तु भट्ट वही के अनुसार हज़ारों की संख्या में मुगल फ़ौजी मारे गए थे। भट्ट वही के अनुसार शहीद होने वाले सिक्खों में भाई मनी सिंह के तीनों पोत्र भाई अलबेल सिंह व मोहर सिंह (दोनों पुत्र भाई उदय सिंह) और सेना सिंह (पुत्र भाई चित्र सिंह) भी शामिल थे। सढ़ौरा के क्षेत्र पर एक दिन के हमलों का ज़िक्र करता हुआ मुहम्मद कासिम औरंगाबादी लिखता है कि लश्कर के बहादुरों ने सिक्ख फौजों की गढ़ियों की मजबूती की परवाह न करते हुए हमला कर दिया। एक मुग़ल टुकड़ी भोज राज में स्थापित सिक्ख किले पर हमला करने के लिए भेजी गई और लोहगढ़ के अग्रिम किले रातूड़ और रगोंली के बीच में यह सारी मुग़ल टुकड़ी को मार गिराया गया।

एक अन्य मुग़ल टुकड़ी मिर्जा अब्दुला बख्शी जो इनाम ख़ान के सबंधियों में से था भी 16 मुग़ल जरनैलों के साथ लोहगढ़ क्षेत्र में शहीद हो गया और सैकड़ों मुग़ल सैनिक मारे गए। ऊंचे रुतबे वाला सैयद हासम ख़ान जो अब्दुस समद ख़ान का काबले-ऐतबार साथी था 'फतेहमन्द लश्कर की निगरानी के लिए आगे बढ़कर लड़ने लगा था। वह भी सिक्ख फ़ौज के द्वारा मार गिराया गया।

15 नवंबर, 1713 को मुग़ल फ़ौजें अपने मोर्चे संभालते हुए लोहगढ़ किले की तरफ फिर से बढ़ने लगी लेकिन कोई बड़ी कामयाबी हाथ नहीं लगी। उधर बादशाह को झूठी ख़बरे भेजी जा रही थी कि मुग़ल फ़ौज लोहगढ़ किले के नजदीक पहुंच गई है और मुग़ल फ़ौजों ने 700 डंडों वाली सीढ़ी बनाई है और सढ़ौरा के किले की दीवार कूदने की योजना बनाई गई। परन्तु कामयाब न हो सके।30 नवंबर, 1713 को बहुत बारिश हुई और सारा दिन और रात को भी बारिश पड़ती रही। जिस कारण मुग़ल फ़ौज की बदहाली और बढ़ गई। रात के समय कुछ

218 *अखबाराति-दरबारे-मउला 16 अगस्त, 1713 की रिपोर्ट अनुसार

219 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 16-08-1713 की प्रविष्टि

220 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 52

सिक्ख फौजों ने शाहबाद के नजदीक मुग़ल फौजों पर फिर से हमला कर दिया और मुगलों की एक तोप को कब्ज़े में ले लिया। उसे लेकर जाने की कोशिश की परन्तु वह कामयाब न हो पाए। क्योंकि तोप काफी भारी थी। बिना बड़े जानवरों के सहारे से हिलाया नही जा सकता था। इसके पश्चात सिक्ख लोहगढ़ के अग्रिम किलों की ओर भाग गए। बाद में मुग़ल जरनैलों ने जवानों को बहुत पैसे देकर यह तोप दल-दल में से निकलवाई क्योंकि बारिश होने के कारण सिक्ख फ़ौज इस तोप को कुछ दूर तक लेकर जाने में कामयाब हुए और रास्ते में दल-दल होने के कारण दल-दल में फेंक कर भाग गए। इस तोप को बहुत ही मुश्किल के साथ इसे फिर से ठिकाने पर लाया गया। एक अलग ऐतिहासिक स्त्रोत बताता है कि सिक्खों ने इस मुग़ल तोप का एक गोला मुग़ल सिपाहियों पर चला दिया जिसमें 8 मुग़ल जवान मारे गए। मुग़लों ने बहुत मुश्किल के साथ दोबारा इस तोप पर कब्ज़ा किया।[221]

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी लिखता है कि कोई दिन ऐसा नहीं था कि सिक्ख गढ़ियों से निकल कर मुग़ल मोर्चो पर हमला नहीं करते थे। तलवारों और बन्दूकों के साथ भीष्ण जंग करते थे। एक दिन आधी रात के समय पर सिक्ख फ़ौज ने गढ़ी से निकले अब्दुस समद ख़ान के मोर्चों पर अचानक धावा बोल दिया और गजब की दहशत मचा दी। दोनों गुटों की तोपों, रहकलां और गोलों की आवाजें बिजली की कड़क की तरह गरजने लगी। सिक्ख फ़ौज ने खूब तलवारबाज़ी की और भारी मात्रा में मुग़ल फ़ौजी मार गिराए। मुग़ल फ़ौज की सहायता के लिए सैयद हाशम ख़ान और मीर बाबा ख़ान अपने पुत्रों, भाईयों और साथियों सहित वहां पहुंचे। वीरता के साथ लड़ाई लड़ी। इस लड़ाई में 200 से ज्यादा सिक्ख मारे गए और बाकी बचे मुग़लों का नुकसान करके लोहगढ़ की गढ़ियों की तरफ निकल गए।[222]

मुग़ल फ़ौजों ने सढ़ौरा के किले को घेरने की फिर से योजना बनाई परन्तु सिक्ख तीरों और कमानों के साथ निकलते थे। आगे बढ़ रही मुग़ल फौज़ के लिए बाधा उत्पन्न करते थे। मुग़लों के हथियार, रसद, घोड़े इत्यादि भारी मात्रा में सिक्ख फ़ौज के द्वारा कब्ज़े में ले लिए गए थे। इसके अतिरिक्त बचे हुए घोड़ों के लिए घास की काफी मुश्किल सामने आई। गश्त लगाते हुए मुग़ल फ़ौजी आमतौर पर सिक्ख फ़ौज के आमने-सामने कई बार आते थे। परन्तु अपनी जान बचाने के लिए मुग़ल फ़ौजी सिक्खों को अनदेखा करते थे। मुग़ल फ़ौजियों के पास इतना साहस नहीं था कि वह घोड़े भगा कर सिक्खों को चुनौती दे सकें। दूसरी ओर सिक्ख हमेशा मुग़लों को चुनौती देते थे। उन पर हमले करते थे। ऐसे प्रतिदिन 5-7 मुग़ल फ़ौजी मारे जाते थे। दिसंबर के आरंभ में 'इस्से ख़ान' के नेतृत्व में नई फ़ौज आई और इसके पश्चात उन्होंने चौथी तरफ भी 500 घुड़सवार और 200 बंदूकची लगा दिए थे। वह सढ़ौरा किले से पहले सरांवा किले के बहुत निकट पहुंच गए थे। गढ़ी पर आने-जाने वाले सभी रास्ते बंद करने की कोशिश की परन्तु मुग़ल

---

221 *जेठमल द्वारा जयपुर के राजा जय सिंह सवाई को 6 अगस्त, 1713 को लिखी चिट्ठी, सिरियल नंबर 63, अर्जदाशत नंबर 139

222 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

फ़ौज केवल गढ़ी के आस-पास गस्त लगाती रही और हमला नहीं किया।[223]

मुग़ल जासूसों के मुताबिक सढ़ौरा के किले में कुल 10,000 सिक्ख मौजूद थे। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[224] के अनुसार इनमें से 691 एक ही दिन में मारे गए थे।152 एक अन्य दिन मारे गए और तीसरी लड़ाई में 200 अन्य सिक्ख मारे गए थे। मुहम्मद कासिम के अनुसार 1043 सिक्ख तो इस दौरान ही मारे गए थे। 31 दिसंबर, 1713 को जब बहुत बारिश पड़ रही थी। 500 पैदल और 500 घुड़सवार सिक्ख किले में आ गए थे।[225] इसके उपरांत भी लड़ाई चलती रही। जिसमें भी अनेक सिक्ख मारे गए होंगे। अगर यह आंकड़े सही हैं तो सढ़ौरा के किले पर मुग़ल फ़ौज को कब्ज़ा काफी पहले कर लेना चाहिए था। पहले बहादुर शाह फिर जहांदार शाह और अब बादशाह फरख्खसीयर का भेजा हुआ जरनैल अब्दुस समद ख़ान 9 महीने के प्रयास के उपरांत भी सढ़ौरा के किले को नही जीत पाया।

हालांकि बादशाह फरूखशीयर को झूठी खबर निरंतर भेजी जा रही थी कि मुग़ल फ़ौज ने सढ़ौरा के किले पर कब्ज़ा करने के पश्चात अब्दुस समद ख़ान ने इस किले को तबाह करना शुरू कर दिया जिससे सिक्खों का यह डिफेंस (रक्षा क्षेत्र) सदा के लिए समाप्त हो जाये।[226] बादशाह को बताया गया कि सढ़ौरा का किला तबाह कर दिया गया है। इस मौके पर मारे गए 600 सिक्खों के सिर कटवा कर ख़ान ने बादशाह को पेश किये। संभव है सन् 1713 में मारे गए सिक्खों की संख्या 600 के करीब रही होगी। जैसा कि मुहम्मद कासिम और औरंगाबादी एक लड़ाई में 691 की तस्वीर प्रस्तुत करता है। यह सढ़ौरा में मारे गए सिक्खों की कुल संख्या नही हो सकती है। 27 दिसंबर, 1713 को बादशाह ने अब्दुस समद ख़ान की खूब तारीफ की और उसे खास रेशमी पोशाक भेंट की। मुहम्मद कासिम के अनुसार सढ़ौरा किले पर साढ़े सात महीने तक घेरा पड़ा रहा। वह लिखता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इसका नाम 'अजायबगढ़' रखा हुआ था।[227] क्योंकि लेखक मुग़ल राज का करींदा था और मुगलों की खिलाफत करना उसकी नौकरी का हिस्सा नहीं था। इसलिए वह मुग़लों के हक में झूठा इतिहास लिखता रहा।

कुछ दिनों बाद मुग़ल जरनैल अब्दुस समद ख़ान को पता चला कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर पहाड़ियों के रास्ते भारी सिक्ख फ़ौज के साथ लाहौर पर हमला करने के लिए निकल पडा है। मुग़लों की रणनीति से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि वह सढ़ौरा और लोहगढ़ किले को जीतना उनका लक्ष्य नही था। उनका लक्ष्य केवल एक था कि वह किसी तरीके से जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ लें। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पकड़ में आने के बाद पूरी सिक्ख क्रांति पर अकुंश लगाया जा सकता था और उसके बाद ही सिक्ख किलाबंदी चाहे वह सढ़ौरा की हो या लोहगढ़ की हो पर कब्ज़ा किया जा सकता था।

---

223 *जेठमल द्वारा राजा जयपुर को 6 अगस्त, 1713 को लिखी चिट्ठी, सीरियल नंबर 63, अर्जदाशत नंबर 139. डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित बंदा सिंह बहादुर बारे राजस्थानी दस्तावेज़

224 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

225 *जेठमल द्वारा जयपुर के राजा जय सिंह सिवाई को 6 अगस्त, 1713 के दिन लिखी चिट्ठी, सीरियल नंबर 63, अर्जदाशत नंबर 139

226 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 24-09-1713 की रिपोर्ट

227 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 64-67

अध्याय 12

लोहगढ़ किले पर शाही फ़ौज का तीसरा हमला

सढ़ौरा का किला जोकि लोहगढ़ किले से 20 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित था और इस पर तीसरे हमले का ब्यौरा अध्याय-11 में विस्तारपूर्वक दिया गया है। मुग़लों के कुछ ऐतिहासिक स्त्रोत बताते हैं कि मुग़ल फ़ौजों ने सढ़ौरा पर कब्ज़ा कर लिया है। अब उन्होंने लोहगढ़ पर हमला करना है। इस कारण उसने हथियारों के अतिरिक्त बाकी काफी सामान जुटाना शुरू किया ताकि लोहगढ़ पर मजबूती से हमला किया जा सकें। मुग़ल लेखक केवल बादशाह को खुश करने के लिए झूठी खबरे बादशाह तक पहुंचा रहे थे। फारसी के स्त्रोतों में विरोधाभास भी है जिससे साफ पता चलता है कि मुग़ल फ़ौज कभी भी लोहगढ़ के नजदीक नही पहुंच पाई। जेठमल ने जयपुर के राजा जय सिंह सवाई को अप्रैल, 1713 में चिट्ठी लिखी। जिसका सिरियल नंबर 62, अर्जदाशत नंबर 145 था। जेठमल ने जयपुर के राजा को 27 और 29 अगस्त, 1713 को लिखे ख़त सिरियल नंबर 64, अर्जदाशत नंबर 161,बंदा सिंह बहादुर के बारे राजस्थानी दस्तावेज़ डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों के अनुसार सढ़ौरा जीतने के उपरांत अब्दुस समद ख़ान लोहगढ़ पर हमला करना चाहता था। परन्तु मुग़ल फ़ौज ने लोहगढ़ किले जीतने में असमर्थता दिखाई। क्योंकि वह अगस्त, 1713 में इस किले की ओर बढ़ने वाली मुग़ल फ़ौज की टोलियों का परिणाम जान चुके थे। इस कारण ख़ान ने लोहगढ़ पर हमला करने का फैसला मुलतवी कर दिया।

21 अगस्त, 1713 को मुग़ल फ़ौजों की एक अग्रिम टोली लोहगढ़ के पहाड़ों की ओर बढ़ी थी। यह फ़ौजी बंदा सिंह की फ़ौजों के निशाने पर आ गए थे। उनका बहुत नुक्सान हुआ था। कम से कम 400 मुग़ल फ़ौजी मारे गए व 2000 जख्मी हुए और 35 सिक्ख भी मारे गए। मुग़ल स्त्रोतों अनुसार सिक्ख फ़ौज बचकर इस हमले में भाग खड़ी हुई। परन्तु वह मुग़लों के 100 घोड़े, 30 ऊंट, 40 भैंसें, 200 दूसरे जानवर भी अपने कब्ज़े में लेकर वहा से चले गए। इन्हीं दिनों मुग़ल फ़ौजों के एक जरनैल मोहकम खान की मौत की ख़बर ने मुग़लों में दहशत फैला दी। इसके साथ बंदा सिंह के साथियों के हौंसले बढ़ गए और वह अधिक बहादुरी के साथ आगे बढ़ने लगे। ऐसे ही 29 अगस्त, 1713 को 200 मुग़ल सिपाही गश्त कर रहे थे। जब उन्होंने सिक्ख आते देखे तो वह भाग गए परन्तु उनका प्रमुख ज़मींदार बलोच ख़ान लड़ता हुआ मारा गया। चार अन्य मनसबदार भी मारे गए। यह ख़बरें मुग़लों को लोहगढ़ पर शीघ्र ही हमला करने से रोकने का कारण बनी रही थी। 12 अक्तूबर, 1713 को फरख्खसियर बादशाह को भी बताया गया कि बंदा सिंह डाबर (लोहगढ़) में बैठा है। उसने किले की मुरम्मत करवा ली है और

वह जंग के लिए तैयारी कर रहा है।[228]

इरवन पत्र मुग़लज, पृष्ठ 310 में फरख्खसियरनामा और कामवर ख़ान के तजकिरातुल सलातीन-ए-चगत्ता का हवाला देते हुए लिखता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ किले को अद्भुत प्रणाली द्वारा मजबूत किया हुआ था। जिस से दुश्मन की फ़ौज को लोहगढ़ किले के शिखर तक पहुंचने के लिए रास्ते में 52 मोर्चों पर लड़ना पड़ सकता था। सभी 52 गांवों में किला रूपी मोर्चाबंदी की हुई थी और हर जगह तोपें रखी हुई थी। यह सभी सुरक्षा चौंकीयां एक-दूसरे को सुरक्षा प्रदान करती थी। किले की ओर जाने वाले को इन चौंकियों की गोलाबारी का सामना करना पड़ना था। लोहगढ़ पर कब्ज़ा करने से पहले 52 लड़ाईयां लड़नी पड़ती थी। कुछ दिन रुकने के उपरांत अक्तूबर 1713 के अंतिम दिनों में अब्दुस समद ख़ान ने लोहगढ़ की ओर कूच कर दिया। उसने यह रास्ता 14 दिनों में तय किया। परन्तु उन्होंने किले पर हमला नहीं किया। इतनी देर में जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान (फ़ौजदार सरहिंद), इनाम ख़ान और जकरिया ख़ान (पुत्र अब्दुस समद ख़ान सूबेदार लाहौर) भी आ मिले। इन्होंने मिलकर 13 नवंबर, 1713 को तोपों के साथ किले पर हमला किया। इस लड़ाई में अब्दुस समद ख़ान का बख़्शी हाजी कमाल और अन्य बहुत सारी मुग़ल फ़ौजी मारे गए और सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान का भतीजा अबू-उल-मुकर्रम, फतेह ख़ान और अन्य अनेकों उच्च अधिकारी और जरनैल बुरी तरह जख़्मी हुए।[229]

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी इस हमले का उल्लेख ऐसे करता है लगता है कि फारसी भाषा से अनुवाद करते हुए उसकी लिखित के दो पन्ने आगे-पीछे हो गए थे। उसमें सढ़ौरा और लोहगढ़ की लड़ाई का हाल मिलता-जुलता नजर आता है। कुछ दिनों उपरांत मुग़ल फ़ौज लोहगढ़ पहुंच गई और चार दिनों तक बंदूकों और राकेटों के साथ जंग होती रही। फारसी स्त्रोतों के अुसार फतेहमन्द लश्कर के बहादुर जानलेवा मैदान-ऐ-जंग में शहीद हो गए क्योंकि कहर के मारे हुए बंदा बहादुर का किला बहुत ऊंचाई पर था। उसके आसपास वृक्षों के झुण्ड़ व पत्थरों के इलावा गहरी गुफायें भी थी। इस कारण पंखों वाले यानि फरिश्तों की ताकत नहीं थी कि उस जंगल में उड़ान भर सके फिर मनुष्य और घोड़े की क्या हिम्मत है कि उस खतरे के साथ भरी वादी को पार कर सके। कोई 15-16 टीले नदी के सामने किले के दाहिने और बायें हाथ थे। ख़ान ने इतनी गोलाबारी की थी कि अगर सोचा जाये तो फरिश्ते के पंख भी जल-बल रहे थे। सारा पहाड़ और जंगल गोला बारी के कारण जलना शुरू हो गया और तबाही के कारण उस जंगल के पक्षी और जंगली जानवर किसी और बियाबान की ओर चले गए। पर बदबख्त यानि बंदा सिंह अपने टिकाने से भाग कर बर्फी राजे यानि नाहन राजा की सीमा जोकि हिन्दूस्तान की सल्तनत से

228 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 12-10-1713 की प्रविष्टि
229 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 16-11-1713 की प्रविष्टि

बाहर है में जा घुसा। नीचे लोहगढ़ की पहली पहाड़ी की जीत के पश्चात का दृश्य है। हकूमत के भरोसे योग और बादशाह के निकटतम अब्दुस समद ख़ान बहादुर नुसरत जंग ने घोड़े, हाथी, तंबू, तोपखाना व अन्य सामान इत्यादि लोहगढ़ ही छोड़ दिया। अन्य बढ़िया बंदूकों और जंग जूआं को यानि ऊंची पहाड़ियों पर साथ ले गया। मोहमम्द कासिम औरंगाबादी द्वारा लिखा गया यह वाक्य इस सच प्रतित नहीं होता क्योकि वह लोहगढ़ के 52 अग्रिम किलों को भेदते हुए भारी-भरकम तौपे लोहगढ़ किले तक कैसे पहुंची। इस बारे लेखक ब्यौरा नहीं देता। आज भी यदि सड़क ना हो तो भारी-भरकम चीज की यातायात करना इस इलाके में संभव नहीं है। उस समय तो ज़मीन और भी ऊबड-खाबड थी। सिक्ख फ़ौज़ें मुग़ल फौज़ को इस क्षेत्र में आगे बढने नहीं दे रही थी। यह संभव ही नहीं है कि मुग़ल तोपे लोहगढ़ किले के नजदीक पहुंची है।

अन्य फारसी स्त्रोतों के अनुसार अब्दुस समद ख़ान स्वयं लोहगढ़ किले में घुस गया। सिक्ख फ़ौज ने डरकर लोहगढ़ किला खाली कर दिया। कोई मुग़ल फ़ौजी ऐसा नहीं था जो लोंग, इलायची, अच्छी चीजें, बानात, कीमखाब, लाहौर के बुने हुए कपड़े और लाचियों की गठरियां बांधकर, सोना-चांदी, बर्तन, गुलाम व जानवर लोहगढ़ किले से न लाया हो।[230] एक फारसी का स्त्रोत यह भी दर्शाता है कि अब्दुस समद ख़ान एक डरपोक किस्म का ईसान था और वह केवल मुग़ल फौजियों को शाहबाद से लोहगढ़ की तरफ बढ़ने के लिए आदेश दे रहा था। स्वंय सुरिक्षत स्थान पर बैठा हुआ था। मुग़ल जरनैलों का सही नेतृत्व ना होने के कारण प्रतिदिन कई मुग़ल सैनिक मारे जा रहे थे। इस तरह फारसी के स्त्रोतों में आपस में विरोधाभास है।

कुछ ऐतिहासिक स्त्रोत यह दर्शाते है कि कुछ दिन की लड़ाई के पश्चात मुग़ल फ़ौजों ने लोहगढ़ का कुछ हिस्सा कब्ज़े में ले लिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ऊपर वाली पहाड़ियों में थे। मुग़ल फ़ौजों के लिए वहां जाना आसान नहीं था और बंदा सिंह बहादुर ने बच कर निकल तो जाना ही था। इसलिए यह कहना कि मुग़लों ने सारे लोहगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया था सही नहीं है। उन्होंने तो कुछ पहाड़ियों पर ही कब्ज़ा किया था। पहाड़ियों का प्रथम तल कब्ज़े में लेने के उपरांत मुग़ल जरनैलों को आश्चर्य हुआ कि ऊपर वाली पहाड़ियों में से कोई हमला क्यों नहीं हो रहा था। वे समझ गए थे कि मुग़ल फ़ौजों को लोहगढ़ की लड़ाई में उलझाकर बंदा सिंह बहादुर और उसके सभी प्रमुख जरनैल निकल गए हैं। वह तो बंदा सिंह बहादुर को गिरफ्तार करने या मारने आऐ थे। बंदा सिंह बहादुर के बचकर निकल जाने के कारण मुग़ल एक बार फिर हार गए। दरअसल इतिहासकारों द्वारा लोहगढ़ को ग्राउड जीरो से नही देखा गया और ना ही लोहगढ़ के किलेबंदी का कभी सर्वे किया गया। इसलिए इतिहासकार केवल लोहगढ़ किले को लेकर ख्याली पुलाव पका रहे हैं। वास्तविकता में लोहगढ़ किले पर घेरा डालने और जीत लेने के लिए मुग़ल फ़ौज के पास कोई समाधान नही था।

230 *मुहम्मद कासिम औरंगाबादी, अहवाल-उल-खवाकीन, पन्नें 68-69

जरनैल बंदा सिंह बहादुर सन् 1713 में लोहगढ़ से क्यों निकल कर गए?

प्रश्न यह है कि उस समय पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पास न तो अनाज की कमी थी और न ही हथियार समाप्त हुए थे। फिर भी बंदा सिंह बहादुर बिना लड़ाई किये लोहगढ़ से क्यों चले गए? इसका जवाब यह है कि बंदा सिंह बहादुर एक युद्ध नीति पर चल रहे थे। थियेटर-ऑफ-वॉर को जानबूझ कर बदल रहे थे। ताकि नीति से मुग़ल फ़ौज को भगा-भगा कर थकाया जा सकें। मुग़ल राज का खजाना खाली किया जा सकें। नीति बिल्कुल कारगर थी। जिसके चलते हुए मुग़ल फ़ौज थक चुकी थी और संख्या में भारी गिरावट भी आई। क्योंकि काफी मात्रा में मुग़ल फ़ौजी मार दिए गए थे। इसके अतिरिक्त मुग़ल फौजियों के वेतन और हथियार, आहार और अन्य खर्चों में मुग़ल खजाना बहुत तेजी से खाली हो गया। इसके अलावा पहले भी व्यक्त किया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर की रफतार का मुकाबला करना मुग़ल फ़ौज के बस की बात नही थी। खासकर जब वह पहाड़ों के रास्ते आवागमन करते थे। एक जगह पर स्थिर ना रहकर कई मकसद हल हो रहे थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर की सुरक्षा पुख्ता रहती थी। इस कारण से बादशाह और मुग़ल अमीरों के दिलों में हर समय भय बना रहता था कि सिक्ख फ़ौज कही पर भी हमला कर सकती है। 30 नवंबर, 1710 को जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ के किले से चले गए तो उसका कारण यही था। अब मुग़लिया सल्तनत का खातमा लगभग तय था।

दूसरी बार सितंबर, 1712 में भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर इसी रणनीति से चलते हुए लोहगढ़ से चले गए थे। उस बार भी बादशाह ने मुहम्मद अमीन ख़ान और सैंकड़ों मुग़ल जरनैलों के अतिरिक्त जयपुर और जोधपुर के राजाओं को इस मुहिम में शामिल किया हुआ था। इस बार भी शाही खजाने में से बहुत सारा धन खर्च हुआ। इसके अतिरिक्त बादशाह को पूर्व और गुजरात का मालिया जयपुर और जोधपुर के राजाओं को सौंपना पड़ा था।

तीसरी बार नवंबर, 1713 में भी लाहौर और मुलतान के सूबेदार और सरहिंद के फ़ौजदार की हज़ारों फ़ौजें सढ़ौरा और लोहगढ़ पर कब्ज़ा करने के लिए कई महीने फसी रही। परंतु वह बंदा सिंह बहादुर को फिर भी गिरफ्तार न कर पाए यानि इस बार भी वास्तव में मुगल वह जंग हार गए। अगर दिसंबर, 1715 में बंदा सिंह बहादुर गुरदास नंगल के घेरे में न फंसते तो नतीजे बिल्कुल अलग होने थे। उसने सन् 1720 तक कम से कम हिंदूस्तान में मुग़लों की सल्तनत का अंत कर देना था। वैसे अगर उदयपुर, जयपुर और जोधपुर राजपूत राजे जरनैल बंदा सिंह बहादुर की बात मानते हुए इस सिक्ख क्रांति में शामिल हो जाते तो आज विश्व का इतिहास कुछ और ही होता। जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी और शहादत के साथ यह लड़ाई खत्म नहीं हुई थी। बंदा सिंह बहादुर के पश्चात सिक्खों ने मुग़लों के खिलाफ संघर्ष जारी रखा। परन्तु यह सघर्ष ज्यादा दिन नहीं चल पाया।

29 नवंबर, 1713 को कुछ सिक्खों के सिर लेकर अब्दुस समद ख़ान का पुत्र जकरिया ख़ान बादशाह के पास हाजिर हुआ। सिक्खों के सिरों को नेजों पर टांग कर दिल्ली के चांदनी

चौंक बाजार में घुमाया गया।[231] 5 दिसंबर, 1713 को बादशाह ने जकरिया ख़ान को रेशमी पोशाक और निशान भेंट किया। बादशाह ने उसके पिता अब्दुस समद ख़ान का मनसब भी ढाई हज़ार की जगह तीन हज़ार व्यक्ति और एक हज़ार सवार कर दिया।[232] उसे एक नगाड़ा भी इनाम दिया गया। 19 नवंबर को बादशाह ने कमाऊं के जमींदार राजा बाज बहादुर चंद ने भी 228 सिक्खों और अन्य के काटे हुए सिर भेज कर एक हाथी, एक तलवार और जिगह-कलगी का इनाम लिया था।

लोहगढ़ की लड़ाई वास्तव में कम से कम 6 साल (नवंबर, 1710 से नवंबर, 1716 तक) निरंतर चलती रही थी। इसके उपरांत भी यहां कई झड़पें होती रही थीं। मुग़ल 6 साल तक इस किले के किसी भी हिस्से पर काबिज नहीं हो पाए थे। इस दौरान तीन बड़ी लड़ाईयां लड़ी गई थी। पहली लड़ाई नवंबर, 1710 में एक लाख से अधिक सैनिक शामिल थे। इसमें लगभग दो से तीन लाख मुग़ल सैनिक शामिल थे। जिसका नेतृत्व और निगरानी मुग़ल बादशाह स्वयं, उसके चार शहज़ादे, सैकड़ों मुग़ल जरनल और कई राजपूत राजा कर रहे थे।

दूसरी लड़ाई सितंबर, 1712 में लड़ी गई थी। जिसका नेतृत्व मुग़ल सेना का प्रमुख जरनैल मुहम्मद अमीन ख़ान और तीसरी लड़ाई (अक्तूबर, नवंबर 1713) का नेतृत्व अब्दुस समद ख़ान (सूबेदार लाहौर), जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान (फ़ौजदार सरहिंद), इनाम ख़ान और ज़करिया ख़ान (जो बाद में लाहौर का फ़ौजदार बना) कर रहे थे। इस तीसरी बड़ी लड़ाई के पश्चात बंदा सिंह बहादुर बेशक जम्मू की ओर चला गया था। परन्तु हज़ारों सिक्ख फ़ौजी अभी भी लोहगढ़ और सरहिंद के बीच मौजूद थे। वह शाही चौंकियों पर हमले करते थे और अमीर जालिमों और वज़ीरों को मारते रहते थे। बादशाह को 17 अप्रैल, 7 मई, 29 मई, 12 जून, 9, 10, 18 और 19 जुलाई, 1714 के दिन इस सम्बन्धित ख़बरें दी जाती रही थी। लोहगढ़ किले पर मुग़लों का असली कब्ज़ा तो बंदा सिंह बहादुर की शहादत जून, 1716 के उपरांत लोहगढ़ के इलाकों में बचे हुए सभी सिक्ख शहीद करने के उपरांत मुग्लों नें किले को तबाह करना शुरू कर दिया था।

फरख्खसियर द्वारा अब्दुस समद ख़ान का शाही इस्तेकबाल (स्वागत)

बहादुर शाह और जहांदार शाह की तरह फरख्खसियर भी सिक्खों के विरूद्ध मुहिम को प्राथमिकता देता रहा। इस कारण वह मुहम्मद अमीन ख़ान और अब्दुस समद ख़ान का विशेष ध्यान रखता था।[233] बादशाह ने अब्दुस समद ख़ान की सहायता के लिए लोहगढ़ में कई बार भारी संख्या में मुग़ल फौजें भेजी।[234] जब अब्दुस समद ख़ान फरख्खसियर को मिलने के लिए दिल्ली आने वाला था तो बादशाह ने उसका स्वागत काफी बड़े स्तर पर किया। ताकि उसका हौंसला सिक्ख क्रांति का कुचलने के लिए बरकरार रहें। उसने मीर जुमला की डयूटी लगाई कि वह दीवाने-खास के दरवाजे पर जाकर अब्दुस समद ख़ान को 'स्वागतम' कहे और बादशाह के

---

231 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29-11-1713 की प्रविष्टि
232 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 03-12-1713 की प्रविष्टि
233 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 21-2-1714 की प्रविष्टि
234 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 24-2-1714 की प्रविष्टि

पास लेकर आए। जब ख़ान आया तो बादशाह ने उसकी पीठ थपथपाई और खास रेशमी पोशाक और जिगह-कलगी से सम्मानित किया।[235]

इसी तरह 3 मार्च, 1714 को इस्से ख़ान को सिक्खों के विरूद्ध लड़ने के कारण लक्खी जंगल की फ़ौजदारी और जागीर पक्की कर दी गई और साथ ही उसका मनसब भी एक हज़ार-नौ सौ अधिक कर दिया गया।[236]

235 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 24-02-1714 की प्रविष्टि
236 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 03-03-1714 की प्रविष्टि

अध्याय 13

जरनैल बंदा सिंह बहादुर की आखिरी लड़ाईयां

युद्ध रणनीति के चलते जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने किला लोहगढ़ के पहाड़ी मार्ग से चलते हुए बरेली की ओर रवानगी की। जरनैल बंदा सिंह बहादुर से संबंधित अब तक कई जानकारियां मुग़ल फ़ौज के पास नही थी। मुग़ल खेमे में यह चर्चा चलती रही कि वह चम्बा पहुंच गए है। परन्तु अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 11 दिसंबर, 1713 की रिपोर्ट के अनुसार बंदा सिंह बहादुर जल्लापुर (ज़िला मुरादाबाद) पहुंच गए थे। बादशाह ने मुरादाबाद के फ़ौजदार को कार्यवाही करने के लिए पैगाम भेजा था। मुरादाबाद ज़िले में दिलारी तहसील में एक जलालपुर ख़ालसा आज भी मौजूद है। जोकि लोहगढ़ से 300 किलोंमीटर दूरी पर है। अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला के अनुसार 14 दिसंबर, 1713 को बादशाह ने हमीद ख़ान को मुरादाबाद जाकर सिक्ख फ़ौज का मुकाबला करने का आदेश दिया। इसी समय ही बादशाह ने ख़ान बहादुर मुजफ्फर जंग को सिक्ख फ़ौज के विरूद्ध लोहगढ़ भेजा। हमीद ख़ान के साथ मुरादाबाद के इलाके में सिक्ख फ़ौज की जंग हुई। जिसमें हमीद ख़ान को मार गिराया गया और मुरादाबाद, बरेली के परगना सिक्ख फ़ौज के कब्ज़े में पूर्ण रूप से थे। गढ़वाल का राजा भी सिक्ख फ़ौज का साथ दे रहा था। जनवरी, 1714 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने जम्मू जाने का फैसला लिया। यह खबर मुग़ल बादशाह के पास पहुंची तो उसने अपने जरनैल अब्दुस समद ख़ान को लाहौर पहुंच कर जरनैल बंदा सिंह बहादुर से टक्कर लेने के आदेश दिए। 28 फरवरी, 1714 को सिक्ख फ़ौज के द्वारा बटाला और कलानौर पर दोबारा से कब्ज़ा स्थापित कर लिया। अब सिक्ख फ़ौज जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में लाहौर पर हमला करने की तैयारी में थी। बादशाह को 01 मार्च, 1714 को बताया गया कि सिक्ख फ़ौजियों ने सरहिंद के इलाके पर दोबारा से अपना कब्ज़ा स्थापित कर लिया। सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान ने अपनी फ़ौज भेजकर सिक्ख हमलावरों को खदेड़ दिया था।[237]

11 मार्च, 1714 को बादशाह को चकला जम्मू के इसफन्दयार के खत से पता चला कि चंबा का राजा जरनैल बंदा सिंह बहादुर की पूर्ण रूप से सहायता कर रहे थे। नूरपुर के राजा के वकीलों ने अब्दुल अजीम नायब फ़ौजदार को बताया था कि बंदा सिंह बहादुर एक बहुत बड़ी फ़ौज के साथ राम सिंह जब्बोवाल के ताल्लुका के गांव में ठहरा हुआ है। वह यहां से कत्ल बहलवाल की ओर से लाहौर पर हमले करना चाहता है। बादशाह को बताया गया कि अब्दुल

237 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 01-03-1714 की प्रविष्टि

अजीम के पास उनका मुकाबला करने के लिए फ़ौज नहीं है। किसी पहाड़ी राजा ने उसकी मदद नहीं की। इस कारण वह मजबूर है।[238]

सिक्ख फ़ौजें लोहगढ़, बद्दी, पिंजौर, मोरनी की पहाड़ियों में

सन् 1714 में हज़ारों की संख्या में सिक्ख फ़ौजें अभी भी लोहगढ़, बद्दी, पिंजौर, मोरनी की पहाड़ियों में मौजूद थी और यहीं से वह पूरे पंजाब के क्षेत्र पर अपना नियत्रंण जमाए बैठे थी। अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ- मउला (17 अप्रैल, 1714) के अनुसार अप्रैल, 1714 के दूसरे सप्ताह सरहिंद सूबे में महलूक इलाके के पहाड़ों में हज़ारों सिक्ख मौजूद थे। वह पहाड़ों से निकल कर मुग़ल और पठान जागीरदारों पर हमला करते थे। यह ख़बर मिलने पर सूबा सरहिंद के फ़ौजदार बख़्शी शर्फ-उद्-दीन की फ़ौज ने सरिहंद को दोबारा कब्ज़े में लेने के लिए सिक्ख फ़ौज पर हमला किया। परन्तु सिक्खों की संख्या ज्यादा होने के कारण उसके बहुत सारे मुग़ल फ़ौजी मारे गए। अगले दिन शर्फ-उद्-दीन एक हज़ार घुड़सवार और सात सौ प्यादा फ़ौज लेकर फिर आ गया। उधर सिक्ख फ़ौजों की संख्या भी 5 हज़ार के करीब थी। इस बार बन्दूकों, तीरों और तलवारों के साथ दोनों गुटों में बहुत जबरदस्त टक्कर हुई। जो तीन पहर (लगभग 9 घंटे) चलती रही।[239] इसमें दोनों गुटों का बहुत नुक्सान हुआ। अंधेरा होने पर सिक्ख फ़ौजें सरहिंद की किले ओर व आस-पास के सिक्ख किलों की ओर वापिस निकल गए। मुग़ल इसको अपनी फतेह समझते रहे। 30 अप्रैल, 1714 को पांच हज़ार सिक्ख फ़ौजें रोपड़ के ऊंचे पहाड़ों में मौजूद थी। अप्रैल, 1714 को सिक्ख फौजों के साथ जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पिजौंर के बवाना गांव में डेरा लगाया हुआ था।

सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान ने अपने भतीजे मीर अबू मुकर्रम को 2 हज़ार फ़ौजें देकर सिक्खों पर हमला करने के लिए भेजा। जब सिक्ख फ़ौजों ने देखा कि मुस्लिम फ़ौजों की संख्या कम है तो वह पहाड़ों से उतर कर रोपड़ शहर के निकट आ गए। जब मीर अबू मुकर्रम को सिक्खों के वहां पहुंचने की ख़बर मिली तो वह उनके साथ टक्कर लेने के लिए वहां पहुंच गया। दोनों फ़ौजों में बंदूकों और तीरों के साथ भारी लड़ाई हुई। यह लड़ाई 2 पहर (लगभग 6 घंटे) चली और अंधेरा होने पर खत्म हो गई। मुग़ल जरनैल को मार गिराया गया। इसमें दोनों ओर से सेकड़ों फ़ौजी मारे गए। मारे गए सिक्खों की संख्या 300 के लगभग थी। जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान ने इनाम हासिल करने के लिए जंग में मारे गए सिक्खों के सिर काट कर बादशाह को भेज दिए।[240]

मई, 1714 के तीसरे सप्ताह पांच हज़ार सिक्ख घुडसवार और 7 हज़ार पैदल फ़ौजें

---

238 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 11-03-1714 की प्रविष्टि
239 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 17-04-1714 की प्रविष्टि
240 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 07-05-1714 के प्रविष्टि

पहाड़ों से उतर कर बवासा परगना में आ गई। रिपोर्ट में इस गांव, शहर को परगना के तौर पर दिखाया गया है। परन्तु अब इस क्षेत्र में इस नाम का कोई भी गांव नहीं है। उन्हीं दिनों सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान की एक बड़ी फ़ौज उस इलाके में मौजूद थी। सिक्ख फौजों ने मुग़ल फ़ौज पर हमला कर दिया। दोनों गुटों में बंदूकों, तीरों और तलवारों के साथ जबरदस्त जंग हुई। इस जंग में सैकड़ों मुग़ल सैनिक मारे गए। कुछ समय बाद सिक्ख फ़ौज दोबारा से पहाड़ों की ओर चली गई।[241] ऐसी ही एक अन्य लड़ाई की ख़बर बादशाह को 12 जून 1714 को दी गई थी। यह घटना 13 मई, 1714 को गांव दहोना' परगना के गांव माणकपुर' में हुई बताई गई थी। आजकल दहोना नाम का कोई गांव इस इलाके में नहीं है। एक माणकपुर अवश्य है, जो सरहिंद से 35 किलोमीटर दूर तंगोरी और मोहाली के नजदीक है। इस लड़ाई के वर्णन में कहा गया था कि सिक्खों ने माल, असबाब व घोड़े मुग़लों से छीन लिए थे। इलाके के हाकिमों के साथ सिक्ख फ़ौज नें बंदूकों, तीरों और तलवारों के साथ जबरदस्त हमला किया और कई मुग़ल जागीरदार मार गिराए। इतने में सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान की फ़ौज वहां पहुंच गई। उनके बीच जबरदस्त जंग हुई। दोनों ओर से बहुत लोग मारे गए। बादशाह को रिपोर्ट दी गई कि मुग़लों और सिक्खों में निरंतर लड़ाई चल रही है।[242] मरे हुए जानवरों और मनुष्य के शरीर की बदबू दूर-दूर तक फैली हुई है।[243] बादशाह यह ख़बरें सुन मानसिक रुप से परेशान रहने लगा था।[244]

3 जुलाई, 1714 को रिपोर्ट की गई कि वणजारे जोकि नूरपुर के समीप रह रहे थे, वह सिक्खों को अनाज, तीर-कमान और बंदूकें दे रहे हैं। फरख्खसियर के राजकाल के चौथे वर्ष वणजारों के सहयोग की ख़बरें बहुत प्रसिद्ध थी। कांगड़ा के मुग़ल जरनैल बादशाह को ख़बर भेजी गई कि बहुत से वणजारें जोकि नानक परस्ती थे। जासूसी का काम करते हैं और सिक्खों का हर प्रकार से सहयोग कर रहे हैं। इन वणजारों के विरुद्ध कार्यवाही की जाए जिससे सिक्ख फ़ौजों को रोका जा सके। बादशाह ने इस ख़बर के आधार पर भारतवर्ष में वणजारों के विरूद्ध कार्यवाही करने के हुक्म जारी किये।[245]

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का उत्तराखंड और कुमांऊं में होने की चर्चा

अगस्त, 1714 के आरंभ में जरनैल बंदा सिंह बहादुर गढ़वाल रियासत के पहाड़ों, देहरादून इत्यादि में से होते हुए गढ़वाल के राजा फतेह शाह के सहयोग से बरेली और मुरादाबाद की ओर चल पड़े। उन्हें वणजारों ने बुलावा भेजा था। यह स्पष्ट है कि भाई लक्खी राय

---

241 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29-05-1714 के प्रविष्टि
242 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 12-06-1714 के प्रविष्टि
243 *गुलाम, मोही-उद्-दीन, फतुहत नामा-ऐ-समदी, पृष्ठ 129
244 *गुलाम, मोही-उद्-दीन, फतुहत नामा-ऐ-समदी, पृष्ठ 159
245 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 3 जुलाई, 1715 की प्रविष्टि

वणजारे के साथी गड़वाल और कुमाऊं इलाके और बरेली और मुरादाबाद क्षेत्रों में भी मौजूद थे। अगस्त, 1714 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर सिक्ख फ़ौज के साथ बरेली और मुरादाबाद के इलाके में फिर से पहुंचे और कई मुग़ल मनसबदार मार गिराए। इसके बाद जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने कुमाऊं के राजा बहादुर चन्द पर हमला बोल दिया। कुमाऊं के क्षेत्र में सिक्ख और कुमाऊं की पहाड़ी फ़ौज के बीच भारी जंग हुई जिसमें सिक्ख फ़ौज हावी रही और कई पहाड़ी फ़ौजी मार दिए गए। बहादुर चन्द डर कर पीछे हट गया और पहाड़ों में जाकर छिप गया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का फिर पंजाब आना

सितंबर, 1714 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर पंजाब के मैदानी इलाको में पहुंच गए। किसी भी मुग़ल मनसबदार की हिम्मत नही थी कि वह सिक्ख फ़ौज के आवागमन में रूकावटे पैदा कर सकें। इरविन लिखता है कि 16 अगस्त, 1714[246] को बंदा सिंह के नेतृत्व में सात हज़ार की संख्या में सिक्ख फ़ौज ने रोपड़ पर हमला किया। सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान के सहायक ख्वाजा मुकर्रम की फ़ौज ने सिक्खों का जबरदस्त मुकाबला किया।26 अगस्त, 1714 को जैन अहमद ख़ान ने सिक्ख फ़ौजों पर हमला कर दिया। इस कारण सिक्खों को फिर पहाड़ों की ओर निकलना पड़ा। इस लड़ाई में मारे गए 200 सिक्खों के सिर काट कर बादशाह को भेजे गए।[247] इन दिनों बादशाह को यह भी ख़बर दी गई कि ऐमनाबाद के फ़ौजदार इरादतमन्द ख़ान ने सिक्खों के साथ समझौता कर लिया है।

सिक्ख काबुल, कश्मीर, लाहौर और गुजरात के इलाकों में लूटमार करते हैं और इस खजाने में से वह इरादतमन्द ख़ान को आधा हिस्सा दे देते हैं। ख़बर में यह भी कहा गया कि फ़ौजदार मालिया, चुंगी और अन्य सरकारी खजाने में भी हेरा-फेरी कर रहा है। वह झूठा रिकार्ड भी बना रहा है। इस पर बादशाह ने ऐमनाबाद का नया फ़ौजदार लगाने के नाम का प्रस्ताव लाहौर के सूबेदार को लिखा।[248] यही ख़बर बादशाह को 8 मार्च, 1714 को दी गई थी। इसका अर्थ यह है कि सिक्खों और इरादतमन्द की निकटता पूरा वर्ष चलती रही थी।

दिसंबर, 1714 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर पिंजौर के बवाना और लखपत गांव में मौजूद थे। यही से भारी मात्रा में सिक्ख फ़ौज इकट्ठी होकर जम्मू के लिए रवाना हुई और जम्मू के नजदीक टांडा डोला में पड़ाव किया।

5 फरवरी, 1715 को बादशाह को बताया गया कि सिक्ख फ़ौजें सरहिंद से तीन कोस (लगभग 10 किलोमीटर) दूर लखात गांव में बैठीं थीं। ख़बर मिलने पर फ़ौजदार खिदमत तलब

---

246 *इरविन तारीख 16 शबान 1126 हिजरी लिखता है परन्तु वह इसको उस समय जूलियन कैलंडर में 26 अगस्त के तौर पर गणना करता है, जोकि 16 अगस्त होनी चाहिए थी। इससे जानकारी मिलती है कि इसे ग्रेगोरियन कैलंडर अनुसार गणना की गई है।

247 *इरविंग पत्र मुग़लज, जिल्द पहली, पृष्ठ 311

248 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 23/24 फरवरी, 1715 की प्रविष्टि

ख़ान (1714 के अंतिम महीनों में कई बार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान सरहिंद के फ़ौजदार को खिदमत तलब ख़ान के साथ बदल दिया गया था।) ने अपने स्वामी को पांच हज़ार प्यादा तोपची और तीर अंदाज देकर उनके पीछे भेजा। उसने पेहवा के जिमींदारों (पहाड़ी राजाओं) को भी पैगाम भेजे कि वह बागियों को अपनी सीमाओं में दाखिल न होने दे।[249] 23-24 फरवरी,1715 को बादशाह को बताया गया कि सिक्ख फ़ौजें सरहिंद से सुकेत और मंडी के पहाड़ों की ओर निकल गई थी। इनमें सात हज़ार घुड़सवार और आठ हज़ार पैदल थे। इनको कहलूर (बिलासपुर) के राजा का सहयोग हासिल था। इस दौरान जब यह घाटी के इलाकों में थे तो इनकी टक्कर फतेह-उल्ला-ख़ान के आमिल रमजानी बेग़ की फ़ौज के साथ हो गई। इस लड़ाई में रमजानी बेग़ की फ़ौज का भारी नुक्सान हुआ।[250]

फरवरी, 1715 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बटाला और कलानौर के इलाकों का मुआना किया। बटाला और कलानौर का किला पहले से ही सिक्ख फ़ौज के कब्ज़े में था और किसी भी मुग़ल मनसबदार की ताकत नहीं थी कि वह इलाके में सिक्ख फ़ौज के खिलाफ कोई मुहिम चलाए। फरवरी, 1715 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सुकेत और मंडी के इलाकों का मुआना किया और इसी दौरान बिलासपुर के नजदीक सिक्ख फ़ौज और मुग़ल फ़ौज के बीच जंग हुई जिसमें भारी संख्या में मुग़ल फ़ौजी मारे गए। इसी महीने में बटाला और रायपुर पर मुग़ल जरनैल सोहिब ख़ान ने हमला किया। इस लड़ाई में भारी संख्या में मुग़ल फ़ौज मारी गई और मुग़ल जनरैल सोहिब ख़ान की हत्या सिक्ख फ़ौज ने कर दी। फरवरी, 1715 के अंत में बंदा सिंह बहादुर ने कई शाही खजाने और हथियारों के अतिरिक्त खाने-पीने का सामान भी लूट लिया। जब बादशाह को ख़बर मिली तो उसने गुरज-बरदार भेज कर लाहौर के सूबेदार अब्दुस समद ख़ान को कार्यवाही करने के लिए हिदायतें भेजी।[251]

मार्च, 1715 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर कलानौर में मौजूद थे। फ़ौजदार सहराब ख़ान ने हमला कर दिया पर उसे बुरी तरह पराजय का सामना करना पड़ा। इन शहरों पर सिक्ख फ़ौज का कब्ज़ा बरकरार रहा। इसके पश्चात सिक्खों नें बटाला और रायपुर पर हमला किया। अब्दुस समद ख़ान उस समय भटीयां व डोगरों में सिक्ख बगावत को दबाने के लिए गया हुआ था।[252]

खाफी ख़ान के अनुसार कसूर के हुसैन ख़ान खेशगी ने लाहौर दरबार के विरूद्ध बगावत कर दी थी। इस लड़ाई में हुसैन ख़ान खेशगी की मौत हो गई। इस कामयाबी पर खुश होकर फरख्खसियर ने अब्दुस समद ख़ान को सैफ़-उद्-दोला (सरकार की तलवार) का खिताब दिया।[253]

---

249 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 05-02-1715 की प्रविष्टि
250 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 23/24 फरवरी, 1715 की प्रविष्टि
251 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 02-03-1715 की प्रविष्टि
252 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 14-03-1715 की प्रविष्टि
253 *ख़ाफी खान, जिल्द 2, पृष्ठ 861

जत्थेदार बाज सिंह को माखोवाल के इलाके का नेतृत्व सौंपना

अक्सर यह बात की जाती है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर और बिनोद सिंह के बीच गुरदास नंगल की गढ़ी में अप्रैल, 1715 से दिसंबर, 1715 तक विवाद हुए थे। रत्न सिंह भंगू द्वारा रचित प्राचीन पंथ प्रकाश के उल्लेख अनुसार बिनोद सिंह किले से निकल गया था।[254] 9 जुलाई, 1714 को बादशाह के दरबार से सरकारी हरकारे आनंद राव द्वारा जयपुर के राजा को भेजी चिट्ठी[255] में बताया गया कि सरहिंद से आनंद राव हरकारे द्वारा भेजी रिपोर्ट अनुसार उन दिनों ही बाज सिंह एक बड़ी फ़ौज लेकर (शायद 14-15 हज़ार) बंदा सिंह से अलग हो गया था। उसने अपना डेरा माखोवाल (आनंदपुर) में लगा लिया था, हालांकि यह ख़बर झूठी थी। उसे कहलूर (बिलासपुर) के राजे (अजमेर चंद) की मदद भी हासिल थी। उस क्षेत्र में मुग़ल फ़ौज के दो कैंप एक जालंधर और दूसरा रोपड़ में थे। शाही फ़ौजों का डेरा निकट होने के उपरांत भी बाज सिंह वहां से मुग़ल अमीरों और जागीरदारों के गांवों पर हमले करने लगा था।[256] पुनः बाज सिंह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ गुरदासपुर के इलाके में देखे गए ।

जुलाई, 1715 के पहले सप्ताह सिक्खों ने अरदून, महलूक, मलकियात, पिंजौर, सलूक और लखात से रोपड़ तक के गांवों में डेरे लगाऐ हुए थे। 10 मार्च, 1715 को मुग़ल फ़ौज के द्वारा गुरदास नंगल की गड़ी पर घेराबंदी कर ली गई थी। जिसका विस्तारपूर्वक विवरण अध्याय-14 में दिया गया है। जब सरहिंद के फ़ौजदार जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान को पता चला कि सिक्ख उस इलाके में घूम रहे हैं तो उसने अज़ख़ान को दाहिनी ओर से और अपने भतीजे ख्वाजा अब्दुल मुकर्रम ख़ान को बाएं ओर से भेज कर स्वयं भी इस इलाके की ओर कूच कर दिया। उन्होनें तीनों ओर से इन सिक्खों पर हमला कर दिया गया। इस लड़ाई में अनेकों सरहंदी फ़ौजी और कई सिक्ख मारे गए। सिक्खों के जाने के उपरांत सरहंदी फ़ौजों ने अरदून, महलूक, मलकियात इत्यादि 12 गांवों, जिनमें सिक्ख ठहरे हुए थे को जला दिया।[257] यह भी सुनिश्चित किया कि कोई भी सिक्ख गुरदास नंगल की गड़ी तक मदद ना पहुंचा पाए।

---

254 *रत्न सिंह भंगू 19वी शताब्दी का इतिहासकार हुआ है जिसने अंग्रेजी हुकुमत के इशारे पर सिक्ख इतिहास को बिगाड़ने का काम किया है।

255 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 9 व 10-07-1714 की प्रविष्टि

256 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 9 और 10-07-1714 की रिपोर्टों के अनुसार शाही फ़ौज का एक डेरा जिन्दबड़ी और एक रोपड़ में था।

257 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 18 और 19 जुलाई, 1714

अध्याय 14

गुरदास नंगल की लड़ाई और जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी

जब बादशाह को जरनैल बंदा सिंह बहादुर के कलानौर, बटाला और रायपुर जाने का पता चला तो बादशाह ने अब्दुस समद ख़ान को क्रोध भरी चिट्ठी लिखी और सिक्ख फ़ौज के विरूद्ध बड़ी कामयाबी हासिल करने के लिए आदेश दिए। इसी दौरान मुग़लों को खबर मिली कि सिक्ख जरनैल गुरदास नंगल किले[258] में इक्कठे होकर बैठक कर रहे है। 14 मार्च को कमर-उद्-दीन ख़ान (पुत्र मुहम्मद अमीन ख़ान)[259] भी एक बड़ी फ़ौज लेकर गुरदास नंगल की ओर रवाना हुआ। कमर-उद्-दीन भी 15 मार्च को पंजाब की ओर चला था। इसके साथ ही बादशाह ने अफरास्याब ख़ान बहादुर, राजा उदीप सिंह, राजा गोपाल सिंह भदौड़िया, प्रिथी चंद के साथ तीन सौ अन्य कर्मचारियों को भी पैगाम भेज कर अपनी फ़ौजें लेकर बंदा सिंह बहादुर के पीछे गुरदास नंगल किले पर पहुंचने का हुकुम दिया। इसके अतिरिक्त बादशाह ने अपनी 32450 घुड़सवार फ़ौज को भी इनके साथ जाने का हुक्म जारी किया।[260] मुग़ल फ़ौज ने गुरदास नंगल किला पर अपना घेरा मजबूती से करने के लिए गुरदास नंगल तक आने वाले 100 मील तक के क्षेत्र के रास्तों पर नाकाबंदी कर दी। यह भी सुनिश्चित किया कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर दोबारा से पहाड़ों में ना जा सकें। इसलिए जम्मू और नूरपुर के राजा ने सभी पहाड़ी रास्तों पर नाकाबंदी मज़बूत कर दी। यह भी सुनिश्चित किया गया कि पहाड़ों से किसी भी प्रकार की मदद जरनैल बंदा सिंह बहादुर तक ना पहुंच पाए। धीरे-धीरे हज़ारों की तादाद में मुग़ल फौज़ गुरदासपुर के इलाके में इकट्ठा होनी शुरू हो गई। अब जरनैल बंदा सिंह बहादुर का गुरदास नंगल किला से निकल जाना काफी मुशकिल हो गया था। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ उस समय लगभग 3000 सिक्ख फ़ौज मौजूद थी। सभी प्रमुख जरनैल भी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ गुरदास नंगल किला में मौजूद थे। इस विषय बारे विस्तारपूर्वक जानकारी निम्नलिखित पदों में दी गई है।

---

258 *गुरदास नंगल किला का निर्माण दुनी चन्द करोडिया ने गुरू नानक साहिब के आदेश अनुसार करवाया था। इस बात की पुष्टि ख़ाफी ख़ान द्वारा लिखा गया फारसी के स्त्रोत मुतखव-ल-लुबाब से भी होती है। जोकि बंदा सिंह बहादुर फारसी स्त्रोत डॉ. बलंवत सिंह ढिल्लों की लिखी गई किताब के पन्ना नं 198 पर भी दर्ज है। यह फारसी का स्त्रोत यह भी स्पष्ट करता है कि यह किला गुरू नानक साहिब के द्वारा स्थापित एक धर्मशाल थी। यहां से गुरू नानक साहिब की विचारधारा का दो शताब्दियों तक प्रचार-प्रसार चलता रहा। इसके अतिरिक्त यहां पर यह भी व्यक्त किया जाना बहुत जरूरी है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़ से चलकर गुरदास नंगल पहुंचे थे। लगभग जरनैल बंदा सिंह बहादुर से 200 साल पहले भगत नामदेव जी नांदेड़ के नजदीक हंगोली से चलकर गुरदासपुर के इलाके में रहे और उन्होंने अपने अतिंम श्वास भी इसी इलाके में पूरे किए। भगत नामदेव जी की वाणी गुरू ग्रंथ साहिब में अकिंत है। इस पूरे वाक्य से यह स्पष्ट है कि गुरू ग्रंथ साहिब में विराजमान सभी 35 महापुरूष हलीमी राज की स्थापना के लिए कार्य कर रहे थे।

259 *सन् 1748 में इसी कमर-उद्-दीन का पुत्र मीर मन्नू लाहौर का सूबेदार बना था और उसने सिक्खों पर बेपनाह जुल्म ढ़ाएं थे।

260 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 15-03-1715 की प्रविष्टि

गुरदास नंगल के किले का घेराव करना

19 मार्च, 1715 को बादशाह को बताया गया कि बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज लाहौर से 40 कोस (125 किलोमीटर) दूर पड़ाव कर रही है। वहां के फ़ौजदार और अमीर-वज़ीर घर छोड़ कर भाग गए हैं। सिक्खों ने सभी ओर अपने थाने बिठा दिए हैं। इसकी ख़बर जल्द ही अब्दुल सम्मद ख़ान को पहुंच गई। उन्होंने किला का घेराव करने के लिए एक बड़ी फ़ौज इकट्ठी कर ली। बिना किसी विलम्ब के उस ओर कूच कर दिया। इस समय पर बंदा सिंह बहादुर कोट मिर्जा ख़ान में था। जब उसे इस फ़ौज के आने की योजना का पता चला। इतनी बड़ी फ़ौज देखकर बंदा सिंह बहादुर ने वहां ठहरना मुनासिब न समझा। वह गांव गुरदास नंगल (गुरदासपुर से 6 किलोमीटर) की ओर कूच कर गए। वहां भाई दूनी चंद दरवेश की हवेली में पनाह लेने का फैसला किया।

जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर गुरदास नंगल किले में पहुंचे तो अब्दुस समद ख़ान ने गुरदास नंगल पर घेरा डाल लिया। यह बात मार्च, 1715 के आखिरी सप्ताह की है। बादशाह ने 30 मार्च, 1715 को गुरज-बरदार भेज कर सरहिंद के अज़ ख़ान को अबुदस समद ख़ान की सहायता के लिए कूच करने का हुक्म भेजा। इस अवसर पर बादशाह को ख़बर मिली कि दौलत ख़ान मुईन पांच सौ घुड़सवार फ़ौज लेकर पहले ही 20 मार्च को सुलतानपुर से गोबिंदवाल पहुंचा हुआ था। उसने ब्यास नदी के दूसरे किनारों का मोर्चा संभाल लिया था। बादशाह ने उसे वही रुकने के लिए कहा और जरनैल बंदा सिंह बहादुर का अंत करने के हुक्म जारी किये।[261]

10 अप्रैल, 1715 को बादशाह को एक झूठी सूचना जम्मू से आई कि बंदा सिंह बहादुर, उसकी पत्नी और बेटा कैद कर लिए गए हैं। परन्तु बाद में दोपहर को ही पता चला कि यह केवल अफवाह थी। वास्तव में इन दिनों में बंदा सिंह बहादुर अपनी पत्नी और छोटे बच्चे सहित गुरदास नंगल किलों में घिर गए थे। पचास हज़ार से ज्यादा मुग़ल फ़ौज ने इस किले पर घेरा डाला हुआ था।[262]

जब अब्दुस समद ख़ान को बंदा सिंह बहादुर के गुरदासपुर में घिर जाने का पता चला तो वह कत्लेआम करता हुआ 12 हज़ार घुड़सवार फ़ौज, 12 हज़ार पैदल और भारी तोप खाना लेकर तीन दिन में 40 कोस (लगभग 125 किलोमीटर) रास्ता तय कर लाहौर से गुरदासपुर पहुंच गया। रास्ते में उसने बटाला और कलानौर पर भी हमला किया। सिक्खों ने भी तीरों और बंदूकों के साथ लड़ाई लड़ी।[263] अंतत: उसने इन सभी इलाकों से सिक्ख फ़ौजों का अंत कर दिया या भगा दिया। इरविन के अनुसार मुग़लों की बड़ी फ़ौज का नेतृत्व अब्दुस समद ख़ान स्वयं कर रहा था। सैफ-उद्-दीन अहमद ख़ान (फ़ौजदार गुजरात), इरादतमंद ख़ान (फ़ौजदार ऐमनाबाद), नूर मुहम्मद ख़ान (फ़ौजदार औरंगाबाद और पसरूर), शेख मुहम्मद दायम (फ़ौजदार बटाला), सुहराब ख़ान (फ़ौजदार कलानौर), हमीर चंद कटोच (राजा कांगड़ा), ध्रुव देव जसरोटीए

---

261 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 30-03-1715 की प्रविष्टि
262 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 10 अप्रैल, 1715 की प्रविष्टि
263 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 14 अप्रैल, 1715 की प्रविष्टि

का पुत्र हरिदेव भी अपनी फ़ौजें लेकर आरिफ बेग ख़ान (नायब सूबेदार लाहौर) के नेतृत्व में गुरदास नंगल पहुंच गए। इन सभी ने गांव गुरदास नंगल से थोड़ी दूरी पर मोर्चे बना लिए। गढ़ी के उत्तर की ओर जकरिया ख़ान (फ़ौजदार जम्मू) और जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान (सूबेदार सरहिंद), दक्षिण की ओर अब्दुस समद ख़ान (सूबेदार लाहौर) और पश्चिम की ओर पट्टी, ऐमनाबाद, बटाला, कलानौर, औरंगाबाद, गुजरात के फ़ौजदारों, कांगड़ा और जसरोटा के हिंदू राजाओं की फ़ौजों ने मोर्चे संभाले हुए थे। बंदा सिंह बहादुर सभी ओर से बड़ी संख्या में मुग़ल फ़ौज द्वारा घेरे जा चुके थे।[264]

इस समय जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ बहुत बड़ी फ़ौज नहीं थी। परंतु इन सिक्खों के लिए किले में खाने का सामान पर्याप्त मात्रा में मौजूद था। अप्रैल, 1715 के दूसरे सप्ताह में मुग़ल फ़ौजों की कुछ टुकड़ियों गुरदास नंगल किले की ओर बढी। तो इस लड़ाई में सिक्ख फ़ौज के द्वारा इन सभी टुकड़ियों को मार गिराया गया। मुग़ल फ़ौज का बहुत नुक्सान हुआ। एक दिन सिक्ख फ़ौजों ने किले से निकल कर कोटली गांव से लकड़ लाने का प्रयास किया तो ध्रुव देव जसरोटीये की फ़ौज ने उन पर हमला कर दिया। कई सिक्ख मारे गए और बचे हुए किले में वापिस पहुंच आए। मुग़ल फ़ौज के द्वारा गुरदास नंगल को आने-जाने वाले सभी रास्तों को बंद कर दिया गया। ताकि गुरदास नंगल किला में कोई किसी प्रकार की रसद व हथियार ना पहुंच सकें। गुरदास नंगल किला के आस-पास के क्षेत्र में घना जंगल था। इसलिए अभी भी सिक्ख अपने जरूरत का सामान बाहर से ला पा रहे थे। इसका उपाय करने के लिए मुग़ल फ़ौज के द्वारा सैकड़ों की संख्या में तरख़ान व लकड़हारे, ऊंट और बैलगाड़ियां मंगवाई गई। ताकि गुरदास नंगल के आस-पास के इलाके से जंगल साफ किया जा सकें। परन्तु जंगल काफी बड़ा था। इस हिसाब से यह जंगल कई सालों में साफ होता। अब हर दिशा में किले से बाहर आने वाले सिक्खों पर तीरों और बंदूकों के साथ हमला होता था। अगर वह इनके हमलों से बच भी जाते थे तो उनकी ओर बढ़ती मुग़ल फ़ौजों के साथ लड़ाई होती थी। जिसमें बहुत से सिक्ख शहीद हो जाते थे। बहुत बड़ी फ़ौज होने के बावजूद मुग़लों ने किले के नजदीक जाने की हिम्मत नही की। उनको पता चल चुका था कि सिक्खों ने आस-पास के गांवों से बहुत सा लोहा इकट्ठा कर लिया है और उनके पास बंदूकें और तोपें भी हैं। उन्होंने तीन नई तोपें भी बना ली हैं। भारी मात्रा में बारूद भी है। इसकी ख़बर बादशाह को 23 अप्रैल, 1715 को पहुंची थी। बादशाह को यह भी बताया गया था कि सिक्खों ने किले के निकट के गांवों से घोड़े और भैंसों के लिए घास आदि इकट्ठा कर लिया था। मुसलमान फ़ौजियों के पास बंदा सिंह बहादुर का मुकाबला करने के लिए साहस और बहादुरी की कमी थी। परन्तु जो सिक्ख मुसलमान फ़ौजियों की गोलियों या तीरों के निशाने में आते थे उनको निशाना बनाया जाता था।[265]

28 अप्रैल, 1715 को अब्दुस समद ख़ान का पैगाम बादशाह को पहुंचा जिसमें उसने

---

264 *इरविन, पत्र मुग़लज, जिल्द पहली, पृष्ठ 313
265 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 23 अप्रैल, 1715 की प्रविष्टि

कोह सिकन तोप[266] की मांग की। जिससे वह गुरदास नंगल किला की दीवारों को उड़ा पाए। बादशाह ने उसी समय कोह सिकन तोप गुरदासपुर भेजने का हुक्म जारी कर दिया।[267]

गुरदास नंगल का घेरा पिछले दो महीने (15 मार्च से 14 मई) तक जारी रहा। 14 मई, 1715 को बादशाह ने ईसा ख़ान मंझ फ़ौजदार लक्खी जंगल को भी हुक्म जारी किया कि वह भी अपनी फ़ौज लेकर गुरदास नंगल की ओर चला जाए। 21 मई को बादशाह ने सफवी ख़ान को हिदायत दी कि वह लाहौर सूबे के जागीरदारों और कर्मचारियों को हुक्म जारी करे कि वह अपनी फ़ौजें लेकर अब्दुस समद ख़ान के पास हाज़िर हो जाए। अन्यथा उनका सारा माल सामान ज़ब्त कर लिया जायेगा।[268]

इस तरह बादशाह ने कोई भी ऐसा चौधरी नहीं छोड़ा था जिसको उसने सिक्खों के विरूद्ध मुहिम में गुरदास नंगल न भेजा हो। कुछ समय बाद ही उस जगह पर अब्दुस समद ख़ान के पास 50 हज़ार फ़ौज, सरहिंद की 5 हज़ार फ़ौज, लाहौर सूबे की 10 हज़ार फ़ौज और जम्मू की 5 हज़ार फ़ौज भी पहुंच चुकी थी। अपने मोर्चे किले के निकट बना लिए ताकि सिक्ख बचकर न निकल सके।[269]

दिल्ली से कमर-उद्-दीन ने भी हज़ारों फ़ौजें लेकर गुरदास नंगल किले की ओर कूच किया। अब जून का अर्ध आ चुका था और किला गुरदास नंगल को घेरे हुए तीन महीने हो चुके थे। इबरतनामा का लेखक मुहम्मद कासिम जो उस समय नायब सूबेदार आरिफ बेग़ ख़ान के साथ तैनात था। लिखता है कि सिक्ख दिन में दो तीन बार किले में से 40-50 की टोली में निकलते थे। अपने लिए और घोड़ों के लिए दाना पानी लेकर जाते थे। इन सिक्खों को रोकने के लिए मुग़ल सैनिक प्रयास तो करते थे परन्तु अंदर से सिक्खों के तीरों और गोलियों की बौछार के साथ बहुत सारे मुग़ल फ़ौजी मारे जाते थे। जो मुग़ल सैनिक उनके निकट जाते थे वह तो सिक्खों की कृपाणों का शिकार हो जाते थे। मुहम्मद कासिम आगे लिखता है कि मुग़ल फ़ौजी यहां तक दुआ करते थे कि हे अल्लाह ! बंदा सिंह बहादुर किसी तरीके यहां से निकल जाये जिससे हमारी जान बच जाए।[270]

खाफी ख़ान, मुसलमान फ़ौजियों में फैले हुए भय और दहशत के बारे में लिखता है कि अगर किले में से कोई बिल्ली कुत्ता बाहर निकलता तो मोर-चाल पर नीयत किये हुए शाही आदमी तीर या बंदूक के साथ मार फेंकते। अब अब्दुस समद ख़ान ने गुरदास नंगल के पूर्व की ओर मोर्चे लगा लिए। अब इतनी बड़ी फ़ौज और चारों ओर घेरा होने के कारण सिक्ख दाना-पानी अंदर नहीं लेकर जा पा रहे थे। जब भी वह बाहर आते तो मुग़ल फ़ौजों के तीरों और बंदूकों की बौछार की

---

266 *यह तोप औरगंज़ेब के द्वारा बनाई गई थी और यह भी माना जाता है कि यह तोप उस समय के विश्व की सबसे बडी तोपो में से एक थी। जोकि 100 मन बारूद एक बार में ही दागने में सक्षम थी।

267 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 28 अप्रैल, 1715 की प्रविष्टि

268 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 21 मई, 1715 की प्रविष्टि

269 *इरविन, op.cits, दूसरा भाग, पृष्ठ 314

270 *मुहम्मद कासिम, इबरतनामा, ब्रिटिश पुस्तकालय लंदन के दस्तावेज का पृष्ठ 57बी. से 61ए. प्रकाशित एडीशन के अंक 180 से 184

मार के नीचे आ जाते। इनमें से कुछ शहीद हो जाते थे। अन्य को वापिस किले में जाना पड़ता था। ऐसे सैंकड़ों सिक्ख मारे जा चुके थे। जून के पहले सप्ताह अब्दुस सम्मद ख़ान ने ऐलान जारी किया कि जो भी फ़ौजी किसी सिक्ख का सिर लायेगा उसे 10 रुपए इनाम दिए जाएंगे। इसके साथ मुग़ल फ़ौजियों ने आगे बढ़ कर सिक्खों के साथ लड़ने का खतरा मोल लेना शुरू कर दिया।[271]

1 जुलाई, 1715 को बादशाह को बताया गया कि इस इलाके में वणजारे जो भाई लक्खी राय वणजारा के कर्मचारी थे। लक्खी राय वणजारा स्वयं प्राण त्याग चूके थे और उसके पुत्र व पौत्र बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज का हिस्सा थे। उस समय व्यापार की गतिविधियां रोक दी गई थी।वह बंदा सिंह बहादुर और उसके साथियों को सूचनाएं, खाने-पीने के सामान, तीर और बंदूकें भी उपलब्ध करवाते थे। यह वणजारे नूरपुर के राजा दया धम्मा (मुग़ल रिकार्ड में उसका नाम दया धर्मा और दया दाता के रूप में लिखा मिलता है), राजा हीर चंद (यह हमीर चंद कटोच था उसका नाम हमीर चंद कम्बोज भी है।) इन्होंने सन् 1700-1747 तक कांगड़ा पर राज किया। बहुत सारे मुग़ल रिकार्डों में हिंदू शासकों के सही नाम की पहचान नहीं होती। बादशाह ने इतमाद-उल दोला (बख्शी-उल-मुल्क) को हुक्म दिया कि लाहौर के नाजिम, कांगड़ा के किलेदार और पहाड़ी रियासतों के जमींदारों (राजाओं) को ख़त लिखें कि वह वणजारों को अपने इलाकों में से न निकलने दे। अगर वह पकड़े जाएं तो उनको सजाएं दी जाएं। इस तरह बागियों की कार्यवाहियों पर नजर रहेगी और उनके खाने के सामान में भी कमी आयेगी।[272]

26 सितंबर, 1715 को बादशाह को बताया गया कि हमीर चंद कम्बोज (कटोच), दया धम्मा (नूरपुर), राम सिंह जमवाल, देब चंद देहणूवाल अपनी फ़ौजें लेकर अब्दुस समद ख़ान के पास स्वयं हाजिर हुए थे। बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध मुग़लों का साथ देने का वादा किया। ऐसे ही उदय सिंह (सिबिया का राजा) और दलीप सिंह लोका ने अपने प्रधान, फ़ौजों सहित अब्दुस समद ख़ान के पास भेजे थे। परन्तु माधा सैन (मंडी का राजा), मान सिंह (कुल्लू का राजा) और हीरज (धीरज) पाल (मालाबार का राजा) न तो स्वयं आए और न ही उन्होंने अपनी फ़ौजें भेजी थी। यह तीनों ही राजे बंदा सिंह बहादुर के साथ मित्रता रखते थे। इस पर बादशाह ने इतमाद-उल दोला (बख्शी-उल-मुल्क) को हुक्म किया कि वह लाहौर के सूबेदार को इन पर कार्यवाही करने के लिए लिखे।[273]

जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उसके साथी सिक्खों की गिरफ्तारी

8 महीनों के घेरे के पश्चात अब उनके पास खाने के लिए हवा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। उस वक्त सिक्ख फ़ौज गुरदास नंगल किले में भूख के साथ हाल बेहाल हो गए थे। उनमें

---

271 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 14 जून, 1715 की प्रविष्टि
272 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 03-7-1715 की प्रविष्टि
273 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला 26-09-1715 की प्रविष्टि

हलचल की शक्ति भी नही थी। अंतत: जब कई दिनों तक गढ़ी में से कोई हलचल न हुई तो मुग़ल फ़ौजों के एक हजूम ने तुरंत हल्ला बोल दिया। आगे अधमरे हुए एक हज़ार से ऊपर सिक्ख नजर आए। जिनको उन्होंने गिरफ्तार कर लिया। इनमें जरा सी भी हरकत होने पर उसे वही कत्ल कर जाता। लगभग तीन सौ सिक्खों को वही कत्ल कर दिया गया।

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[274] लिखता है कि जब कई दिन किले में से कोई हलचल न हुई तो सीढ़ियां लगाकर मुग़ल फ़ौजी अंदर जा घुसे थे। किले से जिस समय पर उस गिरोह (सिक्खों) की ओर से लड़ाई की शक्ति खत्म हो गई और बेहद कष्ट होने पर भूख के हावी होने के कारण, उन करूप तबीयत वाले (सिक्खों) के जिस्मों के अंग हल-चल करने बंद हो गए और उनमें तलवारें उठाने की ताकत न रही। यहां तक यकीन हो गया कि वह कोई बेहूदा बकवास भी नहीं कर सकते (जयकारा भी नहीं छोड़ सकते), इस्लामी फ़ौजों के गाज़ी सीढ़ी लगा कर लटकते हुए अचानक उपरोक्त किला में जा घुसे। क्योंकि उन तबाही वालों के जवाल का अंत निकट पहुंच चुका था। इसलिए लड़ाई का अवसर बने बिना ही वह कुरूप तबीयत वाला लानती (बंदा सिंह बहादुर) पकड़ा गया। उसके काले मुंह वाले निकम्मे साथी, जिन्होंने जहान भर को बेघर कर दिया था भी जाल में फंस गए। उनमें से किसी ने भी तलवार के साथ मुकाबला नहीं किया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर को जंजीरों के साथ जकड़ लिया

भूख से अधमरे जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उनके साथियों को आखिर गिरफ्तारी के समय बेड़ियों और जंजीर के साथ जकड़ दिया गया। इनको भारी फ़ौज के घेरे में लाहौर लेकर गये और लाहौर के बाजारों में इनका जुलूस निकाला गया। शहर के मुग़लों ने इन पर ईंट-पत्थर बरसाए। इस अवसर पर बायजीद ख़ान की मां ने अपने घर की छत से एक बड़ा पत्थर इस जुलूस पर फेंका जिससे एक सिक्ख कैदी की मौत हो गई। यह कहानी स्यारुल मुताखरीन के लेखक द्वारा दी गई है। इसके उपरांत लाहौर के सूबेदार ने कैदियों को पत्थरों से बचाने के लिए उन पर बोरियां डाल दी। बायजीद ख़ान जम्मू का फ़ौजदार था। इन सिक्ख कैदीयों को फ़ौज की निगरानी में बांधकर रखा गया। इनके पैरों में बेडियां, गले में तौक, कमर के साथ जंजीरें बाँध कर, कमर की जंजीर के साथ 2-2, 3-3 को बांधकर गाड़ियों पर फेंका हुआ था। बाद में इनको ऊंटों और गाड़ियों पर लादकर, सरहिंद के रास्ते दिल्ली भेजने का फैसला किया गया। इसकी बादशाह को ख़बर पांच दिन में ही 12 दिसंबर, 1715 को पहुंच गई थी। एक स्त्रोत के अनुसार इन गिरफ्तार सिक्खों की संख्या मात्र दो-तीन सौ ही थी। इन दिनों में बहुत से अन्य सिक्ख भी गिरफ्तार करके इनमें शामिल कर लिए गए। इसके पश्चात भी अनेक सिक्ख मारे गए और सिक्खों के सिर भी दिल्ली ले जाने वाले हजूम में शामिल कर लिए गए। लाहौर में सिक्खों के सिर्फ 700 सिर थे। जो दिल्ली पहुँचने तक 2000 हो चुके थे।[275]

---

274 *अहवाल-उल-ख्वाकीन, पन्ने 121-124
275 *केसर सिंह छिबर, बंसावलीनामा दस पातसाहियों का, पृष्ठ 294

बादशाह फरख्खसियर ने जश्न मनाया

बादशाह फरख्खसियर को जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी की ख़बर जब 12 दिसंबर, 1715 को मिली तो उसने दो बार नमाज पढ़ी और बड़े जश्न मनाने का ऐलान किया। उसने दिल्ली में मुनादी करवा कर इसका ऐलान भी किया कि बादशाह ने चार बोरे सिक्कों (पैसों) से भरके हाथी पर रख कर इन सिक्कों को शहर में बटवा दिया।[276] बंदा सिंह बहादुर उसका चार साल का बेटा अजेय सिंह उसकी पत्नी बीबी सुशील कौर और एक नौकरानी और 740 गिरफ्तार सिक्खों के अतिरिक्त दो हज़ार के करीब सिक्खों के सिर लेकर अब्दुस समद ख़ान का पुत्र और मुहम्मद अमीन ख़ान का दामाद जकरीया ख़ान स्वयं दिल्ली पहुंचा। शहीद सिंघों के सिरों को सात सौ गाड़ियों पर लादा हुआ था। बंदा सिंह को विशेष रूप से तैयार पिंजरे में बेड़ियों सहित बांधकर हाथी पर रखकर दिल्ली लाया गया था। बंदा सिंह बहादुर से मुग़ल इतना डरते थे कि पिंजरों में डालकर भी उसके पीछे एक तगड़ा सिपाही नंगी तलवार पकड़ कर खड़ा किया गया था।[277]

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[278] लिखता है कि जकरिया ख़ान 40 हज़ार सिक्खों के सिरों की खालें लेकर गया था। सिक्ख कैदियों का यह जुलूस 27 फरवरी, 1716 को दिल्ली के बाहरी गांव अगराबाद के पास पहुंचा।29 फरवरी, 1716 को इन कैदियों का दिल्ली में जुलूस निकाला गया।[279] जुलूस में सबसे आगे एक बैंड बाजा जा रहा था और यह जुलूस दिल्ली के निकट के गांव अगराबाद से शुरू होकर 10 किलोंमीटर दूर लाल किला तक ले जाया गया। इस बैंड के पीछे दो हज़ार सिक्खों के सिर जिनमें भूसा भरकर बांसों पर लटकाया हुआ था जा रहे थे। इनके सिरों के बाल खुले रखे हुए थे जिससे लोग पहचान सकें कि यह सिक्खों के ही सिर हैं। इनकी संख्या बढ़ाने के लिए कुछ औरतों के सिर काट कर भी शामिल कर दिए गए थे जो लम्बे बालों के कारण सिक्ख ही लगते थे। इसके पश्चात एक लम्बे बांस पर मृत बिल्ली लटकायी हुई थी जिस का अर्थ यह था कि सिक्खों के घरों में मनुष्य तो क्या कोई मरा हुआ जानवर भी नहीं बचा। इस बिल्ली के पीछे एक हाथी था जिस पर रखे हुए पिंजरे में जरनैल बंदा सिंह बहादुर था।

बंदा सिंह बहादुर का मजाक बनाने के लिए उसे एक दूल्हे की तरह सुनहरी जरी की लाल पगड़ी, अनार के फूलों के रंग का शाही चोगा (पोशाक) डाला हुआ था। उसके सिर पर एक लकड़ी का खोखा-नुमा तीन-चार किलों मिट्टी के साथ भरकर रखा हुआ था। जिसके वजन के कारण उसकी गर्दन झुकी हुई थी।

बंदा सिंह बहादुर के हाथी के पीछे 740 कैदी थे। इनके चेहरे पर कालिख पोती हुई थी। उनका एक-एक हाथ गर्दन के पीछे करके शिकंजे में कस कर बांधा हुआ था। उनके सिरों पर काग़ज़ों की टोपियां रखी हुई थी और उनके जिस्मों पर भेड़ों की चमड़ी लपेटी हुई थी। उनका

---

276 *अख़बाराति दरबारे मउला की प्रविष्टि

277 *मुहम्मद हारसी, इबरतनामा, पृष्ठ 86-87, कामवर, पृष्ठ 460

278 *अहवाल-उल-खवाकीन, पन्नें 121-124

279 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 29-02-1716 की रिपोर्ट

यह रूप मजाक बनाने और उनकी बेइज्जती करने के लिए बनाया गया था। उनको दो-दो करके बिना गद्दी के खाली ऊंटों पर बिठाया (वास्तव में लादा) हुआ था। इस जुलूस के पीछे मुहम्मद अमीन ख़ान, उसका पुत्र कमर-उद्-दीन ख़ान और जकरिया ख़ान (पुत्र अब्दुस समद ख़ान) विजेता की तरह घमण्ड में चल रहे थे। यह जुलूस लाहौरी गेट के रास्ते दिल्ली शहर में दाखिल हुआ।[280] इस जुलूस को देखने के लिए सारी दिल्ली सड़कों पर आई हुई थी। शहर में कोई भी शख्स इस तरह का नहीं था जिसने यह नजारा न देखा हो। लाखों लोगों की भीड़ के कारण इतनी घुटन थी कि इस अवसर पर सांस लेना भी मुश्किल था। लोग सिक्खों का मजाक बना रहे थे। ताने दे रहे थे। गालियां निकाल रहे थे। बेइज्जत कर रहे थे और उनकी ओर देख कर भद्दे इशारे कर रहे थे। कई लोग हंस-हंसकर कर ताली मार रहे थे और खुशी के नशे में धुत्त होकर नाच रहे थे। परन्तु सिक्खों के चेहरों पर बिल्कुल भी मायूसी, शिकन, पीड़ा या अफसोस नहीं था। वह स्वयं को हारे हुए महसूस नहीं कर रहे थे। वह शब्द गायन कर रहे थे और वाहिगुरु का स्मरण करते जा रहे थे। उनको देख कर ऐसे लगता था कि जैसे उनको कुछ भी न हुआ हो।[281]

मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[282] लिखता है उस जलसे में से एक आदमी मधुर आवाज के साथ शब्द गायन कर रहा था और कह रहा था कि 'खुदा का शुक्रिया है कि हमने अमल के घर (इस दुनिया) को नाश्वर कर जाना और यह बात यकीनन है कि हम (मौत के पश्चात) शाश्वत जिंदगी का आनंद लेंगे। बुरे दिल वालों के उस टोले में से कोई भी आदमी पूरी सज़ा मिलने और इस भयानक दिल दहलाने वाली दुर्घटना के बावजूद माथे पर शिकन तक नहीं थी। सभी खुशी से जा रहे थे। जब बंदा सिंह बहादुर को बादशाह फरख्खसियर के पास पेश किया गया तब बादशाह ने बंदा सिंह बहादुर को पूछा कि तू अपने लिए कैसी मौत पसन्द करेगा[283] इस पर बंदा सिंह बहादुर ने तुरंत कहा, आदमी आदमी को कैसी मौत दे सकता है क्योंकि जीवन मरन उस परवरदिगार के हाथ में है और उसके हुक्म से ही सब कुछ होता हैं। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी कहता है कि जब फरख्खसियर सिक्खों के चेहरों की ओर देखता है तो घबरा जाता है। वह वर्णन करता है कि उनके चेहरे जोशीले और उत्तेजना से भरे थे। वह अगर थोड़ी देर और जीवित रहते तो मुग़ल राज का खातमा निश्चित था।[284]

गिरफ्तार सिक्खों के कत्लेआम का हुक्म

6 मार्च, 1716 को बादशाह ने सरबराह ख़ान कोतवाल को हुक्म दिया कि बंदा सिंह और उसके निकटतम 17 साथियों को छोड़ कर बाकी को प्रतिदिन एक-एक सौ करके कत्ल कर दिए जाएं।[285] इसी दिन इनका कत्लेआम शुरू हो गया। उनको मुसलमान बनने की शर्त और जान

---

280 *इरविन, जिल्द दूसरी, पृष्ठ 316

281 *सी.आर. विल्सन, चिटकनी ऐनलज ऑफ इंग्लिश इन बंगाल, पृष्ठ 96-98, मिर्जा मुहम्मद हारसी, इबरतनामा, पृष्ठ 52बी से 53ए।

282 *अहवाल-उल-खवाकीन, पृष्ठ 121-124

283 *अहवाल-ऐ-अदीना बेग़, पृष्ठ 20

284 *अहवाल -उल-खवाकीन, पन्ने 121-124

285 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 05-03-1716 की रिपोर्ट

बचाने की पेशकश की गई। परन्तु एक भी सिक्ख मुसलमान बनने के लिए तैयार नहीं हुआ। वह सभी 'वाहिगुरु-वाहिगुरु' कहते हुए शहीद हो गए। वह तो बल्कि यह कहते रहे मुक्ता (मुक्त करने वाला, यानि जल्लाद), मुझे पहले शहीद कर।[286] यह शहादतें तब की कोतवाली के बाहर चांदनी चौंक में हुई थी।[287] इस संबंधित दिल्ली में रह रहे फोर्ट विलियम कलकत्ता के गवर्नर के नुमायंदे जोहन सूरमन और एडवर्ड स्टीफनसन (दो अंग्रेजों) ने 10 मार्च, 1716 को अपने गवर्नर को लिखी एक चिट्ठी में इन शहादतों का आंखों देखा हाल इन लफ्ज़ों में बयान किया था।

"The great Rebel Gooroo who has been for these past 20 years so troublesome to the Subaship of Lahore, is at length taken with all his family and attendance by Abd-us-Samad Cawn, the Suba of that province. Some days ago they entered the city laden with fetters, his whole atendance which were left alive being about seven hundred and eighty, all severally mounted on camels which were sent out of the city for that purpose, besides about two thousand heads struck upon poles, being those who died by the sword in battle. He was carried into the presence of the King, and from thence to a close prison. He, at present, has his life prolonged with most of his mutsuddys, in hope to get an account of his treasure in the several parts of his kingdom and of those who assisted him, when afterwards he will be executed; for the rest there are 100 each day beheaded. It is not a little remarkable with what patience they undergo their fate, and to the last it has not been found that one apostatised from his new formed Religion".

सिक्ख नौजवान का ऐलान 'यह मेरी मां नहीं है'

इस अवसर पर एक अन्य अजीब घटना हुई। एक नौजवान सिक्ख की मां निवेदन करके रत्न चंद दीवान की सहायता से बड़े वज़ीर सईअद अब्दुला ख़ान के पास पहुंच गई। उसने यह झूठ बोल कर कि मेरा पुत्र सिक्ख नहीं है और अपने पुत्र की रिहाई की चिट्ठी वसूल कर ली। जब वह औरत उस चिट्ठी को लेकर जल्लाद के पास आई और कहा कि 'मेरा पुत्र सिक्ख नहीं है इसको छोड़ दिया जाये। मैं बड़े वज़ीर का हुक्म लेकर आई हूँ।' यह सुनकर उसका पुत्र चीख पड़ा और कहने लगा - 'मन नमे दानम कि ई मादर किस्तः व ई अर्रूस अज़ कुजा आवुरदा! व ई चिगूना सुखनहाय मी गोयद! रफीकानि मन गुजशतन्दः व अकनूं वक्त मा अ़ज दस्त मी रवद। व

---

286 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखाब-उल-लुबाब, भाग 2, पृष्ठ 766, हकीकत-ऐ-बीना-ओ-अरूज-ऐ-सिक्खां, पृष्ठ 10
287 *सी.आर. विल्सन, अरली ऐनलज ऑफ इंग्लिश इन बंगाल, पत्रें 96-98

ई मुहलत बायसि आज़ारि मासत ! मैं नहीं जानता कि यह मां किसकी है। यह दुल्हन कहां से लाई है ! और यह कैसी बातें कर रही है! मेरे साथी शहादत का जाम पी चुके हैं। अब मेरा वक्त हाथों से जा रहा है। यह घड़ी पीछे रहना मेरे लिए दुखदायी है।' मुंतखबुल लुबाब के अनुसार यह नौजवान बंदा सिंह बहादुर का साथी था परन्तु तारीखे मुहम्मद शाही का लेखक इस लड़के को बंदा सिंह बहादुर का साथी नहीं बल्कि उन्हीं दिनों कहीं अन्य जगह से पकडा एक आम सिक्ख बताता है। उसके अनुसार यह नौजवान विवाह करवा कर आया था और उसे सिक्ख होने के कारण गिरफ्तार करके बंदा सिंह बहादुर के साथियों के साथ शामिल कर लिया गया था। उसकी मां और उसकी दुल्हन ने फ़ौजदार आगे फरियाद की थी। परन्तु तारीख-ए-मुहम्मद शाही का लेखक उस नौजवान सिक्ख की शहादत का बाकी विवरण कि वह लड़का 'यह मेरी मां नहीं है' कहता है।

700 सिक्खों का कत्लेआम

700 से ज्यादा सिक्खों को चाँदनी चौंक में 100-100 प्रतिदिन कत्ल करके 6 से 12 मार्च तक शहीद कर दिया गया। उनके शवों के टुकड़े करके दिल्ली शहर में चारों ओर लटका दिए गए। जिससे लोगों में दहशत फैलायी जा सके। कुछ ही दिनों में इन शवों के टुकड़ों का मांस गिद्धों ने खा लिया परन्तु इनके पिंजर और हड्डियां काफी समय तक लटकती रही। मुग़लों के बच्चे इन हड्डियों को भी पत्थर मार-मार कर अपना गुस्सा सिक्खों पर निकालते रहे। हवाला तारीख-ए-मुहम्मद शाही। इसके साथ ही बादशाह ने बंदा सिंह बहादुर और उसके 17 साथियों को टीका राम के सुपुर्द करने का हुक्म दिया। पहले उनकी संख्या सत्रह थी। दो अन्य को गिरफ्तार कर लिया गया था और वह भी इस समूह में शामिल कर दिए गए थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर की पत्नी सुशील कौर, उनका पुत्र अजय सिंह और उनकी एक नौकरानी को दरबार ख़ान नाजिर की कैद में भेज दिया गया। सात मार्च को मुमताज ख़ान अख्तर बेग़ी ने अब्दुस समद ख़ान द्वारा भेजे 16 घोड़े-घोड़ियां बादशाह को भेंट किए। इन में 3 घोड़े और 6 घोड़ियां जरनैल बंदा सिंह बहादुर की थीं।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत की दासतान

जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उसके बाकी साथियों को तीन महीने बहुत कष्ट दिए गए और इस्लाम कबूल करने की सूरत में जान बचाने की पेशकश की गई। 9 जून, 1716 को बादशाह ने हुक्म दिया कि इब्राहिम-उद्-दीन (मीर-आतिश) और सरबराह ख़ान कोतवाल बंदा सिंह बहादुर को तिरपोलिया के किले में से ख़्वाजा कुतुब-उद्-दीन की दरगाह के निकट ले जाए और उसे यातना देकर कत्ल कर दे।[288] बादशाह का हुक्म था कि उसकी जबान काट दी जाये। आँखें निकाली जाएं और उसकी चमड़ी उधेड़ दी जाऐ। उसकी हड्डियों से मांस नोच लिया जाये और

288 *अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला, 09-6-1716 की रिपोर्ट

उसके पुत्र को भी कत्ल कर दिया जाये। बादशाह का हुक्म कि बंदे को पहले अपना पुत्र कत्ल करने के लिए कहा जाये। इसका उल्लेख केवल खाफी ख़ान ही करता है। बादशाह के हुक्म के अनुसार बंदा सिंह बहादुर, उसका पुत्र और अन्य सिक्खों को ख्वाजा कुतबदीन की दरगाह के पास महरौली में लेकर गए। कामवार ने बताया कि बंदा सिंह बहादुर के साथ 17 साथी थे। परंतु कुछ दिनों उपरांत अन्य सिक्खों को भी गिरफ्तार किया गया था। पहले इन सिक्खों को बहादुर शाह की कब्र के आसपास घुमाया गया और फिर कत्ल करने वाली जगह लेकर जाया गया। कामवर इनकी गिनती 17 लिखता है। परन्तु कत्ल के समय इनकी संख्या 26 बताता है। हो सकता है कि 9 अन्य सिक्ख गिरफ्तार करके भी इनके साथ ही शहीद किये गए हो। गणेश दास वढ़ेरा (रसाला साहिब नुमा, पृष्ठ 197) के अनुसार कत्ल से पहले इन सभी को मुसलमान बनने की शर्त पर माफी की पेशकश की गई परन्तु किसी भी सिक्ख ने यह पेशकश कबूल नहीं की और सब ने 'वाहिगुरु-वाहिगुरु' कहकर अपनी गर्दन जल्लाद के आगे कर शहीद होना मंजूर किया। (आं गिरफ्तारानि बेग़म खुद गर्दन पेशि जल्लादां मी निहादन्द। व वाहगुरु वाहगुरु गोयां जां मी दादंद)

सबसे पहले जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पिंजरे में से निकाल कर जमीन पर बिठाया गया। फिर उसका दाहिना हाथ आजाद करके उसमें छुरा पकड़ाया गया और उसे अपने चार साल के पुत्र अजय सिंह को कत्ल करने के लिए कहा गया। अजय सिंह की उम्र सोहन लाल सूरी छह साल और खाफी ख़ान सात-आठ साल लिखता है जो गलत है। अजय सिंह, सुशील कौर का पुत्र था। जरनैल बंदा सिंह बहादुर का विवाह जनवरी, 1711 के अंतिम दिनों में हुआ था और अजय सिंह जनवरी, 1712 में पैदा हुआ था। इसलिए वह अपनी शहादत के समय पांच साल से कम उम्र के थे। इस समय बंदा सिंह बहादुर चुपचाप अडोल बैठा रहे। जल्लाद ने उनके पुत्र को कत्ल किया और उनका ज़िगर बंदा सिंह बहादुर के मुंह में डालने की कोशिश की।जरनैल बंदा सिंह बहादुर मुंह बंद करके बैठा रहा। मुहम्मद कासिम औरंगाबादी[289] के अनुसार पहले उनके बच्चे के शरीर का बंद-बंद काटा परन्तु उन्होंने कोई भी शब्द अपनी जुबान पर नहीं लाया। अपनी आंख में से अश्रु आना तो दूर रहा बल्कि माथे पर तनिक भी बल नहीं डाला और मुंह पर मुस्कराहट बनाए रखी। बंदा सिंह बहादुर के बच्चे को कत्ल करने के पश्चात एक तेजधार हथियार के साथ बंदा सिंह बहादुर की दाहिनी आंख निकाली गई और फिर बांयी आंख की पुतली भी निकाल दी गई। इसके पश्चात उसका बांया पैर फिर दाहिना पैर काटा गया। फिर उसके दोनों हाथों पर प्रहार किया गया। इसके पश्चात जम्बूरों के साथ उसका मांस नोचा गया और अंत में एक हथौड़ा मार कर उसका सिर भी दबा दिया गया। इसके पश्चात उसके शव के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए।इस समय कोतवाल सरबराह ख़ान और मीर आतिश इब्राहिम ख़ान स्वयं हाजिर थे।[290]

---

289 *अहवाल-उल-खवाकीन, पन्नें 121-124
290 *ख़ाफी ख़ान, चैप्टर 2, पृष्ठ 766-767

जरनैल बंदा सिंह बहादुर और सिक्खों के ब्यान

जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर को दिल्ली लाया गया तो उनकी कुछ बातें मुसलमान लेखकों ने लिखी थी। खाफी ख़ान लिखता है मुहम्मद अमीन ख़ान ने उससे पूछा कि तुझे किस कारण इस जंग के लिए मजबूर होना पड़ा तो बंदा सिंह बहादुर ने जवाब दिया ''जब (ईश्वर से) विमुखता और पाप हद से बढ़ जाते हैं तो सच्चा ईश्वर इन पापों का फल भुगताने के लिए मेरे जैसा बंदा मुकर्रर कर देता है। जिससे उस जमात के कर्मों की सजा देने का कारण बने।'' जब वह दुनिया को उजाड़ना चाहता है तो वह देश को जालिमों के पंजे में दे देता है।[291] मुहम्मद हारसी इबरतनामा में लिखता है कि जब कोई सिक्ख कैदी को कहता कि 'आपको तो मार देंगे' तो वह जवाब देते 'बिकुशेद ! मा अज़ कुशतन कै मी तरसेम? व अगर मी तरसीदेमः, चिरा बा शुमा ई कद्र जंगहा मी करदेम ! व मा महज़ ब-सब्बब गुरसनगी व फक्कदानि आजूका ब-दस्ति शुमा उफतादेम ! व इल्ला हकीकत बहादरी-मा ज्यादा अज़ आंचिह दीद आयद, मालूम शुमा मी शुद!' यानि मारो बेशर्म ! हम मरने से डरते नही? अगर डरते होते तो आपके साथ इतनी घमसान जंग क्यों करते। हम तो भूख और भोजन की कमी के कारण ही आपके काबू आ गए हैं। अन्यथा हमारी बहादुरी की हकीकत जो आपने देखी है इससे ज्यादा आपको मालूम हो जाती।'

जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गिरफ्तारी पर इनामों के भंडारे

जरनैल बंदा सिंह बहादुर और सिक्खों को गिरफ्तार करने के बदले अब्दुस समद ख़ान को बादशाह ने खूब इनामों की झड़ी लगा कर सम्मानित किया। उसे छह हज़ार का मनसब दिया गया और एक सजावटी पालकी, कई हाथी और घोड़े, गहने, हीरों की लड़ी (पगड़ी के साथ लटकाने के लिए), एक जड़ाऊ जामा,एक हीरों का हार और पंजाब के कई परगने इनाम में दिए।[292]

291 *ख़ाफी ख़ान, मुंतखबुल लुबाब, पन्नें 765-767
292 *हकीकत-बिना-वा-अरूजे-सिंघा, इंडियन हिस्टोरीका कुआरटरली, मार्च 1942

अध्याय 15

लोहगढ़ किला किस ने गिराया और इसे तहस नहस करने में कितना समय लगा?

जैसे कि पूर्व अध्यायों में वर्णन किया गया है कि किला लोहगढ़ जीतना मुग़ल फ़ौज के बस की बात नही थी इसलिए उन्होंने अपनी रणनीति बदली और केवल जरनैल बंदा सिंह बहादुर को गिरफतार करने पर मुग़ल फौजियों ने ज़ोर लगाया। सन् 1716 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उसके प्रमुख जरनैलों को शहीद करने के बाद मुग़ल बादशाह ने फैसला लिया कि लोहगढ़ किले और सढ़ौरा किले को गिरा दिया जाए। ताकि सिक्ख फ़ौज दोबारा से यहां पर आकर अपना मोर्चा ना जमा सके। लोहगढ़ किले के बारे उनको हर समय भय रहता था कि अगर सिक्खों ने इस किले पर फिर से कब्ज़ा कर लिया तो मुग़ल फ़ौज के हज़ारों सिपाहियों को यहां फिर लगा कर, अनेक वर्षों तक संघर्ष करके व हज़ारों सैनिक मरवाकर, बहुत बड़ा धन खर्च करके भी कब्ज़ा नहीं मिल सकेगा। क्योंकि सिक्खों को अपनी फ़ौजी गलतियों का एहसास हो चुका होगा और उन्होंने उनसे बचने के लिए उपाय भी कर लिए होंगे। वह कभी भी आकर काबिज हो जाएंगे। इस कारण फ़ौजी जरनैलों के सुझाव पर मुग़ल बादशाह ने इस किले को तबाह करने के हुक्म जारी कर दिए। इस किले को तोड़ने की जिम्मेदारी मंडयाला गांव (अमृतसर और झबाल, दोनों से 13 किलोमीटर दूर) के चौधरी मूसा-उल-ख़ान जिसको सिक्ख मस्सा रंगड़[293] करके जानते हैं को दी गई।

बंदा सिंह बहादुर की शहादत 9 जून, 1716 के उपरांत यह किला गिराया जाना शुरू हुआ। इस किले को गिराना काई आसान बात नहीं थी। क्योंकि अभी भी इस क्षेत्र में मुग़ल फ़ौज का घुसना खतरे से खाली नही था। मुग़ल फ़ौज के द्वारा एक रणनीति तैयार की गई जिसके चलते यमुना नदी और घग्गर दरिया के बीच रंगड राजपूत और मुग़लों के सहयोगी राजाओं की प्रजा को बसाया गया। लोहगढ़ के अग्रिम 52 मोर्चों में धीरे-धीरे मुग़ल फ़ौज और उनके साथी काबिज होते रहे। सन् 1720 से लेकर 1738 तक इस क्षेत्र में रहने वाले वणजारे, सिकलीघर, लुबाने और भील सिक्खों का नरसंहार किया गया। किले को तोड़ने के लिए सैंकड़ों मुग़ल सिपाही और हज़ारों मज़दूर लाए गए और यह सुनिश्ति किया कि यह मजदूर मुस्लिम धर्म को अपनाकर मुग़लों की वफादारी में रहें। एक अफवाह इन मज़दूरों के बीच में उड़ा दी गई कि लोहगढ़ किले की दीवारों के नीचे खजाना दबा है। जिस मज़दूर को यह खजाना मिलेगा वह उसका हो जाएगा।

293 *11 अगस्त, 1740 को सुक्खा सिंह और महताब सिंह ने दरबार साहिब की बेअदबी करने पर इसको मौत के घाट उतारा था।

इस उम्मीद से मज़दूरों ने लोहगढ़ की नीवें तक उखाड़ दी। उन्होंने एक-एक पहाड़ को यूनिट बना कर किले की दीवारों, मोर्चों, नींवों और रास्तों को गिराना शुरू किया। लोहगढ़ के इलाके में रहने वाले सिक्खों ने हिमाचल के जंगलों और पहाड़ियों में जाकर शरण लेने का फैसला लिया। मुग़लों ने किले के एक-एक पड़ाव, एक-एक मोर्चे को तोड़ कर, इन सभी गांवों पर एक-एक करके कब्ज़ा कर लिया और यहां के निवासी जिनको लक्खी राय वणजारा के टांडों के साथ संबंधित होने के कारण 'वणजारे' भी कहा जाता था। उनके परिवारों को कत्ल कर दिया यां वह यहां से चले गये। बाद में इन मुग़ल सिपाहियों और मज़दूरों को यहां बसा दिया गया। इन इलाकों में सन् 1716 तक जो नानक परस्ती गांव थे जिनमें ज़्यादातर वणजारा, लुबाना, सिकलीघर, भील सिक्खों के गांव और मक्का मदीना व बगदाद से आए सूफी पीरों के मुरीद फ़ौजी परिवार या सूफी विचारधारा के गांव थे।

स्थानीय लोगों के अनुसार मस्सा रंगड़ ने गांव मछरौली में अपना किलानुमा महल बनाया और वह यहीं रहकर 20 साल से अधिक समय लोहगढ़ किले को नष्ट करवाता रहा।[294] जिस किले को बनाने में 200 साल से अधिक लगे हो उसे नष्ट करने के लिए भी मुग़ल हुकुमत को काफी समय लगा। मछरौली गांव में मस्सा रंगड़ के महल के अवशेष आज भी मौजूद हैं। लोहगढ़ को तबाह करने के लिए लाए गए सिपाही और मज़दूर जिस गांव में रहते थे उस गांव का नाम मुग़लवाली बन गया। अब जितने भी मुसलमान इन इलाकों में रहते हैं वह उन मज़दूरों के वशंज हैं। जिनको सन् 1716 और 1738 के बीच या उसके उपरांत यहां लाया गया था।

लोहगढ़ और सढ़ौरा क्षेत्र के 50 से ज्यादा गांव लक्खी राय की संपत्ति थी और वहां उसके साथी 'वणजारे' रहते थे। लोहगढ़ क्षेत्र की समस्त भूमि की जागीरें यहां पर रहने वाले रंगड़ों को मुग़लों द्वारा दे दी गई थी। सन् 1947 में भारतवर्ष के बटवारे के दौरान यह रांगड़ पाकिस्तान चले गए थे। इस इलाके में अब बटवारे के बाद आए हुए लोग रहते है व कई गांव सिक्खों के भी है।

आज भी अनेकों गांवों में वणजारे और सिकलीगर रहते हैं। यह सभी गुरु नानक नाम लेवा हैं और स्वयं को सिक्ख कहते हैं। आज भी यहां वणजारों के कई गांव है। जैसे ईशरगढ़, इस्माईलाबाद, लोहारा, बीड़ सौंटी, हरीपुर माजरी, खैरा, सिंमलवाल, नखरोजपुर, भुखड़ी, फालसंडा, लाडवा, रुड़की, मंडखेड़ी, दिल्ली का माजरा, देवीदास पुरा, निवारसी (ज़िला कुरुक्षेत्र), बिगड़ (फतेहाबाद), बालसोला, नानकपुरा, नया नगर (पिंजोर नालागढ़ सड़क पर), शेरपुर,बक्करवाला, कलेसर, सुंदरबहादरपुर, नौशेहरा, बिलासपुर, बुड़िया, कुंजल, बराडा (ज़िला यमुनानगर), मिट्टापुर, सगरानी, ख़ानपुर, गनौली (ज़िला अंबाला), रायपुर रानी, शाहपुर, रुड़की, चौंकी नजदीक गुरुद्वारा नाडा साहिब, फतेहपुर, रैली, कुंडी, सूरजपुर, राजीपुर, पिंजौर, प्रेमपुरा,

294 *मछरौली के राजस्व रिकार्ड 1880 वाजित बुल्लरस के अनुसार एक महल का निर्माण मछरौली में करवाया गया और महल का मालिक मस्सा रगंड था।

कीरतपुर, मौलावाली, करनपुर, करौली, करोल फतेह सिंह, करोल मौला (ज़िला पंचकूला)। इसके अतिरिक्त ज़िला करनाल में संघोयी, बड़ागाओं, कलवाही, मेहतामाटी, नेवल, टीकरी, सुगरी, छपरा, दल्यानपुर आदि, चरखी दादरी, भिवानी, रोहतक, गुड़गावां, कोसाली, बेहरी, गोहाना, महेंद्रगढ़, नारनौल, सोनीपत, पानीपत, घरौंड़ा इत्यादि में भी रहते हैं।

हिमाचल में किआरदा, पटल्यों, किशनपुर, थापलपुर (जहां गुरु हर राय साहिब जी सन् 1645 से 1658 तक तकरीबन 13 साल रहे थे), सिंघपुरा, भट्टवाली, बन्नेवाली, मोलोक वाली, बरोटीवाला, हरीपुर, फतेहबाद, विकास नगर, सलाखोई, विक्रम बाग आदि। पंजाब में भी इनके बहुत गांव हैं, जैसे टांडी, नया गांव (चंडीगढ़ के साथ, तहसील खरड़), मसोली, अरोली, दासोवाला, लुबानगढ़, उड़्यावाला, टांडा (तहसील माछीवाड़ा), मादवाड़ा (तहसील रोपड़), बेहट (तहसील लुधियाना) पंजाब, हरियाणा और हिमाचल के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश में टांडा (ज़िला रामपुर) और उत्तराखंड में टांडा नाम के गांवों में भी बहुत से वणजारे रह रहे हैं। यह सभी आज भी अपने जन्म, विवाह, मौत के संस्कार सिक्ख रीति-रिवाज के अनुसार ही करते हैं।

यह भी स्पष्ट दिखाई देता है कि यहां मुसलमान मजदूर कम मात्रा में ही रह गए होंगे। क्योंकि सन् 1852 के रिकार्ड में भी यह जगह जंगल, ग़ैर आबाद, ग़ैर-काश्त ज़मीन बताई गई है। जिसमें आबादी का कोई उल्लेख नहीं है। इन गांवों की वास्तविक चकबंदी अंग्रेजी निज़ाम में हुई थी और अंग्रेजों के पहले चकबंदी अफसर कालेराय ने लोहगढ़ क्षेत्र में दूर-दूर से लोगों को लाकर बसाया।

अध्याय 16

युद्ध समाप्ति के बाद वणजारों के हालात

लोहगढ़ की लडाईयों और जम्मू से लेकर बरेली तक, सन् 1709 से लेकर 1717 तक सिक्ख फौज के द्वारा मुगल फौज पर हमलो के बाद यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो चुकी थी कि इस युद्ध में जो मुख्य भूमिका वणजारें और सिक्लीघरो की थी और इन युद्ध के चलते मुगल राज का पतन हुआ था। आखरी सांस लेते हुए मुगल राज ने इस पूरी बात का बदला लेने के लिए वणजारें और सिकलीघरो पर बेतहासां जुल्म ठहाने शुरू किए जैसे कि किताब के पहले अध्यायों मे जिर्क किया गया है कि सिक्खो के सिरो का सिर काटने का मूल्य मुगलो द्वारा 30 रूपये डाला गया था जोकि उस समय की बहुत बडी कीमत थी। अखबारे-ए-दरबारे-मोला के अनुसार राजपुर मुरादाबाद के नजदीक मुगलो द्वारा वणजारों के टाडों को लूट लिया गया और इस लूट से 4 लाख रूपये का सामान मुगलो के हाथ लगा।[295] इन फारसी के स्त्रोतो से यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि मुगलो ने वणजारों के टाडो को भारतवर्ष में लुटना शुरू कर दिया और वणजारों को व्यापार करने से रोक लगा दी।

भाई लक्खी राय वणजारा जहांगीर के समय से लेकर ओरगजेंब के समय तक भारतवर्ष पर व्यापार के सदर्भ में राज कर रहा था और उनके पास कम से कम 3 लाख के करीब ऊंट, हाथी, घोड़े, बैल और खच्चर आदि थे और उसके मुलाजमों की संख्या निश्चित रूप से लाखों में रही होगी, जोकि उसकी स्वयं की अपनी फौज थी। जोकि उनके वशजों की शहादत के बाद मुगलों द्वारा तहस-नहस कर दी गई। इसी तरह बाकि बड़े टांडे जोकि पवांर, तोमर, चैहान, राठौर इत्यादि वणजारें परिवारों के साथ संबंधित थे ,को मुगलो के द्वारा नष्ट कर दिया गया।

टांडों में व्यापार कर रहे वणजारें व उनके परिवार हजारों की संख्या में बेकार हो चुके थे। यह लोग अब काम की तलाश में इधर-उधर घुमने लगे। और कुछ छोटा व्यापार करने लगे। कुछ अन्य कामों में गुजर-बसर करने लगे। बेशक वह अब टांडो के रूप में लंबी यात्राएं (बलख, बुखारा, यारकन्द, समरकन्द आदि तक) नहीं करते थे परन्तु लोग उनको वणजारा ही कहते थे। इसी तरह जो लोग गुरु साहिबान, जरनैल बंदा सिंह बहादुर और भाई लक्खी शाह वणजारा के लिए हथियार बनाते थे, वह भी अब बेकार हो चुके थे। मुगलों ने उनको काम नहीं दिया और वह अब छोटे-छोटे काम करने लगे। बहुत विलंब के उपरांत वणजारे शहरों और गांवों में सामान ले जाकर बेचने लगे। लक्खी राय के टांडों में रहने के कारण अधिकतर के पास व्यापार का अनुभव था। उनको पता था कि किस इलाके में किस चीज की मांग है। उनके पास अधिक पूंजी नहीं थी इस

295 AKHBARAT FS, 4th RY, I, P24, Muzaffar Alam, The Crisis of the Empire in Mughal North India, Page-250.

कारण वह बड़ा व्यापार नहीं कर सकते थे। इस कारण वह थोड़ी पूंजी के साथ लोगों की छोटी-छोटी जरूरतें पूरी करने लगे। ऐसे वह इन फेरी के व्यापार में से रोजगार कमाने लगे। कई बार तो वह लोगों के लिए जरूरत भी बन जाते थे इसलिए लोग उनकी अक्सर प्रतीक्षा करते रहते थे। वणजारों के मुहावरे, लोकोक्तियां और गीत भी बनने लगे। मौका के हाकिमों ने गौरवशाली वणजारां ईतिहास को नष्ट कर दिया और वणजारों को जगंलो में जाने पर मजबूर कर दिया। इसके चलते हुए समकालीन समय में वणजारों के वशजों को अपने गौरवशाली इतिहास के बारे में कुछ नही पता। निःसंदेह यह लोग सिक्ख नहीं रहे हैं परन्तु जीवन के हर कार्य को करते समय गुरु नानक साहिब को याद करके कार्य के प्रारंभ करते हैं।

वणजारों की तरह लोहगढ़ किले के क्षेत्र में सिकलीगर लोगों की संख्या भी बहुत अधिक थी और उनको एक जगह काम मिलने की कोई उम्मीद नहीं थी, इस कारण वह चारों ओर घुमने लग गए जिससे उनको काम मिल सके। उनमें से बहुत से मरहटों के इलाके की ओर भी निकल गए। कुछ कुमाऊं की ओर चले गए और कुछ राजपूत राजाओं की ओर, परन्तु किसी भी राजा, पेशवा, चैधरी या जमींदार ने उनको हथियार बनाने के लिए कारखाने लगा कर नहीं दिए। इसका एक कारण यह भी था कि वह सिक्खी स्वरूप में थे और उन्होंने अपना धर्म छोड़ देने और केस, दाढ़ी काटने से इन्कार कर दिया था। इस हालत में उनको तंबूओं, खेमों और झोपड़ियों में रहकर छोटे बड़े, हर तरह के काम करने पड़े। जहाँ भी काम की कमी होती वह आगे निकल जाते थे। इसी कारण बंदा सिंह और लक्खी राय वणजारा के टांडों के वणजारे और सिकलीगर भारतवर्ष में तंबू लगा कर रहने लगे और घूमतु जाति की श्रैणी में आ गए। आज भी लोहगढ़. के नजदीक पाउंटा साहिब नाहन क्षेत्र के इलाके में सिकलीघर और वणजारे काफी जनसख्या में मौजूद हैं। इस तरह भारवर्ष की सबसे अमीर व्यापारिक कौम/जाति को मुगलों और अंग्रेजी सरकार ने आपराधिक ट्राइबल एक्ट लगाकर सबसे गरीब बना दिया जोकि अब कबीलों में रह कर अपना जीवन गुजर-बसर कर रही हैं।

'लोहगढ़ ट्रस्ट' के सदस्यों ने कर्नाटक, महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश में बैठे कुछ वणजारों और सिकलीगर कबीलों के साथ संपर्क किया और उनको लोहगढ़ किले के बारे में जानकारी दी। जब उनको बताया गया कि यह किला वणजारों ने लक्खी शाह वणजारे के नेतृत्व में बनवाया और सिकलीगरों ने इस किले में लड़ाई के हथियार बनाये तो यह बात सुनकर वह बहुत उत्साहित हुए। इन वणजारों के नेता 'लोहगढ़ ट्रस्ट' के बहुत शुक्रगुजार हुए और उन्होंने लोहगढ़ पर अंग्रेजी भाषा में लिखी पुस्तक को अपनी भाषा 'कन्नड' में अनुवाद करवा कर प्रकाशित करवाई जिसका आवरण 08 अप्रैल, 2018 को बंगलौर में समागम करके किया गया तथा इस पुस्तक को मराठी भाषा में अनुवाद करवाकर मुम्बई के यशवंत राय चैहान आडिटोरियम में अवारण किया गया इस पुस्तक की अनेक प्रतियां अलग-अलग वणजारों के कबीलों में बांटी गई। इसके अतिरिक्त वणजारों ने इस पुस्तक का तेलगु और मलयालम भाषाओं में अनुवाद की सहमति जताई है जिसका 2022 अंत तक लोकार्पण होने की उम्मीद है।

अध्याय 17

गढ़वाल की रियासत और सिक्ख

सन् 1503 में गुरु नानक साहिब का दौरा गढ़वाल रियासत में दूसरी उदासी के दौरान हुआ यहां पर पिलीभीत नगर के नजदीक गोरखमता में गुरु नानक साहिब की गोष्टी जोगियो और सिद्दो से हुई थी। गुरु नानक साहिब से प्रभावित होकर जोगी व सिद्ध सिक्ख बन गए और उन्होनें गोरखमते का नाम नानकमता रख दिया। आज भी गुरुद्वारा नानकमता सिक्ख इतिहास का एक महत्वपूर्ण स्थान है और यहां पर एक गुरुद्वारा भी सिशोभित है। उस समय गढ़वाल का राजा अजय पाल गुरु नानक का सिक्ख बन गया था। राजा अजय पाल राजा भोज के वंशजों में से एक था और इनका संबंध पाल राजवंश के साथ था। पाल राजवंश वणजारों से संबंधित था और आठवीं शताब्दी में पाल राजवंश ने भारतवर्ष पर राज किया था। (पूर्व अध्यायो में बताया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मुगल राज पर आक्रमण जम्मू से लेकर बरेली गढ़वाल की पहाडियो तक था) इससे यह स्पष्ट है कि गढ़वाल की पहाडियो में भारी किलाबंदी कर दी गई थी जिसके अवशेष आज भी गढ़वाल की पहाडियो में मौजूद है। अध्याय 27 में जोन न. 5 में क्षेत्र में विस्तारपूर्वक जानकारी दी गई है।

सिक्खों के छठे गुरु हर गोबिंद साहिब दो बार गढ़वाल रियासत में आए। पहली बार सन् 1627 में और दूसरी बार जून 1634 ईस्वी में 'नानकमता' जाते हुए गढ़वाल ठहरे थे। श्रीनगर गढ़वाल की राजधानी में गुरु जी गढ़वाल के राजा 'माहीपत शाह' (सन् 1622-1633) की विधवा रानी 'करणावती, भाई लक्खी शाह वणजारा' और 'समर्थ राम दास (जोकि शिवाजी मरहठा का उस्ताद था) से मिले। समर्थ रामदास ने हलीमी का पाठ गुरु साहिब जी से ग्रहण किया जोकि बाद में उसने यह शिक्षा शिवाजी मरहठे को दी।[296]

राजा महिपत शाह का पुत्र मात्र आठ वर्ष का था, जब गुरु साहिब गढ़वाल रियासत में आए और इसका प्रबंध उसकी माता करणादेवी देख रही थी। गुरु साहिबों से भेंट के उपरांत उसका साहस और बढ़ गया और वह हर मुश्किल का सामना करने लगी। रानी करणावती ने बहुत से वर्षों तक अपने राज को पूरी कामयाबी के साथ संभाले रखा और प्रत्येक हमलावार को मुंहतोड़ जवाब देती रही, यहां तक कि उसने मुगल फौज (जिसका नेतृत्व मजावत खान कर रहा था और शाह जहान ने उसे भेजा था) को अपने राज्य से सन् 1640 में भगा दिया। उन्हीं दिनों इस रानी का नाम 'नकटी रानी' पड़ गया, क्योंकि वह हर उस जरनैल का नाक काट देती थी जो भी उसके राज्य पर हमलावर बनकर आया।

---

296 *डॉ. हरजिंदर सिंह दलगीर, पुस्तक सिक्ख इतिहास भाग पहला, पृष्ठ-265) राजा माहीपत शाह ने गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ ग्वालियर के किले में सन् 1619 में मुगलों की कैद काटी थी।

सन् 1654 को शाह जहान ने एक फौजी टुकड़ी राजा पृथ्वी शाह को सबक सिखाने के लिए भेजी, जिसके परिणाम से देहरादून, गढ़वाल से अलग हो गया।[297] मई 1657 में दारा शिकोह की फौज व औरंगजेब की फौज के बीच शामूगड़ में लड़ाई हुई, जिसमें दारा शिकोह पराजित हुआ और औरंगजेब विजेता रहा। सिक्खो के सातवें गुरु, गुरु हर राय साहिब के कहने पर गढ़वाल के राजा ने 29 मई, 1658 ईस्वी को दारा शिकोह के सुपुत्र सुलेमान शिकोह को गढ़वाल में पनाह दी। क्योंकि औरंगजेब ने अपने पिता शाह जहान को जेल में डालकर अपने भाइयों के विरूद्ध जंग शुरु की हुई थी। दारा शिकोह मदद लेने के लिए अपनी फौज के साथ पंजाब की ओर भागा। दारा शिकोह सूफीमत से प्रभावित था व गुरु हर राय साहिब का भी मुरीद था। गुरु हर राय साहिब जी के पास उस समय बड़ी फौज थी। दारा शिकोह ने गुरु जी से सहायता मागीं।

सन् 1658 में सुलेमान शिकोह ने गढ़वाल में पन्हा ली, उस समय गुरु हर राय साहिब जी थापल गांव जोकि सिरमोर रियासत में पडता था। सन् 1658 को दारा शिकोह की सहायता के लिए गुरु हर राय साहिब जी थापल से गोविन्दवाल पहुंचे व गुरु जी की फौजो ने नदी के पतन की बेडियो को अपने कब्जे में ले लिया। राजा राजरूप जोकि नूरपुर का राजकुमार था (1646-1661) भी दारा शिकोह की सहायता के लिए आया परन्तु उस समय दारा शिकोह ने अपने आपको कमजोर मान लिया था, इस कारण उनको वापिस जाना पड़ा। 1659 को औरंगजेब ने दारा शिकोह को पकड़कर मार दिया।

गढ़वाल के राजा पृथ्वी शाह ने सुलेमान शिकोह को सुरक्षा दी हुई थी। औरंगजेब ने अपनी पूरी कोशिश की कि सुलेमान शिकोह उसके हाथ आ जाए, परन्तु पृथ्वी शाह दृढ़ रहा और उसने सुलेमान शिकोह, औरंगजेब को नहीं दिया, निःसंदेह राजा जय सिंह ने भी दखल दिया। बहुत कोशिशों के पश्चात गढ़वाल के राजा की इच्छा के विरूद्ध सुलेमान औरंगजेब के पास जा उपस्थित हुआ।

1661-62 गड़वाल के राजा की 40 वर्ष की आयु में, सुलेमान शिकोह की 28 वर्ष की उम्र में नूरपुर के राजा की 40 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गई और इसी समय ही गुरु हर राय साहिब जी भी 32 वर्ष की आयु में ज्योति जोत समा गए थे। इन प्रसिद्ध व्यक्तित्वों के अचानक अकाल गमन होने की ख़बर समूह इलाके के लिए बड़ा सदमा था।

उत्तराखंड और वणजारे -

जिला देहरादून के इलाके में कोई आबादी नहीं थी। यहां 11वीं सदी के पश्चात वणजारे आकर पूर्ण रूप से बस गए थे।[298] सिक्ख इतिहास के पिछले पृष्ठों को पढ़ते हुए देखा कि गुरु नानक साहिब ने अपनी पहली दक्षिण उदासी के दौरान बरेली खंड मुरादाबाद ठहरे, जहाँ वणजारों का टांडा था। इन वणजारों ने गुरु साहिब जी की शिक्षा ग्रहण कर सिक्ख धर्म अपना लिया। गुरु

---

297 *भारत के इम्पिरल गजटियर, देहरादून सन् 1909 भाग-2, पृष्ठ 165
298 *इम्पिरल गजटियर, देहरादून सन् 1909 भाग-2, पृष्ठ 212

हर राय साहिब जी ने इस इलाके में 360 प्रचार केंद्र और बना दिए और नाहन, गढ़वाल, सहारनपुर और मुरादाबाद के इलाके में काफी सिक्ख केंद्र स्थापित किये। सिक्खों ने इन इलाकों में बहुत से किले बनाए, जिनके अवशेष भाई लक्खी राय वणजारा के नाम और देहरादून, हरिद्वार, यमुना नदी से गंगा नदी के मध्य पहाड़ियों की चोटियों पर मिले हैं जिसका प्रमाण पुरातत्त्व विभाग भी देता है।

सिक्ख इतिहास को सिक्ख गुरुओं द्वारा वणजारों को मुगलों के विरुद्ध स्थापित करने का इतिहास पढ़ने की जरूरत है, क्योंकि बंदा सिंह बहादुर ने श्रीनगर-गढ़वाल के नेता और वणजारों के सहयोग से ही मुरादाबाद सरकार की सीमा और दिल्ली प्रांत के चकला बरेली तक खालसा झंडा फहराया (अखबार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की लिखित अनुसार) यह घटना सन् 1712 की है जब पहाड़ी इलाके का प्रमुख फतेह शाह था, जिसने गुरु गोबिंद सिंह जी के साथ भंगानी का युद्ध लड़ा था परन्तु बाद में महसूस किया कि गुरु साहिब जी की लड़ाई अन्याय के विरुद्ध थी। अपनी गलती महसूस करते हुए उसने बंदा सिंह बहादुर के साथ मिलकर मुगलों के विरूद्ध मोर्चा खोला। पर्शियन रिपोर्टों के अनुसार सिक्खों की 40,000 फौजें गढ़वाल की पहाड़ियों में घूम रही थी और बंदा सिंह को इस इलाके का पूरा ज्ञान था और वह तूफान की तरह इन पहाड़ियों के मध्य में से निकलता हुए उत्तर प्रदेश की सरकारों और परगनों पर हमले करता रहा। सन् 1716 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत के बाद भी गढ़वाल क्षेत्र में वणजारें मुगलो के खिलाफ लडते रहे और यह लडाई सन् 1718 तक जारी रही।

अध्याय 18

सिक्ख जरनैल बंदा सिंह बहादुर की मानवता को देन

जरनैल बंदा सिंह बहादुर केवल एक सिक्ख फ़ौज के बड़े जरनैल ही नहीं थे। उन्होनें जम्मू से लेकर बरेली तक के इलाकों में रहने वाले लोगों के हितों के लिए क्रांतिकारी कार्य किए। इन्होने पंजाब में मुग़लों की 700 साल की गुलामी और दक्षिणी एशिया की 1000 साल की गुलामी को खत्म किया। देश को ज़ालिम मुग़लों के हाथों आजाद करवाने की नींव रखी। यह वह शख़्स था जिसने मुग़ल साम्राज्य को हिला कर रख दिया और बाबर वंश के 200 साल पुराने मुग़ल राज की जड़े उखाड़ दी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोगों के दिलों में बैठे हुए डर को दूर किया कि मुग़ल बहुत शक्तिशाली हैं, इनका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता।

इसलिए जब तक वह जीवत रहा तब तक तीनों बादशाहों, दर्जन से ज्यादा गवर्नरों, दो सौ से अधिक राजाओं, जरनैलों, पुलिस मुखियों और अनगिनत ज़ालिम जेहादियों को एक दिन भी आराम के साथ सोने नहीं दिया। अनगिनत शाही फ़ौज के जरनैल व सिपाही इस महान जरनैल को हराने के लिए संघर्ष करते रहे। निःसंदेह एक लाख से ज्यादा सिक्खों ने इस मुहिम में अपनी जान की कुर्बानी दी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत के उपरांत भी मुग़ल पंजाब में शांतिपूर्ण तरीके से ना रह सके। मुग़लों की घटती हुई ताकत अब देश के बाकी हिस्सों में भी फैलने लगी। धीरे-धीरे सिक्ख मुहिम पंजाब में ही नहीं देश के अन्य स्थानों जैसे कि राजपूताना, पहाड़ी इलाकों, यू.पी, मध्यप्रदेश, बिहार और हिंदूस्तान के अन्य हिस्सों में प्रभाव डालने लगी।

यदि दुनिया के इतिहास का ध्यान के साथ अवलोकन करें तो पता चलता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने किन हालातों में मुहिम आरंभ की थी और इनको कौन सी ऊंचाईयों तक ले गए थे। तो यही समझ में आती है कि इस जरनैल को तो इतिहास में अत्यंत खास व अग्रिम स्थान मिलना चाहिए था। इतिहासकार रत्न सिंह भंगू लिखते है कि बाबा विनोद सिंह व अजीत सिंह पालित, मुग़लों के साथ जा मिले थे फिर भी इस स्थिति में बंदा सिंह बहादुर की सफलताओं ने इस समय को लोकहितकारी, कल्याणकारी व क्रांतिकारी बना दिया। केवल सिक्ख इतिहास में ही नहीं बल्कि संसार भर के इतिहास में इस गौरवशाली गाथा का कोई मुकाबला नही मिलेगा।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने आजादी हासिल करने का इतिहास अपने रक्त के साथ लिखा है। परन्तु मानसिक बिमार, गुलाम, दब्बू और डरपोक लोग इस संघर्ष से कुछ नहीं सीख पाए। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में दुनिया के सबसे ताकतवर मुग़ल राज के खिलाफ गुरु नानक साहिब के सिद्धांत पर चलकर जम्मू से लेकर बरेली तक हलीमी राज स्थापित किया। यदि मानवता का इतिहास देखा जाए तो हलीमी राज की स्थापना पहली बार की गई थी। जरनैल

बंदा सिंह बहादुर ने सिक्खों को गुरु नानक साहिब के नाम का सिक्का, मोहर और कैलेंडर दिया। जो आजादी का चिन्ह था। जरनैल बंदा सिंह बहादुर दुनिया के इतिहास में पहला जरनैल हुआ है, जिसने जमींदारा व्यवस्था को पहली बार खत्म किया था। खेती करने वाले गरीब मुजाहरों को ही जमीन का मालिकाना हक दिया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सिक्खों को एक संस्था और लीडरशिप की ताकत का एहसास करवाया। उसने स्वयं एक नायक का किरदार और दूसरों को भी उसी आदर्श पर चलना सिखाया। उन्होनें दिखा दिया कि कैसे कोई स्वयं धर्म पर विश्वास करते हुए हंसते-हंसते शहादत प्राप्त कर सकता है। विश्व के इतिहास में किसी भी अन्य जरनैल ने इतने कष्ट और उत्पीड़न वाली शहादत नहीं दी होगी। इस धरती पर उसका जीवन एक अलग मिसाल है। गुरु साहिबानों के पश्चात बंदा सिंह की जीवनी सिक्ख इतिहास में सदैव रोशन रहेगी जो आने वाली सिक्ख पीढ़ीयों के लिए रोशन-ऐ-मिनार रहेगी।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर और इस्लाम

ज्यादातर सरकारी मुग़ल लेखकों ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर को ज़ालिम व इस्लाम के विरोधी लिखा है। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के व्यक्तित्व के साथ धोखा व इतिहासिक झूठ है। ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के अध्ययन से पता चलता है कि उसने एक भी बेकसूर मुस्लमान को नहीं मारा। उनकी लड़ाई केवल ज़ालिम मुग़ल राज के खिलाफ थी। आम मुस्लमान लोग भी मुग़ल हाकमों से पहले ही परेशान थे। इतिहास के दस्तावेज़ हमें प्रमाण देते हैं कि आमजन मुस्लमान तो बंदा सिंह का साथ दे रहे थे। समाना, सढ़ौरा, बुड़िया, कलानौर और अन्य कई इलाकों के सामान्य मुस्लमान बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज का हिस्सा बने व मुग़ल सल्तनत के हाकमों के विरुद्ध लड़े।

दूसरा जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर मुग़लों से कोई इलाका आजाद करवाते थे, तो वह मस्जिदों व मजारों को तबाह नहीं करते थे। कई दर्जन मस्जिदों और अन्य धार्मिक स्थान आज भी देखे जा सकते हैं। जो समाना, फतेहगढ़, सरहिंद व सढ़ौरा व अन्य कई पुराने शहरों में उसी तरह आज भी स्थापित हैं। दूसरी ओर मुग़ल शासकों और अफगान शासकों ने नानक परस्तियों का कत्ल किया और उनके धार्मिक स्थानों को भी नष्ट किया।

28 अप्रैल, 1711 की अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला की प्रविष्टि के अनुसार कलानौर में जरनैल बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज में पांच हज़ार मुस्लिम फ़ौजी भी थे। बंदा सिंह बहादुर अपने सभी सिपाहियों को इज्जत के साथ 'जी' लगाकर संबोधित करते थे। निःसंदेह वह मुग़ल या सिक्ख सिपाही ही क्यों न हों। उन्होनें मुग़लों के धार्मिक नेताओं के विरुद्ध या इस्लाम के विरुद्ध कभी कोई गलत आदेश का इस्तेमाल नहीं किया। दूसरी ओर मुग़ल हाकिमों ने सिक्खों को काले मुंह वाले, (कुत्ता) कुत्ते, चोर और हालातों के मारे हुए निकम्मे लोग कहा है।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का बर्ताव, अपने सिक्खों और मुग़ल सिपाहियों के साथ एक

जैसा ही था। एक बार एक सिक्ख ने किसी मुसलमान की ज़मीन पर कब्ज़ा कर लिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने उस सिक्ख को पद से हटा दिया।[299] जरनैल बंदा सिंह ने अन्याय करने वालों पर सख़्त हिदायतें जारी की हुई थी। दूसरी ओर मुग़लों ने कई बार जिहाद का नारा सिक्खों के विरुद्ध ऐलान किया हुआ था कि इन नानक परस्तियों का पूरी तरह अंत किया जाये। बादशाह बहादुर शाह ने 10 दिसंबर, 1710 को जारी किए हुक्म में स्पष्ट कहा था कि जो भी नानक परस्ती मिले उसको बेरहमी के साथ कत्ल कर दिया जाये। नानक परस्तियों का अंत करने के लिए यही हुक्म कई बार दुहराऐ गये। इसलिए जरनैल बंदा सिंह बहादुर को इस्लाम का विरोधी कहना इतिहास के साथ बहुत बड़ा धोखा और अन्याय है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के किरदार से यह बिल्कुल साबित होता है कि उनकी लड़ाई इस्लाम विरोधी नहीं थी। केवल मुग़ल शासकों द्वारा इस बात को इसलिए प्रचारित किया गया कि ताकि मुस्लमानों को इक्कठा करके मुग़ल राज को बचाया जा सकें।

---

299 *केसर सिंह छिब्बर की किताब 'बंसावलीनामा दसम पातशाहियों का' के पृष्ठ 44-45 और बंदा सिंह-इन्साफ नामा लिखा है।

अध्याय 19

नानकि राजु चलाइिआ सचु कोटु सताणी नीव दै

ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ की तैयारी कब और कैसे?

सिक्ख इतिहास लिखने में जो इतिहासकारों द्वारा जानबूझ कर या अनजाने में समय समय पर विसंगतियां, उलझनें, विरूपण और वियोग उत्पन्न किये गए जिस कारण सिक्ख इतिहास को समझने में बाधा उत्पन्न हुई है। इन दुविधाओं को दूर करने के लिए संदर्भ गुरु ग्रंथ साहिब से लिए जा सकते है क्योंकि गुरु ग्रंथ साहिब में धार्मिक उपदेश के साथ-साथ इतिहासिक घटनाओं का वर्णन भी किया गया है और जहां तक लोहगढ़ खालसा राजधानी को बनाने के इतिहास की बात है वह इस किताब के अध्याय 1,2,3,20,21 और 22 में स्पष्ट किया गया है कि लोहगढ़ खालसा राजधानी की नीति और तैयारी की शुरुआत गुरु नानक साहिब के समय से आरंभ हो गई थी।

नानकि राजु चलाइिआ सचु कोटु सताणी नीव दै।। (अंग 966)

गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 966 पर वर्णित इस श्लोक से यह स्पष्ट है कि गुरु नानक साहिब के समय से ही हलीमी राज की स्थापना हो गई थी और सच की विचारधारा पर चलते हुए दुनिया के सबसे मजबूत किलों का निर्माण आरंभ हो चुका था। लोहगढ़ के नजदीक कपालमोचन और नाहन में गुरु नानक साहिब के आगमन से संबंधित गुरुद्वारे मौजूद है जो इस बात की गवाही दे रहे है कि गुरु नानक साहिब के समय यानि की सोलहवीं शताब्दी से हलीमी राज की तैयारी हो चुकी थी। अठारवीं शताब्दी जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने औपचारिक तौर से लोहगढ़ में हलीमी राज की घोषणा करी थी। जैसे कि अध्याय न. 22 में विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है कि सभी दस सिक्ख गुरु साहिबान नें लगभग 200 वर्षो तक हलीमी राज की स्थापना के लिए कार्य किया।

हलीमी राज की योजना के चलते हुए लोहगढ़ क्षेत्र में सिक्ख गुरु साहिबान के द्वारा भील सिक्खों, सिकलीगरों और वणजारें सिक्खों के कई गांव बसाए गए। इसके अतिरिक्त सूफी और कादरी सिलसिले के संतो ने लोहगढ़ राज्य का क्षेत्र (जम्मू से लेकर बरेली तक) में आकर बस गए और गुरु नानक साहिब के मानवतावादी सिद्धांत पर कार्य आरंभ किया और इसके अतिरिक्त गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान समस्त 35 महापुरुषों ने हलीमी राज की स्थापना मे पूर्ण योगदान दिया। गुरु नानक साहिब ने खालसा राजधानी के इर्द-गिर्द मंजी/धरमसाल स्थापित की जोकि नाहन, पाउंटा साहिब, सुढ़ल, झीवरहेड़ी, मारवा, बुड़िया, बणी बदरपुर, करनाल, कुरूक्षेत्र, डुडी,

शाहबाद, अंबाला, मनीमाजरा, पिंजौर, खानपुर, कैथल इत्यादि स्थानों पर स्थित हैं। इस जगह प्रत्येक पेशे से सबंधित नामवर और अनुभवी कारीगरों के गांव बसाए गए थे। इसके अतिरिक्त लोहगढ़ क्षेत्र में कई नगर/शहर बसाए गए जोकि किलानुमी थे और बाद में यह लडाई के समय मुगल फौज के विरूद्ध इस्तेमाल में लाए गए। समाज के लिए प्रत्येक ज़रूरत का सामान खालसा राजधानी में तैयार होने लगा। आमो के बाग़ प्रत्येक गांव में लगाए गए। इन गांवों में नानकशाही ईंटों/चूने और सुरख़ी के साथ, चिनाई के ख़ूबसूरत कुएं और तालाब तैयार किये गए, जोकि आज भी देखे जा सकते हैं। पहाड़ियों के निकट पत्थरों के कुएं भाई लक्खी शाह वणजारा द्वारा लगाऐ गए आज भी मौजूद हैं। इस इलाके में लगभग 52 गांवों को गढ़ी के रूप में तैयार किया गया, और लगभग 50 बड़े गढ़/किले तैयार किए गए थे। सिक्ख संगत विश्व के कोने कोने से लोहगढ़ खालसा राजधानी के क्षेत्र में आकर बसी और इस क्षेत्र में पहले से रहने वाली जनसंख्या ने सिक्ख विचारधारा को अपनाया।

शहर के रूप में सढ़ौरा, नारायणगढ़, बुड़िया, जगाधरी, अब्दुलापुर, छछरौली, खिजराबाद, दामला, साहा, मुलाना, मुस्तफाबाद, बिलासपुर इत्यादि मशहूर थे। इस जगह विश्व भर का कपड़े का व्यापार, पीतल, तांबा, कांसा और अन्य धातुओं का कारोबार, प्रत्येक किस्म के मिट्टी के खिलौने/बर्तन तैयार होते थे। यहां एशिया की बड़ी लकड़ मंडी खिजराबाद में लकड़ से बनने वाला सामान तैयार किया जाता था। इस तैयार सामान को भाई लक्खी शाह के टांडों द्वारा दूर-दराज तक व्यापार के लिए लेकर जाया जाता था।

छठे गुरु हर गोबिंद साहिब जी के समय इस जगह पर जंगी स्तर की तैयारी के लिए ज़ोरों पर कार्य आरंभ किया गया। यहां सिकलीगर सिक्खों को प्रत्येक किस्म के जंगी हथियार बनाने के कारख़ाने लगा कर दिए गए। इन हथियारों की सप्लाई भाई लक्खी शाह जी के टांडों द्वारा मुग़ल बादशाह/ कर्मचारियों के अतिरिक्त हिंदू राजाओं को भी की जाती थी। गुरु साहिबान की सिक्ख फ़ौज के लिए बहुत ही बढ़िया हथियार जैसे कि तलवार, ढाल, नेज़ा, कटार, चक्कर, और विशेष तौर पर तोपों और तोपों की बैरलें, विशेष प्रकार की तोड़ेदार बंदूकों, लम्बी दूरी की मार करने वाली बंदूका को गुप्त रूप में तैयार किया जाता था। इन गाँवों में चमड़े की बनी घोड़ो की गद्दियां, रकाब, लगामें, तीखे हथियारों की मार से बचने के लिए चमड़े के विशेष प्रकार के कव्च सिक्ख सैनिकों के लिए बनाए जाते थे।

इस इलाके में गुरु तेग़ बहादुर जी गुरु बनने से पहले सन् 1640-1655 तक भ्रमण करते रहे थे। इस समय के दौरान गुरु जी ने इन इलाकों में कई आमों के बाग़ और नानकशाही ईंटों के कुएं बनवाए थे। उन्होने सन् 1656 से 1663-64 तक पूर्व के इलाकों में परिवार सहित प्रचार दौरे किए थे। पटना, असम, बंगाल की पहली यात्रा इसी समय के दौरान हुई थी। दूसरी उदासी/प्रचारक यात्रा इन इलाकों में गुरु बनने के पश्चात सन् 1665 में की थी। सातवीं पातशाही गुरु हर राय साहिब परिवार सहित सन् 1645 से 1658 तक गांव थापल, खालसा राजधानी

लोहगढ़ इलाके में लगभग 12-13 वर्ष तक अगवाई करते रहे थे।

दसवीं पातशाही गुरु गोबिंद सिंह जी सन् 1685-1688 में खालसा राजधानी लोहगढ़ से 10-12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित पाउंटा साहब किले में रहे और उनकी अगुवाई में खालसा राजधानी लोहगढ़ को मुकम्मल किया गया तथा इसी स्थान को सन् 1710 में सिक्ख जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा राजधानी घोषित किया गया। सन् 1710 से 1716 तक जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत के उपरांत खालसा राजधानी लोहगढ़ में सन् 1739 तक मुग़ल फौजें कत्लेआम करती रही थीं। इस कत्लेआम के लिए रंगड़ों के 85 गांव इस स्थान पर बसाए गए थे। मस्सा रंगड़ मछरौली से इनका नेतृत्व कर रहा था।

भील सिक्खों का खालसा राजधानी लोहगढ़ में योगदान

गुरु नानक साहिब जब जबलपुर के जंगलों में जुल्म सहन कर रहे भील जाति के नेता कोड़ा भील को मिले और गले लगाया तो इस सबको देखकर सारी भील जाति गुरु नानक साहिब की मुरीद हो गई। गुरु नानक साहिब लगभग छह माह भील लोगों में भ्रमण करते रहे थे। इस स्थान पर धर्मसाल/प्रचारक मंजी स्थापित की। भाई कोड़ा भील को पहला प्रचारक स्थापित कर, भीलों के गांव खालसा राजधानी लोहगढ़ में बसाए गए। तीर-कमान के माहिर भील सिक्खों की बड़ी फ़ौज सिक्ख जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में मुग़ल फौजों के साथ जंग लड़ती रही और बहुत सी शहादतें भी दी, लेकिन खालसा राजधानी लोहगढ़ में अब भीलों का कोई भी परिवार नहीं रहता है। आज भी लोहगढ़ क्षेत्र में इन भीलो के नाम से गांव मौजूद है जैसे कि भीलपुरा, भीलछप्पर इत्यादि।

अध्याय 20

बेगमपुरा उर्फ लोहगढ़

अठाहारवीं शताब्दी में विश्व भर में साम्राज्यवाद शासकों का राज था और इस सिद्धांत के चलते हुए जागीरदारी प्रथा (सामंती व्यवस्था) हर देश में लागू थी। जिस कारण किसान और कमेरे वर्ग का शोषण ज़ोरों-शोरों से चल रहा था। सामंती व्यवस्था के चलते हुए राजा ही जमीन का मालिक था और किसान व कमेरा वर्ग केवल मुजारें की हैसियत से जमीन को कास्त करते थे। उपज का ज्यादातर हिस्सा राजा या उसके करींदे मुजारों से कर के रूप में वसूलते थे। इस व्यवस्था के चलते हुए राजा उसके करींदे और पुजारी वर्ग (विश्व के सभी धर्मो के पुजारी) ही साधन सम्पन्न थे और आम जनता दाने-दाने को मोहताज थी और भारी कर देकर गुलामी की जजीरों में जकडे हुए जीवन व्यतीत कर रही थी। ऐसी परिस्थितियों में मानवता के अधिकारों का हनन् ज़ोरों-शोरों से चल रहा था। जनवरी, 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के द्वारा लोहगढ़ को ख़ालसा राजधानी घोषित किया गया और मानवता के इतिहास में पहली बार मानवता के हक में जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा शाही फरमान जारी किया गया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा ख़ालसा राज की मौहरें तैयार की गई और इन मौहरों को लगाकर मानवता के हक में शाही फरमान जारी किए गए।

देगो-तेगों-फतिह-ओ-नुसरत बेदिरंग
याफ़त अज़ नानक - गुरु गोबिंद सिंघ

गुरु नानक साहिब-गुरु गोबिंद सिंह की तलवार से फतेह हासिल की है और यह मजलूम की रक्षा के लिए है और मानववता के हक में कार्य करेगी।

17वीं शताब्दी के आखिर तक मुग़ल राज दुनिया का सबसे बड़ा ताकतवार और अमीर साम्राज्य बनकर उभरा।मुग़ल राज में सामाजिक, आर्थिक, लैगिंक, वर्ग, राजनीतिक असमानताएं चरम सीमा पर पहुंच गई। इसके अतिरिक्त भारतीय समाज वर्ण व्यवस्था मैं बटा हुआ था। वर्ण व्यवस्था के चलते निचले स्तर पर आने वाले लोगों की दशा और भी दयनीय बनी हुई थी। पन्द्रहवीं शताब्दी में भारतवर्ष पर तुर्को का राज था और उस समय भी असमानताएं बहुत अधिक थी। गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान 35 महापुरूषों ने इन असमानताओं को समाप्त करने का क्रांतिकारी बेड़ा उठाया। एक परमात्मा और मानवता के लिए ऐसा सिद्धांत दिया जिसमें हर व्यक्ति को हर किस्म से समानता का अधिकार मिले।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इसी सिद्धांत को अमली जामा पहनाते हुए सन् 1710 में लोहगढ़ से उपरोक्त मोहर लगाकर शाही फरमान जारी किये। मानवता के इतिहास में पहली बार जागीरदारी प्रथा समाप्त कर किसानों को मुज़ारें से मालिक बनाकर ग़ैर मानवतावादी कर व्यवस्था से मुक्त किया। ख़ाफी ख़ान मौके का गवाह लिखता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सभी

मुग़ल अधिकारियों/एजेंटों और जागीरदारों को आदेश जारी किए कि वह जागीरदारी की प्रथा तुरंत प्रभाव से समाप्त कर दें।

इसके अतिरिक्त औरतों को पुरूषों के बराबर अधिकार देकर पुरूष प्रधान समाज को समाप्त किया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने यह भी फरमान जारी किए कि राजसत्ता में हर शहरी को बराबर का अधिकार होगा। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने एक और महत्वपूर्ण शाही फरमान जारी किया जिसमें वर्ग और वर्ण असमानताओं को समाप्त करने की घोषणा की गई। इसी फरमान के चलते हुए इरविन अपनी किताब लेटर मुग़लस में लिखता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पिछले रीति रिवाजों का उलट-पुलट कर दिया और भारतीय समाज के निचले दर्जे के माने जाने वाले, मैला ढ़ोने वाले और चमड़ा रंगने वाले को अपने साथ लिया और सिक्ख फौज़ के जरनैल नियुक्त किए। जब यह सिक्ख फौज़ के जरनैल छुटटी लेकर अपने पैत्रक गांव पर वापिस जाते थे और उनके हाथ में जरनैल का नियुक्ति पत्र को देखकर अमीर और उच्च वर्ग के लोग हाथ जोड़कर इन जरनैलों का स्वागत करते थे। इन जरनैलों के खिलाफ एक शब्द बोलने की हिम्मत किसी व्यक्ति में नही थी।

गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान 35 महापुरूषों के द्वारा दिए गए सिद्धांत को लागू कर जरनैल बंदा सिंह बहादुर मानवता के इतिहास में पहला शासक बना जिसने केवल मानवतावादी नीतियों को लागू करते हुए गुरु नानक साहिब के हलीमी राज के संकल्प को लागू किया। इन 35 महापुरूषों की वाणी ना केवल एक परमात्मा के साथ सबको जोड़ती है बल्कि धर्म के नाम से किए जा रहे आडंबरों को भी उखाड़ फेंकती हैं। यह क्रातिंकारी विचारधारा सामाजिक, आर्थिक, लैगिंक, वर्ग, राजनीतिक समानता के विचारों के साथ-साथ, उधम करने पर विशेष ज़ोर देती है। सार्वभौमिक भाईचारा के साथ-साथ यह एक तार्किक और वैज्ञानिक विचारधारा है, जिसमें चमत्कार और मिथिहास का कोई भी स्थान नही है।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने गुरु नानक साहिब के हलीमी राज व भगत रविदास जी के बेगमपुरे के सिद्धांत को लोहगढ़ में लागू किया। लोहगढ़ और बेगमपुरा में कोई भी अन्तर नहीं था।

बेगमपुरा पर भगत रविदास जी का श्लोक गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 345 पर यह श्लोक अकिंत है, जिसका विवरण निम्नलिखित प्रकार से हैः-

बेगम पुरा सहर को नाउ॥
मेरे शहर का नाम बेगमपुरा है ।
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥
इस शहर में कोई दु:ख और चिंता नही है।
नां तसवीस खिराजु न मालु॥
यहां पर कोई परेशानी व कर इत्यादि नहीं है।
खउफु न खता न तरसु जवालु॥१॥
यहां पर कोई भय दोष या पतन का खतरा नहीं है।
अब मोहि खूब वतन गह पाई॥

अब मुझे सबसे उत्कृष्ट देश मिला है। यहां पर भगत रविदास जी पूरे विश्व को एक देश मानते है जहां पर हलीमी राज की स्थापना इस सिद्धांत के चलते हुए होगी।

ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥१॥ रहाउ ॥

भाईयों यहां पर हमेशा शांति और सुरक्षा रहेगी।

काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥

यह परमात्मा का हलीमी राज है जोकि नियमित स्थिर और शाश्रवत है

दोम न सेम एक सो आही ॥

यहां पर कोई दूसरी, तीसरी श्रेणी नही है यानि अब सब बराबर है।

आबादानु सदा मसहूर॥

यहां की आबादी खुश है और यह शहर अतंकाल से प्रसिद्ध हैं।

ऊहां गनी बसहि मामूर॥२॥

यहां के रहने वाले लोग खुशहाल व अमीर और संतोषजनक हैं।

तउ तिउ सैल करहि जिउ भावै॥

यहां के रहने वाले लोग स्वतंत्र है (हर प्रकार की गुलामी से मुक्त है) और अपनी मनमर्जी से कहीं भी आ जा सकते हैं।

महरम महल न को अटकावै॥

यहां के शहरियों को परमात्मा के होने का एहसास है और इनका रास्ता कोई भी व्यक्ति नहीं रोकता।

कहि रविदास खलास चमारा ॥

भगत रविदास जी कहते हैं कि यहां पर रहकर मुझको मुक्ति मिली हैं।

जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥३॥२॥

यहां का बाशिंदा मेरा मित्र है, भाई-बहन है।

उपरोक्त वर्णित श्लोक की विचारधारा पर चलकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ में हलीमी राज की स्थापना की। सन् 1710 में इस क्रांतिकारी विचारधारा को लोहगढ़ से लागू किया गया और जम्मू से लेकर बरेली तक के क्षेत्र में हर प्रकार की असमानताओं को समाप्त करने के शाही फरमान जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने जारी किए। यह क्रांतिकारी विचारधारा उस समय लागू की गई जब मुग़ल राज अपनी चरम सीमा पर था और इस राज का मुकाबला करने की शक्ति विश्व में किसी और साम्राज्य के पास नही थी। मानवता के हक में इतनी बड़ी क्रांतिकारी मुहिम को मौके के शासकों द्वारा छिपा दिया गया। इस सिक्ख क्रांति का जिर्क इतिहास में बहुत छोटे स्तर पर किया गया है।

सन् 1787 में हुई फ्रांस की क्रांति को मशहूर किया गया और यह भी कहा गया कि समानता का सिद्धांत फ्रांस की क्रांति से आया है।जबकि फ्रांस की क्रांति किसानों के द्वारा फ्रांस के राजा और ईसाई धर्म के पुजारी वर्ग के खिलाफ की गई थी। क्योंकि वह ज़रूरत से ज्यादा किसानों से कर वसूल रहे थे। किसानों का जीवन निर्वाह करना मुशकिल हो रहा था। फ्रांस का

राजा उस समय बहुत शक्तिशाली राजाओं में शामिल नहीं था और केवल कर व्यवस्था को छोड़कर फ्रांस की क्रांति में और कोई मुद्दा नही था। सन् 1710 में लोहगढ़ में हुई सिक्ख क्रांति के मुद्दे में कर व्यवस्था के अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक, लैंगिक, वर्ग, राजनीतिक समानता भी मुद्दे थे, जोकि मुग़ल राज से पहले हज़ारों साल पुराने वर्ण व्यवस्था को भी चुनौती दे रहे थे।

35 महापुरूषों की विचारधारा को छोड़कर विश्व में कोई ऐसी विचारधारा नही है जो मानवता को सामाजिक, आर्थिक, लैंगिक व राजनीतिक बराबरी देती हो। संभवतः यह विचाराधारा मानवता के हक में है, परन्तु किसी भी लालची शासक के हक में नही है इसलिए चाहे मुग़ल हो या अंग्रेज सबने मिलकर इस विचारधारा को दबाने व छुपाने का षडयंत्र किया। अठाहरवीं व उन्नीसवीं शताब्दी में पश्चिमी देशों में कई समाजशास्त्रियों द्वारा अलग-अलग विचारधाराएं दी गई। जिनमें से प्रमुख तौर पर कार्ल मार्कस, अगस्थे कोमते, हरबटस स्पैन्सर, ईमाइल दुरखीम, मैक्स वैबर, जियोर्ग सिमल, विलफ्रीडो पारीटो इत्यादि थे। इन समाजशास्त्रियों ने पूरे विश्व को समाजवाद व लोकतंत्र में विभाजित कर दिया। इन समाजशास्त्रियों द्वारा दिए गए सिद्धांत पूर्ण रूप से अधूरे थे और भगत रविदास जी के बेगमपुरा के सिद्धांत के आस-पास भी नहीं थे।

इन समाजशास्त्रियों के सिद्धांतों के फलस्वरूप केवल राष्ट्रवाद की भावना विकसित हुई और मानवता की दुख-तकलीफ को खत्म करने के बारे में इन समाजशास्त्रियों को कुछ भी पता नहीं था। जैसे कि वर्णन किया गया है कि विश्व इन विचारधाराओं के चलते हुए दो भागों में बंट गया समाजवाद व लोकतंत्र। दो विश्व युद्ध इन्हीं विचारधाराओं को लागू करने हेतू लड़े गए जिसमें केवल मानवता की हार हुई। धीरे-धीरे विश्व भर में पूंजीपतियों का बोल-बाला हो गया और वह आज भी आम जनता का विश्व भर में शोषण कर रहे हैं। आज के समय में पूरा विश्व फिर दो भाग में बंटा हुआ है, पहला भाग विकसित राष्ट्रों का है और दूसरा भाग विकासशील राष्ट्रों का। ग्लोबलाइज़ेशन और फ्री ट्रेड प्रैक्टिस के नाम पर विकसित देश विकासशाील देशों का शोषण करता है, ताकि विकसित देश और अमीर बन सकें। विकसीत देशों में भी आज अभिजात वर्ग बाकी वर्गो का शोषण कर रहा है। इससे केवल मानवता के अधिकारों का ही हनन् हो रहा है और जो भगत रविदास जी के बेगमपुरा के सिद्धांत से बिल्कुल विपरीत है।

सताहरवीं शताब्दी तक वणजारे व्यापारियों का सिक्का पूरे विश्व भर में चलता था जिसका विवरण पूर्व पृष्ठ न. 02 पर दिया हुआ है। गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित भगत रविदास जी के श्लोक 'को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥१॥' में वणजारों और टाडों का जिक्र करते हैं। पूर्व पृष्ठों में विस्तारपूर्वक दर्शाया गया हैं कि टांडा व्यवस्था ना केवल भारतवर्ष बल्कि यूरोप, अफ्रीका, मिडल ईस्ट, चाईना, रुस इत्यादि पूरे विश्व भर में फैल चुकी थी। इस श्लोक का गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित होने से यह भी साबित होता है कि गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान 35 महापुरूषों को विश्व भर की भौगोलिक, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थिति का पूरा ज्ञान था। इन सभी मापदडों को ध्यान में रखते हुए एक परमात्मा और मानवतावादी विचारधारा पूरे विश्व को दी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इसी विचारधारा को लोहगढ़ से पूरे उतर भारत में लागू किया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ से ख़ालसा राज के नानकशाही सिक्के जारी किए। यह सिक्के जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने अपने नाम से ना जारी करके गुरु नानक साहिब से गुरु गोबिंद सिंह को समर्पित किए थे।

सिक्का ज़द बर हर दो आलम, तेग़ि नानक वाहिब असत
फ़तहि गोबिंद सिंघ शाहि-शाहा फ़जलि सच्चा साहिब अस्त

दोनों जहानों के सच्चे पातशाह की मेहर के साथ यह सिक्का जारी किया गया। गुरु नानक साहिब की तलवार से यह फतेह हासिल की गई है और हलीमी राज की स्थापना हुई है। अकाल पुरुख के फ़जल के साथ शहंशाहों के शहंशाह गुरु गोबिंद सिंह को यह फतेह समर्पित है।सिक्के के दूसरी ओर लिखा था:-

ज़रबि अमानुल दहिर मुसवरत शहिर
ज़ीनत अल तख़त ख़ालसा मुबारक बख़त।।

दुनियां की सकून भरी जगह, जन्नत जैसे शहर, किस्मत वाले ख़ालसा तख्त से जारी।

पृष्ठ 19 पर विस्तारपूर्वक दर्शाया गया है कि हलीमी राज की स्थापना के लिए गुरु नानक साहिब ने कार्य शुरू कर दिया था और एक ऐसे राज और पंथ की बात गुरु नानक साहिब ने की है जिसमें केवल एक परम् पिता परमात्मा को मानने वाले लोग बसे। वह केवल मानवता के अधिकारों के हक में रह कर धर्म पर चले। भाई गुरदास जी की बात से यह स्पष्ट होता है कि गुरु नानक साहिब के समय से ही गुरु नानक साहिब के नाम का सिक्का पूरे विश्व भर में चल चुका था।

मारिआ सिका जगत्रि विचि नानक निरमल पंथ चलाइआ।।

इस बात से साफ पता चलता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने न तो अपने नाम पर सिक्का जारी किया और न ही उन्होने अपने नाम की मोहर चलाई। बंदा सिंह बहादुर ने हर कामयाबी को गुरु साहिबान को ही समर्पित किया। दुनिया भर की तारीख में कभी किसी विजेता या हाकिम ने आज तक अपने नाम के सिवा कभी किसी अन्य के नाम का सिक्का जारी नहीं किया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर स्वयं को हमेशा 'बंदा-ऐ-गुरु' भाव 'गुरु का बंदा' कहा करते थे।

अध्याय 21

पीर बुद्धू शाह और सढौरा

लोहगढ़ और सढ़ौरा

लोहगढ़ से 20 किलोंमीटर की दूरी पर सढ़ौरा, ख़ालसा राज की स्थापना की दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण स्थान है। नाहन से सढ़ौरा मात्र 30 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित है और जैसे कि पूर्व पृष्ठों में दर्शाया गया है कि नाहन के किले का नींव का पत्थर भी छठे गुरु हर गोबिंद साहिब द्वारा रखा गया था। गुरु नानक साहिब के नाहन भ्रमण के दौरान एक सिक्ख प्रचार केन्द्र स्थापित किया गया था। जिसका नाम गंगू शाही मंजी था। नाहन का राजा सिक्ख गुरु साहिबों का मुरीद था और गुरु नानक साहिब के समय से इन्होंने सिक्ख धर्म अपना लिया था। राजा मेंदनी प्रकाश, गुरु गोबिंद सिंह और पीर बूद्धु शाह जी के समकालीन थे। मेंदनी प्रकाश के आग्रह पर गुरु गोबिंद सिंह चार साल (1685-1689) पौटां साहिब में रहे। लोहगढ़ के अग्रिम 52 किलों में से चार किले सढ़ौरा के नजदीक हैं। जिनमें से एक किला सढ़ौरा में है, एक किला सरांवा गांव में, एक किला लाहडपुर गांव में मौजूद और एक किला बंदा बहादुरपुर में था। जिसका नाम आज की तारीख में गढ़ी वीरान है। अब मौके पर किला मौजूद नहीं है परन्तु भाई लक्खी शाह वणजारे का लगाया हुआ कुआं आज भी गढ़ी वीरान के जंगल में मौजूद है। इसके अतिरिक्त सढ़ौरा के नजदीक शिवालिक की पहाडियों में गांव ठसका, पमूवाला, सगोंली इत्यादि के पहाड़ी क्षेत्र में भारी किलाबंदी होने के पुरातत्व अवशेष आज भी मिलते हैं। इन पहाड़ों में नानक शाही ईंटे बिखरी हुई मिलती हैं। यह क्षेत्र सोहलवीं शताब्दी से ही नाहन के राजा का इलाका था और यह इलाका नाहन के राजा से वणजारों ने खरीद लिया था। नाहन के राजा की सहमति से सिक्खों द्वारा इस इलाके में किलेबंदी की गई। यहां पर यह भी स्पष्ट किया जाता है कि मुग़ल राज के दौरान नाहन का इलाका हिंदुस्तान की सरहद से बाहर था। परन्तु नाहन के राजा ने मुग़लों की अधीनगी कबूल की हुई थी। इसलिए मुग़ल नाहन के क्षेत्र में दखलअदांजी नहीं करते थे।

पीर बुद्धु शाह का विवरण

सिक्ख इतिहास में सढ़ौरा केवल पीर बुद्धु शाह जी के लिए मशहूर है। पीर बुद्धु शाह जी का असली नाम सईद बदर-उ-दीन है। पीर बुद्धु शाह जी का जन्म 21 मार्च, 1647 में सढ़ौरा में हुआ और वह गुरु गोबिंद सिंह के मुरीद थे। उनके नजदीकी व्यक्तियों में से एक थे।18 वर्ष की आयु में पीर बुद्धु शाह जी का विवाह नज़ीरा से हुआ जो कि सईद ख़ान की बहन थी। सईद ख़ान, औरंगज़ेब के प्रमुख जरनैलों में से एक था। सईद ख़ान की मुलाकात गुरु गोबिंद सिंह के साथ हुई थी और इस मुलाकात के बाद सईद ख़ान ने मुग़लों की नौकरी छोड़कर गुरु गोबिंद सिंह के साथ गुरु नानक साहिब के मिशन पर कार्य करना आरंभ कर दिया और मुग़लों के खिलाफ सैन्य ताकत

जुटानी शुरू की। सिक्ख इतिहास केवल पीर बुद्धु शाह जी को भगानी के युद्ध (1689) से जोड़ता है और इस युद्ध में पीर बुद्धु शाह जी गुरु गोबिंद सिंह के संग पहाड़ी राजाओं के विरूद्ध लड़े थे। इस युद्ध में गुरु गोबिंद सिंह की सहायता के लिए पीर बुद्धु शाह जी 700 मुरीदों के साथ पौटां साहिब पहुंचे थे।[300] इस युद्ध में पीर बुद्धु शाह जी के पिता सईद गुलाम शाह व उनके दो बेटे जिनका नाम सईद मोहम्मद शाह और सईद अशरफ शाह भी शहीद हुए थे। पौटां साहिब में इस युद्ध के समाप्त होने के उपरांत गुरु गोबिंद सिंह द्वारा पीर बुद्धु शाह जी को एक पगड़ी और एक कंघा भेंट किया गया।[301] 1704 में उस्मान ख़ान, कोतवाल परगना, सढ़ौरा के द्वारा पीर बुद्धु शाह जी को गुरु गोबिंद सिंह की सहायता करने की वजह के कारण शहीद किया गया। इसके अलावा पीर बुद्धु शाह जी और सढ़ौरा को लेकर कोई इतिहास उपलब्ध नहीं है।

खलीफा महोम्मद-4, रोम, इटली की तलवार पीर बुद्धु शाह द्वारा गुरु गोबिंद सिंह को भेंट करना

सन् 1689 में गुरु गोबिंद सिंह पाउंटा साहिब से आनंदपुर साहिब गए तो वर्तमान ज़िला यमुनानगर के कई स्थानों से होते हुए ज़िला अंबाला और बाद में आनंदपुर साहिब पहुंचे। हैरान करने वाली बात यह है कि इतिहासकारों द्वारा गुरु गोबिंद सिंह के सढ़ौरा आगमन से संबंधित कोई भी दस्तावेज पेश नहीं किया और ना ही किसी धार्मिक संस्था ने उनकी सढ़ौरा यात्रा को लेकर गुरु गोबिंद सिंह की याद में कोई गुरुद्वारा साहिब का निर्माण किया।[302] भाई काहन सिंह नाभा ने अपनी किताब महान कोष के पन्ना नम्बर 251 पर एक महत्वपूर्ण जानकारी दी है। जिसमें दर्शाया गया है कि सन् 1689 में जब गुरु गोबिंद सिंह सढ़ौरा पहुंचें तो पीर बुद्धु शाह जी ने खलीफा महोम्मद-4, रोम, इटली की भेजी हुई तलवार गुरु गोबिंद सिंह के चरणों में भेट की। अब प्रश्न यह उठता है कि ख़लीफा महोम्मद-4 की तलवार सढ़ौरा क्यूं और कैसे पहुंची तथा नई सामने आई शोध से यह पता चलता है कि इटली में कई जगह का नाम टांडा है और टांडा शब्द वणजारों के साथ जुड़ा हुआ है। सोहलवीं शताब्दी के शुरूआत में गुरु नानक साहिब ने रोम का भ्रमण किया और वहां के राजाओं ने सिक्ख विचारधारा को अपनाया। इस वाक्य से यह भी स्पष्ट होता है कि अठारवहीं शताब्दी के रोम, इटली का राजा सिक्ख विचारधारा से जुड़ा हुआ था। उन्होनें अपनी

---

300 *पीर बुद्धू शाह जी द्वारा दामले के 500 पठान गुरू गोबिंद सिंह साहिब की सेना में भर्ती करवाए गए थे। परन्तु इनमें से 400 पठान भंगानी के युद्ध से पहले पहाड़ी राजाओ की सेनाओं में शामिल हो गए। उन्होनें यह धोखा-धडी मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब की दबाव में की। सढ़ौरा जोकि सिक्ख सैन्य शक्ति का प्रमुख प्रशिक्षण केन्द्र था। यहां से भारी तादाद में सिक्ख फ़ौज पीर बुद्धू शाह जी के नेतृत्व में गुरू गोबिंद सिंह साहिब की सहायता के लिए भंगानी के युद्ध में पहुंच गई। यहां पर यह भी व्यक्त किया जाना उचित होगा कि दामला व्यापार का बहुत बड़ा केन्द्र था। दामले का मनसबदार भी पीर बुद्धू शाह जी ही थे।

301 *यह कंघा पीर बुद्धू शाह जी ने गुरू गोबिंद सिंह साहिब से मांग कर लिया। जब गुरू साहिब अपने केशों को इस कंघे से संवार रहे थे। गुरू साहिब ने केश निकाल कर जब यह कंघा पीर बुद्धू शाह जी को देना चाहा तो पीर बुद्धू शाह जी ने यह कंघा केशों के साथ मांगा और गुरू साहिब ने खुशी-खुशी केश और कंघा पीर बुद्धू शाह जी को दिए।

302 *कस्बा सढ़ौरा में आज के दिन दो इतिहासिक गुरूद्वारा साहिब मौजूद हैं। एक गुरूद्वारा जरनैल बंदा सिंह बहादुर से संबंधित है और दूसरा गुरूद्वारा पीर बुद्धू शाह से।

शाही तलवार दसवें नानक के चरणों में भेंट करने के लिए वणजारों को दी। यह तलवार पीर बुद्धु शाह जी के पास खलीफा मोहम्मद-4 ने इसलिए भिजवाई क्योंकि पीर बुद्धू शाह जी हजरत मौहमम्द शाह के वशंज में से थे। यहां यह भी स्पष्ट किया जाता है कि जब एक राजा किसी दूसरे व्यक्ति के चरणों में तलवार भेंट करता हैं तो इसका अर्थ साफ होता है कि राजा हर तरह से उस व्यक्ति को समर्पित हो चुका होता है।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का सढ़ौरा पर कब्ज़ा

दिसंबर, 1709 में समाना, थानेसर, दामला, मुस्तफाबाद, बुडिया, खिचराबाद इत्यादि जीतते हुए जरनैल बंदा सिंह बहादुर सढ़ौरा पहुंचे और तीन घंटे की जंग के बाद सढ़ौरा में मुग़लों के जरनैल उस्मान ख़ान को मार गिराया तथा सढ़ौरा पर अपनी मोर्चाबंदी मजबूत की। फारसी के ऐतिहासिक स्त्रोत अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला दिनांक 12,मई 1710 और अम्बर के वकील की रिपोर्ट यह दर्शाती है कि 1710 में सढ़ौरा शहर में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में 70 हज़ार घुडसवार फ़ौज खड़ी हुई थी। इस सिक्ख फ़ौज ने मुग़ल बादशाह बहादुर शाह की शाही फ़ौज को लोहे के चने चबवा दिए थे। अब प्रश्न ये उठता है कि वर्तमान समय में सढ़ौरा कस्बे की आबादी मात्र 10 हज़ार है। 1710 में 70 हज़ार घुड़सवार सिक्ख फ़ौज का होना यह दर्शाता है कि सढ़ौरा एक बहुत बड़ा कस्बा था। जिसमें एक लाख से अधिक लोगों के रहने की व्यवस्था अठाहरवीं शताब्दी में मौजूद थी। लोहगढ़ के नज़दीक सढ़ौरे कस्बे का होना यह भी दर्शाता है कि ख़ालसा राज की स्थापना में इस शहर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसके अतिरिक्त यहां यह भी स्पष्ट है कि सढ़ौरा व्यापार का एक बड़ा केन्द्र था[303] व सढ़ौरा के आस-पास कई कुंए और पुरातत्व सबूत मिलते हैं। जोकि भाई लक्खी शाह वणजारा से संबंधित हैं। ऐतिहासिक स्त्रोत यह भी बताते है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर के समय में सढ़ौरा के मुख्य निवासी कादरी, चिश्ती सूफी संत और वणजारे सिक्ख थे।

बादशाह बहादुर शाह का सढ़ौरा पर हमला

अक्तूबर, 1710 में बादशाह बहादुर शाह करनाल पहुंचा और उसने फैसला लिया कि इन्द्री के रास्ते होते हुए लोहगढ़ पर आक्रमण किया जाए। परन्तु शुरूआती कुछ दिनों के अन्दर ही इस रास्ते पर सिक्ख फ़ौज के द्वारा मुग़ल फ़ौज का हज़ारों की तादाद में कतलेआम कर दिया गया। जिस कारण मुग़ल बादशाह ने अपना निर्णय बदला और यह फैसला लिया कि लोहगढ़ पर हमला शाहबाद-सढ़ौरा के रास्ते से होते हुए किया जाएगा। करनाल से शाहबाद पहुंचने के लिए शाही फ़ौज को लगभग 1 महीने का समय लग गया और मुग़ल फ़ौज को भारी नुकसान भी हुआ।

---

303 *सोहलवीं शताब्दी में सढ़ौरा भौगोलिक दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण स्थान था क्योंकि यहां से वणजारे सिक्ख केवल भारत वर्ष में ही नहीं बल्कि चीन में भी व्यापार करने जाया करते थे। हिमाचल से होकर एक व्यापारिक रास्ता सीलक रूट पर जाकर मिलता है और इसी रास्ते पर वणजारे सिक्ख चीन से व्यापार किया करते थे।

शाहबाद पहुंचकर मुग़ल फ़ौज ने सढ़ौरा की तरफ कूच किया तो लोहगढ़ के अग्रिम किलों ने मुग़ल फ़ौज के रास्ते में भारी रूकावट उत्पन्न की। बादशाह बहादुर शाह 09 महीने तक प्रयास करता रहा कि किसी तरीके से सढ़ौरा जीता जा सके परन्तु वह अपने मनसूबों में विफल रहा। फरवरी, 1711 में जब बहादुर शाह को पता चला कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर पहाडों के रास्ते लाहौर पर हमला करने के लिए निकल चुकें है तो बहादुर शाह ने सढ़ौरा को जीतने का ख्याल छोडकर लाहौर को बचाने का निर्णय लिया और लाहौर की तरफ जी.टी. रोड के रास्ते कूच किया।

सढ़ौरा को लेकर नई इतिहासिक शोध

एलैक्सजैड़र कनिंघम अग्रेज़ों के पुरातत्वव और सर्वेक्षणकर्ता थे और सन् 1879 में उनको सढ़ौरा का निरीक्षण करते हुए कुछ सिक्के मिले थे। जोकि कुनिंदा साम्राज्य से संबंधित थे। दूसरी शताब्दी से तीसरी शताब्दी तक। इसके अलावा उनको कई पुरातत्व अवशेष भी किले से संबंधित मिले जिसका वर्णन उसने अपनी सर्वे रिपोर्ट में भी किया है। इसके अलावा सढ़ौरा के नज़दीक प्राचीन बुड़िया शहर मौजूद है जोकि पांचवी शताब्दी तक बौध धर्म का प्रमुख प्रचार केन्द्र था।[304] नई ऐतिहासिक शोध से पता चला है कि यह क्षेत्र कभी दसवीं शताब्दी में राजा भोज के अधीन था। आज भी राजा भोज के नाम से 25 गांव सढ़ौरा के नज़दीक[305] लगती शिवालिक पहाडियों में मौजूद है। राजा भोज परमार वणजारा था और भट् वहियों से प्रमाण मिलते है कि उनके वशंज पंद्रहवीं शताब्दी में नाहन क्षेत्र में मौजूद थे।राजा भोज के पंद्रहवीं शताब्दी के वशंजों का नाम भाई राधा (जन्म 1433 नाहन), भाई लखमन (जन्म 21-6-1482 नाहन), भाई राहाओ (जन्म 16-6-1525 नाहन) आदि है। यह लोग भी गुरु नानक साहिब के मुरीद हो गए और गुरु नानक साहिब के नाहन, सढ़ौरा, लोहगढ़ भ्रमण में उनके साथ थे। आगे चलकर भाई बल्लू जी (02-04-1560) का जन्म इस परिवार में हुआ और भाई बल्लू जी उस समय भारत वर्ष के सबसे प्रभावशाली व्यक्तिर्यों में से एक थे। जब भी वह अकबर बादशाह से मिलने जाते तो भाई बल्लू जी का सिंहासन अकबर बादशाह के बराबर लगाकर बैठक होती। आगे चलकर इस परमार परिवार में एक मशहूर सिक्ख हुए जिनका नाम भाई मनी सिंह था। जोकि सातवें सिक्ख गुरु हर राय साहिब, आठवें सिक्ख गुरु हर किशन साहिब, नौवें सिक्ख गुरु तेग़ बहादुर और दसवें सिक्ख गुरु गोबिंद सिंह के सबसे नज़दीकी साथियों में से एक थे।

मुग़ल राज में सढ़ौरा एक बड़ा शहर बनकर उभरा और इस शहर के रहने वाले सईयद और शेखों का मुगल दरबार में विशेष स्थान था। सन् 1669 में औरंगज़ेब सढ़ौरा आया और उसने

---

304 *बुड़िया के नजदीक भी राजा भोज का एक गांव "भोजपुर" आज भी मौजूद हैं। गुरू नानक साहिब के द्वारा बुड़िया में एक बड़ा सिक्ख प्रचार केन्द्र स्थापित किया गया और सिक्ख राज के कई किले जैसे दयालगढ़ इत्यादि आज भी मौके पर मौजूद है।बुड़िया में गुरू तेग़ बहादुर साहिब का गुरूद्वारा आज भी मौजूद है। इसके अतिरिक्त बुड़िया में सताहरवीं शताब्दी में सिक्खों और मुगलों के बीच में विवाद हुआ जिसमें फैसला सिक्खों के हक में आया।

305 *गांव भोज राज, भोज पौंटा, भोज कनोज, भोज नठिया इत्यादि 25 गांव, राजा भोज के नाम से सढ़ौरा के नज़दीक शिवालिक पहाड़ियों में मौजूद हैं।

यहां पर पहुंचकर शाह अब्दुल वाहिब का मकबरा तैयार करवाया।[306] इस मकबरे में उपस्थित शिलालेख इस बात की गवाही देते कि यह मकबरा कुतुब-उल-कुतुब उफ शाह अब्दुल वाहिब का है।शाह अब्दुल वाहिब के नाम का एक अन्य मकबरा सढ़ौरा में स्थित है जिसमें फारसी शिलालेख मौजूद है। वर्तमान में यह जगह मस्ज़िद के रूप में प्रयोग में लाई जाती है। आज के दिन भी यह मज़ार सढ़ौरा के बाहर खड़ी है और इस मज़ार को रोज़ा पीर के नाम से जाना जाता है। फारसी के ऐतिहासिक स्त्रोत यह भी बताते है कि सढ़ौरा दूसरा काबा है।[307] अब सोचने वाला विषय यह है कि सढ़ौरा मुसलमानों के लिए इतना पवित्र स्थान कैसे बन गया और किस तरह औरंगज़ेब जैसे बादशाह को यहां आकर पीरों की मज़ार तैयार करनी पड़ी। नई शोध से पता चला है कि शाह अब्दुल वाहिब, हज़रत निज़ामुदीन का पोता था। और शाह अब्दुल हमूद गज उल इमाम का बेटा था जोकि बगदाद के रहने वाले थे। हजरत निज़ामुदीन, हजरत मोहम्मद साहिब की बेटी फातिमा बिन्ट और दामाद हजरत अली के वंशज थे। इस परिवार का कुर्सीनामा किताब के पन्ना न 354 पर दर्शाया गया है। आगे चलकर अब यह विषय सामने आता है कि सोलहवीं शताब्दी की शुरूआत में, मोहम्मद साहिब के वंशज सढ़ौरा आकर क्यूं बस गए। नई शोध से यह पता चला है कि गुरु नानक साहिब जब मिस्त्र, यूरोप, मक्का-मदीना इत्यादि का भ्रमण कर लौट रहे थे, तो उनका एक पड़ाव बगदाद में हुआ और बाबा फरीद भी गुरु नानक साहिब के साथ मक्का मदीना से भारत आए। बगदाद सूफी संतों का गढ़ माना जाता था तथा चिश्ती और कादरी सिलसिले का प्रमुख केन्द्र था। बगदाद में तांडा[308] नामक जगह पर गुरु नानक साहिब का संवाद पीर दस्तगीर[309] से हुआ। पीर दस्तगीर ने गुरु नानक साहिब को अपना गुरु मानते हुए भारत में पलायन करने का निर्णय लिया।

306 *पीर बुद्धू शाह द सेंट ऑफ सढ़ौरा, गुरचरण सिंह, वी.एस. सूरी पन्ना नम्बर 42। कई इतिहासिक स्त्रोतों में इस मकबरे को शाह कुमेश कादरी का मकबरा भी कहा जाता है। शाह अब्दुल वाहिब चिश्ती सिलसिले से संबंधित थे।शाह कुमेश कादरी भी सिलसिले से संबंधित थे और यह दोनों सिलसिले गुरू नानक साहिब की विचारधारा पर भारत वर्ष में कार्य कर रहे थे। मौहमम्द शफी वारीद, मीरात-वारदात फारसी के स्त्रोत में लिखता है, यह जगह हिदुस्तान के लोगों के लिए सतर योग स्थान है। उस समय यह बात मशहूर थी बल्कि उसूल बन चुकी थी कि जो मुस्लमान मक्का-मदीना की यात्रा पर नही जा सकता वह शाह कुमेश कादरी के स्थान की ज्यारत कर लें, तो मक्का मदीने जाने की ज्यारत उस मुस्लमान से खत्म हो जाएगी। एक सदी से समय ऊपर हो चुका है जब से सढ़ौरा शरीफ को मुस्लमानों को दूसरा काबा का दर्जा हासिल है। इसके अतिरिक्त लेखक यह भी व्यक्त करता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर के समय में काफी बड़ी मात्रा में मुस्लमान सिक्ख बन गए और यहां तक नौबत आ गई कि अब कोई भी सुन्नी मुस्लमान मक्के की ज्यारत करने को तैयार नही था। अगर जरनैल बंदा सिंह बहादुर का राज कुछ समय तक और हिन्दुस्तान पर कायम हो जाता तो इस्लाम का नामोनिशान हिन्दुस्तान से खत्म होना तय था। फारसी के स्त्रोतों से यह स्पष्ट होता है कि शाह अब्दुल वाहिब और शाह कुमेश कादरी की मजारें पास-पास थी।

307 *जरनैल बंदा सिंह बहादुर, फारसी स्त्रोत, डॉ. बलवंत सिंह ढ़िल्लों पन्ना नम्बर 210, 214, 215।

308 *आज भी बगदाद के पास कई टाड़े मौजूद है। एक समय पर बगदाद व्यापार का बड़ा केंद्र था और भारतवर्ष, चीन, रूस, अफ्रीका, यूरोप से आने वाले सभी व्यापारिक रास्ते बगदाद में इकट्ठे होते थे। टांडा नामक जगह का बगदाद में होना यह स्पष्ट करता है कि वणजारे सिक्ख बगदाद में भी व्यापार किया करते थे और इन वणजारों के टांडों के साथ ही गुरू नानक साहिब ने दुनिया के हर कोने में भ्रमण किया।

309 *ओटोमन सम्राज्य के सुल्तान सुलेमान (शाह सलीम.प् उर्फ हमीद खानून) पीर दस्तगीर का मुरीद था और उन्होंने पीर दस्तगीर के लिए बगदाद में बहुत बडी मस्जिद का निर्माण करवाया था। सुल्तान सुलेमान की मुलाकात 1507 में गुरू नानक साहिब से मिश्र में हुई और वह भी गुरू नानक साहिब का मुरीद बन गया।

भाई गुरदास जी की वार पहली, पोड़ी 35 में गुरु नानक साहिब का बगदाद में पीर दस्तगीर के साथ संवाद का जिक्र करते है।

फिर बाबा गया बगदाद नू बाहर जाए किया अस्थाना
इक बाबा अकाल रूप दूजा रबाबी मरदाना।
दित्ती बांग निवाज़ कर सुन समान हो जहाना।
सुन मुन नगरी भई देख पीर भये हैराना।
वेक्खे ध्यान लगाए कर एक फकीर वड्डा मस्ताना।
पूछया फरीक दस्तगीर कौन फकीर किसका घराना।
नानक कल विच आया रब्ब फकीर इक्को पहचाना।

पीर दस्तगीर का सढ़ौरा में आकर बसना

पीर दस्तगीर का नाम शेख अब्दुल कादरी गिलानी था जोकि सूफी कादरी सिलसिले से संबंध रखते थे। हजरत निज़ामुदीन भी बगदाद के रहने वाले थे और वह चिश्ती सिलसिले से संबंध रखते थे। गुरु नानक साहिब के सानिध्य में आने के बाद परिवार के साथ भारत में पलायन करने का निर्णय लिया। सैकड़ों की तादाद में सूफी संत बगदाद से गुरु नानक साहिब के पीछे-पीछे चलते हुए भारतवर्ष आए और उनकी सलाह पर इन सूफी-संतों ने भारत के अलग-अलग भागों में जाकर गुरु नानक साहिब की स्थापित मंजियों पर पंहुचकर अपना निवास स्थान बनाया। गुरु नानक साहिब की विचारधारा को फैलाने का काम किया। प्रमुख तौर पर दो परिवार हज़रत निज़ामुदीन और पीर दस्तगीर सढ़ौरा आए और उन्होनें सढ़ौरा में बसने का फैसला लिया।

गुरु नानक साहिब का सढ़ौरा में मंजी स्थापित करना और भगत सदना जी का सढ़ौरा में आकर बसना

गुरु नानक साहिब के आदेश पर भगत सदना जी भी इन सूफी संतों के साथ आकर सढ़ौरा बस गए। गुरु नानक साहिब स्वयं भी सढ़ौरा आए यहीं एक मंजी (प्रचार केन्द्र) भी स्थापित की। इसके बाद सभी सिक्ख गुरु साहिबान सढ़ौरा आए जिसका विस्तारपूर्वक विवरण अध्याय 22 में दिया हुआ है। इसके अतिरिक्त शिवालिक की पहाड़ियों के साथ-साथ जम्मू से लेकर बरेली तक सूफी संत और वणजारों ने डेरा डाला और गुरु नानक साहिब के मिशन पर कार्य करना शुरू किया।[310] आज भी सूफी संतों की मज़ारे शिवालिक की पहाड़ियों के नज़दीक मौजूद हैं। अठाहरवीं शताब्दी की शुरुआत में पीर बुद्धु शाह जी और उसका परिवार भी गुरु नानक साहिब के फलसफे पर जीवन जिते थे।

पीर दस्तगीर उर्फ शेख अब्दुल कादरी गिलानी के एक वंशज का नाम शेख चेहली अब्दुल रहीम बनुरी था। शेख चेहली का जन्म सोलहवीं शताब्दी में सढ़ौरा में हुआ और यह साईं

310 *गांव मानकपुर शरीफ ज़िला मोहाली पंजाब में एक बहुत बड़ा मकबरा शाह अबदुल वाहिब के वशंज का मौजूद है।

मियां मीर (लाहौर) के नजदीकी संघी साथियों और रिश्तेदारों में से एक थे। शेख चेहली का मुग़ल दरबार में एक विशेष स्थान था और बादशाह शाहजहां के मन में इनके लिए काफी आदर था। शाहजहां के बड़े बेटे दाराशिकोह ने शेख चेहली और साईं मियां मीर को अपना गुरु धारण किया। सन् 1606 में शेख निजाम थनेसरी को थानेसर से जहांगीर के द्वारा देश निकाला देन के उपरांत, थानेसर में स्थित सिक्ख प्रचार केन्द्र को भारी धक्का पहुंचा। इस नुक्सान की भरपाई के लिए साईं मियां मीर ने शेख चेहली को थानेसर की कमान सौंपी। विस्तारपूर्वक तथ्य अध्याय 22 पर मौजूद है।[311] इस वाक्य का जिक्र पीर शाह खुशमानी की जीवनी में भी किया गया है।[312] पीर शाह खुशमानी चिश्ती सिलसिले से संबंधित थे। पीर दस्तगीर शेख अबदुल कादरी गिलानी के वंशज थे। यह अकबर बादशाह के समकालीन थे और इनका मुग़ल दरबार में अच्छा मान-सम्मान था।

पीर बुद्धु शाह ना केवल एक धार्मिक व्यक्ति थे बल्कि मौजूदा ज़िला यमुनानगर, अंबाला, पंचकूला इलाके के जागीरदार भी मुग़लों के द्वारा नियुक्त किए गए थे। गुरु गोबिंद सिंह साहिब का नानका गांव लखनौर साहिब भी पीर बुद्धु शाह जी की जगीर में आता था। पीर बुद्धू शाह जी कई बार लखनौर साहिब भी गए थे। पीर बुद्धु शाह जी के नजदीकी रिश्तेदार पीर भीखन शाह, ज़िला कुरूक्षेत्र में स्थित ठसका मीराजी के मनसबदार थे। सयाना सैंदा और भोर सैंदा जैसे सिक्ख इतिहास के महत्वपूर्ण गांव भी इनकी जागीर का हिस्सा थे। पीर भीखन शाह का इलाका कुरूक्षेत्र से चलकर समाना (पंजाब) के नज़दीक तक था। यह अपने आप में बहुत बडी बात है कि मोहम्मद साहिब के वशंज अपना खून, गुरु नानक साहिब की विचारधारा को अमल लाने के लिए कुर्बान करते है। लगभग दो शताब्दियों तक गुरु नानक साहिब की विचारधारा पर कार्य करने के बाद गुरु गोबिंद सिंह और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख सिपेसलार बनकर हलीमी राज की स्थापना में प्रमुख योगदान देते है। इस विषय पर और भी खोज करने की आवश्यकता है ताकि और भी सूफी संतों के नाम सामने आए जिन्होनें गुरु नानक विचारधारा पर कार्य किया। सढ़ौरा शहर से संबंधित छुपे हुए तथ्यों पर काफी कार्य करने की आवश्यकता है।

---

311 *शेख चेहली का असली नाम अबदुर-रहीम-अबदुलकरीम रज़ाक था। इनके एक पूर्वज बनूड़ (पंजाब) जाकर बस गए थे जिनका नाम शेख अहमद बनूड़ी था। बनूड़ नामक जगह मक्का-मदीना के नज़दीक भी है और जो सूफी गुरू नानक साहिब के पीछे चलकर भारत वर्ष में आए तो उन्होंने अपने पैतृक जगह के नाम से जगह बसाई जिसका नाम बनूड़ रखा गया। बनूड़ सिक्ख विचारधारा का बड़ा केन्द्र बना और यहां पर गुरू नानक साहिब, गुरू हर किशन साहिब, गुरू तेग़ बहादुर और गुरू गोबिंद सिंह का आगमन हुआ। सूफी संत पीर आदम हाफिज जोकि बनूड़ के रहने वाले थे वह गुरू तेग़ बहादुर साहिब के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे। बनूड़ में रहने वाले सूफी संत मक्का-मदीना के पास से आए थे और मौहमम्द साहिब के वंशज थे। इसलिए अकबर बादशाह ने भी बनूड का भ्रमण किया और यहां सूफी संतों के साथ भेंट की। सन् 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बनूड परगणा का इलाका मुग़लों से अपने कब्ज़े में ले लिया और यहां का सिपेसलार भाई भीखन सिंह को बनाया। भाई भीखन सिंह पीर बुद्धु शाह के सगें भतीजे थे।

312 *अख़बार-उल-अखयार और कजीनत-उल-उसफियार फारसी के दो स्त्रोत हैं जोकि पीर शाह खुशमानी के जीवन पर रोशनी डालते हैं। पीर शाह खुशमानी के पिता शाह अबदुलयात के पास बंगाल में गुरू नानक विचारधारा को फैलाने का दायित्व था। पीर शाह खुशमानी जो अपने जीवन के आखिरी साल सन् 1584 में सढ़ौरा से बंगाल चले गए थे। पीर दस्तगीर के परिवार ने गुरू नानक विचारधारा को बंगाल, बिहार, हैदराबाद, महाराष्ट्र, कर्नाटक, राजस्थान, गुजरात दिल्ली, पंजाब इत्यादि जगह पर फैलाया। पीर दस्तगीर के प्रमुख वंशज जिन्होंने गुरू नानक विचारधारा पर कार्य किया वह है सईद ताज़ूदीन, सईद शाहबुद्दीन, सईद शाह जलाल, सईद शाह दाऊद, सईद शाह अली जमालूलाल, सईद शाह अबूसाले नासर, सईद शाह अबदुल रज़ाक, सईद शाह अबदुल कायब इत्यादि। पीर दस्तगीर ने गुरू नानक साहिब के कहने पर कादरी सिलसिले के पीरों को दायित्व दिया गया। जिसमें हरियाणा के कैथल, पानीपत इत्यादि शामिल थे। हैदराबाद में पीर दस्तगीर के वंशज सईद शाह नूरूदीन खुशमैनी ने कमान संभाली और नानक विचारधारा को फैलाया। यह हज़रत सईद शाह गुलाम हुसैन खुशमैनी अलकादरी सढ़ौरा के रहने वाले का बेटे थे और हज़रत कुतुबुदीन बख़्त्यार काकी दिल्ली के भी वंशज थे।

अध्याय 22

थानेसर-लोहगढ़ का प्रवेश द्वार

गुरु नानक साहिब व अन्य नो गुरु साहिबानों का समय-समय पर थानेसर का भ्रमण करना महज एक संयोग नहीं है। पानीपत के स्पाट मैदान के विपरीत थानेसर के उत्तर में स्थित लोहगढ़ क्षेत्र में घना जंगल जो ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर था। यह गोरिल्ला युद्ध के लिए उपयुक्त भूमि थी। लोहगढ़ क्षेत्र 18वीं सदी में शक्तिशाली मुग़ल साम्राज्य की कब्र बनी। एशिया के सबसे बड़े राजमार्ग ग्रैन्ड ट्रंक रोड (जी.टी.रोड) पर स्थित थानेसर सामरिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण शहर था। वणजारे सदियों से इस राजमार्ग पर अपनी व्यापारिक गतिविधियां टांडों के माध्यम से चलाते थे। गुरु नानक साहिब के क्रांतिकारी मिशन के उदय के बाद वणजारों ने नानकपंथी विचारधारा का प्रचार प्रसार उन क्षेत्रों में किया जो उनके व्यापार से सम्बन्धित थे। इसी कारण काबुल, अमृतसर, थानेसर, आगरा और पटना आदि शहर महत्वपूर्ण सिक्ख केंद्रों के रूप में उभरे।

थानेसर में प्रयाप्त मात्रा में पानी उपलब्ध था। भौगोलिक रूप से यह शहर सरस्वती और चैटांग के दोआब के बीच स्थित है। शिवालिक क्षेत्र से निकलने वाली वर्षा कालीन नदियों ने भी इस क्षेत्र को सिंचित किया। जिसके फलस्वरुप यहां हज़ारों वर्ष पहले अनेक मानव संस्कृतियों का विकास हुआ। यह शहर कालान्तर में हिंदुओं और बौद्धों के लिए एक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल बना। छठी सदी में थानेसर को स्थानीय वर्धन शासकों की राजधानी बनने का गौरव प्राप्त हुआ। इस वंश के अंतिम सम्राट हर्षवर्धन ने अपनी राजधानी कन्नौज में स्थापित की। सातवीं सदी के प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेन-त्सांग ने यहां का भ्रमण कर यहां के तीन बौद्ध मठों का उल्लेख किया है। जिनमें 700 से अधिक हीनयानी बौद्ध रहते थे।

गुरु नानक साहिब का थानेसर दौरा

सन् 1501 में गुरु नानक साहिब ने मध्ययुगीन व्यापार मार्ग पर स्थित पाकपट्टन से दिल्ली की अपनी पांच महीने की यात्रा समाप्ति के पश्चात सूर्यग्रहण से पहले कुरूक्षेत्र की अपनी यात्रा शुरू की।[313] इसी समय इस व्यापारिक मार्ग पर गुरु नानक साहिब की भेंट कई वणजारों से हुई। जिन्होंने उनसे प्रभावित होकर सिक्ख धर्म अपनाया। गुरु नानक साहिब रोहतक से थानेसर (कुरुक्षेत्र) आए थे। इसी मार्ग में लखन वणजारा के स्वामित्व वाले गांव लाखनमाजरा में उन्होंने एक मंजी की स्थापना की। लखन वणजारा राजा हटिया का वंशज था, जो 5वीं सदी में कन्नौज का राजा था।[314]

---

313 *ट्रैवल्स ऑफ गुरू नानक, सुरिन्दर सिंह कोहली, पृष्ठ 13
314 *गुरु नानक, फाउंडर ऑफ सिक्खिज़मः ए बायोग्राफी, त्रिलोचन सिंह, पृष्ठ 123

हांसी के राजा जगत राय ने सिक्ख धर्म अपनाने के बाद गुरु जी के साथ थानेसर की यात्रा की। थानेसर (कुरुक्षेत्र) पहुंचने पर स्थानीय ब्राह्मणों के नेता नानू पंडित के साथ गुरु नानक साहिब का शास्त्रार्थ हुआ। गुरु नानक साहिब ने अपने प्रवचनों में भोजन से जुड़ी मिथ्या धार्मिक हठधर्मिता पूर्ण मान्यताओं पर कटाक्ष किया। उनके यह प्रवचन गुरु ग्रंथ साहिब में संग्रहित है।

गुरु साहिब का आगमन कुरूक्षेत्र स्थित ब्रह्मसरोवर की दक्षिणी दिशा में एक स्थान पर हुआ था। जहां पर उनकी याद में गुरुद्वारा पहली पातशाही सुशोभित है। इसी सरोवर के उतर तट पर गुरु गोबिंद सिंह की स्मृति पर बना गुरुद्वारा राजघाट स्थित है। इन दोनों गुरुद्वारों के बीच कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय से लगती हुई भूमि में बौद्ध मठों के अवशेष मिलते हैं।

गुरु नानक साहिब ने थानेसर से नाहन[315] निवासी भाई मनी सिंह के परदादा लक्ष्मण वणजारा के साथ हलीमी राज[316] मानवता के शासन के मिशन को पूरा करने के लिए लोहगढ़ क्षेत्र का दौरा किया। इस यात्रा के दौरान उन्होंने नाहन और साढ़ौरा में मंजी[317] की स्थापना की। गुरु नानक साहिब ने नाहन में भाई राधे वणजारा से भी मुलाकात की। इसके पश्चात गुरु नानक साहिब ने पौटां, बुड़िया, बणी बदरपुर, करनाल, कुरुक्षेत्र, कैथल, गुल्हा, शाहबाद, अंबाला, चंडीगढ़ और पिंजौर[318] में मंजी एवं धरमसाल की स्थापना की। लोहगढ़ क्षेत्र में कपाल मोचन[319] नाम का एक स्थान है जहां रूकने के बाद ही गुरु नानक साहिब, चिंटनवाली[320] की ओर रवाना हुए थे। सन् 1518 में गुरु नानक साहिब ने मध्य पूर्व यूरोप और अफ्रीका की यात्रा के पश्चात पुनः बाबा

---

315 *गुरु ग्रंथ साहिब, अंग 73, 'सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीओ'

316 *गुरु दे शेर, डॉ. हरजिंदर सिंह दिलगीर, पृष्ठ 345

317 *पीर बुद्धु शाह-द सेन्ट ऑफ सढ़ौरा, गुरचरण सिंह, पृष्ठ 39, वी.एस. सूरी (मंजी एट सढ़ौरा) गंगू शाह मंजी की स्थापना नाहन में गुरु नानक साहिब द्वारा स्थापित की गई थी और कुछ ग्रंथों में यह भी कहा गया है कि यह मंजी गुरु अमर दास साहिब द्वारा स्थापित की गई थी।

318 *इन स्थानों पर बने गरूद्वारों से पता चलता है कि यहां कभी सिक्ख धर्मसाल थी।

319 *कपाल मोचन का गुरुद्वारा गुरु नानक साहिब की याद का प्रतीक है। इस गुरुद्वारे का प्रबंधन S.G.P.C. द्वारा किया जाता है।

320 *हिस्ट्री एण्ड फिलोसॉफी ऑफ दी सिक्ख रिलीजन, खण्ड-1, पृष्ठ 104 कपाल मोचन से गुरु नानक साहिब छींटनवाली गए जोकि बाद में मसुमपुर के नाम से जाना जाता है। मसुमपुर के पास खानपुर नामक गांव है जहां भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार दूसरी मंजी स्थापित की गई थी। महान कोष खण्ड-1, पृष्ठ 944. यह स्थान टोका साहिब भोजराज और थापलपुर के पास है। यहां लोहगढ़ ख़ालसा किला अभी भी पहाड़ों में बना हुआ है। यहां सातवें नानक गुरू हर राय साहिब जी 13 साल तक।

फरीद,[321] भगत सदना,[322] हजरत निजामुद्दीन[323] जिनके पोते शाह अब्दुल वाहिब[324] पीर बुद्धु शाह के पूर्वज थे, शाह सरार्फ, और कई अन्य सूफी संतों के साथ थानेसर का दौरा किया। ये अनेक सूफी सिलसिलो के संत गुरु नानक विचारधारा पर कार्य करने को तैयार थे। इनमें से शाह अब्दुल वाहिब का परिवार भगत सदना[325] के साथ साढ़ौरा चला गया।

शाह सरार्फ ने पानीपत का दायित्व संभाला। इसी तरह चिश्ती, कादरी और नक्शबंदी[326] सिलसिलों के सूफियों ने गुरु नानक साहिब के वर्चस्व को स्वीकार कर उनके मिशन पर काम करना शुरू कर दिया।

मिस्त्र के पीर शेख जलालुद्दीन का थानेसर में बसना

सन् 1518 में गुरु नानक साहिब की सलाह पर मक्का निवासी पीर शेख जलालुद्दीन थानेसरी मिस्त्र से थानेसर चले आये। पीर जलाल राजा हामिद कानून[327] मिस्त्र के ओटोमन

---

321 *यह सिक्ख इतिहास की विकृति का विषय है। कहा जाता है कि शेख फरीद का संबंध 12वीं शताब्दी से था लेकिन ऐसा नहीं है। सच यह है कि एक मुस्लिम लेखक ताजुद्दीन की डायरी के अनुसार वह गुरु नानक साहिब के समकालीन थे जो गुरु साहिब के साथ मक्का से बगदाद गए थे। सैयद पृथ्वीपाल सिंह ने मुश्ताक हुसैन शाह (सन् 1902-1969) एक कश्मीरी मुस्लिम, जिसने बाद में सिख धर्म को स्वीकार किया द्वारा अनुवादित किया गया था। इन्होनें इस डायरी के पृष्ठ 63 में लिखा है कि मक्का के पश्चिम में तीन स्मारक हैं जिनके नाम हजरत सुल्तान बाहू, शेख फरीद साहिब और नानक शाह हैं। ट्रैव्ल्ज़ ऑफ गुरु नानक पुस्तक में सुरिन्दर सिंह कोहली पृष्ठ 142 में लिखते है कि गुरु नानक की मदीना यात्रा के समय उनकी चर्चा इमाम गौस, इमाम अशरफ और इमाम अज़ीम से हुई थी जिन्होनें अंततः गुरु के सामने श्रद्धा से नमन किया। पैगम्बर हज़रत मौहम्मद की कब्र से लगभग 03 मील की दूरी पर मदीना में नानक पीर या वली हिंद का एक स्मारक मौजूद है। मदीना से गुरु नानक साहिब सऊदी अरब के शहरों और ईराक के शहर हिज्रा होते हुए बगदाद पहुंचे थे। यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि गुरु नानक साहिब की मक्का यात्रा के समय कई भारतीय मुस्लिम देवी संत भी मक्का की तीर्थ यात्रा पर गए थे। उनमें से मखदूम रुकन-उद-दीन, पाकपट्टन के शेख इब्राहिम (फरीद) और शेख दस्तगीर मुख्य थे। चर्चाओं में जो मक्के-मदीने की गोष्ठ के अनुसार मखदूम रुकन उद-दीन और बाबा फरीद के बीच हुई चर्चाएं संग्रहित हैं

322 *सिक्ख इतिहास की एक अन्य विकृति यह है कि भगत सदना (एक मुस्लिम सन्त) का सम्बन्ध भी 12वीं सदी से था लेकिन यह भी सच नहीं है। वह भी गुरु नानक साहिब के समकालीन थे। उनका एक शब्द गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 858 पर दर्ज है।

323 *हज़रत निजामुद्दीन मौहम्मद पैगंबर की बेटी फातिमा बिंत का वंशज है। वह बाबा फरीद के बहुत घनिष्ठ सहयोगी थे। एक समय स्याना सेदाँ और भौर सेदाँ की जागीरें उनकी थीं। उनके बाद उनके वंशज पीर भीखन शाह यहां रहे थे।

324 *शेख अब्दुल वहाब का मकबरा औरंगजेब के द्वारा सन् 1670 में सढ़ौरा में बनवाया गया था। पीर बुद्धु शाह इनकी छः पीढ़ी पहले के पूर्वज थे और इनके पिता का नाम शाह अब्दुल गंज था। मकबरे के द्वार पर हिजरी 1080 अर्थात् 1670 के एक शिलालेख रूप में उसके निर्माण की तारीख का उल्लेख है।

325 *पीर बुधु शाह सढ़ौरा का पीर, गुरचरण सिंह पृष्ठ 41

326 *शुरू में नक्शबंदियों ने गुरु नानक साहिब के मिशन पर काम किया लेकिन जहांगीर और औरंगजेब के शासनकाल में उनमें से कुछ ने राजनीतिक प्रलोभन में आकर सिक्ख धर्म के खिलाफ काम करना शुरू कर दिया था।

327 *एक मुस्लिम लेखक की ताजुद्दीन की डायरी के विवरण में कहा गया है कि लेखक ने मक्का से बगदाद की यात्रा गुरु नानक साहिब के साथ की थी। यह डायरी सैयद पृथ्वीपाल सिंह उर्फ मुश्ताक हुसैन नामक (सन् 1902-1969) एक कश्मीरी मुस्लिम ने अनुवादित की थी।

साम्राज्य के शाह सलीम प्रथम के गुरु थे। इन दोनों ने गुरु नानक साहिब की मिस्त्र यात्रा के बाद सिक्ख धर्म अपना लिया था। उस समय सैय्यद और शेख दोनों शैक्षिक और धार्मिक कार्यो का निर्वहन करते थे। पीर जलाल पैगंबर मोहम्मद के वशंज थे तथा यह बड़े खलीफा के शिष्य एवं शेख गंगोही के करीबी थे। वह सूफी विचार वहदत उल वजूद के ज्ञाता थे। कुरान सूफी विश्वास के साथ-साथ उनकी पकड़ राजस्व प्रशासन विषय पर भी थी। थानेसर आने के बाद उन्होंने गुरु नानक साहिब के मिशन पर काम करना शुरू कर दिया था। पीर जलालुद्दीन थानेसरी का मकबरा थानेसर में शेख चेहली के मकबरे के पास स्थित है।

गुरु नानक साहिब ने शेख अब्दुल-कुद्दुस गंगोही को समानता व ईश्वर के प्रति समर्पण का मार्ग दिखाया। वह पहले शाहबाद तथा बाद में सहारनपुर के निकट गंगोह[328] चले गए। गंगोह का यह स्थान लोहगढ़ क्षेत्र के बहुत निकट है। इसी कारण बंदा सिंह बहादुर ने बहुत कम समय में सहारनपुर सरकार को अपने कब्ज़े में ले लिया था। यह सब शेख अब्दुल-ए-कुद्दुस जैसे सूफियों के प्रयासों से संभव हो सका था। यहां तक कि मुग़ल बादशाह हुमायूं भी शेख गंगोही की ख़ानकाह के दर्शनों के लिए गए थे।

मुग़ल शासन के दौरान चिश्ती, कादरी और नक्शबंदी जैसे सूफी सिलसिलों ने महत्वपूर्ण राजनीतिक स्थान प्राप्त कर लिया था। 15वीं सदी से नक्शबंदी सूफी सिलसिला सत्ता के लाभ के कारण नानकपंथी विचारों और चिश्तियों की विचाराधारा के विरोध में था। अकबर के समय चिश्तियों को मुग़ल साम्राज्य में विशेष स्थान प्राप्त था। जहांगीर के शासनकाल के शुरूआती दौर में नक्शबंदियों का बोलबाला रहा, लेकिन इसके पश्चात शाहजहां के शासनकाल में कादरी सिलसिले को विशेष सम्मान मिला। दारा शिकोह की हत्या के बाद औरंगज़ेब मुग़ल बादशाह बना। औरंगज़ेब के समय में ही नक्शबंदी सूफियों ने मुग़ल सत्ता में अपनी गहरी पैठ बना ली थी।

गुरु अंगद साहिब का थानेसर दौरा

अगस्त, 1542 में गुरु अंगद साहिब ने सूर्यग्रहण के अवसर पर कुरुक्षेत्र आकर थानेसर[329] के मोहल्ला मुसलमान में एक मंजी की स्थापना की। इस समय भारतीय उपमहाद्वीप में राजनीतिक उथल-पुथल का माहौल था। इस समय हुमायूं और शेरशाह सूरी के बीच लगातार लड़ाईयां हो रही थी। हुमायूं ने थानेसर में दूसरे नानक गुरु अंगद साहिब से मदद मांगी थी।

---

328 *हिस्ट्री ऑफ सूफीज़म इन इन्डिया, सैयद अकबर अब्बास रिजवी, पृष्ठ 346

329 *भाई धन्ना सिंह द्वारा सन् 1930 में साइकिल यात्रा। जिसका विवरण 2016 में प्रकाशित हुआ था। इसके अनुसार गुरू अंगद साहिब द्वारा स्थापित मंजी सन् 1930 तक अस्तित्व में थी लेकिन अब इसका पता नहीं

थानेसर में गुरु अंगद साहिब का स्वागत पीर जलालुद्दीन, पंडित नानू के वंशजों, अब्दुल वाहिब शाह और बड़ी सिक्ख संगत द्वारा किया गया था। गुरु साहिब कुछ महीनों के लिए थानेसर में रहे और बाद में उन्होंने अब्दुल वाहिब के साथ लोहगढ़ क्षेत्र का दौरा किया। उनकी इस यात्रा के दौरान भाई मुल्ला वणजारा तथा अन्य वणजारे नेताओं के साथ हलीमी राज की स्थापना के लिए कई गुप्त बैठकें हुई।

गुरु अमरदास साहिब का थानेसर दौरा

सन 1552 में गुरु अंगद साहिब के ज्योति-ज्योत के पश्चात् गुरु अमरदास साहिब को गुरु-घर का दायित्व मिला। उन्होंने पेहवा, कुरूक्षेत्र और हरिद्वार की यात्राऐं की। उनका मक्सद हिन्दू तीर्थो पर जाकर अपने विरोधियों को जवाब देना था। यह सिक्ख गुरुओं के संप्रभु चरित्र को ध्यान में रखते हुए अत्यंत अनुचित था। क्योंकि सिक्ख गुरुओं ने कभी किसी राजा की आज्ञा को न स्वीकार करते हुए केवल एक सर्वशक्तिमान परमात्मा के ही हुक्म का पालन किया।

उन्होंने कुरूक्षेत्र में एक मंजी[330] की स्थापना की। उन्होंने जोगियों, दिगम्बरों, सन्यासियों में विश्वास रखने वाले अनेक लोगों को गुरु नानक साहिब की शिक्षाओं और दर्शन से अवगत कराया। गुरु रामदास साहिब ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब[331] के पावन अंग 1116 पर गुरु अमरदास साहिब की यात्राओं का उल्लेख इस प्रकार किया है।

प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ॥
खबरि भई संसारि आए त्रै लोआ॥
देखणि आए तीनि लोक सुरि नर मुनि जन सभि आइआ॥
जिन परसिआ गुरु सतिगुरु पूरा तिन के किलविख नास गवाइआ॥
जोगी दिग्मबर संनिआसी खटु दरसन करि गए गोसटि ढोआ॥
प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ॥३॥

अर्थ- हे भाई! गुरु अमरदास साहिब पहले कुरूक्षेत्र में पहुंचे। वहां के असंख्य लोगों के लिए वह दिन गुरु सतिगुरु से संबंध रखने वाला पवित्र दिन बन गया। संसार में सतिगुरु जी के

330 *भाई धन्ना सिंह द्वारा सन् 1930 में साइकिल यात्रा की गई थी। उनके यह यात्रा विवरण सन् 2016 में प्रकाशित हुए थे। इसके अनुसार तीसरे नानक गुरु अमरदास साहिब ने कुरूक्षेत्र में सन्निहित सरोवर के निकट एक मन्जी स्थापित की थी जो ससौली (तहसील मुस्तफाबाद, यमुनानगर) गांव के सदर द्वारा नष्ट की गई। वर्तमान में यह स्थान निर्मल साधुओं के अधीन है। कुरूक्षेत्र की लक्ष्मण कॉलोनी के निकट स्थित गुरुद्वारा तीसरे और सातवें नानक की कुरूक्षेत्र यात्रा का गवाह है

331 *गुरु ग्रंथ साहिब अंग 1116

कुरूक्षेत्र आने की खबर फैल गई। बेअंत लोग गुरु अमरदास साहिब के दर्शन करने के लिए आ पहुंचे। आलोकिक पुरूष, ऋषि-मुनि एकत्र हुए। जिस भाग्यशाली मनुष्य ने पूरे गुरु सतिगुरु के दर्शन किए उनके पिछले सारे पाप नष्ट हो गए। जोगी, नागे, सन्यासी सारे ही छह भेषों के साधु दर्शन करने आए। कई किस्म के परस्पर शुभ-विचार वह साधु लोग अपनी ओर से गुरु के दर पर भेंटे पेश कर के गए। हे भाई! गुरु (अमरदास) जी पहले कुरूक्षेत्र पहुंचे। वहां के लोगों के लिए वह दिन गुरु सतिगुरु के साथ संबंध रखने वाला पवित्र दिन बन गया।३।

दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ॥
जागाती मिले दे भेट गुर पिछै लंघाइ दीआ॥
सभ छुटी सतिगुरु पिछै जिनि हरि हरि नामु धिआइआ॥
गुर बचनि मारगि जो पंथि चाले तिन जमु जागाती नेड़ि न आइआ॥
सभ गुरु गुरु जगतु बोलै गुर कै नाइ लइऐ सभि छुटकि गइआ॥
दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ॥4॥

अर्थ- हे भाई! फिर गुरु अमरदास साहिब यमुना नदी पर पहुंचे। सतिगुरु जी ने वहां भी परमात्मा का नाम ही जपा और जपाया। यात्रियों से सरकारी मसूल उगराहने वाले भी भेंटा रख के सतिगुरु जी को मिले। अपने आप को गुरु का सिक्ख कहलवाने वाले सबको उन मसूलियों ने बिना मसूल लिए पार जाने दिया। गुरु के पीछे चलने वाली सारी लोकाई मसूल (टैक्स) भरने से बच गई। इसी तरह हे भाई! जिस-जिस ने परमात्मा का नाम स्मरण किया जो मनुष्य गुरु के वचनों पर चलते हैं, गुरु के बताए हुए रास्ते पर चलते हैं, यमराज रूपी मसूलिया उनके नजदीक नहीं फटकता। यदि गुरु की शरण में पड़कर हरि-नाम जपा जाए तो नाम लेने वाले सारे जम-जागाती की प्रभाव से बच जाते हैं।

हे भाई! फिर गुरु अमरदास साहिब यमुना नदी पर पहुंचे। सतिगुरु जी ने वहां भी परमात्मा का नाम जपा और जपाया।4।

त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ॥
सभ मोही देखि दरसनु गुर संत किनै आढु न दामु लइआ॥
आढु दामु किछु पइआ न बोलक जागातीआ मोहण मुंदणि पई॥
भाई हम करह किआ किसु पासि मांगह सभ भागि सतिगुर पिछै पई॥
जागातीआ उपाव सिआणप करि वीचारु डिठा भंनि बोलका सभि उठि गइआ॥
त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ॥5॥

अर्थ: हे भाई! दो तीर्थों से होकर सतिगुरु अमरदास साहिब तीसरी जगह गंगा पहुंचे। वहां एक अजीब तमाशा हुआ। संत-गुरु अमरदास साहिब के दर्शन करके सारी दुनिया मस्त हो गई। किसी भी मसूलिए ने किसी भी यात्री से आधी कौड़ी भी मसूल वसूल ना किया। मसूलिए यूं हैरान से होकर बोलने के योग्य ना रहे। कहने लगे हम अब क्या करें? हम किससे मसूल मांगें? ये सारी दुनिया ही भागकर गुरु की शरण जा पहुंची है।जो अपने आप को गुरु का सिक्ख बता रहे हैं उनसे हम महसूल ले नहीं सकते। मसूलियों ने कई उपाय सोचे, कई तरह से विचार किया, आखिर उन्होंने विचार करके देख लिया कि महसूल इक्कट्ठा नहीं किया जा सकता और सभी अपनी गोलकें बंद करके वे सारे उठ के चले गए।5।

गुरु अमरदास साहिब यहां कई दिनों तक रहे और उन्होंने बहुत सारी संगत[332] को सम्बोधित किया। उनके यहां निवास के समय पीर जलालुद्दीन और उसके दामाद पीर निजाम थानेसरी उनके साथ रहे। इसके पश्चात, गुरु साहिब ने भाई मुल्ला वणजारा के साथ लोहगढ़ क्षेत्र का दौरा किया। इस यात्रा के समय सढ़ौरा में उनकी मुलाकत शाह अब्दुल वाहिब और उसके बेटे सईद अब्दुल हमीद से हुई। बुड़िया में गुरु साहिबान ने सिक्ख संगत की और यमुना पार करके वह यहां से हरिद्वार के लिए निकल पड़े। हरिद्वार के रास्ते में उन्हें शिवालिक पहाड़ियों में वणजारों के टांडे मिले जोकि हलीमी राज की स्थापना करने के लिए यहां किलेबंदी कर रहे थे।

गुरु रामदास साहिब का थानेसर दौरा

सन् 1576 में गुरु रामदास साहिब ने थानेसर[333] में एक मंजी साहिब की स्थापना की। गुरु रामदास साहिब के कार्यकाल के राजनीतिक परिदृश्य पर एक सरसरी नज़र डाले तो पता चलता है कि मुग़ल बादशाह अकबर मुग़ल साम्राज्य को सुलह-कुल (सार्वभौमिक शांति) के सिद्धांत पर चलाना चाहते थे। इसलिए सिक्खों के लिए लोहगढ़ क्षेत्र में अपनी गतिविधियों का विस्तार करने का यह सबसे उपयुक्त समय था। लोहगढ़ क्षेत्र का विकास मानवता के इतिहास के लिए एक महत्त्वपूर्ण युग की शुरूआत थी। चौथे नानक की बुद्धि और कौशल के कारण मसंद नाम की संस्था अधिक संगठित हो गई थी। तथा लोहगढ़ क्षेत्र के चारों तरफ इन्होनें अपनी भारी पैठ बना ली थी। इस समय तक पीर जलालुद्दीन बहुत बूढ़े हो चुके थे। थानेसर में उनके दामाद निज़ाम थानेसरी ने दूसरे सूफी संतों और सिक्खों के साथ गुरु साहिब जी का स्वागत किया। थानेसर के

---

332 *कुरूक्षेत्रः पॉलिटिकल एण्ड कल्चरल हिस्ट्री, बाल कृष्ण मुज़तर, पेज 78

333 *भाई धन्ना सिंह की सन् 1930 की साइकिल यात्रा जो सन् 2016 में प्रकाशित हुई के अनुसार मन्जी साहब चौथी पातशाही थानेसर में शेख चेहली मकबरे के पास बनाई गई थी, जिस पर अब उदासी सन्तों का कब्ज़ा है।

आस पास सिरसमा और भादसों[334] में भट्टों के गांव भी स्थापित किए गए। थानेसर से वणजारा सिक्खों, भाई प्रेमा (परमार), भाई रूपा (राठौर), भाई गोडू, भाई कमला दास (चौहान), भाई नायक कर्मचंद को साथ लेकर गुरु साहिबान लोहगढ़ क्षेत्र की यात्रा पर निकले। पीर बुद्धु शाह के पूर्वज शाह अली असगर जो गुरु नानक साहिब के समय से ही यहां हलीमी राज के लिए कार्य कर रहे थे, उन्होंने यहां गुरु रामदास साहिब का स्वागत किया। इसके पश्चात गुरु रामदास साहिब, भाई गुरदास और सिक्ख संगत[335] से मिलने आगरा गए। कुछ समय बाद गुरु साहिब अमृतसर लौट आए। सन् 1578 में अकबर ने सर्वधर्म संवादों और सम्मेलनों को आयोजित करवाया, जिसमें भाई गुरदास ने हिस्सा लिया था।

गुरु अर्जुन साहिब और साई मियां मीर का थानेसर दौरा

सन् 1604 में गुरु अर्जुन साहिब ने साईं मियां मीर[336] के साथ थानेसर का दौरा किया। जहां उनका स्वागत शेख निजाम थानेश्वरी ने किया। गुरु साहिब ने यहां शेख चेहली[337] के मकबरे के पास एक मंजी स्थापित की। गरु अर्जुन साहिब के समय सिक्खों ने व्यापारिक गतिविधियां बढ़ाने पर विशेष जोर दिया। अभी हाल में मिली 'वणजारा पोथी' नामक एक पांडुलिपि में पंचम नानक द्वारा सर्वश्रेष्ठ तोप बनाने का उल्लेख मिलता है।

थानेसर के व्यापारियों भाई नंदा, भाई विथर और भाई स्वामीदास[338] जो कि गुरु अर्जुन साहिब के सच्चे भक्त थे। उन्होनें यहां पहुंचने पर गुरु साहिबान और उनके साथ चल रही संगत का स्वागत किया। ये सभी लोग अपने पेशे के प्रति बहुत ईमानदार और वचनों के धनी थे। वे गुरुओं के उपदेशों का पालन करते हुए थानेसर की सिक्ख संगत का नेतृत्व करते थे। यहां से गुरु साहिबान भाई भालू वणजारा और भाई प्रेमा वणजारा को साथ लेकर लोहगढ़ क्षेत्र के लिए निकल पड़े। इस समय तक लाडवा और रादौर महत्वपूर्ण सिक्ख केंद्र बन गए थे। जहां उनकी व्यापारिक गतिविधियां फल-फूल रही थी। इसी समय तहसील लाडवा में मौजूद गांव लोहारा भी एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र बन गया था। साढ़ौरा के पास गुरु अर्जुन साहिब की मुलाकात पीर बुद्धु शाह के पूर्वज शाह अली असगर से हुई।

---

334 *हिस्ट्री ऑफ सिक्ख गुरु रिटोल्ड, सुरजीत सिंह गांधी के पृष्ठ 461 में कहा गया है कि भाई भीखा लाडवा के नज़दीक गांव सुल्तानपुर, भादसों के रहने वाले थे। उसके पिता राय भट्ट के छः बेटे थे जिनमें से सबसे बड़े भीखा थे। भाई भीखा में अपने आध्यात्मिक उत्थान की बड़ी ललक थी।

335 *गुरु तेग़ बहादुर प्रोफैट एण्ड मार्टियरः- ए बायोग्राफी, त्रिलोचन सिंह पृष्ठ 159

336 साई मियां मीर जी ने हरमंदिर साहिब (अमृतसर) की नींव रखी थी।

337 *भाई धन्ना सिंह की सन् 1930 की साईकिल यात्रा के अनुसार चौथी पातशाही द्वारा स्थापित मंजी के पास पंचम नानक ने इस मंजी से 100 मीटर उत्तर में एक दूसरी मंजी स्थापित की थी

338 *महान कोश, भाई काहन सिंह नाभा पृष्ठ 693

यहां साढौरा[339] निवासी शेख चेहली ने भी गुरु अर्जुन साहिब का स्वागत किया। तत्पश्चात गुरु अर्जुन साहिब ने आगरा जाकर एक सुंदर सरोवर का निर्माण किया जो गुरु का ताल[340] कहलाता है। राजकुमार सलीम (बाद में जहांगीर) ने गुरु साहिब के प्रति श्रद्धा रखते हुए करतारपुर में उन्हें बड़ी जमीन दान में दी थी।[341]

चिश्ती सूफियों ने गुरु नानक साहिब की विचारधारा के अनुसार राजकुमार सलीम को परिपक्व करने की कोशिश की थी। यहां तक शेख सलीम चिश्ती की बेटी, सलीम (सम्राट जहांगीर) की पालक मां थी। लेकिन वह गुरु नानक साहिब और अकबर की विचारधारा के अनुसार सलीम का पालन करने में विफल रही। दूसरी तरफ सलीम के बेटे खुसरो मिर्जा ने गुरु नानक साहिब की विचारधारा को सीखना और अपनाना शुरू कर दिया था। चिश्ती सूफी संतों ने अकबर को जहांगीर की जगह अगला बादशाह बनाने के लिए खूब मनाया था। इसके अलावा, जहांगीर को अफीम और शराब की लत भी थी। यहां तक कि उसके पास मानवीय मूल्यों को बनाए रखने के लिए आवश्यक बुद्धि का भी अभाव था।

सन् 1605 में अकबर की मृत्यु के पश्चात मुग़ल राज को सत्ता पर काबिज करने के लिए अगले वर्ष सन् 1606 में खुसरो ने अपने पिता जहांगीर के खिलाफ विद्रोह किया। इसी वर्ष आगरा से 350 घोड़सवारों को लेकर सिकंदरा स्थित अकबर के मकबरे पर जाने के बहाने खुसरो आगरा से निकल पड़ा। मथुरा में 3000 घोड़सवारों के साथ हुसैन बेग़ उससे जा मिला। पानीपत में लाहौर का दीवान अदूर रहीम भी उससे मिल गया था। अप्रैल, 1606 में आगरा से लाहौर की यात्रा के दौरान भगौड़ा राजकुमार तरनतारन में गरु अर्जुन साहिब से आशीर्वाद और मदद लेने के लिए पहुंचा। गरु अर्जुन साहिब ने राजकुमार खुसरो को दोनों चीजें प्रदान की। विद्रोही राजकुमार के प्रति शेख की सहानुभूति के कारण जहांगीर ने उसे मक्का निर्वासित होने और गुरु अर्जुन साहिब के वध का आदेश भी दिए।

गुरु अर्जुन साहिब को दिए गए दंड के बारे में अंतिम स्वतंत्र स्त्रोत फारसी पाठ दबिस्तान-ए-मजाहिब (सन् 1640 के दशक में लिखित) है। यहां उल्लेख किया गया है कि राजकुमार खुसरो की गिरफ्तारी के बाद बादशाह जन्नत मकानी नूरुद्दीन मुहम्मद जहांगीर ने गरु अर्जुन साहिब को अपने पिता के खिलाफ विद्रोह करने वाले राजकुमार खुसरो का पक्ष लेने के लिए तथा उसे समर्थन देने के लिए दंडित किया। बादशाह ने गुरु अर्जुन साहिब से एक बड़ी धन

339 *शाह कुमेश की जीवनी में लिखा गया है कि शेख चेहली, जिसका मकबरा थानेसर में स्थित है, वह मूल रूप से सढ़ौरा का रहने वाला था।

340 *इकतदार आलम ख़ान के अनुसार, सिक्ख मौखिक परंपरओं में इस तालाब का संबंध गुरू अर्जुन जी से जिन्होंने जहांगीर के राज्य काल के पहले साल आगरा का दौरा किया था। स्ट्रक्चर एण्ड फक्शनिंग ऑफ प्री मार्डन वाटर वर्क-ए स्टडी ऑफ गुरू का ताल (सन्1988) पृष्ठ 288

341 *महान कोश, काहन सिंह नाभा, पृष्ठ, 902

राशि की मांग की थी लेकिन वह इस स्थिति में नहीं थे। इसलिए उन्हें लाहौर के आसपास के रेगिस्तान में बांध कर रख दिया गया था। आखिर उन्हें तेज धूप, गर्मी, मसूल वसूल करने वालों द्वारा पंहुचाई गई चोटों के कारण शरीर छोड़ना पड़ा। यह सब हिजरी 1015 अर्थात सन् 1606-1607 में घटित हुआ। इसी तरह बादशाह ने शेख निजाम थानेसरी को खुसरो का पक्ष लेने और उसे सर्मथन देने के अपराध में भारत से निष्कासित करने के आदेश दिए।

गरु अर्जुन साहिब को सन् 1606 में अनेक यातनाएं देकर शहीद किया गया। इस तरह वह सिक्ख धर्म के पहले शहीद हुए। मियां मीर ने गरु अर्जुन साहिब की शहादत पर नारे लगाते हुए शोक व्यक्त किया। इसके पश्चात शेख निज़ाम थानेसरी निर्वासन के लिए मक्का जाते हुए अफगानिस्तान के बल्ख में ठहरे। बल्ख में वह गुरु नानक साहिब द्वारा स्थापित धर्मशाला में ठहरे, जहां एक मसंद ने उनकी अगवानी और देखभाल की।[342] बल्ख में शेख ईशा सिंधी द्वारा उनका गर्मजोशी से स्वागत किया गया।[343] शेख का निर्वासन थानेसर के सिक्ख आंदोलन के लिए एक झटके के समान था क्योंकि थानेसर के चिश्ती सूफी संतों का सिक्खों को विशेष सहयोग प्राप्त था।

सन् 1608 में गुरु हर गोबिंद साहिब को मुग़ल बादशाह जहांगीर के आदेश पर गिरफ्तार किया गया। उन्हें ग्वालियर की जेल में एक राजनीतिक कैदी के रूप में भेज दिया गया। ग्वालियर, रणथंभौर और ब्याना के किलों में मध्ययुग के उच्च स्तरीय लोगों को कैदियों के रूप में रखा जाता था।[344] सन् 1609 में जहांगीर ने पंजाब का दौरा किया। लाहौर पहुंचने पर उन्होंने साईं मिंया मीर से मुलाकात की। मियाँ मीर ने अपने धार्मिक दर्शन के माध्यम से मुग़ल दरबार को प्रभावित किया। उसके बाद साईं मियां मीर ने थानेसर और पिहोवा के दौरे किए। थानेसर में साईं मियां मीर की सलाह पर अब्दुल करीम उर्फ अब्दुल रज्जाक जो कि शेख चेहली[345] के नाम से लोकप्रिय थे, ने सढौरा से आकर गुरु नानक साहिब के मिशन की कमान संभाली। साईं मियां मीर

---

342 *भाई साद गुरु हर गोबिंद साहिब (सन्1595-1644) के एक समर्पित शिष्य थे, जो मध्य एशिया के प्राचीन शहर बल्ख के निवासी थे। दबिस्तान - ए- मजाहिब के लेखक जुल्फिकार अर्दस्तानी के अनुसार इनके बारे में दो कहानियां प्रचलित हैं। जिनके अनुसार भाई साद एक समर्पित सिक्ख थे। वह जीवन के सुख- दुख से निंलेप थे और गुरू की इच्छा को समर्पित थे। लेखक के अनुसार एक बार वह गुरू के आदेश पर घोड़े खरीदने के लिए बल्ख से ईराक गए थे। उनका एक बेटा था जो उसी समय बीमार पड़ गया था। लोगो ने कहा कि तुम अभी बल्ख में ही हो जोकि घर के नजदीक है इसलिए तुम घर जाओ और बेटे को देखो।

343 *बायोग्रेफिकल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सूफीज, एन हनीफ पेज 173

344 *ईवोलयूशन ऑफ एडमिनिशट्रेशन 1556-1605 A.D., अवद बिहारी पांडे, पृष्ठ 285

345 *ईरानी सूफी संत शेख चेहली जो 17वीं शताब्दी में थानेसर आए थे। माना जाता है कि वह सम्राट शाहजहां के पुत्र, मुगल राजकुमार दारा शिकोह के अध्यात्मिक गुरू थे। शेख चेहली के पूर्वज बगदाद में गुरु नानक साहिब से मिले थे और उनके उपदेश सुनने के बाद गुरु नानक साहिब की सलाह पर वह बगदाद से सढ़ौरा आए थे। इस परिवार की पीर बुद्दू शाह के परिवार के साथ अत्यंत घनिष्ठता थी।

ने वर्तमान पिहोवा[346] तहसील में स्थित स्यौंसर के वन क्षेत्र में कई किलेबंदियां की। सन् 1612 में साईं मियां मीर की सिफारिश पर सम्राट जहांगीर ने थानेसर को दिल्ली सूबे का सबसे बड़ी प्रशासनिक इकाई बनाया। यहां 5000 की मनसबदारी स्थापित की गई। साईं मियां मीर की सलाह जहांगीर ने दक्कन के एक अधिकारी पीर ख़ान को थानेसर का मनसबदार नियुक्त किया गया।[347]

फारसी रिकॉर्ड दबिस्तान-ए-मजाहिब के अनुसार गुरु हर गोबिंद साहिब को 12 साल तक जेल में रखा गया था। जिसमें सन् 1617-1619 तक ग्वालियर में बिताया गया समय भी शामिल है। इसके पश्चात उन्हें और उनके शिविर को जहांगीर[348] द्वारा सेना की निगरानी में रखा गया था। हरिदास वणजारा ग्वालियर जेल के दरोगा (जेलर) थे। वह गुरु नानक साहिब के सिक्ख थे। उन्होंने कारावास[349] के समय गुरु साहिब की देखभाल की थी। सन् 1619 में गुरु साहिब के साथ-साथ 101 कैदियों को छोड़ा गया था। इन कैदियों में गुरु साहिब के इलावा

---

346 *किलाबंदी के पुरात्तविक स्त्रोत, स्योसंर के जंगल में मिलते हैं वन क्षेत्र में साईं मियां मीर का मकबरा भी है। इनमे से एक मकबरा कैथल जिले में स्थित गांव ककराला में भी है। गांव थेह मुकेरियन, थेह बुटाना, थेह बानेरा, थेह नेवल, थेह पोलड़, गुलडेरा, हेलवा आदि में भी अनके पुरातात्विक अवशेष मौजूद है। ये सभी गांव, चीका शहर से कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहां गुरू नानक साहिब सन् 1502 गुरु हर गोबिंद साहिब सन् 1638 ई. व गुरु तेग़ बहादुर साहिब सन् 1670 ई. की याद में गुरूद्वारा साहिब स्थित है।

एच. एस. सिंघा द्वारा लिखे गए सिख धर्म के विश्वकोश के पृष्ठ 74 में ग्लोरा को पुरातन करनाल ज़िले के चीका गांव का निवासी बताया गया है। गुरू तेग़ बहादुर जी ने उसे हांसी और हिसार का मसंद नियुक्त किया था। गुरू साहिब ने उसे एक तीरों से भरा तरकश भेट किया था।

पिहोवा शहर का भ्रमण गुरु नानक साहिब ने अपनी पहली उदासी के दौरान किया था। कुरुक्षेत्र जाते समय गुरु अमर दास साहिब, गुरु हर गोबिंद साहिब व गुरू तेग़ बहादुर साहिब भी यहां आए थे। गुरु गोबिंद सिंह यहां स्याना सैदां से आए थे। स्याना सैदां और भौर सैदां हजरत निजामुद्दीन की जागीर थी। बाद में यह गांव पीर भीखन शाह से जुड़ गया।

कुरुक्षेत्र ज़िले में पिहोवा से 11 किलोमीटर दूर कराह नामक गांव में चार सिक्ख गुरू साहिब पधारे थे। गुरू नानक जी यहां पूर्वी हिस्सों की यात्रा के दौरान आए थे। इस गांव का चौधरी कालू उनका अनुयायी बना और कहा जाता है कि उन्होंने गुरू के सम्मान में यहां एक स्मारक का निर्माण किया था। इस गांव में पधारने वाले दूसरे गुरू हर गोबिंद साहिब जी थे। लोक मान्यताओं अनुसार गुरू तेग़ बहादुर जी अपने अंतिम समय में दिल्ली जाते हुए यहां रूके थे। लेकिन सभांवना जताई जाती है कि वह यहां से अपनी पहली यात्रा के दौरान गुजरे थे। सन् 1702 में गुरू गोबिंद सिंह भी यहां आए थे, जिन्होने उस समय यहां पूर्व में आए हुए गुरूओं के पवित्र स्मारकों के दर्शन किए थे।

347 *द एप्रेटस ऑफ एम्पायर, अवार्ड ऑफ रैंक, ऑफिस एण्ड द टाईटल टू मुग़ल नोबेलिटी 1574-1658, आथर अली, पृष्ठ 56 के अनुसार बेरार के सूबेदार पीर ख़ान को सन् 1614 में थानेसर का फ़ौजदार बनाया गया था।

348 *एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सिख्ख़ हर गोबिंद गुरू 1595-1640, फौजा सिंह, हरबंस सिंह एडीटर, पंजाबी यूनिवर्सिटी, आई.एस.बी.एन 978-8173802041, 7 दिसंबर 2015 को पुनः प्रकाशित

349 *सिख रिव्यू - खंड 56, अंक 1-6 पृष्ठ 62, छठे गुरु, गुरू हर गोबिंद साहिब का एक सिक्ख हरिदास वणजारा था, जो ग्वालियर के किले का दरोगा था। गुरू हर गोबिंद साहिब की कैद के समय बाबा बुढ़ा जी, भाई गुरदास, भाई बल्लू, भाई पराना और भाई कीर्तीया उनसे मिलने अक्सर पंजाब से यहां आते थे। वह न केवल शाही दरबार के सभी समाचारों से छठे गुरु को अवगत कराते थे बल्कि उन्हे सभी सुविधाएं भी प्रदान करते थे। ग्वालियर जेल से अपनी रिहाई के विषय में बताते हुए उन्होने कहा कि एक दिन हरी दास दरोगा मेरे पास आए और उन्होंने कहा कि जब सम्राट जहांगीर अपने महल में सोते है तो उनका चेहरा घातक हो जाता है और वह धमकी देने वाले अंदाज में खुद से पूछते है कि हिन्द के पीर को ग्वालियर की जेल से मुक्त व करो। वज़ीर ख़ान ने दरोगा को उसका संदेश दिया कि वह कैदियों को मुक्त कर दें। इस संदेश के बाद सभी छोटे कैदियों को छोड़ दिया गया। ऐसे 101 कैदियों को छोड़ा गया। मैंने दरोगा से पूछा कि दूसरे कैदियों के बारे में पत्र में क्या लिखा है तो उसने हाथ जोड़कर कहा जो मुक्त नही किये गए है वह गुरू का चोला थामकर मुक्त हो सकते हैं। दरोगा गुरू का सिक्ख था मैंने उसे एक बड़ा चोगा सिलने को कहा दोपहर गुरू के चोगे को पकड़ने वाले सारे राजा मुक्त कर दिए गए।

हिंदूर, बिलासपुर, नाहन, गढ़वाल आदि रियासतों के राजा भी रिहा किऐ गए थे। लोहगढ़ क्षेत्र की किलेबंदी मुख्यत इन्हीं राज्यों के क्षेत्र में की गई थी। गुरमत के प्रचार के लिए गुरु साहिबान की चिन्ता से उल्लेखनीय परिणाम मिले। पहाड़ी राजाओं और प्रजा में उनका बड़ा प्रभाव था। कहा जाता है कि गुरु साहिबान ने कांगड़ा और पीलीभीत के राजाओं को सिक्ख मत में सम्मिलित किया था।

हालांकि इससे पहले भी हरिपुर, कुल्लु, सुकेत और चंबा के राजाओं ने सिक्ख धर्म के प्रति विशेष आदर और सम्मान था।[350]

गुरु हर गोबिंद साहिब का थानेसर दौरा

सन् 1619 में, छठे नानक ग्वालियर से अमृतसर की यात्रा के दौरान पहली बार थानेसर आए। सन् 1633 में अपनी उत्तराखण्ड की यात्रा के दौरान गुरु हर गोबिंद साहिब दूसरी बार कुरुक्षेत्र आए। यहां उनका स्वागत शेख चेहली[351] और सिक्ख संगत द्वारा किया गया। पीर बुद्ध शाह के पूर्वज राजा शाह इब्राहिम बाला ने उनके साथ लोहगढ़ क्षेत्र का दौरा किया। इसके पश्चात् गुरु साहिब उत्तराखंड के लिए निकल पड़े।जहां श्रीनगर (गढ़वाल) में उनकी भेंट शिवाजी महाराज के गुरु समर्थ रामदास, गढ़वाल के राजा तथा भाई लक्खी राय वणजारा से होनी तय हुई थी।

सन् 1635 में आगरा की मंजी के प्रमुख भाई गुरदास और थानेसर मंजी के प्रमुख साईं मियां मीर का निधन हुआ।[352] इस कारण यह स्पष्ट हो गया था कि आगे के सिक्ख आंदोलन को जारी रखना अब आसान नहीं होगा। क्योंकि 5वें नानक गुरु अर्जुन साहिब की शहादत के बाद छठे नानक गुरु हर गोबिंद सिंह को 12 सालों तक कैद में रहना पड़ा था। रिहाई के बाद उन्होनें मुग़लों के साथ चार युद्ध लड़े। सन् 1644 में 7वें नानक गुरु हर राय साहिब जी ने गुरु नानक साहिब के मिशन का कार्यभार सम्भाला। उन्होनें बहुत सावधानी बररते हुए अपना मुख्यालय लोहगढ़ क्षेत्र में स्थानांतरित कर दिया था। यह स्थान इतना गुप्त था कि यह अभी भी सिक्खों और इतिहासकारों के लिए अज्ञात है। 7वें नानक गुरु हर गोबिंद साहिब लोहगढ़ क्षेत्र में सन् 1645 से 1656 तक रहे। उनके साथ 2200 सशस्त्र घुड़सवारों की एक सेना[353] भी थी। उन्होनें यहां हलीमी राज की स्थापना के लिए किलेबंदी का काम किया। दुर्भाग्य से सितंबर सन्

---

350 *हिस्टरी ऑफ सिक्खज़ एण्ड देयर रिलीजन कृपाल सिंह व करक सिंह द्वारा संपादित। पृष्ठ 182

351 *गुरु हर गोबिंद साहिब की स्मृति में एक गुरुद्वारा शहर से दक्षिण-पूर्व दिशा में दो फर्लांग की दूरी पर पिहोवा रोड पर सन्निहित तालाब के पास स्थित है।

352 *साईं मियां मीर के अंतिम संस्कार के अवसर पर मुग़ल राजकुमार दारा शिकोह द्वारा खुत्बा पढ़ा गया था। वह संत के बेहद समर्पित शिष्य थे। सन् 1640 में दारा शिकोह के आदेश पर साईं मियां मीर का मकबरा लाहौर में बनाया गया था। दारा शिकोह की मृत्यु के बाद मुग़ल सम्राट औरंगजेब ने मियां मीर के स्मारक के निर्माण के लिए जुटाई गई सामग्री का उपयोग लाहौर की बादशाही मस्जिद के निर्माण में किया। (लतीफ, सैयद मुहम्मद सन् 1892) लाहौर ईटस हिस्टरी आरकीटैक्चरल रिमेन्स एण्ड एन्टीक्वीटिज।

353 *हिस्टरी ऑफ सिक्खज़, खण्ड-1 खुशवंत सिंह, ऑक्सफोर्ड इंडिया पेपरबैक प्रकाशन, पृष्ठ 64 अगले तेरह वर्षों (सन्1645-1657) तक गुरु हर राय साहिब सिरमौर जिले के एक छोटे से गांव में रहे। कनिंघम ने अनुमान लगाया कि वह कसौली (हिमाचल प्रदेष) के नजदीक टकसाल में रहे। सन् 1925 में एसजीपीसी बनाई गई और सिक्खों की ये सर्वोच्च संस्था अभी तक सातवें नानक गुरू हर राय साहिब जी का यह स्थान खोज नही पाई है।

1657 में मुग़ल सम्राट शाहजहां बीमार पड़ गए। उनकी स्थिति में सुधार न होने के कारण मुग़ल राजकुमारों के बीच उत्तराधिकार का युद्ध शुरू हो गया। उनके चार पुत्रों में सबसे बड़े दारा शिकोह राजगद्दी का पहले उत्तराधिकारी माने जाते थे। शाह शुजाह, औरंगज़ेब, और मुराद भी स्वयं को शाहजहां के उत्तराधिकारी बनने के लिए हर संभव प्रयत्न कर रहे थे। शाहजहां के ये चारों पुत्र उस समय प्रान्तों के सूबेदार थे। शाहजहां की बीमारी के समय उनके बड़े पुत्र दारा शिकोह उनके साथ आगरा में ही थे जबकि औरंगज़ेब दक्षिण में था।

औरंगज़ेब एक चतुर राजनेता, एक सक्षम सेनानायक और पक्का सुन्नी मुसलमान था। इसी कारण काजियों उलेमाओं और कट्टरपंथी दरबारियों का समर्थन औरंगज़ेब को प्राप्त था। औरंगज़ेब अपने बड़े भाई दारा शिकोह की उदार नीतियों के खिलाफ था। दारा शिकोह गुरु हर राय साहिब, सरमद और क़ादिरी सूफी संत मियां मीर से आध्यात्मिक रूप से जुड़ा था। मियां मीर से उसका परिचय मुल्ला शाह बख्शी ने करवाया था जोकि मियां मीर के शिष्य और उत्तराधिकारी थे।

गुरु हर राय साहिब का थानेसर दौरा

सन् 1657 में गुरु हर राय साहिब लोहगढ़ क्षेत्र से थानेसर आए और उन्होनें यहां दारा शिकोह की मदद के लिए कार्य किया। यहां 7वें नानक गुरु हर राय जी ने सिक्ख संगत से मुलाकात की। गुरुद्वारा सातवीं पातशाही गुरु साहिब जी के थानेसर आगमन की गवाह है। तत्पश्चात् गुरु हर राय, दारा शिकोह को मदद करने के लिए पंजाब की ओर चले गए। मुग़लों द्वारा दारा शिकोह को ज़हर दिए जाने के बाद गुरु साहिब जी ने उनका उपचार भी किया।[354] मुग़ल स्त्रोतों के अनुसार जब दारा शिकोह और औरंगज़ेब में उत्तराधिकार के लिए युद्ध चल रहा था। तब गुरु हर राय साहिब ने दारा शिकोह की अनेक प्रकार से सहायता की। उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब की जीत हुई। उसने दारा शिकोह को गिरफ्तार कर उसे इस्लाम के खिलाफ निंदा के आरोप में मरवा डाला। औरंगज़ेब को दारा शिकोह के पुत्र सुलेमान शिकोह से भी ख़तरा लगता था। गुरु हर राय साहिब की सलाह पर गढ़वाल के राजा पृथ्वी चंद[355] ने उसे अपने यहां शरण दी थी।

औरंगज़ेब ने सुलेमान शिकोह को पकड़ने के लिए अपनी सेना को श्रीनगर के पहाड़ों की ओर रवाना किया। लेकिन राजा पृथ्वी शाह ने औरंगज़ेब के इन प्रयासों को नाकाम कर दिया। सन् 1660 में आखिरकार औरंगज़ेब ने सुलेमान शिकोह को पकड़ा तथा सन् 1661 में ग्वालियर[356] के किले में उसकी हत्या कर दी गई। सन् 1660 में औरंगज़ेब ने गुरु हर राय साहिब

354 *सिक्खिज़ ए गाईड फार द परपलैक्सड, अरविंद पाल सिंह मंदायर (2013), ब्लूम्सबरी अकादमिक, पृष्ठ 50-51, आईएसबीएन 978-1-4411-0231-7

355 *मुंतखाब-अल-लुबाब के अनुसार सुलेमान शिकोह ने श्रीनगर के राजा के यहां शरण ली थी।

356 *सन् 1661 में सुलेमान शिकोह मारा गया और सन् 1661 में गुरु हर राय साहिब, राजा पृथ्वी शाह और नूरपुर के राजा रूप सिंह की भी अचानक मृत्यु हुई। इन सबकी मृत्यु में एक बात सामान्य यह है कि इन तीनों ने औरगज़ेब के खिलाफ दारा शिकोह की सहायता की थी। फारसी स्त्रोतों के अनुसार सरमद नामक एक यहुदी बाद में सिक्ख बन गया था। सरमद, दारा शिकोह की अतरंग मण्डली का सदस्य था। इसलिए उसे भी मौत के घाट उतारा गया।

जी को दारा शिकोह[357] के साथ अपने सम्बन्धों के कारण उन्हें अपने सामने पेश होने के लिए बुलाया। औरंगज़ेब के इस आदेश पर गुरु साहिब ने अपने बड़े बेटे राम राय को दिल्ली भेजा। जहां उन्हें सम्राट औरंगज़ेब ने कैद कर लिया। सन् 1661 में अपने निधन से पहले गुरु हर राय साहब ने अपने छोटे बेटे हर किशन को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। इस प्रकार सन् 1661 में बहुत छोटी उम्र में ही गुरु हर किशन साहब अगले गुरु बने।

गुरु हर किशन साहिब का थानेसर दौरा

मुग़ल सम्राट हमेशा गुरु नानक की गद्दी से भयभीत रहते थे इसलिए औरंगज़ेब ने सन् 1664 में 8वें नानक गुरु हर किशन साहिब को दिल्ली बुलाया। गुरु हर किशन साहिब ने भी दिल्ली जाने का फैसला किया और अपने दूत से कहा कि वह उनके साथ दिल्ली चले। गुरु हर किशन साहिब रोपड़, बनूड़ और अंबाला होते हुए दिल्ली के लिए निकल पड़े। रास्ते में उनके शिष्य उनसे मिलते रहते और जगह-जगह संगतों का आयोजन किया जाता था। हर कोई नए गुरु साहिबान् से मिलने का इच्छुक था। थानेसर से पण्डित लाल चन्द[358] अपने साथियों के साथ गुरु हर किशन साहिब से मिलने अंबाला आए। उसके बाद वह गुरु हर किशन साहिब को साथ लेकर थानेसर आए। गुरु साहिब कुछ दिनों के लिए थानेसर में रहे।[359] यहां उन्होने सिक्ख संगतों से भेंट की। इसके पश्चात् वह दिल्ली के लिए निकल गए। सन् 1664 में गुरु हर किशन साहिब के ज्योति ज्योत के पश्चात् गुरु नानक साहिब के मिशन के प्रमुख सदस्य और एक शक्तिशाली मसंद भाई मक्खन शाह लुबाना (पेलिया वणजारा) ने 9वें गुरु के रूप में गुरु तेग़ बहादुर साहिब को विधिवत् स्वीकार किया।[360]

गुरु तेग़ बहादुर साहिब का थानेसर दौरा

सन् 1665 में गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने सिक्खों का नया मुख्यालय बांगड़ क्षेत्र के जींद परगने में स्थित धमतान नामक स्थान में बनाया। यह निर्णय इसलिए लिया गया था कि यह स्थान लोहगढ़ के सीधे दक्षिण में स्थित था। यहां से लोहगढ़ को सामान की आपूर्ति आसानी से की जा सकती थी। बांगड़ देश से लोहगढ़ तक की आवाजाही निर्बाध थी। क्योंकि इस क्षेत्र के अधिकांश

---

357 *सिक्खीज़म ए गाईड फार द परपलैक्सड, अरविंद पाल सिंह मदांयर (2013), ब्लूम्सबरी अकादमिक, पृष्ठ 226 नोट के साथ, आईएसबीएन 978-1-4411-0231-7

358 *पंडित लाल चंद, पंडित नानू के वंशज थे। जोकि गुरु नानक साहिब के शिष्य बन गए थे। लाल चंद बाद में लाल सिंह बना और उसने गुरू गोबिंद सिंह के पक्ष में 7 दिसंबर, 1705 को चमकौर की लड़ाई में शहीदी प्राप्त की थी।

359 *सन् 1930 में भाई धन्ना सिंह साइकिल यात्रा का विवरण सन् 2016 में प्रकाशित हुआ। इसमें उल्लेख है कि गुरू हर किशन साहिब ने थानेसर में ख़ालसा मीनार के निकट एक मंजी स्थापित की थी।

360 *भट्ट बही मक्खन शाह पुत्र देसा सिंह, पोत्र अरथा का प्रपोत्र बिन्ना के थे जिनका संबंध बाबा बहोडु के परिवार से था। मखन शाह के पुत्र लाल चंद चंदू लाल कुशहाल चन्द तथा उनकी पत्नी सोलजी की जाति पेलिया बंजारा थी। जो मोटा टांडा के निवासी थे। यह टांडा कशमीर के मुजफ्फराबाद परगना में था। ये लोग यहां से विक्रम सवंत 1721 में शनिवार दीवाली के दिन बकाला आए थे। मक्खन शाह नें नौवें गुरू तेग़ बहादुर के दरबार में 100 मौहरें भेंट की थी। उनके साथ नाइक कान्ह बिजलोत का बेटा धुम्मा भी आया था।

भाग में जंगल थे जिसके कारण सिक्खों की गतिविधियों का पता मुग़लों को पता नहीं लगता था। जंगल के गुप्त मार्ग आगे जाकर छोटे-मोटे मार्गों से मिलते थे। बांगड़ क्षेत्र का मसंद 'भाई डग्गो' वहां का एक बहुत ही सम्मानित व्यक्ति था। यहां के सैकड़ों लोग गुरु के प्रवचनों में शामिल होते थे। जिनमें बहुसंख्यक सिक्ख थे। उस समय जींद में धमतान, लाखन माजरा, खटकड़ कलां, सफीदों और खड़कपुरा में कई सिक्ख केन्द्रों की स्थापना की गई थी।

सन् 1665 में 9वें नानक गुरु तेग़ बहादुर साहिब बांगड़ क्षेत्र से लोहगढ़ की यात्रा पर निकले। जींद से वह पहले कैथल पहुंचे जहां उन्होने नीम साहब, मंजी साहब, चीका और बहर में अनेक सिक्ख केंद्र स्थापित किए। इस बीच उन्होंने स्योंसर के जंगल में भी किले बन्दियां करवाई। चीका में एक मसंद भाई ग्लौरा ने गुरु तेग़ बहादुर साहिब और उनके साथ चल रही संगत का स्वागत किया। गुरु साहिब उसके घर गए और उन्होनें उसे एक तीरों भरा तरकश भेंट किया। 9वें नानक गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने उसे हांसी और हिसार का कार्य देखने के लिए भी नियुक्त किया। कैथल से उन्होंने कुरुक्षेत्र की सीमा में प्रवेश किया। वह चीका से कराह, सैयाना सैदा से होते हुए पिहोवा आए जहां उनकी भेंट एक सिक्ख संगत से हुई। यहां से वह गांव बारणा के लिए रवाना हुए जहां के मसंद भाई सुधा ने उनका स्वागत किया। यहां से गुरु तेग़ बहादुर साहिब भाई दयाला दास वणजारा,[361] भाई मति दास व भाई सति दास के साथ थानेसर पहुंचे। थानेसर में गुरु तेग़ बहादुर साहिब शेख चेहली के मकबरे के पास एक धर्मशाला में सूफी पीरों और सिक्ख संगत से मिले।[362] यहां ठसका मीरा जी के पीर भीखन शाह अपने पिता सैयद मुहम्मद युसुफ[363] के साथ उनसे मिलने आए। उसके बाद गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने लोहगढ़ क्षेत्र के लिए प्रस्थान किया। डुढ़ी और मनियारपुर में उन्होने सिक्ख मंजियों की स्थापना की। लाडवा पहुंचने पर उनकी भेंट भाई उदय[364] से हुई। यहां से वह बनी बहारपुर की ओर रवाना हुए जहां उनकी भेंट उस इलाके के मसंद भाई राम बख़्श से हुई। गुरु साहिब ने उसे यहां एक बाग बनाने का आदेश दिया।[365] तत्पश्चात् गुरु साहिब उत्तर की ओर लोहगढ़ की तरफ निकले और गांव झिवरहेड़ी[366] पहुंचे। गांव जिवारी से गुरु तेग़ बहादुर साहिब सुढ़ल[367] गए जहां उन्हें सिक्ख संगत मिली। यहां

---

361 *भाई दयाला दास वणजारा भाई मनी सिंह के बड़े भाई और नाहन के भाई राधे के वंशज थे जो गुरु नानक विचारधारा से जुड़े थे।

362 *एक बड़ा क्षेत्र इस धरमसाल से जुड़ा हुआ था गुरू अंगद जी गुरू रामदास जी और गुरू अर्जन साहिब जी इसी स्थान पर आए थे। नौवीं पातशाही गुरु तेग़ बहादुर साहिब के भ्रमण की साक्षी है। आठवें गुरू हर किशन की याद में स्मारक यहां से आधा किलोमीटर दूर है।

363 *सैय्यद मुहम्मद यूसुफ हजरत निजामुद्दीन के वंशज थे। पीर भीखन शाह, पीर बुधु शाह के चचेरे भाई थे और इनका सबंध अम्बीटा सहारनपुर के सूफी संत पीर अबुल मुरली शाह के साथ भी था।

364 *भाई उदय राठौड़ (वणजारा) लाडवा क्षेत्र के राजा थे। सन् 1675 में चांदनी चौंक में गुरू तेग़ बहादुर जी की शहादत के बाद लाडवा के भाई उदय, भाई नानू, भाई जेठा जी ने भाई लक्खी राय वणजारा की सहायता गुरू साहिब जी के शरीर को उठाने में की थी। लाडवा के नजदीक जी. टी. रोड पर गांव ईशरगढ में भाई लक्खी राय वणजारा द्वारा बनाई गई। बावड़ी आज भी अच्छी हालत में मौजूद है। यह स्थान थानेसर से कुछ ही दूरी पर स्थित है।

365 *बनी व बदरपुर के बीच स्थित गुरुद्वारा गुरु तेग़ बहादुर के नाम से प्रसिद्ध है। इस गुरूद्वारे का निर्माण छलौंदी निवासी सरदार बघेल सिंह (करोड़ा मिसल) के द्वारा करवाया गया था। छलौंदी बनी-बदरपुर से 3 किलोमीटर दूर एक सिक्ख रियासत थी। गुरूद्वारा बनी-बदरपुर में भी एक मंजी जोकि नानक शाही ईंटों से बनी हुई है आज भी मौजूद है।

366 *झिवरहेड़ी का गुरुद्वारा मंजी साहिब, गुरु तेग़ बहादुर साहिब की स्मृति में बनाया गया है। यहां भाई लक्खी राय वणजारा द्वारा निर्मित बावड़ी आज भी मौजूद है।

367 *सुढ़ल स्थित गुरुद्वारा मंजी साहिब गुरु तेग़ बहादुर साहिब की यात्रा का साक्षी हैं।

से गुरु साहिब बुड़िया पहुंचे जहां वह गुरु नानक साहिब[368] द्वारा स्थापित धर्मशाला में रुके। इस यात्रा में उनका अन्तिम पड़ाव ताजेवाला था, जहां से वह थानेसर होते हुए वापस धमतान के लिए निकल पड़े।

गुरु तेग़ बहादुर साहिब के 30,000 सशस्त्र सिक्ख मुग़ल अधिकारियों के लिए भय का विषय बन चुके थे।[369] इसी बात को ध्यान में रखते हुए बांगड़ के पुलिस प्रमुख आलम ख़ान रोहिला ने गुरु साहिब को गिरफ्तार किया। जब भाई दग्गो ने आलम ख़ान रोहिला से गुरु साहिब की गिरफ्तारी का कारण पूछा तो उसने कहा कि शाही आदेश के अनुसार किसी भी ग़ैर-मुस्लिम को हथियार रखने का अधिकार नहीं है। इसीलिए उसने गुरु साहिब को गिरफ्तार किया है। उसने कहा कि गुरु साहिब को बादशाह औरंगज़ेब के सामने पेश किया जाएगा। जोकि इस मुद्दे पर स्वयं फैसला देंगे। गुरु तेग़ बहादुर साहिब को उनके साथियों के साथ भारी सुरक्षा के बीच दिल्ली ले जाया गया। गिरफ्तार किए गए लोगों में भाई दग्गो, भाई मती दास, भाई सती दास, भाई गोपाल दास, भाई गुरदास बढ़तीया (वणजारा), भाई फेरू, जेठा, भाई दयाला दास (वणजारा) के साथ संगत के अनेक लोग थे।[370] दिल्ली में मिर्जा राजा जय सिंह के हस्तक्षेप के कारण गुरु तेग़ बहादुर साहिब और उनके साथियों को छोड़ा गया। इस रिहाई के बाद पांच वर्षों तक गुरु तेग़ बहादुर साहिब पूर्वी भारत में रहे।

सन् 1670 में गुरु साहिब ने पंजाब के लिए अपनी वापसी शुरू की। धुबड़ी से वह पटना पहुंचे। उन्होंने अपने साढ़े आठ साल के पुत्र गोबिंद राय और माता गुजरी, चौपाटी राय और अन्य लोगों को पीर भीखन शाह और अपने साले कृपाल चन्द के साथ माता गुजरी के मायके लखनौर के लिए रवाना किया। वह स्वयं एक दूसरे रास्ते से काशी, प्रयाग, मिर्जापुर, आगरा, दिल्ली, तरावड़ी थानेसर होते हुए लखनौर पहुंचे। सन् 1670 में गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने दूसरी बार थानेसर का दौरा किया जिसमें उनके साथ नवाब सैफ ख़ान[371] भी थे। यहां सिक्ख संगत से मिलने के बाद गुरु साहिब अजराना कलां पहुंचे जहां उन्होनें एक सिक्ख मंजी स्थापित की।[372] इसके पश्चात् गुरु साहिब अपनी ससुराल लखनौर पहुंचे।[373] यहां गोबिंद राय को पगड़ी बांधने की रस्म सम्पन्न की गई। यह गोबिंद राय को अगला गुरु बनाने की एक औपचारिक रस्म थी। इस

368 *गुरु तेग़ बहादुर फौजा सिंह। यात्रा पटियाला, 1976

369 *एस.के. भुयान, पातशाह बुरानजी (फारसी पाठ) (साखी 116, पृष्ठ 163) के अनुसार 30000 नानकपंथीयों ने इस सम्मेलन में भाग लिया था

370 *जदोवंश की भट्ट बही में भारती ने एक प्रविष्टि में इस घटना का उल्लेख किया है। गुरू तेग़ बहादुर साहिब जी को आलम ख़ान रोहिल्ला द्वारा शासकीय आदेशों पर धमतान (बांगर परगना) से दिल्ली ले जाया गया। यह संवत 1722 में कार्तिक महीने के कृष्णपक्ष को घटित हुई। हीरा नन्द छीबर के बेटे दिवान मती दास, सती दास, छुटे मल छिब्बर के बेटे गुरदयाल दास किरत दास भट् का बेटा गुरदास, बिन्ना उपल का बेटा संगता, माई दास के बेटे जेठा और दयाल दास को भी इस अवसर पर बंदी बनाया गया था

371 *साकी मुस्तद ख़ान अनुसार, नवाब सैफ ख़ान (1659 में कश्मीर के राज्यपाल के रूप में रहे और वह आगरा के राज्यपाल भी रहे) गुरु साहिब के साथ सैफगढ़ तक साथ रहे। नवाब सैफू-उद्दीन महमूद जोकि फकीरुल्लाह के नाम से लोकप्रिय थे, औरंगज़ेब के पालक भाई थे। वह नवाब तरबियत ख़ान के बेटे थे उनके भाई फिदाई ख़ान लाहौर, पंजाब के सुबेदार थे। जिन्होंने पिजौंर के प्रसिद्ध मुग़ल गार्डन को बनाया था। (सन्दर्भ हिस्टरी ऑफ सिक्खज़, हरी राम गुप्ता, खण्ड-1 पृष्ठ 203) नवाब सैफ ख़ान गुरु तेग़ बहादुर साहिब के बहुत बड़े प्रशंसक थे इसलिए उन्होंने गुरू साहिब की सलाह पर औरंगज़ेब की नौकरी छोड़कर सैफाबाद (पटियाला) में एक किला बनाया। कहा जाता है कि नवाब के निमंत्रण पर गुरू जी ने सैफाबाद का दौरा किया था। गुरू साहिब की इस यात्रा की याद में दो स्थानों पर गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवाया गया था।

372 *गुरु तेग़ बहादुर-फौजा सिंह यात्रा स्थान परंपरा ते वेद चिन्ह। पटियाला, 1976

373 *4 फरवरी सन् 1633 को गुरु तेग़ बहादुर साहिब का विवाह अंबाला के नजदीक लखनौर के लाल चंद और बिशन कौर की बेटी गुजरी से हुआ था, जो कि पलायन कर करतारपुर आ गऐ थे

रस्म में नवाब सैफ़ ख़ान, ठसका मीरांजी के पीर भीखन शाह, सढ़ौरा पीर बुद्धु शाह और पीर गुलाम शाह, लखनौर के पीर आरिफ दीन[374] गांव लंगर छानी[375] के अंबाला के पीर नूरद्दीन[376] लखनौर के मसंद भाई जेठा[377] नन्हेड़ी गांव के मसंद भाई नन्हेड़ी[378] और बड़ी संख्या में सिक्ख संगत मौजूद रही। तत्पश्चात् गुरु साहिब अपने परिवार के साथ कीरतपुर के लिए रवाना हुए। सन् 1675 में गुरु तेग़ बहादुर साहिब को गिरफ्तार कर दिल्ली के चांदनी चौंक में सिर काटकर शहीद किया गया। इस कारण गुरु नानक साहिब के मिशन की जिम्मेदारी गुरु गोबिंद सिंह जी ने आगे बढ़ाई।

सन् 1675 में उन्होनें गुरगद्दी का कार्य सम्भाला। सन् 1685-1688 तक गुरु गोबिंद राय ने अपना मुख्यालय कीरतपुर से स्थानांतरित[379] किया। इस समय तक औरंगज़ेब ने गुरु गोबिंद राय के खिलाफ अनेक युद्ध आरंभ कर दिए थे। पीर बुद्धु शाह की सहायता से 10वें नानक गुरु गोबिंद राय ने अपने शत्रुओं को कई बार परास्त किया। सन् 1699 में निर्मल पंथ का नामकरण ख़ालसा पंथ कर उन्होनें कई सिक्ख संगतों के दौरे किए। मुग़लों का खुफिया विभाग गुरु गोबिंद सिंह के पीछे पड़ा रहा लेकिन गुरु साहिब ने योजनाबद्ध तरीके से मुग़ल जासूसों को सुराग़ न देकर उनकी आँख में धूल झोंकते रहे।

गुरु गोबिंद सिंह का थानेसर दौरा

सन् 1701 में 10वें नानक गुरु गोबिंद सिंह ने मालवा और बांगर क्षेत्रों का दौरा कर वहां सिक्ख फ़ौजों और किलेबन्दियों की निगरानी की। इस दौरान वह चीका पहुंचे। यहां से उन्होनें स्योंसर के जंगल, सैयाना सैदां[380] होते हुए पिहोवा पहुंचे। इसके पश्चात् गुरु गोबिंद सिंह भौर

---

374 *हिस्टरी ऑफ सिक्खज़ गुरू, पृथीपाल सिंह, पृष्ठ 131. सैयद भीखन शाह और पीर आरिफ दीन जो उस समय मुल्तान के अपने दौरे से लौट रहे थे ने लखनौर साहिब में आकर बालक गोबिंद से मिले। ये लोग भाई जेठा के साथ लखनौर में छह महीने तक रहे।

375 *उस समय लंगर छानी में रंगड़ मुसलमान रहते थे। यहां जिस स्थान पर मुस्लिम पीरों की गद्दी थी। वहां आजकल गुरुद्वारा श्री गुरु तेग़ बहादुर साहिब स्थित है।

376 *अंबाला शहर में ज़िला न्यायलय के पास गुरुद्वारा बादशाही बाग स्थित है। इस स्थान पर दिल्ली से पंजाब आते-जाते समय मुग़ल बादशाह रूका करते थे। गुरु गोबिंद सिंह यहां सन् 1670 के अंत में या 1671 की शुरुआत में लखनौर से अपने एक दौरे के दौरान यहां आए थे। पीर नूरदीन (मीरदीन) गुरू नानक साहिब के मुरीद थे और बालक गोविंद को मिलकर काफी प्रसन्न हुए।

377 *उनकी लखनौर यात्रा के समय सन् 1670 में जेठा भाई यहां के मसंद थे। बालक गोबिंद राय जो यहां माता गुजरी और दादी माता नानकी के साथ पटना से आनन्द पुर की यात्रा के समय ठहरे थे। बिबलियोग्राफी भाई काहन सिंह, महान कोश। पटियाला, 1981

378 *पटियाला ज़िले में घग्गर नदी के किनारे अंबाला शहर से लगभग 10 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में (30° 23’NA 76° 47’E) गुरूद्वारा नौवीं पातशाही व दसवीं पातशाही गुरू तेग़ बहादुर और गुरू गोबिंद सिंह जी की याद में बनाया गया है। कहा जाता है कि इस गांव में गुरू तेग़ बहादुर साहिब कई दिनों तक स्थानीय मसंद भाई गोगा के साथ रहे थे।

379 *पाऊंटा साहिब, लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी से सिर्फ 15 किलोमीटर दूर है। गुरू गोबिंद सिंह जी ने यहां चार साल निवास किया था। इतने समय तक उनका यहां रहना ख़ालसा राज्य की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान हैं।

380 *सियाना सैदां, तहसील पेहोवा ज़िला कुरुक्षेत्र का एक गांव है, (29”59'N] 76” 35'E), जहां पर मुस्लिम सूफी सैय्यद भीखन शाह का जन्म हुआ था। सन् 1670 में गुरू गोबिंद सिंह लखनौर से सियाना सैदां आए थे। इस गांव में दो ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिब सुशोभित हैं। सन 1702 में गुरू गोबिंद सिंह पिहोवा और कुरुक्षेत्र आए तो इस गांव में एक रात के लिए फिर रूके थे। पुरातत्विक सर्वेक्षण से पता चलता है कि गांव के दक्षिणी दिशा में एक टीला है और इस टीले के चारों तरफ एक जौहड़ है। सर्वेक्षण के दौरान यह भी पता चला कि एक मौर्चाबंदी थी जोकि नानकशाही ईंटों से बनी हुई थी। सिक्ख फ़ौजों द्वारा मुगलों के खिलाफ इस मौर्चाबंदी का प्रयोग किया गया था।

सैदां[381] और अगले गांव ज्योतिसर[382] होते हुए थानेसर पहुंचे। थानेसर में वह सिक्ख संगत और सूफी पीरों से मिले। थानेसर के मोहल्ला सौदागरन और ब्रह्म सरोवर पर स्थित गुरुद्वारा राजघाट, गुरु गोबिंद सिंह की थानेसर यात्रा के साक्षी हैं।

सन् 1702 में वह अंबाला होते हुए कीरतपुर पहुंचे। इस दौरान उन्होनें कई लड़ाईयां लड़ीं। मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब ने गुरु साहिब को सन्धि के लिए दक्षिण में बुलाया। इससे पहले दोनों की भेंट होती कि सन् 1707 में औरंगज़ेब की मृत्यु हो गई। गुरु साहिब ने नए बादशाह बहादुर शाह से अत्याचारों को रोकने और मानवीय मूल्यों की बहाली करने के लिए कहा लेकिन सन् 1708 में मुग़लों ने षड़यन्त्र कर 10वें नानक गुरु गोबिंद सिंह को शहीद कर दिया।

इस कारण सिक्ख सेनानायक जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़ से पंजाब के लिए रवाना हुए। सितंबर सन् 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर बांगर क्षेत्र में पहुंचे। नारनौल, भिवानी, हिसार, हांसी पर कब्ज़ा करते हुए वह जीन्द और टोहाना पहुंचे। यहां से उन्होनें मालवा और बांगर की सिक्ख संगत को एक पत्र लिखकर कहा कि मुग़लों के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी गई है। जिसके लिए वह तैयार रहें। इसके बाद उन्होनें कैथल के परगने पर कब्ज़ा किया। अच्छी तरह प्रशिक्षित और शस्त्रों से सुसज्जित सिक्ख फ़ौजों ने स्योंसर के वन क्षेत्र में रहकर नवंबर सन् 1709 में समाना पर आक्रमण किया। समाना सैय्यदों का शहर था जिसमें 22 उमरा रहते थे। जोकि बहुत समृद्ध और अभिजात वर्ग के लोग थे। इस शहर के चारों ओर बड़ी किलेबंदी थी। यहां मुग़लों के 10,000 सैनिक तैनात थे। जिनके पास उस समय के सबसे अच्छे हथियार थे। सिक्ख सेनाएं गढ़ी नाज़ीर[383] में एकत्रित हुई जोकि समाना शहर के बाहर था। यहां पीर भीखन शाह, हाफिज-ए-अल्लाह और गुलाम मोहम्मद बख़्श ने सिक्ख फ़ौजों की सहायता की। कुछ ही घंटों के अन्दर सभी 10,000 मुग़ल सैनिक मारे गए। सिक्ख फ़ौजों ने समाना के सभी किलों पर कब्ज़ा कर लिया।

सन् 1526 ई. में बाबर ने भारतीय उप महाद्वीप पर 10,000 मुग़ल सैनिकों के साथ हमला किया था और भारत में किसी में भी उसे रोकने की हिम्मत नहीं हुई। उसने बिना किसी बाधा के भारत के प्रमुख हिस्सों पर कब्ज़ा कर लिया था। इसके लगभग 200 साल बाद गुरु नानक साहिब की विचारधारा ने उसी भारत से ऐसी सिक्ख शक्ति को पैदा किया जो जालिमों का

---

381 *भौर सैयदां, गांव सामरिक दृष्टि से पेहोवा और थानेसर के बीच स्थित है। इसका सबंध हज़रत निज़ामुद्दीन और पीर बुधु शाह के पूर्वज शाह अबुल वाहिब से रहा है। पुरातत्विक सर्वेक्षण से पता चलता है कि गांव कि दक्षिण दिशा में एक टिल्ला है और इस टीले के चारों तरफ एक जोहड़ है। सर्वेक्षण के दौरान यह भी पता चला कि एक मौर्चाबंदी थी जोकि नानकशाही ईंटों से बनी हुई थी और सिक्ख फ़ौजों द्वारा मुग़लों के खिलाफ इस मौर्चाबंदी का प्रयोग किया गया था। जिसे बाद में मुग़लां द्वारा नष्ट कर दिया गया था। वर्तमान में टीले पर एक पीर की स्माधि स्थित है और इस पूरे क्षेत्र को मगरमच्छ विहार के रूप विकसित किया गया है।

382 *कुरूक्षेत्र ज़िले में स्थित ज्योतिसर सरोवर के पास ही भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को महाभारत युद्ध के समय गीता का उपदेश दिया था। इस घटना की स्मृति में कुरूक्षेत्र के ब्रहमसरोवर पर एक भव्य गीता उपदेश रथ बनाया गया है। गुरू अमर दास जी और गुरू गोबिंद सिंह ने भी इस स्थान का दौरा किया था। महान कोश पृष्ठ 1353, भाई काहन सिंह।

383 *गढ़ी नाजीर समाना के पास एक किला था, जोकि पीर नवाब भीखन शाह के द्वारा बनाया गया था। गुरु तेग़ बहादुर साहिब भी गढ़ी नाजीर गए थे। मुगल जासूसों को जब गुरू तेग़ बहादुर के यहां पर आगमन का पता चला तो वह यहां मुग़ल सेना लेकर पहुंचे परन्तु भीखन शाह की चौकसी के चलते वह गुरू तेग़ बहादुर जी को गिरफतार नही कर पाए। सन् 1709 में जब जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने समाना पर हमला किया तो गढ़ी नाजीर से सिक्ख फ़ौज को भारी मदद पहुंचायी गई।आज भी गुरू जी और भीखन शाह की याद में गढ़ी नाजीर में एक गुरूद्वारा साहिब सुशोभित हैं।

विनाश करने में सक्षम थी। इसी कारण समाना में मात्र कुछ ही घंटों में 10,000 मुग़ल सिपाही मारे गए। यह कोई चमत्कार नहीं था बल्कि सिक्खों द्वारा लम्बे समय से बनाई गई एक अच्छी कार्य योजना और तैयारियों का परिणाम था। इसके पश्चात् जरनैल बंदा सिंह बहादुर घड़ाम और ठसका पहुंचे। इन दोनों शहरों का सबंध पीर भीखन शाह और उनके वंशज पीर ज़फर अली से था। जिन्होनें जरनैल बंदा सिंह बहादुर की सेवा में 5,000 मुस्लिम सैनिक समर्पित किए। समाना की विजय के पश्चात् बंदा सिंह बहादुर ने शाहबाद पर कब्ज़ा किया और वह थानेसर आए। थानेसर के मनसबदार ने उनके सामने बिना किसी प्रतिरोध के आत्मसमर्पण किया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का थानेसर जीतना

दिसंबर, 1709 में थानेसर शहर में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का स्वागत सिक्ख संगत और सूफी पीरों द्वारा किया गया। थानेसर के चारों ओर सिक्खों द्वारा गढ़ी सिंघा, गुलाबगढ़, गोबिंदगढ़, अमीनगढ़ और करण के टीले पर किलेबन्दियां की गई। इसी समय थानेसर में एक ख़ालसा मीनार का भी निर्माण किया गया। फारसी स्त्रोतों में इसका नाम जंग-ए-सतून कहा गया है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने भाई राम सिंह को थानेसर का गवर्नर नियुक्त किया। तरावड़ी किले पर कब्ज़े के बाद जरनैल बंदा सिंह बहादुर कुंजपुरा, मुस्तफाबाद, दामला, सढ़ौरा होते हुए लोहगढ़ पहुंचे और उन्होनें इसे ख़ालसा राज्य की राजधानी घोषित किया।

आज 200 वर्षो के बाद गुरु नानक साहिब की विचारधारा ने भारतीयों से एक सिक्ख सैनिकों का बल तैयार किया, जो मुग़लों पर हावी होने में सक्षम था। यह कोई चमत्कार नहीं था। सिखों अर्थात गढ़ी सिंघा, गुलाबगढ़, गोबिंदगढ़, अमीनगढ़ और यहां तक कि करण के टीले पर भी विशाल किलेबंदी की गई थी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा भाई राम सिंह को थानेसर का गवर्नर नियुक्त किया गया था।

अध्याय 23

भाई लक्खी राय (शाह) व्यापारी कौन था?

11 नवंबर, 1675 गुरु तेग बहादुर साहिब को दिल्ली में औरंगजेब के आदेशों पर शहीद किया गया तब भाई लक्खी राय वणजारा चांदनी चौंक से गुरु तेग़ बहादुर साहिब जी के शरीर को उठाकर ले आए। अपने घर में उनका अंतिम संस्कार किया। कुछ लोग सोचते हैं कि भाई लक्खी राय ने घर को जला दिया ताकि किसी को पता न चले। कुछ लोगों के लिए भाई लक्खी राय की भूमिका बस इतनी ही थी। लेकिन वे नहीं जानते थे कि भाई लक्खी राय वणजारा असल में कौन था।

अठारहवीं शताब्दी तक वणजारे एशिया, रूस, चीन, मध्य पूर्व यूरोप और अफ्रीका में व्यापार किया करते थे। हज़ारों, लाखों घोड़ों, ऊटों, हाथियों और बैलों पर समान लाद कर श्रीलंका से बलख, बुखारा, समरकंद और यारकंद तक जाया करते थे। आज भी दुनिया के अधिकतर हिस्सों में टांडा गांव और शहर मौजूद हैं। उस समय के भारतीय उपमहादीप के सबसे बड़े व्यापारियों में वणजारा परिवार थे:-

पवार परिवार- यह वणजारा परिवार दसवी शताब्दी के राजा भोज से संबंधित है और राजा भोज के वशंज भाई लख्मण गुरु नानक साहिब के सिक्ख बन गए और यह परिवार नाहन क्षेत्र, हिमाचल प्रदेश उस समय रहता था। इस परिवार के टाडे का नाम भगेश्वरी टाडा था और यह टाडा मध्यकाली समय में विश्व के सिरमौर व्यापार केन्द्रो मे सुमार था। इस परिवार के भाई बल्लू जी अकबर के समय प्रभावशाली व्यक्ति थे और जब भी अकबर को मिलने जाते इनका सिंघासन अकबर अपने साथ लगवाता था। सन सौलह सौ चौतीस में भाई बल्लू जी के द्वारा गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ मुगलों के विरूद्ध लड़ते हुए अपनी शहीदी दी। भाई बल्लू जी के पुत्र भाई माई दास व भाई माई दास का पुत्र भाई मनी सिंह हुए और भाई मनी सिंह का नाम सिक्ख इतिहास में बड़े आदर के साथ लिया जाता है। भाई मनी सिंह भाई लक्खी शाह वणजारे के दामाद भी थे। इस परिवार के द्वारा सिक्ख विचारधारा पर चलते हुए कई शाहीदिया दी गई।

तोमर परिवार- इस परिवार के भाई मक्खन शाह लुबाना (पेलिया वणजारा) का सिक्ख इतिहास में नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। भाई मक्खण शाह लुबाणा गुरु हर गोबिन्द साहिब से लेकर गुरु गोबिंद सिंह के समकाली रहे और यह अफ्रिका के मसद भी थे। भाई मक्खण शाह लुबाणा भाई लक्खी शाह वणजारे के सांडू भी थे। भाई मक्खण शाह लुबाणा के पूर्वज भाई सावन मल वणजारा गुरु नानक साहिब के पंद्रहवी श्ताब्दी में सिक्ख बन गए। इस परिवार का एक ठिकाना हम्पी, कर्नाटक में भी था। मिस्त्र की राजधानी करो में स्थित टांडा इस परिवार से

संबंधित था और इस परिवार के सदस्य अफ्रिका के मसंद थे और सिक्ख विचारधारा को अफ्रिका में फैलाने का कार्य कर रहे थे। भाई मक्खण शाह लुबाना के परिवार के द्वारा कई शहीदियां गुरु नानक विचारधारा पर दी गई।

चौहान परिवार- इस वणजारा परिवार के मुखिया भाई उदय कर्ण पंद्रहवी शताब्दी में गुरु नानक साहिब के सिक्ख बन गए। यह परिवार बाहरवी शताब्दी में हुए पृथ्वी राज चौहान के वशंज में से एक था। इस परिवार के टांडे का भारतीय उपद्वीप में काफी दब दबा था और इस परिवार के द्वारा सिक्ख गुरु विचारधारा पर कई शहीदियां दी गई।

राठौर परिवार - इस वणजारा परिवार के मुखिया भाई लाखा राठौर गुरु नानक साहिब के साथ पंद्रहवीं शताब्दी में जुड़ गए। पांचवी शताब्दी में इस परिवार का राज कन्नौज (उतर प्रदेश), गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान पर चलता था और साहाबुद्दीन गोरी के हमले के बाद यह परिवार महाराष्ट्र में आकर बस गया। इस परिवार के टांडे का महाराष्ट्र और दक्षिण भारत में काफी दबदबा था। मैसूर गजीटियर के अनुसार भाई लाखा राठौर के द्वारा ही मराठा मूवमेन्ट को शोहलवीं शताब्दी में शुरूआत की गई। लोहगढ़ किला मुम्बई, महाराष्ट्र भी इस परिवार के द्वारा तैयार किया गया और सताहरवीं शताब्दी में इसी परिवार के भाई उदय भान राठौर को मुगलो के द्वारा लोहगढ़ किला मुम्बई का मनसबदार नियुक्त किया हुआ था।

जादव परिवार -इस परिवार के भाई नायक प्रशोत्तम गुरू नानक साहिब के साथ पंद्रहवीं शताब्दी में जुड़ गए और इसी परिवार के भाई लक्खी शाह वणजारा ना केवल सिक्ख इतिहास में ब्लकि भारतीय उपद्वीप के सभी क्षेत्रों में खूब मशहूर हुए और भाई लक्खी शाह वणजारा के द्वारा लोहगढ़ खालसा राजधानी बनाने में प्रमुख योगदान दिया। इस परिवार के द्वारा सिक्ख विचारधारा पर चलते हुए कई शहीदियां दी गई।

सभी वणजारों के पास लाखों गड्डे, घोड़े, ऊंट, हाथी, खच्चर और बैल थे। इसी तरह उनके पास हज़ारों युवा सैनिक भी थे। जो उनके सामान के टांडों की सुरक्षा करते थे। लक्खी राय दिल्ली के गांव रायसीना, मालचा और आसपास की भूमि और जंगल का मालिक था। लोहगढ़ किले का पूरा क्षेत्र उसकी संपत्ति थी। काला अंब से लेकर यमुना नदी तक का पूरा क्षेत्र उसका साम्राज्य था। इस साम्राज्य के लिए उसने लोहगढ़ और इस क्षेत्र के अन्य किलों पर भी किलाबंदी की हुई थी। लक्खी राय के पास लगभग तीन लाख बैल, घोड़े, ऊंट, हाथी, खच्चर आदि थे और बड़ी संख्या में लोग उनके साथ काम किया करते थे। वे घोड़ों, ऊंटों, हाथियों, खच्चरों, बकरियों, भेड़ के व्यापार के साथ-साथ जेवरात, कीमती वस्तु अनाज, दालें, नमक, मसाले, वस्त्र विशेष रूप से ऊन, रेशम/सिल्क, निर्माण सामग्री पत्थर, संगमरमर, चूना आदि। इसके अलावा युद्ध का सामान हथियार, जिरह, बख्तर, घोड़ों का सामान काठी, रकाब खलों के इलावा हुंडी आदि के प्रमुख व्यापारी थे। वे उन दिनों के एशियाई लोगों में सबसे अमीर व्यक्ति थे। उसका टांडा (व्यापार काफिला) समरकंद और यारकंद (मध्य एशिया) से श्रीलंका तक चलता था। यह टांडा लगभग 8 महीने तक चलता था, केवल बारिश के दिनों में 4 महीने यह काफिला आराम करता था।

दसवीं शताब्दी से लेकर अठारवीं शताब्दी तक प्रमुख लंबी दूरी के व्यापारी थे - वणजारा, पारसी, ज्यूज़, यूरोपियन, चीनी, अफ्रीकी, रूसी। सिक्ख धर्म अपनाने के बाद वणजारा दुनिया के अग्रणी व्यापारी बन गए। कुछ ऐतिहासिक स्त्रोत में भाई लक्खी राय और लक्खी शाह के रूप में लिखा गया है। राय भारतीय शब्द है और शाह फारसी, दोनों का अर्थ एक ही है अर्थात राजा। जब भाई लक्खी शाह वणजारा का टांडा ओटोमन साम्राज्य में पहुंचता था तब उन्हें शाह कहा जाता था। कुछ स्त्रोतों में भाई लक्खी शाह को वणजारा की जगह लुबाना लिखा गया है। भारतीय बारूद को लवन कहा गया है और भारतीय बारूद की मांग दुनिया में सबसे अधिक थी। वणजारा के पास भारतीय बारूद का व्यापार करने का लाइसेंस था। उन्हें लुबाना कहा जाता था। भारतीय बारूद की कीमत सोने के बराबर थी और यही कारण था कि 18वीं शताब्दी में भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व अर्थव्यवस्था का 25 प्रतिशत तक बढ़ गई थी। लुबाना व्यापारी केवल भारतीय गन पाउडर के डीलर थे और इसलिए वे बहुत अमीर भी बन गए।

भाई लक्खी राय वणजारा का परिवार

भाई लक्खी शाह का जन्म गांव खैरपुर ज़िला मुजफ्फरगढ़ (पाकिस्तान) में 4 अप्रैल 1580 को भाई गोधू नायक के घर में हुआ था। भाई ठाकुर नायक दूसरे नानक गुरु अंगद साहिब के सिक्ख थे और गुरु साहिब ने उन्हें धार्मिक प्रचार के लिए उपदेशक/मसंद के रूप में नियुक्त किया था। भट्ट वहीयों के अनुसार भाई लक्खी शाह वणजारा पुत्र भाई गोदु शाह, पौत्र भाई ठाकुर शाह और भाई प्रषोत्तम शाह के पढ़पौत्र हैं। जो पीढ़ियों से गुरु नानक साहिब के श्रद्वालु सिक्ख रहे हैं। उनके बड़े-बजुर्ग भाई प्रशोत्तम दास और भाई नाइक धर्म दास वणजारा, गुरु नानक साहिब की पहली उपदेश यात्रा के दौरान गुरु साहिब के अनुयायी बन गए थे। पीढ़ी दर पीढ़ी गुरु नानक साहिब के घर में दसों गुरु साहिबानों के साथ अग्रिम होकर सिक्खी सेवा कमाई थी व शहादत के समय परिवार के सदस्य अग्रिम पंक्ति में खड़े हुये थे।

भाई लक्खी शाह के परदादा जी ने गुरु नानक साहिब का उपदेश सुनकर सिक्खी को धारण किया था क्योंकि उनका परिवार गुरु नानक साहिब को नवाब भाई राय बुलार सुल्तानपुर लोधी के समय से जानते थे और मेलजोल रखते थे। जब गुरु नानक साहिब कुछ समय टांडे में रहे थे और कथनी-करनी के पूरे, संत-सिपाही बाबे नानक साहिब जी का रब्बी प्यार देख गुरबाणी फरमान -'तनु मनु धनु सभु सउपि गुर कउ हुकमि मंनिऐ पाईये' अनुसार उन पर कुरबान होने के लिए तैयार हो गये।

लक्खी शाह वणजारा के बारे में कवि सेवा सिंह भट्ट की रचना 'शहीद बिलास भाई मनी सिंह' (संपादक ज्ञानी गरजा सिंह चौहान) में दी गई भट्ट वहीयों की टिप्पणी के आधार पर और स्वरूप सिंह द्वारा लिखत 'गुरु की साखीयां' (संपादन प्रो० प्यारा सिंह पदम) में मिली जानकारी के अनुसार लक्खी शाह वणजारा के परिवार का वर्णन इस प्रकार है -

जन्म - श्रावण वदी अष्टमी सम्वत् विक्रमी 1637 (4 जुलाई, 1580) को खैरपुर शदात, तहसील अलीपुर, ज़िला मुजफ्फरगढ़ में हुआ। विवाह - सम्वत् 1665 (सन 1608) में कंतो बाई

पुत्री काला (गोत्र गोरामा) के साथ हुआ। मृत्यु - जेठ सुदी 11 संवत् 1737 (28 मई, 1680) को रायसिना दिल्ली में हुई ।

(वही मुल्तानी सिंधी पड़तिया के गांव अटैला, ज़िला-कैथल-पृष्ठ 51) लक्खी शाह जी के 9 बच्चों का विवरण इस प्रकार दर्ज हैः-

1. भाई निगाहिया, जन्म चेत्रसुदी 10वीं संवत् 1668 (1611)
2. भाई हेमा, जन्म फल्गुण सुदी सप्तमी संवत् 1671 (1614)
3. भाई हाडी, जन्म आसाड़ सुदी नवमी संवत् 1674 (1617)
4. भाई सीतू, जन्म मघर सुदी छठी संवत् 1678 (1621)
5. भाई पंडारा, जन्म सावन सुदी पंचमी संवत् 1682 (1625)
6. भाई बख्शी, जन्म सावन सुदी नवमी संवत् 1685 (1628)
7. भाई बाला, जन्म चेत्र सुदी नवमी संवत् 1690 (1633)
8. भाई जवाहर, जन्म अश्वनी सुदी पंचमी संवत् 1694 (1637)
9. बेटी सीतो, जन्म भाद्रपद सुदी नवमी संवत् 1698 (1641)

दिल्ली का बसाया जाना और लाल किले का निर्माण

सन् 1628 में शाहजहां मुग़ल सम्राट था। इस अवधि के दौरान कई पुराने किले मौजूद थे। शेरशाह सूरी द्वारा सन् 1546 में बनाया गया सलीमगढ़ का किला भी मौजूद था। हालांकि शाहजहां ने नई बस्ती बनाने का फैसला किया। जिसको शाहजहांनाबाद का नाम दिया गया (अब पुरानी दिल्ली) जिसमें एक नया और बड़ा किला निर्माण करने का फैसला किया गया। इसका नक्शा उस्ताद अहमद लाहौरी ने बनाया। 12 मई, 1639 को यह किला बनाने का आदेश जारी हुआ और अगले दिन नींव रखी गई थी। किले को लगभग 9 वर्षों में 6 अप्रैल, 1648 को तैयार किया गया था। शाहजहां ने इसका नाम 'किला मुबारक' रखा था। क्योंकि यह लाल पत्थरों से बना हुआ था। इस कारण इसका नाम 'लाल किला' प्रसिद्ध हो गया। 94 एकड़ में बना आगरा का किला भी लाल पत्थर का बना होने के कारण 'लाल किले' के नाम से जाना जाता है। वैसे आगरा का किला (जिसका पहला नाम बादलगढ़ था और दिल्ली के किले से डेढ़-दो साल पहले बनाया गया था) पर अकबर ने बरेली, राजस्थान से लाल पत्थर मंगवाकर इसकी पुरानी दीवारों के बाहर नई दीवारें बनवाई।

दिल्ली का लाल किला 254.67 एकड़ में बना हुआ है और इसके पास 2.41 कि.मी. लंबी दीवार बनी हुई है। इस दीवार की ऊंचाई 18 मीटर से 33 मीटर (बुर्ज वाले स्थान पर) है। इस किले का मुख्य द्वार दक्षिण में लाहौरी गेट है। इसका दूसरा मुख्य द्वार दिल्ली गेट है। यमुना की ओर खुलने वाले गेट को पानी का दरवाजा (वाटर गेट) कहा जाता है। किले के अंदर एक बावड़ी भी है। यह कहा जाता है कि यह बावड़ी किले में पहले की है। इस किले के प्रधान ठेकेदार भाई लक्खी राय वणजारा थे।

दिल्ली में मालचा महल और इसके आसपास की संपति का मालिक भी लक्खी राय वणजारा ही था। धौला कुआं, बाराखम्बा,7 पूसा हिॅल, कनॉट प्लेस, राष्ट्रपति भवन, संसद भवन और गुरुद्वारा रकाब गंज लक्खी राय वणजारा की ज़मीन में बने हैं। इसी तरह वह लोहगढ़ के डाबर की भूमि के मालिक थे, जो उनके द्वारा बनाए गए कुओं से साबित होता है। कोई भी व्यक्ति किसी अन्य की ज़मीन पर पानी पीने का कुआं नहीं लगाता। नाहन से 20 किलोमीटर दूर पाउंटा साहिब रोड़ पर स्थित धौला कुआं भी लक्खी राय वणजारा का ही था।

लक्खी राय वणजारा का एक अन्य किला यमुना नदी की दूसरी तरफ स्थित (पूर्व में) मुखलिसगढ़ से कुछ आगे टांडा और रामपुर के बीच (खवासपुर और हैदरपुर अली, हिंदूवाला के पास) है। जिसके अवशेष अभी भी मौजूद हैं। इसकी दीवारों में लोहगढ़ के किले जैसे पत्थर लगे हुये है। इसके आस पास भी लक्खी राय वणजारा के कुंऐ है। इन कुओं में पत्थर की प्लेट पर अभी भी लक्खी शाह का नाम अंकित है। इसका अर्थ यह है कि ठसका (रायपुर रानी से लेकर) देहरादून तक की भूमि का मालिक लक्खी राय वणजारा ही था। राजपुरा के पास सराय वणजारा भी लक्खी राय की निजी मलकियत थी, जहां उनका टांडा रुका करता था।

भाई लक्खी राय वणजारा का सिक्ख गुरु साहिबानों से संबंध

भाई लक्खी राय वणजारा सिक्ख इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। सिक्ख समुदाय में भाई लक्खी राय का बहुत सम्मान है। भाई लक्खी राय का परिवार गुरु नानक साहिब की विचारधारा को समर्पित था। भाई लक्खी राय के पड़दादा भाई प्रषोत्तम शाह और दादा ठाकुर नाईक ने गुरु नानक साहिब को मानवता के सच्चे हितैषी के रुप में माना। गुरु नानक साहिब पूरी दुनिया को एक पिता की संतान मानते थे, जो सभी का ध्यान रखने वाला है।

भाई लक्खी शाह वणजारा के पिता भाई गोधू शाह, पंचम पातशाह गुरु अर्जुन साहिब तक मसंद/उपदेशक थे। जिस टांडे में गुरु नानक साहिब रुकते थे, उसे टांडा नानकपुरी कहा जाता था। जो कि ज़िला रामपुर, मुरादाबाद डिवीज़न, उत्तर प्रदेश, अब उत्तराखंड में पड़ता हैं।

भाई लक्खी राय ने धर्म के मार्ग पर चलते पांचवें नानक गरु अर्जुन साहिब को गर्म तवों पर शहीद होते हुए देखा था। छठे नानक गुरु हर गोबिंद साहिब को निर्भय होकर सच्चे धर्म के लिए ग्वालियर में कैद होते देखा। भाई लक्खी राय ने अपना और अपना सारा परिवार गुरु नानक साहिब की निर्मल विचारधारा को समर्पित कर दिया था। भाई लक्खी राय, भाई हरिदास वड़तीया यदुवंशी ने गुरु हर गोबिंद साहिब की सेवा और रिहाई में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भाई निगाहीया सिंह, भाई लक्खी शाह के पुत्र, गुरु हर राय साहिब जी के सेनापति थे। भाई मनी सिंह जी (दामाद भाई लक्खी राय वणजारा) भी बाईस घुड़सवारों में सेवा अदा कर रहे थे। सन् 1633 में गुरु साहिब ने श्री नगर 'गड़वाल', पीलीभीत और नानक मता स्थलों का दौरा किया। दौरे के दौरान भाई लक्खी राय वणजारा ने समर्थ रामदास के साथ श्रीनगर में गुरु साहिब के साथ वार्तालाप कीे। 'समर्थ रामदास' ने गुरु साहिब जी से विनम्रता का दर्शन सीखा। वणजारों का

जिकर मैसूर गजीटियर में मराठा मूवमैंट में जन्मदाता के नाम से लिखा गया है।

नौवें गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहादत 11 नवंबर, 1675 को दिल्ली के लाल किले के सामने चांदनी चौंक में हुई। जहां गुरुद्वारा शीश गंज साहिब सुशोभित है। शहीद होने से पहले मुग़ल शासकों ने शहर में एक मुनादी करवा दी थी। सुबह बड़ी संख्या में लोग वहां जमा हो गए थे। तय कार्यक्रम के अनुसार काज़ी ने फतवा सुनाया। चारों तरफ सन्नाटा था। समाना के रहने वाले जल्लाद, जलालुद्दीन पर लोगों की नज़रे टिकी हुई थी। वहां लोग अपनी सांस रोक कर खड़े थे। जल्लाद जलालुद्दीन नग्न तलवार लेकर गुरु तेग़ बहादुर साहिब के पीछे खड़ा था। दोपहर के साढ़े ग्यारह बजे होंगे। काज़ी के सुझाव पर जल्लाद ने एक बार में गुरु साहिब के सिर को धड़ से अलग कर दिया। चारों तरफ हड़कंप मच गया। धरती कांप उठी। धीरे-धीरे भीड़ घट गई। चारों तरफ कड़ी नज़र थी। भाई जैता और भाई उदय, गुरु साहिब के शीश को संभालने के लिये बहुत चिंतित थे। भाई लक्खी शाह टांडे के साथ किले से कोतवाली की तरफ अपनी बैलगाड़ियां ले आया जिससे वहां बहुत धूल उड़ी। भाई नानू राय, भाई जैता, भाई उदय राठौर और आज्ञा राम वहां पहुंच गए। मिट्टी की धूल उड़ने से पता नहीं चल सका कि कब भाई जैता जी ने गुरु तेग़ बहादुर साहिब के पवित्र शीश को उठा लिया और भाई लक्खी शाह ने अपने पुत्रों निगाहिया, हाडी, हेमा, घुमा बिजलोत और अन्य सिखों की मदद के साथ बैलगाडी में रख लिया और अपने गांव रायसिना की ओर निकल गए। घर पहुंचते ही किसी को पता न चले सम्मान के साथ मंजी पर गुरु साहिब का पवित्र शरीर रख कर घर को आग लगा कर अंतिम संस्कार कर दिया।

गुलाम हसन द्वारा प्रकाशित फ़ारसी स्त्रोत सियार-उल-मुता-खिरैन के अनुसार औरंगज़ेब ने गुरु तेग़ बहादुर साहिब के शरीर के टुकड़े करके दिल्ली शहर में लटकाने का हुक्म दिया था। लेकिन भाई लक्खी शाह वणजारा ने उस समय के विश्व के सबसे ताकतवर मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब के फरमान के विरुद्ध गुरु साहिब की देह (धड़) को उठाने का जोखिम भरा कार्य किस प्रकार किया होगा। यह प्रश्न इतिहास का अध्ययन करने वालों के मन में आश्चर्य पैदा करता है। 95 वर्षीय बुजुर्ग ने इस कार्य की सफलता के लिए क्या रुपरेखा तैयार की होगी। इस कार्य को सफल बनाने में बहुत से सिक्खों का हाथ था। जिनमें से मुख्य रूप से अब्दुल्ला ख्वाजा कोतवाल चांदनी चौंक, भाई उदय सिंह (लाडवा), भाई नानू दिल्ली, भाई जैता जी व भाई ख़ुशहाल सिंह दहिया ने भाई लक्खी शाह का साथ दिया। 95 वर्ष की आयु में भाई लक्खी शाह वणजारा द्वारा किये गए इस साहसिक कार्य के समान कोई दूसरी उदहारण पूरे विश्व भर में नहीं मिलती।

भट्ट बही यदुवंशी 8 में खाता बड़तियां कन्नौत का उल्लेख इस प्रकार हैः-

"लक्खीयां बेटा गोधू का नगाहिया, हेमा हाडी, बेटे लक्खीऐ के यदुबंसी बड़तीया कनोत, नायक घूमा बेटा काणे का तुमर बिजलोत गुरु तेग़ बहादुर साहिब का महल नावां की लाश उठाके लाये, 1733 मंघसर सुदी छठ गुरुवार के दिन दाग दिया, रायसीना गांव में आध घरी रेन रही।"

केसो भट्ट ने भाई लक्खी शाह और उनके परिवार के बारे में यह उल्लेख किया गया है -

"धन पारां देई ग्रामबनी, पुत्र जनमिया निगाहिआ, पांच सौ हाडी मार भगाये। गुरु की

लोथ उठाये लाये, जस जग मे गाये पिता पुत्र, रोशन भय आये। जस गाउं तउं लक्खीये गोधु ठाकुर का, ताजी बंधे बार, उठों बैलों की सोहे लार, ब्राहमन भटों को दया दान, बेल तेरी को गुरु बधाये। जस जोड केसों भट्ट भनिया, साल 17 से उठतीयां 'रकाब गंज' के मलहान, कंगने की जोड़ी, मोहरों की माला भट्टों को पहनाये।''

इतिहासकारों द्वारा वर्णन किया गया है कि लाल किले के पास चलते हुए भाई जैता को पता चला कि भाई लक्खी शाह वणजारा जी से संबंधित सैकड़ों सामान लेकर रात में नारनौल की यात्रा करेंगे। इन गाड़ियों में गेहूं, गुड़ और तेल ले जाया जा रहा था। भाई जैता जी मुस्लिम वेशभूषा में घूम रहे थे, भाई लक्खी शाह जी से मुलाकात की और उन्हें गुरु साहिब का सिर और धड़ की संभाल करने की सलाह दी। जब पहरेदारों ने धड़ भी गायब देखा तो उनका शक भाई लक्खी शाह पर गया। क्योंकि कोई और वहां से नहीं गया था। मुग़ल फ़ौजी जल्द ही रायसीना गांव की तरफ भाग निकले। जब वह वहां पहुंचे, तो उस समय भाई लक्खी शाह के घर को आग लगी हुई थी। मुग़ल सैनिक निराश होकर वापस लौट आये। अगले दिन, भाई लक्खी शाह जी ने राख को पूरे सम्मान से इकट्ठा किया और उसे घड़े में डालकर घर के अंदर गाड़ दिया। जब शाम को भाई जैता जी ने गुरु साहिब का शीश संभाला, तो उन्होंने वहां रहना उचित नहीं समझा। दिल्ली में रुकना खतरे से खाली नहीं था। मुग़ल फ़ौजी हर तरफ ढूंढते फिर रहे थे। बागपत से होते हुए बड़ ख़ालसा पहुंचे। इस गांव का निर्माण जी.टी. रोड सोनीपत के पास है। जब एक जाट धर्म दास ने मुग़लों को ग़लत तरीके से बताया। जब उन्हें संदेह हुआ तो उन्होंने उसे वहीं मार दिया।

यहां पर यह भी व्यक्त किया जाना उचित होगा कि रायसीना पर भाई लक्खी शाह वणजारें का टांडा था और उनका घर साथ् लगते गांव मालचा में था। गुरू तेग बहादुर का संस्कार रायसीना में हुआ था तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि भाई लक्खाी शाह वणजारां द्वारा अपने घर को आग नही लगाई थी ब्लकि अपने टांडे में गुरू साहिब का आदरपूर्वक स्ंस्कार किया गया। इसके अतिरिक्त गुरू साहिब के शरीर की जगह भाई खुशहाल सिंह दहिया का शरीर रखा गया इसलिए मुगल सैनिको को पता नही चला कि गुरू साहिब के मृतक शरीर का तबादला कर दिया गया है। यदि मुगलो को इस बात का थोडा सा भी श्क होता तो वह भाई लक्खी शाह वणजारें को भी जरूर शहीद कर देते। इस वाक्य के पाच वर्ष बाद तक भाई लक्खी शाह वणजारां जीवित रहे और सोलह सौ अस्सी में उनका प्राकृतिक तौर पर अकाल चलाना हुआ। इसलिए विष्य पर ओर शोध करने की आवश्कता है।

वहां से भाई जैता जी तरावड़ी (करनाल), अंबाला शहर और नाभा साहिब होते हुए कीरतपुर साहिब पहुंचे। पता चलने पर दशमेश पिता खुद कीरतपुर साहिब आ गए। बाल गुरु गोबिंद राय ने भाई जैता को सीने से लगा लिया और उन्हें 'रंगरेटा गुरु का बेटा' के रूप में सम्मानित किया। अगले दिन 17 नवंबर, 1675 को दशमेश पिता ने अपने महान बलिदान पिता का अंतिम संस्कार किया। शहीदगंज स्थान पर श्री आनंदपुर साहिब में उन्हें पूरे सम्मान के साथ

सम्मानित किया गया। यह स्थान केसगढ़ साहिब के उत्तर में लगभग दो सौ गज़ की दूरी पर है। दुनिया के इतिहास में शायद यह पहली बार था कि धड़ और शरीर का संस्कार अलग-अलग जगह पर किया गया हो। भाई लक्खी शाह का परिवार कई पीढ़ियों से गुरु-घर से जुड़ा हुआ था। वह शरीर और मन से गुरु साहिब के प्रति समर्पित थे। उस समय औरंगज़ेब का अत्याचार चरम सीमा पर था। उन्होंने जुलाई, 1658 से 21 फरवरी, 1707 तक लगभग 50 वर्षों तक भारत पर शासन किया। उनके उत्पीड़न का विवरण इतिहास से भरा हुआ है। वह गुरु साहिब को शहीद करके दहशत फैलाना चाहता था। वह चाहते थे कि सभी हिन्दू डर कर मुसलमान बन जाये। वह पूरे देश में मुसलिम शासन को देखने के लिए उत्सुक थे। उसने अपने पिता शाहजहां, सरमद जैसे भाइयों और बहनों को भी नहीं बख्शा। उन दिनों वह पेशावर और काबल की मुहिम पर गया हुआ था। वहां से उसने गुरु साहिब को कैद करने का आदेश भेजा। उसके कुछ दिनों बाद उसने गुरु साहिब को शहीद कर दिया। उनके शरीर के चार टुकड़े करके दिल्ली के चार बड़े दरवाज़ों लाहौर गेट, अजमेरी गेट, कश्मीरी गेट और दिल्ली में लटकाने का आदेश दे दिया था। भाई लक्खी शाह जी नहीं चाहते थे कि गुरु साहिब के शरीर का अनादर हो। इसलिए उन्होंने गुरु साहिब के शरीर की देखभाल के लिए भाई जैता, भाई उदय जी और उनके बेटे भाई नगाहीया जी से मशवरा किया। रायसीना में अपने घर में गुरु साहिब के शरीर का अंतिम संस्कार करके वह काम करके दिखा दिया जिससे उसका नाम स्थायी रूप से सिक्ख इतिहास के सुनहरे पन्नों में सूचीबद्ध हो गया। जब तक दुनिया कायम है शांतिप्रिय लोग गुरु तेग़ बहादुर साहिब के साथ-साथ भाई जी को भी याद करते रहेंगे। नए शोध के अनुसार हरियाणा में उनके कुएं और अन्य स्मारक भी पाए गए हैं। वह सन् 1680 में गुरु चरणों मे लीन हो गए। सन् 1708 में जब दशमेश पिता दिल्ली आए थे, तो उन्होंने इस जगह की निशानदेही की जहां गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब सुशोभित है। बाद में जब झबाल के रहने वाले करोड़ा मिसल के सूरबीर सरदार बघेल सिंह ने जनवरी, 1783 में दिल्ली को जीत लिया तत्कालीन राजा शाह आलम से तीन लाख रुपये लेकर और दिल्ली के सभी ऐतिहासिक गुरुद्धारों की निशानदेही की और निर्माण करवाया। 15 जनवरी, 1783 को जब लक्खी शाह जी के घर की एक दीवार बनाने के लिए खुदाई की गई, तो दफन हुआ घड़ा जमीन से बाहर आ गया। यह संसद भवन के सामने है। अब उनके साथ भाई लक्खी शाह जी की याद में 'भाई लक्खी शाह वणजारा हाल' बनाया गया है।

हलीमी राज की स्थापना में भाई लक्खी राय वणजारा का योगदान

लोहगढ़ क्षेत्र का एक बड़ा हिस्सा (लगभग 80 गांव) भाई लक्खी राय (शाह) वणजारा के पास थे। यह उसका राज्य था। इस बात का प्रमाण इस तथ्य से स्पष्ट है कि पूरे क्षेत्र में लक्खी राय वणजारा के बनाये हुये बावड़ी और कुएं मौजूद हैं। अब तक 55 कुओं की खोज की जा चुकी है और इनके अलावा कई कुओं को भर दिया गया है या ढक दिया गया है। जिसकी संख्या का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। आज भी ठसका (सुधा पीर के पास), मिर्जापुर, टोडरपुर

(सढ़ौरा उप तहसील), बूढ़ी, भटूवाला, सुंदरपुर, घाटवाली, बहादरपुर, लोहगढ़, अलीशेरपुर माजरा (तहसील बिलासपुर), ताहरपुर, बन्न संतूर, दारपुर (तहसील छछरौली) में यह कुएं मौजूद हैं। कुआं लगभग 150 फीट गहरा है और पत्थर और नानकशाही ईंटों से बना है। ऐसे समय में जब आज की आधुनिक ड्रिल मशीनों का सपना भी नहीं देखा जा सकता था। इस कुएं को खोदना और पत्थर नानकशाही इटों के साथ दीवारों का निर्माण करना (मिस्त्र की पिरामिड की तरह) एक विचित्र विचार है। जिसका उत्तर वैज्ञानिक नहीं दे सकते। वास्तव में लक्खी राय (शाह) उस समय का सबसे बड़ा व्यापारी था। उनका व्यापार मध्य एशिया से श्रीलंका तक फैला था। इस वजह से वह निर्माण कला और इमारतसाज़ी में अच्छी तरह से वाकिफ़ थे। उन्होंने इन कुओं और अन्य इमारतों के निर्माण के लिए न केवल सामान दिया बल्कि शिल्पकारों, उस्तादों और अन्य विशेषज्ञों की सेवाएं भी उपलब्ध करवाई। इसक्षेत्र में लक्खी राय के कुछ छोटे किले भी पाए गए जैसे बुड़िया, गढ़ी बंजारा, दयालगढ़, सुग आदि।

खोज करने से यह भी पता चलता है कि भाई लक्खी शाह क्योंकि बहुत बड़े व्यापारी और सरकारी ठेकेदार थे और जहां उन्होंने मुग़ल सरकार को हर ज़रूरत के सामान की सप्लाई दी थी। वहीं उन्होंने मुग़लों को हथियारों की आपूर्ति भी की। वह हथियार उसके साथ रहते वणजारें तैयार करते थे। यही कारण है कि सिकलीगर लोग, जो गुरु हर गोबिंद साहिब के बाद से सिखों के लिए काम कर रहे थे, धातु की सफाई, विघ्लन, सांचे में पाना और गर्म करके एक दम ठंडा करने में बहुत माहिर थे। आज भी लोहगढ़ के आसपास के सिकलीगरों के कई गांव मौजूद हैं।

शूरबीर योद्धा बीबी बसंत कौर उर्फ
बीबी सीतो भाई लक्खी राय वणजारा की बेटी

सिक्ख इतिहास जहां शूरवीर-यौद्धाओं के कारनामों की शहादत के साथ भरा पड़ा है। वहीं सिक्ख इतिहास में महिलाओं-युवतियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। बीबी बसंत कौर सिद्कवान माताओं में से एक थीं जो भाई लक्खी राय जी की बेटी थीं। बीबी बसंत कौर जिनका पहला नाम सीतो बाई सपुत्री भाई लक्खी राय वणजारा, सिदकवान माताओं में से एक थी। पिता भाई लक्खी शाह जी ने अपने बेटों के साथ अपनी बेटी बीबी सीतो को भी गुरु साहिब की संगत, सेवा, धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ घोड़सवार शिक्षा, सशस्त्र शिक्षा और युद्ध कला के क्षेत्र में निपुणता प्राप्त करवाई। भाई मनी सिंह जी के साथ आप जी का विवाह किया गया। भाई मनी सिंह जी जैसे योद्धा की सिंघणी (सुपत्नी) होने के नाते शस्त्र और शास्त्र बीबी बसंत कौर जी की जीवन शैली का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा। जत्थे में सिंह के साथ-साथ शस्त्र शिक्षा में सिंघनियों को शिक्षित करना बीबी बसंत कौर की ज़िम्मेदारी थी। पूरी दुनिया में बीबी बसंत कौर जी के मायके और ससुराल परिवार के अनगिनत शहीदों का कोई पता नहीं है। जिन्होंने गुरमत गाडीराह पर चलते हुये गुरु नानक साहिब के मिशन वाले हलीमी राज्य की स्थापना के लिए परिवार के

अनगिनत सदस्यों का बलिदान दिया था। भाई मनी सिंह जी गुरु के आदेशों के अनुसार अक्सर उपदेश के लिए दूर-दराज़ के क्षेत्रों की यात्रा करते थे। उनकी अनुपस्थिति में बीबी बसंत कौर जी परिवार की देखभाल करती थी। साथ ही साथ गुरमत आंदोलन को समाप्त करने के इरादे से मुग़ल शासन द्वारा सिक्ख परिवारों पर अनगिनत अत्याचार होने पर सिक्खों के जत्थे में मुख्य भूमिका निभाते हुये हर वक्त तैयार रहती थी। बीबी बसंत कौर को सिक्ख इतिहास में महान पदवी प्राप्त करने वाली सिघंनीयों में उच्च पदवी का सम्मान प्राप्त है। क्योंकि जहां सिक्ख इतिहास में शहादत का जाम पीने वाले सिक्खों में इनके पति खावंद भाई मनी सिंह का नाम है वही इनके अपने 10 बेटों, 16 पोते-पोतियों, पांच भाई-भतीजों की शहादत के अलावा, आप खुद भी असहनीय और अथाह कष्टों को हासिल करते हुए शहादत को स्वीकार किया। बीबी बसंत कौर जी को बचपन में गुरु हर गोबिंद साहिब का आशीर्वाद प्राप्त था। बीबी बसंत कौर और भाई मनी सिंह जी के विवाह समय इस जोड़ी को आशीर्वाद देने के लिए सातवें गुरु हर राय साहिब उपस्थित थे। सराय बंजारा, बसंतपुरा जो बीबी बसंत कौर जी की मलकियत थी, गुरु हर राय साहिब कुछ समय वही रुके थे। बीबी बसंत कौर को गुरु नानक ज्योत गुरु हर किशन साहिब की सेवा करने का मान प्राप्त है। बीबी बसंत कौर को नौवें पातशाह गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने बीबीयों को शस्त्र और शास्त्र के प्रशिक्षण प्राप्त करने पर आशीर्वाद दिया था। बीबी भिखां, माई भाग कौर को बसंतगढ़ किले में बीबी बसंत कौर द्वारा युद्ध कला के लिए तैयारियां दी गई थी। बीबी बसंत कौर कई गांवों की मालकिन थी और उन जगहों पर किलेबंदी की गई थी।

नवीनतम लोहगढ़ शोध के अनुसार, भाई लक्खी राय (शाह) का व्यापार दुनिया के हर कोने में व्यापक था। पहाड़ी और वन क्षेत्र मुख्य रूप से भाई लक्खी शाह के थे। पानी के स्रोत के नजदीक स्थान पर टांडा-गांव स्थापित किया जाता था। आनंदपुर साहिब, कश्मीर, राजस्थान, नई दिल्ली, यमुनानगर (ख़ालसा राजधानी), जलफर्री, हिमाचल, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, सराय बंजारा में कई गांव थे। जिनका मालिकाना हक बीबी बसंत कौर जी के पास था। भारत के बाहर कई स्थानों पर बीबी बसंत कौर के नाम पर कई संपत्तियां मिली हैं। जिन्हें इतिहास के छात्रों को खोज करनी चाहिए। यहां पाठकों के लिए कुछ विवरण इस प्रकार हैं -

(1) किला बसंतगढ़ के पास आनंदपुर साहिब
(2) बसंतगढ़ - कश्मीर
(3) बसंतगढ़ -राजस्थान
(4) बसंतपुरा - नई दिल्ली
(5) बसंतपुरा -यमुनानगर
(6) बसंतपुरा - जालखेड़ी
(7) बसंतपुरा -हिमाचल
(8) बसंतपुरा - मध्य प्रदेश
(9) बसंतपुरा -राजस्थान
(10) बसंतपुरा -आहटमाली, उत्तर प्रदेश
(11) बसंतपुरा -कानपुर
(12) बसंतपुरा - सराय बंजारा

बीबी बसंत कौर के परिवार के शहीदों के बारे में बात करे तो भाई भगवंत सिंह भगेश्वरी,

भाई बाज सिंह भगेश्वरी, भाई कुइर सिंह, भाई शाम सिंह, भाई नाहर सिंह, भाई अलबेल सिंह, भाई राम सिंह, भाई उदय सिंह, भाई अनिक सिंह, भाई अजब सिंह, भाई अजायब सिंह, भाई दान सिंह, भाई संत सिंह इत्यादि, ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ मुगलो के विरूद्ध लडते हुए श्हीदी दी जिसका विस्तारपर्वूक् जानकारी अध्याय पच्चीस में दी गई है। वैसे तो इस परिवार में शहीदियों का दौर गुरू हर गोबिंद साहिब के समय से शुरू हो गया था। बीबी बसंत कौर का पूरा परिवार पंथक नीति का एक प्रमुख हिस्सा था, जो पंथ की चढ़दीकला के लिये हमेशा प्रयत्नशील रहा। सन् सतारह सौ चैतीस में बीबी बसंत कौर और उनके बेटों, पोत्र और पड़पोतों सहित भाई मनी सिंह जी को मुखबरी करके गिरफ्तार करवा मुगलों के द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया और सूबेदार लाहौर जकरिया खान के आदेशो पर इनको शहीद किया गया। शहीद करने से पूर्व बीबी बसंत कौर पर मुगलो द्वारा बहुत जुल्म ढहाए गए। नब्बे वर्ष की आयु में इनसे बैल की जगह इनको जोतकर कोल्हू चलवाए गए और इनके दूध पीते परपोतों और परपोतियों को नेजों पर टांग कर शहीद कर दिया गया। इन बच्चों की सिर काटकर एक माला बनाई गई जोकि बीबी बसंत कौर के गले में डाली गई। कई महीने जुल्म करने के बाद बीबी बसंत कौर को श्हीद कर दिया गया। बीबी बसंत कौर जी को अस्सी वर्षों से गुरु घर की सेवा करने का सम्मान प्राप्त है।

भाई मनी सिंह जी दामाद भाई लक्खी राय वणजारा

भाई मनी सिंह जी भाई माईदास बिंजरावत के पुत्र, भाई बलू बिंजरावत के पोत्र, भाई मुला बिंजरावत के पडपोत्र, राव नाईक बिंजरावत मेघा/ मग/ मुंज का भतिजा और राजा सिंधौल के पुत्र भोज धारा नगरी के राजा की 23वीं पीढ़ी है। भोज राजा एक बहुत ही विद्ववान दयालु राजा था। भोज राजा ने भारतवर्ष के दो तिहाई प्रदेश पर साल 1018 से लेकर 1060 तक राज किया था। राजा भोज भारत के महान राजाओं मे एक है। अपने राज्यकाल मे साहित्य निर्माण, कला का आविष्कार, राजनीति, संरक्षण, स्थापत्य, सांस्कृतिक कार्य, किले, बावडियां, तालाब बनवाना, विमान बनाने कि तकनीक, जीवन जीने की राह, रसायन बनाना, इत्यादि कार्य में चोटी की प्रगति हुई थी। लगभग 1000 साल से ज़्यादा काल व्यतीत होने पर उपर्युक्त सभी सिद्धांत भारतीय उपखंड मे आज भी बरकरार हैं।

इस परिवार से सन् 1193 में लोधी शासकों ने कब्ज़ा लिया था। उसके बाद इस परिवार ने दूर दराज जाकर भोज राज्य के नाम से शहरों की स्थापना की। जिनमें से नाहन से कालका तक पहाड़ी देश का मालिकाना अभी भी राज्य के नाम पर रिकॉर्ड का हिस्सा है। यह परिवार उस समय पूरे भारत में प्रसिद्ध परिवारों में था। गुरु हर राय साहिब 17 साल गुरतागद्दी पर विराजमान रहे व 12 साल थापल रहे, जो भाई मनी सिंह के वंशजों का गांव था। गुरु हर राय साहिब के पास 2200 घोड़सवारों की एक सेना थी। जिसके नेतृत्व में 100 सैनिकों की टुकड़ी के कमांडर भाई मनी सिंह थे।

भाई मनी सिंह जी आठवें गुरु हर किशन साहिब की सेवा में तत्पर रहे। उन्होंने गुरु साहिबों द्वारा दी गई जिम्मेदारी को पूरा किया। जब 25 मार्च, 1664 को औरंगज़ेब ने गुरु हर किशन साहिब को बैठक के लिए बुलाया तो गुरु साहिब के साथ भाई मनी सिंह व अन्य सिक्ख भी

शामिल थे। भट्ट बही के अनुसार दर्ज है - गुरु हर किशन जी महल अठवां, बेटा गुरु हर राय जी का साल 1721 चेत्र मासे शुक्ल स्थित नामी, गुरुवार के दिन, सवा पहर दिन चढ़े पालकी में सवार हुये दिल्ली बादशाह के दरबार में आये। साथ दीवान दरगह मल आया (बेटा द्वारका दास), कंवर राम सिंह (बेटा जय सिंह अंबेरी), गुरबख्श बेटा बाघे छीपे का, मनी राम (बेटा माई दास दलहान का) और सिक्ख फकीर आये। नौवें पातशाह गुरु तेग़ बहादुर साहिब को गद्दी मिलने से पहले उपदेश दौरे के दौरान भाई मनी सिंह जी काशी, मथुरा इलाके में उपस्थित थे। भट्ट बही के अनुसार - माईदास बेटा बल्लू का, जेठा, माई दास का, दयाला दास, माईदास का, हरिचंद जेठा का, मथरा दयालदास का), गुरु तेग़ बहादुर जी बेटा गुरु हर गोबिंद साहिब जी का महल छटे का बनारस में आये। साल 1718 असाढ़ सुदी पंचमी, साथ नानकी जी (माता स्त्री सूरज मल की), भाई कृपाल चंद (बेटा लाल चंद सुभिखी का), बावा दियाल दास (बेटा माई दास जलहाने का), गवाल दास (बेटा छुटे मल छिब्बर का), चउपत राय (बेटा पैरे छिब्बर का), संगत (बेटा बिंने उप्पल का), साधू राम (बेटा धरमें खोसले का)। गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहादत के बाद भाई मनी सिंह जी, गुरु गोबिंद सिंह के साथ रहे। भाई मनी सिंह के पुत्र गुरु गोबिंद सिंह के पास ही रहते थे। 100-100 घुड़सवार के जत्थे हमेशा अलग-अलग किलों (किला तारागढ़, फतेहगढ़, अगमगढ़, लोहगढ़, आनंदगढ़, निर्मोहगढ़, बसंतगढ़) में तैनात रहते थे। भाई मनी सिंह जी ने भंगाणी के युद्ध में पहाड़ी फ़ौजों को सबक सिखाया था। भाई मनी सिंह जी पाउंटा साहिब रहते हुये गुरु गोबिंद सिंह की आज्ञा के साथ देहरादून भाई राम राय की अंतिम रस्म पूरी करने के लिये बीबी राज कौर के बुलावे पर 50 घुड़सवारों का जत्था लेकर वहां पहुंचे थे। वहां मसंदों से झगड़ा होने पर उनको सबक सिखाया था।

भाई मनी सिंह आनंदपुर साहिब में दीवान की सेवा भी निभाते रहे थे। सन् 1700 में, जब पहाड़ी राजाओं ने आनंदपुर साहिब पर हमला किया तो भाई मनी सिंह ने लोहगढ़ में लड़ाई लड़ी और गंभीर रूप से घायल हो गए। इस घटना के बारे में भट्ट बही तलाउड़ा में दर्ज है कि गुरु का बचन भाई मनी सिंह बेटा माई दास का, पोता बलू राय का, बचित्तर सिंह बेटा मनी सिंह का, उदय सिंह बेटा मनी सिंह का, आलम सिंह बेटा दुर्गादास का, पोता पदमें का, हजावत आंबिआना साल 1757, असू परविष्टे पहले रविवार के दिन लोहगढ़ परगना माखोवाल से, ख़ालसा दल के साथ चर्ण गंगा नदी के महालन सामेह माथे घोर युद्ध किया। बचित्तर सिंह ने हाथी को मार भगाया। उदय सिंह के हाथ से केसरी चंद जसवरिया मारा गया। मनी सिंह गंभीर रुप में घायल हुये। आलम सिंह बेटा दरीया का, पोता मूल्ले का, जलाहना, सूखा सिंह बेटा राय सिंह का, पोता माईदास का, कुशाल सिंह बेटा मक्खन शाह का, पोता दासे का पेलीया वणजारा रण में जूझ कर मरे। आगे गुरु की बाणी का खाबिन्द है, गुरु की गति गुरु जी जाणे। भट्ट बही तलाउडा, परगना जींद, खाता जलाहनों का।

सन् 1708 में गुरु गोबिंद सिंह के ज्योति-ज्योत समाने के बाद ख़ालसा फ़ौज की कमान जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने संभाली थी। भाई मनी सिंह जी सिखों की कार्रवाई और विभिन्न इलाकों के नेताओं के बारे सूचित करते थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मिशन सन् 1709 में शुरू किया गया था। अप्रैल, 1709 में मुग़ल फ़ौज ने दरबार साहिब, अमृतसर पर आक्रमण

किया। उस समय, भाई मनी सिंह और भाई निगाहीया सिंह बेटे भाई लक्खी शाह वणजारा ने पट्टी के चौधरी हरसहाये का सिर कलम किया था। इसके बाद भाई मनी सिंह के परिवार के पोते भतीजे जरनैल बंदा सिंह की फ़ौज के प्रमुख जरनैल के तौर पर सेवा निभाई। 9 जून, 1716 को जरनैल बंदा सिंह जी की शहीदी समय प्रमुख जरनैलों में भाई लक्खी शाह के दोहते तक शहीद हो गये थे। इन वणजारे सिखों की संख्या 16 है। जरनैल बंदा सिंह जी की शहादत के बाद सिक्ख कौम की कमान भाई मनी सिंह के हाथों में रही। उस समय सिक्खों पर जुल्म का अंधेरा छाने लगा था। ज़करीया ख़ान सिक्खों का दुश्मन था। भाई मनी सिंह ने मुग़ल शासन पर शिकंजा कसना जारी रखा। सिंह मुग़ल शासन के साथ टक्कर लेते रहे। इसी समय गद्दारी और मुग़लों की कूटनीति के कारण भाई मनी सिंह जी के परिवार के सदस्यों को पकड़ लिया गया। भाई मनी सिंह के साथ उनकी सिंघनी बीबी बसंत कौर, पुत्र, पोत्रे और परिवारिक सदस्य बहु-बेटीयों को कैदी बना लिया गया। उनको कई दिन भारी यातनाएं भी दी गई। बच्चों को नेजों पर सजाया गया था। उनकी माताओं के गले में सिरों की मालाये पहनाई गई थी। ज़करीयां ख़ान ने उन्हें सिखी छोड़ने के लिए कई लालच और प्रस्ताव दिए, लेकिन सिद्दकवान सिंघ/सिंघनीयों को कोई भी लालच/ प्रस्ताव उनके इरादे से हिला नहीं सका। ज़करीया ख़ान की तरफ से इनको मुसलमान बन जाने के लिये दबाव डाला गया। लेकिन भाई मनी सिंह जी ने अपने बंद-बंद को कटवाना मंजूर कर लिया पर सिखी सिद्दक छोड़ने से साफ मना कर दिया। मुग़ल कौम को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। सन् 1734 में लाहौर के नख्ख़ास चौंक मस्ती दरवाजे पर भाई मनी सिंह के बंद-बंद काट कर शहीद कर दिया गया था।

भाई मक्खन शाह लुबाणा (पेलिया वणजारा)

सातवें नानक गुरु हर राय साहिब जी सन् 1660 में सियालकोट के रास्ते श्री नगर पहुंचे। जहां भाई मक्खन शाह टांडा में व्यापार कर रहे थे। यहीं पर ही भाई मक्खन शाह ने गुरु हर राय साहिब जी की संगत का आंनद लिया और अनुरोध किया कि टांडा की संगतें आपके दर्शनों के लिए व्याकुल है, कृप्या आशीर्वाद दें। नाइक मक्खन शाह वणजारा के अनुरोध पर गुरु साहिब श्रीनगर, मटन, मारतंड होते हुए मोटा टांडा पहुंचे। जहां वणजारे परिवारों ने पूरी सेवा भावना के साथ स्वागत किया। गुरु साहिब इस स्थान पर लगभग चार महीने रहे। इसके साक्ष्य तलाउड़ा जीन्द से मिलता है। जिसमें लिखा गया है कि गुरु हर राय साहिब महल सातमां बेटा गुरदित्ता जी का संमत 1717 सत्रां सो सत्रां कृष्णा पखे जेठ के पांचवीं के दिन श्रीनगर कश्मीर देश में आए। साथ ही मक्खन शाह (बेटा दासे का), पोता बन्नां का, नाता बोहड़ का वंश साउन की पेलीया वणजारा। भाई मक्खन शाह वणजारा बहुत बड़ा व्यापारी था। दूर दूर तक कई देशों में व्यापार समुद्र के रास्ते किया जाता था। द्वीपों से मोती, बारूद (नमक), घोड़े आदि का ठेकेदार था। गुरु कृपा से वह ईमानदार, गुणी, त्यागी और गुरु घर की सेवा में हर पल, तत्पर रहता था।

भाई मक्खन शाह वणजारा गुरु हर राय साहिब के बाद आठवें गुरु हर किशन साहिब की सेवा में शामिल हुए। बैसाखी और दीवाली समारोहों के दौरान जहां भी गुरु साहिब पहुंचते वह दसवन्ध की सेवा के लिए उपस्थित रहते। जब राजा मिर्जा जय सिंह ने औरंगज़ेब के कहने पर

गुरु हर किशन साहिब से दिल्ली आने का अनुरोध किया ताकि औरंगज़ेब से बातचीत की जा सके। दिल्ली में गुरु हर किशन के लिए एक अलग बंगला स्थापित किया गया। औरंगज़ेब के साथ एक बैठक के बाद दूसरी मुलाकात होनी थी। लेकिन गुरु हर किशन साहिब का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा। भट्ट वही तलाउड़ा में उल्लेख है कि गुरु हर किशन जी महल आठवां, बेटा गुरु हर राय जी का, सतरां सौं इकीस चेत्र मासे शुक्ला पख्खे थित नामी, गुरुवार के दिन, सवा पहिर दिन चढ़े पालकी में सवार होकर दिल्ली सम्राट के दरबार में आये। गुरु हर किशन जी की माता बस्सी जी और भाई दियाल दास जी को बाबा बकाला कह जोति-जोत समा गये।

भाई मक्खन शाह वणजारा ने बाबा बकाला में 'गुरु लाधो रे'- 'गुरु लाधो रे' कह कर गुरु तेग़ बहादुर साहिब को प्रकट किया। भट्ट वही तोमर बिंजलउ अनुसार लाधो रे कह कर गुरु लाल चंद (मक्खन शाह), चंदू लाल (मक्खन शाह), कुशाल चंद (मक्खन शाह), स्लोजई औरत (मक्खन शाह), गोत्र पालिया बंजारा निवासी मोटा टांडा परगना मुजफ्फराबाद कश्मीर, सन् 1721 दीवाली के शनिवार को दिहुँ बकाले नगर आया। गुरु तेग़ बहादुर महल नामें के दरबार में से एक सौ मुहरे भेंट की। साथ धूमां बेटा काने बिंजलउत का आया। भाई मक्खन शाह वणजारा ने शीहें मसंद को गुरु तेग़ बहादुर साहिब के समक्ष पेश किया था क्योंकि शीहें मसंद ने धीरमल के कहने पर गुरु तेग़ बहादुर जी पर गोलियां चलाई थी। भाई गुरदास यह लक्खी शाह वणजारा के सगे छोटे भाई थे और भट्ट वहीयों के अनुसार 1670 में जींद से गुरु तेग बहादुर जी के साथ इनको भी मुगलों के द्वारा हिरासत में ले लिया गया था और दिल्ली ले गए।

शहीद नगाहीया सिंह पुत्र भाई लक्खी राय वणजारा

भाई नगाहीया सिंह एक परोपकारी, शांत, सहिष्णुता और एक आदर्श गुरसिक्ख था जिसका जन्म सन् 1611 में हुआ। उन्होंने अप्रैल, 1709 में मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए 'अमृतसर की जंग' में शहादत प्राप्त की थी, उस समय वह 98 वर्ष के थे। भट्टबही सूत्रों के अनुसार वे भाई लक्खी राय वणजारा के आठ पुत्रों में से सबसे बड़े और जदो (यादव) कबीले के गोधा बडतिया कानावत के पोते थे। भारतीय उपमहाद्वीप में एक व्यापारी के रूप में वणजारों को मुग़ल काल में महत्वपूर्ण दर्जा प्राप्त था और वणजारों को लगातार टांडों के लिए पर्याप्त सुरक्षा रखने की अनुमति दी जाती थी।

भाई लक्खी राय वणजारा के समूह के इन योद्धाओं की विशेषता थी कि केवल टांडों के रख-रखाव के लिए प्रतिबंधित नहीं किये गये थे। बल्कि गुरु नानक साहिब द्वारा निर्धारित विचारधारा को अपनाना व मानव अधिकारों की रक्षा के लिए तत्पर रहना था। भाई नागहिया सिंह ने अपने पिता को भारतीय उपमहाद्वीप में होने वाली व्यापारिक गतिविधियों का प्रबंधन करने में मदद की। कई लाख वणजारे जो सिक्ख धर्म से जुड़े थे और उनकी गतिविधियों का समन्वय भाई लक्खी राय वणजारा और भाई नगाहिया सिंह ने किया था। और सबसे बड़े बेटे होने के नाते सिक्ख संगतों को इकट्ठा करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भाई नगाहिया सिंह ने अपने पिता के साथ लोहगढ़ किले के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। लोहगढ़ के आसपास के

इलाके में बसे वणजारे सिक्ख भाई नगाहिया सिंह की देखरेख में निर्माण और व्यापार गतिविधियां करते थे। उनके छोटे भाई, भाई हेमा सिंह ने भी इन गतिविधियों में उनकी मदद की। उनके नाम पर कई गांव लोहगढ़ में मौजूद थे।

सन् 1709 में अमृतसर के आसपास सिखों को इकट्ठा किया। सितंबर, 1708 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर प्रथम सिक्ख जरनैल ने मुग़ल साम्राज्य के अत्याचारों को दूर करने के लिए नांदेड़ से पंजाब तक की अपनी यात्रा शुरू की। दूरी तय करने में जरनैल बंदा सिंह बहादुर को लगभग एक वर्ष का समय लगा। संसाधनों और सिक्ख सेना के संचय के लिए 1500 किलोमीटर को कवर करने के लिए इतने लंबे समय की आवश्यकता थी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पंजाब पहुंचने का संदेश प्रसारित हुआ। सन् 1709 में भाई मनी सिंह के नेतृत्व में सिक्ख अमृतसर में एकत्रित होने लगे। 10वीं पातशाही गुरु गोबिंद सिंह (1708) की शहादत के बाद, अमृतसर में सिक्खों का एक बड़ा जत्था इक्ट्ठा हुआ। जरनैल बंदा सिंह बहादुर पंजाब से पहले भाई मनी सिंह ने दोआबे और मांझा के क्षेत्र में सिक्ख सैनिकों और संसाधनों के साथ समन्वय के लिए अमृतसर में रहना चुना।

अमृतसर सिखों की संपत्ति था और एक गद्दार चौहारा मल ने मुग़लों को अमृतसर में सिखों की बड़ी सभाओं की जानकारी दी। लाहौर के राज्यपाल ने सिखों को तीर्थयात्रा टैक्स का भुगतान करने का आदेश दिया। जिसे सिखों ने अस्वीकार कर दिया था। अप्रैल, 1709 में लाहौर के सूबेदार असलम ख़ान ने सिक्ख आंदोलन को रोकने के लिए हरसहाय की कमान के तहत मुग़ल सेना की एक टुकड़ी को भेजा।

अमृतसर की लड़ाई

6 अप्रैल, 1709 को पट्टी के मुग़ल प्रमुख ने भाई मनी सिंह, भाई तारा सिंह व भाई नगाहिया सिंह की कमान के तहत अमृतसर और सिखों पर कब्ज़ा करने की कोशिश की। भाई नगहिया सिंह ने अपने गुरु साहिब की विचारधारा को बनाए रखने के लिए शहादत को गले लगा लिया। भाई नगाहिया सिंह 06 अप्रैल, 1709 को गुरु का चक्क (अमृतसर) के आसपास के क्षेत्र में मुग़लों से लड़ते हुए 98 वर्ष की आयु में शहीद हो गए थे। दुनिया में कोई अन्य उदाहरण नहीं है कि युद्ध के मैदान में लड़ते हुए इतनी बड़ी उम्र का व्यक्ति शहीद हो गया था। इस लड़ाई में शहीद हुए अन्य वणजारे सिक्ख राम नायक के परिवार से भाई करण सिंह राठौर के भाई कीरत सिंह थे। इस परिवार का विवरण मोहरावली के भट्टवही में मिलता है। इस परिवार के 25 से अधिक सदस्यों ने छठे गुरु हर गोबिंद साहिब से लेकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर तक और बाद में भी शहादत दी। यह परिवार भाई मनी सिंह का करीबी रिश्तेदार था, क्योंकि भाई सुखा, भाई बल्लू (भाई मनी सिंह के दादा) के दामाद थे। इस लड़ाई में शहीद होने वाले अन्य सिक्ख भाई मनोहर

सिंह, भाई शबील सिंह, भाई गुरमुख सिंह और भाई जीत सिंह हैं। इस लड़ाई का विवरण अमृतसर-दी-वरबी कवि दर्शन सिंह और केसर सिंह छिबर द्वारा लिखित बंसावली नामा में किया गया है।

शहीद जवाहर सिंह पुत्र भाई लक्खी राय वणजारा

उनका जन्म सन् 1620 में नई दिल्ली के गांव मालचा में भाई लक्खी राय बंजारा के घर में हुआ था। उनका परिवार गुरु नानक से सिक्ख धर्म से जुड़ा था और उन्होंने दिल से सिक्ख धर्म का पाठ सीखा और अपने जीवन में सिक्ख धर्म के सिद्धांतों को भी लागू किया। भाई जवाहर सिंह गुरु हर राय साहिब और यहां तक कि गुरु हर किशन साहिब के करीबी सहयोगी थे। गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहादत के बाद उन्होंने अपने पिता भाई लक्खी राय वणजारा के नेतृत्व में दिल्ली में उनके शरीर का अंतिम संस्कार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। चूंकि उनके पिता के पास बड़े व्यापारिक टाडों का स्वामित्व था इसलिए उन्होंने अपने पिता के कार्यो और उसके व्यापारिक गतिविधियों के प्रबंधन में मदद की। उनके पिता भाई लक्खी राय वणजारा के मार्गदर्शन में कई सरकारी निर्माण मुग़लों सरकार द्वारा पूरा किया गया। भाई लक्खी राय वणजारा का परिवार मुग़लों का संरक्षण प्राप्त करने में सफल रहा था। किले लोहगढ़ के निर्माण का गुप्त मिशन जिसमें वणजारों द्वारा सामग्री की आपूर्ति की जाती थी जो मुग़लों के संदिग्ध राड़ार के तहत कभी भी नाम नहीं लेते थे। किले लोहगढ़ का निर्माण इस बीच जारी रहा और भाई जवाहर सिंह और उनका टांडा नियमित रूप से किला लोहगढ़ के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री की आपूर्ति कर रहा था। अपने पिता की तरह वह एक विशेषज्ञ व्यापारी बन गए और भारत-महाद्वीप के बाहर व्यापारी गतिविधियों के दौरान अपने पिता की सहायता कर रहे थे। वह लोहगढ़ के 52 कारखानों के तैयार उत्पादों को उपयुक्त बाजारों में परिवहन और बिक्री भी कर रहा था ताकि उत्पादों के लिए सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त किया जा सके। माल की बिक्री से जुटाई गई धनराशि का उपयोग लोहगढ़ के 52 गांवों में रहने वाले परिवारों के लिए किया गया था और लाभ को ख़ालसा आम धन में जमा किया गया था जो आगे किले लोहगढ़ के निर्माण के लिए उपयोग किया गया। इसके अलावा भाई जवाहर सिंह को भारतीय उप महाद्वीप और उसके कबीले और कुलों के बारे में अच्छी जानकारी थी इसलिए इसने सिखों को दूर-दराज़ के इलाकों में फैलाने में मदद की। भाई जवाहर सिंह, अनेक जंगों में शूरवीरता से लड़ते हुए सन् 1700 में निरमोहगढ़ की लड़ाई में शहीद हुए।

शहीद हेमा सिंह पुत्र भाई लक्खी राय वणजारा

वह गुरु गोबिंद सिंह का मुख्य सेनापति था और उसे 16 जनवरी, 1704 को आनंदपुर साहिब में मुग़लों के खिलाफ लड़ाई में शहादत प्राप्त हुई थी।

भाई लक्खी शाह वणजारा से संबंधित स्थान

गुरुद्वारा रकब गंज, रायसीना, नई दिल्ली,मालचा, नरेला, बरहा कम्बा, दौला कुआं, ईशरगढ़ भोली-कुरुक्षेत्र, लोहगढ़ के पास 55 कुएं, पंचकुला जिले में लाखी बंजारा का मकबरा, हांसी में लखी वंजारा का मकबरा, जिला सागर-मध्य प्रदेश में लखी शाह वंजारा की झील, रॉयल कैनोपी और भोली जयपुर और टोंक राजस्थान , बिहार में लखी सारा, देहरादून में लखी बंजारा का बगीचा, पिंजौर में लखी बंजारा का तालाब, हरियाणा, गुरुद्वारा सावरदा, जयपुर राजस्थान, सोहाना, गुड़गांव, सराय वंजारा, राजपुरा पंजाब और गुरुद्वारा नौलखा, पटियाला में लखी बंजारा किला।

अध्याय 24

जरनैल बंदा सिंह बहादुर कौन था? बंदा सिंह बहादुर के जन्म को लेकर भ्रम

इतिहासकारों के द्वारा जरनैल बंदा सिंह बहादुर के जन्म को लेकर अलग-अलग क्यास लगाए गए हैं जोकि एक दूसरे से मेल नही खाते और अपने तर्को के समर्थन में इतिहासकार कोई भी प्रमाण पेश नहीं करते। मेजर जैम्स बरोनी (1783) अपनी किताब 'हिस्टरी ऑफ ओरीजन प्रोग्रेस ऑफ सिक्ख्सज़' लंदन मे लिखते है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का जन्म गांव पंढ़ौरी, जालंधर दोआब में हुआ। ज्ञानी ज्ञान सिंह 'तवारीख गुरु ख़ालसा भाग-2' (1892), एच.एच.रोज (1919) में लिखते हैं कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का जन्म राजौरी, (पुंछ) में राजपूत परिवार हुआ। जॉन क्लार्क आर्क (1946) यह लिखते है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का जन्म कश्मीर में खत्री परिवार में हुआ। कुछ इतिहासकार जरनैल बंदा सिंह बहादुर को भारद्वाज (ब्राहमण), छिब्बर ब्राहमण (मौगेयाल ब्रहामण), गुर्जर इत्यादि लिखते हैं। जन्म स्थान को लेकर राजौरी, जोजू-का-गढ़, पठानकोट, रियासी इत्यादि का विवरण देते है। हरी राम गुप्ता इतिहासकार जरनैल बंदा सिंह बहादुर का जन्म स्थान नाहन बताते हैं। उनके इस तर्क के पीछे यह बात समझ में आती है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने काफी समय नाहन की पहाडियों में गुजारा और मुख्य तौर पर मुग़लों के विरूद्ध सिक्खों की जंग इसी क्षेत्र में हुई है। इसलिए वह उनके जन्म को लेकर नाहन का अंदाज़ा लगाते है [384]। प्रोफेसर सुखदयाल सिंह, पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला कहते हैं कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर की गुरु गोबिंद सिंह के साथ मुलाकात नांदेड़ की मुलाकात से पहले की है। वह यह भी कहते हैं कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने जौनपुर की लड़ाई में हिस्सा लिया था और बहादुर शाह को बादशाह बनने में मदद की थी[385]। उपरोक्त वर्णित स्त्रोतों से केवल भ्रम उत्पन्न होते हैं और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के सन् 1708 से पहले के जीवन के बारे में कोई भी स्पष्ट जानकारी आज तक भी उपलब्ध नहीं है। केवल इतिहासकारों द्वारा मनगढ़त कहानियां हैं।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रारंभिक जीवन पर नया शोध

जोसेफ डेवी कनिंघम सिखों का इतिहास पृष्ठ 83 में लिखता है कि गुरु गोबिंद सिंह के चुने हुए शिष्य बंदा सिंह बहादुर दक्षिण भारत के मूल निवासी थे। उनका जन्म दक्षिण भारत के

384 *राजस्व रिकॉर्ड उप तहसील सढ़ौरा, (यमुनानगर) के मुताबिक एक गांव का नाम बंदा बहादुरपुर है और यह गांव लोहगढ़ के नजदीक हैं। इससे यह स्पष्ट हैं कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर 1708 से पहले भी इस क्षेत्र मे मौजूद थे।उनके नाम से गांव बसाए गए।

385 *सुखदयाल सिंह, बंदा सिंह बहादुर, पटियाला पंजाबी विश्वविद्यालयप, 2003, पृष्ठ 17

किस शहर या गांव में हुआ।इसका विवरण कनिंघम नही देता। यह स्पष्ट है कि अंग्रेजी इतिहासकारों को जरनैल बंदा सिंह बहादुर के सन् 1708 से पहले के जीवन की कुछ पुख्ता जानकारियां थी। लेकिन उन्होंने महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों को जानबूझकर छिपा दिया था। अब नई शोध से पता चला है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नाम से स्थापित एक किला ज़िला 'कोपल' कर्नाटक के पास स्थित है। जिस गांव में यह किला है उस गांव का नाम भी बंदा सिंह बहादुर है।

कोपल शहर में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का किला

'कोपल' शहर में दो किले हैं और एक किले का नाम बंदा बहादुर है और शोध के बाद यह पाया गया है कि इस किले का निर्माण भाई लक्खी राय वणजारा और उनके सहयोगी जंगी (जगत राम वणजारा), भंगी (भगत राम वणजारा) और भगवान दास वणजारा के द्वारा करवाया गया था। जिस जगह यह किला बनाया गया है वहां पर भूत काल में वणजारों का एक टांडा था। जिसका नाम 'कुन्नाकेडी' टांडा था[386]। अग्रेज़ों के आगमन पर इस टांडा को यहां से खदेड़ दिया गया और अब यह टांडा इस किले से लगभग 15 किलों मीटर के दूरी पर स्थित है।

भूगोलिक तौर पर यह किला तुंगबाड़ा नदी के नजदीक है। इस किले में तीन रक्षा दीवारे थी। पहली मुख्य किले से 500 मीटर की दूरी पर थी और वर्तमान में इसकी अधिकांश किलेबंदी को ध्वस्त कर दिया गया हैं। हालांकि किले के कुछ अवशेष बंदा बहादुर गांव में अब भी मौजूद है। दूसरी रक्षा दीवार एक पहाड़ी के नीचे स्थित है और इस किलेबंदी के अन्दर से सुरंग में से गुप्त मार्ग निकलता था। जो लगभग 4 किलोंमीटर लंबा था यह एक आपातकालीन निकास था। इस किले के अन्दर जाने को मार्ग इतने संकरे हैं कि एक समय में केवल दो व्यक्ति ही किले में प्रवेश कर सकते थे। यह किला ग्रेनाइट चट्टान के पत्थरों से तैयार किया गया था। जोकि कर्नाटक के इस क्षेत्र में पर्याप्त गुणवत्ता में पाया जाता है। चूने, सुर्खी और नानकशाही ईटों का इस किले को बनाने में पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया गया। अधिकांश पत्थरों को चौकोर खंडों में तैयार किया गया है जिनकी लंबाई और चैड़ाई लगभग आधा मीटर है। प्रत्येक पत्थर को अन्य पत्थर के साथ चूने की मोटी परत के साथ जोड़ा गया है। किले के कुछ हिस्सों में नानकशाही ईंटों का भी इस्तेमाल किया गया है। ये ईटें लोहगढ़ में इस्तेमाल की गई ईटों के आकार से मेल खाती हैं। इस किले में तोपों और बन्दूकों से दुश्मन पर आक्रमण करने हेतू विशेष प्रावधान किये गए थे। किले का मुख्य भाग बारिश का पानी एकत्रित करने के लिए प्रयोग किया जाता था। इस किले के अंदर 2000 से अधिक सिक्ख सैनिक रहते थे। किले के अंदर ऐशपरस्ती की कोई इमारत नहीं है। केवल सैनिकों के लिए बैरकें बनी हुई हैं। किले के तीन तरफ सीधी खड़ी चट्टाने है। जो ज़मीन से लगभग 150 फुट ऊंची है और केवल एक ही तरफ (संकरे मार्ग) से ही प्रवेश किया जा सकता है।

---

386 *शुरुआत में कोंपेरी टांडा कोपल से सिर्फ 2 किलोमीटर की दूरी पर था और अंग्रेजों द्वारा वणजारा को क्रिमिनल ट्राइबल एक्ट के तहत लाने के बाद यह टांडा विस्थापित हो गया था।वर्तमान स्थान कोपल से लगभग 10 कि.मी. दूर है।

कुछ किलोंमीटर की दूरी पर कर्नाटक के मन्नारपल्ली टांडा, ज़िला बल्लारी नाम का एक टांडा है। जिसमें भाई लक्खी राय वणजारा के वंशज अभी भी निवास करते हैं और भाई लक्खी शाह वणजारा के टांडे में काम करने वाले वणजारों के वशंज आज भी कर्नाटक स्थित टांडो में रहते हैं। अकालगढ़ नामी किला भी कोपल के नज़दीक है और गांव ईकलगढ़ा में स्थित है।

गुरु नानक साहिब का कर्नाटक में भ्रमण

गुरु नानक साहिब ने नई धार्मिक विचारधारा के साथ-साथ नई सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक क्रांति की भी नींव रखी। कर्नाटक में गुरु नानक साहिब अपनी दूसरी उदासी के दौरान सन् 1510 में पहुंचे। गुरु नानक साहिब ने दो बार कनार्टक का भ्रमण किया[387]। पहली बार गुरु नानक साहिब महाराष्ट्र, आध्रप्रदेश होते हुए कर्नाटक के शहर बिदर पहुंचे। यहां पर एक बड़ा प्रचार केन्द्र स्थापित किया।[388] उसके बाद रायचूर से होते हुए कर्नाटक के बलहरी, कोपल, हम्पी, बैंगलोर, और इसके बाद गुरु साहिब आंध्रप्रदेश के आन्तापुर का दौरा करते हुए तमिलनाडू और बाद में श्रीलंका पहुंचे। श्रीलंका का राजा शिवनाव पहले ही सिक्ख धर्म को अपना चुका था और गुरु नानक साहिब की राजा शिवनाव से भेंट हुई।[389]

दक्षिण भारत में सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए वणजारों को मसंद के रूप में नियुक्त किया गया था हरि मसंद, हेमा मसंद, पेमा मसंद, लिंगा मसंद, दीपा मसंद, दमाला मसंद, सोमा मसंद, मैकान मसंद, थेबा मसंद, लोका मसंद और कासना मसंद, जिनमें से कुछ के नाम हैं। गुरुद्वारा मंजी साहिब (अब मंदिर बना दिया गया है), लोक मसा के नाम से मौजूद है। जो हैदराबाद और रायचूर के बीच स्थित है। गुरु नानक साहिब ने कोपल में कुनाखेड़ी टांडा का दौरा किया और सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए एक धर्मशाला की स्थापना की। वहां एक मसंद की नियुक्ति की। मसंद नाम का वंशज ठाकुर मसंद का नाम आज भी यहां रहता है। गुरु नानक साहिब ने दूसरी बार कर्नाटक का भ्रमण केरल से आते हुए किया। मैंगलोर, मैसूर जिले, कूर्ग और चिक मंगलूर का दौरा करते हुए महाराष्ट्र निकल गए। दक्षिण भारत में मुग़लों के नियंत्रण में नहीं था और वणजारे व्यापारी सेनाओं के मुख्य आपूर्तिकर्ता थे। इसलिए वणजारों के पास किले बनाने और सेना रखने के खास इख़्तयार थे। कोपल के पास हज़ारों एकड़ भूमि के मालिक भी वणजारे थे।

---

387 *ट्रैवल्स ऑफ गुरू नानक, सुरेन्द्र सिंह कोहली, पंजाब यूर्निवसिटी, चंडीगढ़ पेज 76-77

388 बिदर में गुरु नानक दो मुस्लिम दिव्य पीर जलाल-उद-दीन और पीर यकब अली से मिले। एक महान चर्चा ने साधु और पीरों के बारे में चर्चा की तो वह गुरु साहिब के सामने झुक गए। बाद में बिदर के राजाओं के साथ एक बैठक हुई। जिसे वणजारा सिक्खों ने व्यवस्थित किया। इसके बाद बिदर में एक मंजी (सिख उपदेश केंद्र) की स्थापना की गई और गुरु नानक साहिब की यात्रा की स्मृति में गुरुद्वारा नानक झीरा स्थापित किया गया। आज भी बिदर में गुरू नानक साहिब के नाम से नानक चीरा नामक गुरूद्धारा साहिब सुशोभित है।

389 *पुरातन जन्म साखी भाई मनसुख वणजारा के अनुसरण पर सीलोन (अब श्रीलंका) के राजा शिवनाभ सिख बन गए। गुरु नानक साहिब ने सीलोन का भी दौरा किया और राजा ने अपनी यात्रा के दौरान गुरु नानक साहिब से भी मुलाकात की।

भाई साहिब सिंह निवासी कर्नाटक ख़ालसा पंथ पांच प्यारों में से एक

28 मार्च, 1699 को बैसाखी के दिन गुरु गोबिंद सिंह ने ख़ालसा पंथ की सृजना आनंदपुर साहिब में थी।[390] गुरु गोबिंद सिंह ने सबसे पहले ख़ालसा पंथ में पांच प्यारे संजोए। (ख़ालसा पंथ में प्रवेश किया) और इन पांच प्यारों में से एक प्यारा भाई साहिब सिंह जोकि कर्नाटक के रहने वाले थे।[391] भाई साहिब सिंह 7 दिसंबर, 1705 को भाई हिम्मत सिंह और भाई मुहकम सिंह के साथ चमकौर की लड़ाई में शहीद हो गए। यह स्पष्ट है कि गुरु नानक साहिब ने भारतवर्ष में न केवल धार्मिक केंद्र स्थापित किए बल्कि सैन्य प्रशिक्षण केंद्र भी स्थापित किये।इसलिए जब गुरु गोबिंद सिंह साहिब ने ख़ालसा पंथ की सृजना की तो भारतवर्ष के सभी भागों से लोगों ने ख़ालसा पंथ में प्रवेश किया।

भगत नामदेव जी (हगोली, नादेड़) और भगत त्रिलोचन जी (शोलापुर) महाराष्ट्र[392] के रहने वाले थे। गुरु नानक साहिब से सम्पर्क में आने के बाद गुरु नानक साहिब की विचारधार पर कार्य करना आरंभ किया। इन भगत साहिबान की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में भी दर्ज है। गुरु नानक साहिब ने नांदेड़ में इन भगत साहिबान और सूफी-संतों की मदद से एक बड़ा प्रचार केन्द्र स्थापित किया।[393] जो आगे चलकर गुरु गोबिंद सिंह के काम आया और यहां पर गुरु गोबिंद सिंह की मुलाकात बादशाह बहादुर शाह के साथ हुई। बातचीत का दौर विफल रहने के उपरांत सन् 1708 में गुरु गोबिंद सिंह ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर की रवानगी पंजाब की तरफ की ताकि मुग़ल राज की जड़े उखाड़ी जा सकें।

भाई मक्खन शाह लुबाणा का जन्म हंपी कर्नाटक में हुआ

ऐतिहासिक स्त्रोतों से पता चलता है कि भाई मक्खन शाह लुबाणा का जन्म सन् 1619 में कर्नाटक के हम्पी शहर कर्नाटक में हुआ।[394] हम्पी शहर कोपल से केवल 30 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। भाई मक्खन शाह लुबाणा (पेलिया वणजारा) का नाम सिक्ख इतिहास में बड़े

390 *ऐतिहासिक स्त्रोत ख़ालसा पंथ की सृजना 13 अप्रैल, 1699 बताते हैं परन्तु नानकशाही कैलेंडर अनुसार यह तिथि 28 मार्च, 1699 बनती है

391 *बिदर, नांदेड़, कोपल इत्यादि कई प्रचार केन्द्र गुरू नानक साहिब द्वारा कर्नाटक मे स्थापित किये गए। सन् 1699 में यहां से सिक्खों ने चलकर खालसा पंथ में प्रवेश किया।

392 भगत त्रिलोचन जी सोलापुर महाराष्ट्र के रहने वाले थे। गुरू नानक साहब के प्रमुख संघी साथियों में से एक थे। ज़िला लोहगढ़ महाराष्ट्र का निर्माण इनकी अगुवाई में हुआ था। मराठाओं के बीच में भगत त्रिलोचन जी और भगत नामदेव जी का विशेष सम्मान आज भी मौजूद हैं।

393 *नांदेड़ में गुरु नानक साहिब लक्कड़ शाह नाम के एक पुराने मुस्लिम संत से मिले। जहां उनकी कब्र के अलावा अब माल टेकरी नाम का एक गुरुद्वारा साहिब है। नांदेड़ अब सिक्खों के लिए पवित्र स्थान है। क्योंकि पहले गुरु साहिब के स्मारक के अलावा नांदेड़ में अबचल नगर हजूर साहिब है। जो सिक्ख धर्म के पांच तख्तों में से एक है। गुरु नानक साहिब ने सिक्ख धर्म के लिए नांदेड़, बिदर और कोपल को केंद्रीय स्थान बनाया और वणजारा सिखों का सैन्य प्रशिक्षण यहां आयोजित करवाया।

394 *हम्पी को विजयनगर भी कहा जाता है और यह कोपल से सिर्फ 30 कि.मी. दूर है। गुरु नानक साहिब ने इस स्थान का दौरा किया और यह दक्षिण भारतीय में एक प्रमुख व्यापार केंद्र था। कर्नल गुरबचन सिंह ने अपनी पुस्तक बाबा मक्खन शाह लुबाणा में पेज नं. 41 में कहा कि भाई मक्खन शाह लुबाणा हम्पी में पैदा हुए थे। लुबाना इतिहास में एक और इतिहासकार ज्ञानी हरनाम सिंह, पृष्ठ सं. 217 हम्पी को मक्खन शाह के जन्मस्थान के रूप में भी बताता है।

आदर के साथ लिया जाता है। भाई मक्खन शाह लुबाणा सातवें, आठवें और नोवें सिक्ख गुरु साहिब के समकालीन थे। गुरु साहिबान के प्रमुख मसंदों में से एक थे। नोवें सिक्ख गुरु तेग़ बहादुर साहिब को लेकर विरोधियों के द्वारा भ्रम फैलाए जा रहे थे। उनको दूर करने में अहम भूमिका बाबा बकाला पंजाब में रही थी। भाई मक्खन शाह लुबाणा एक अमीर व्यापारी थे। इनका व्यापार ऐशिया, अफ्रीका और यूरोप तक फैला हुआ था।[395] भाई मक्खन शाह लुबाणा और भाई लक्खी शाह वणजारा सगे साढू भी थे।

भाई मक्खन शाह लुबाणा की पारिवारिक बंसावली इस प्रकार है- भाई मक्खन शाह बेटा भाई देसा, बेटा बन्ना, बेटा अर्था, बेटा बोहरु मल, उलद सवने की। मक्खन शाह लुबाणा एक समर्पित सिक्ख और एक अमीर व्यापारी थे। भाई देसा, गुरु हर गोबिंद साहिब (6ठीं पातशाही) के सिक्ख थे और अफ्रीका व यूरोप के मसंद नियुक्त किए गए। उनके पूर्वजों का युगांडा के बामुनानिका में व्यापारिक उपनिवेश था। भाई देसा का अपना अफ्रीकी हैड क्वार्टर मालिंदी केन्या में था और उन्होंने मालिंदी और मकिंडू में अपने गोदाम भी स्थापित किए।[396]

दक्षिण भारत में वणजारों की उपस्थिति

विजय नगर साम्राज्य के कार्यकाल के दौरान वणजारे दक्षिण भारत में मौजूद थे और सन् 1565 में जब वाहमिनी साम्राज्य आस्तित्व में आया। तब भी वणजारों ने उन्हें सैन्य साम्रगी, घोड़े, अनाज, रसद इत्यादि सामान उपलब्ध करवाया। इस तरह वणजारों का हर साम्राज्य में अच्छा रसूख और आदर बना रहा।

जुलाई, 1636 में शाहजहां ने अपने तीसरे बेटे औरंगज़ेब को दक्षिण का वायसराय नियुक्त किया। अपनी नियुक्ति के समय औरंगज़ेब केवल अठारह वर्ष का था। हालांकि उसने मई, 1644 में इस्तीफा दे दिया। फिर से सन् 1653 में औरंगज़ेब दूसरी बार दक्षिण भारत का वायसराय नियुक्त किया गया। सन् 1658 में औरंगज़ेब भारतवर्ष का बादशाह बना और उसने (1659-1707) ने अपने शाही फरमानों में वणजारों का वर्णन किया है। वणजारों की बड़ी संख्या गुजरात गई परन्तु उन्हें वहां अनाज दक्षिण भारत में व्यापार हेतु नहीं मिला। इसलिए गुजरात से नमक इत्यादि सामान लेकर भारतवर्ष के अलग-अलग भागों में चले गए। परन्तु लाखों की तादाद में वणजारे अभी भी इस उम्मीद से गुजरात में रूके हुए हैं कि उन्हें वहां से अनाज मिलेगा और वह नर्मदा पार कर दक्षिण भारत पहुंचेगें।

सन् 1640 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पूर्वजों का पलायन बूंदी कोटा, राजस्थान से कर्नाटक में हुआ। शाहजहां के वज़ीर अशरफ ख़ान ने सन् 1640 के आसपास दक्षिण में मुग़ल सेना को आवश्यक सामानों की आपूर्ति करने के लिए बूंदी, कोटा क्षेत्र के सिक्ख वणजारों की

---

395 *हरपाल सिंह कपूर, सतगुरु नानक और सतगुरु हर गोबिंद साहिबान, केन्या भाई हरपाल सिंह कसूर की डायरी।

396 *26 सितंबर, 1768 को विलियम फ्रेंकलिन के लिए एक व्यापक यात्री लेडी एलिज़ाबेथ क्रेवन का एक व्यक्तिगत पत्र।

सहायता मांगी। बूंदी-कोटा सिक्ख दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण स्थान हैं। क्योंकि भगत धन्ना जी इसी स्थान के रहने वाले थे। 16वीं शताब्दी के प्रारंभ में गुरु नानक साहिब, भगत धन्ना जी से मिले और उसके बाद उन्होंने (भगत धन्ना जी) ने बूंदी-कोटा के क्षेत्र में सिक्ख धर्म की विचारधारा का प्रचार-प्रसार किया। इसके अतिरिक्त भगत पीपा जी (राजपूत) जोकि जलावार, राजस्थान के राजा थे और गुरु नानक साहिब के नज़दीकी संगी-साथियों में से एक थे। सिक्ख विचारधारा का प्रचार ज़ोर-शोर से राजस्थान में किया। इन दोनों भक्त साहिबान की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है। इस क्षेत्र में भाई लक्खी राय वणजारा के कई गुंबद और बावड़ियां जोकि आज भी अच्छे हालत में मौजूद हैं। बूंदी के पास गांव सार्वदा में गुरु गोबिंद सिंह की याद में गुरुद्वारा स्थापित है। गुरुद्वारा साहिब के परागण में भाई लक्खी राय वणजारा की बावड़ी है। इस गुरुद्वारा साहिब में हस्तलिखित गुरु ग्रंथ साहिब की पुरातन बीड़ मौजूद है। सन् 1708 में दक्षिण भारत से उत्तर भारत की तरफ कूच करते हुए जरनैल बंदा सिंह बहादुर सिक्ख सेना के साथ इस स्थान पर रूके थे।

सन् 1640 में जंगी-भंगी राठौड़ (वणजारा) और भगवान दास वड़तिया (वणजारा), पहली बार मुग़ल सेना के साथ दक्षिण भारत आए थे। जंगी-भंगी के पास 1 लाख 80 हज़ार बैल थे। जबकी भगवान दास वड़तिया के पास 52 हज़ार बैल थे। उनकी परिवहन की क्षमता को देखते हुए मुग़ल दरबार में उनका उंचा मान सम्मान था।

मुग़ल फारसी पुरालेख स्त्रोतों में वणजारों के बारे में विशेष उल्लेख दिया गया है। 'वणजारों के समय पर न पहुंचने की सूरत में सुल्तान व्याकुल हो उठा और अपने सिपहसालार आज़म हुमॉयूं की रवानगी की वह वणजारों की खबर ढूढ कर लाए (ग्रियर्सन 1968, 256)। जब मुग़ल सेना ने दक्षिण पर आक्रमण किया। वणजारा ने कठिन और ट्रैकलेस इलाके के माध्यम से तेज़ परिवहन किया और मुग़ल फ़ौज को रसद पहुंचाई। उनकी सेवाओं के लिए मुग़लों द्वारा वणजारों को कई प्रतिरक्षा और कई विशेषाधिकार दिए गए। सन् 1640 में बीजापुर पर हमला करने के लिए वणजारों द्वारा मुग़लों के वज़ीर आसफ ख़ान की मदद की गई। इस बात से खुश होकर आसफ ख़ान ने तांबे की प्लेट पर सोने के अक्षरों से उत्कीर्ण निम्नलिखित आदेश जारी किये

रंजन का पानी छप्पर की घास,
दिन के तीन खून माफ,
और जहां असरफ ख़ान का घोडा
वहां बंगी-जंगी के बैल

प्लेट का अर्थ यह प्रतीत होता है- यदि आपको कहीं और पानी नहीं मिल रहा है तो आप मुग़लों की हाडिंयों, बर्तनों से भी ले सकते हैं। यदि आपको घास नहीं मिलता तो आप किसी की झोपड़ी की छत का घास भी ले सकते हैं और यदि वणजारे एक दिन में तीन हत्याएं करते हैं तो भी सजा माफ है और जहां अशरफ ख़ान का घोड़ा खड़ा होगा वहीं जंगी-बंगी के बैल भी खड़े होंगे। वणजारों की एक विशेष बात और थी कि वही केवल मुग़ल फ़ौज के लिए नही बल्कि दक्षिण में पहले से ही स्थित बहामनी राजाओं और मराठों को भी रसद, घोड़े, हथियार इत्यादि उपलब्ध करवाते थे। वणजारों की इस कार्यशैली से मुग़लों को भी कोई ऐतराज़ नहीं था। यह कहना भी

गलत नहीं होगा कि जैसे आज के समय में रैडक्रास काम करती है वैसे ही उस समय वणजारे भी दोनो पक्षों/विरोधी धुरों के लिए कार्य करते थे।

सन् 1660 में अब्दुल ख़्वाजा जोकि बेगम बैलगांव के सूबेदार थे। वह मराठा नायक बाजीराव के साथ कोपल आया था और वणजारे सिक्खों से मिले थे। उस समय तक मराठा और वाहमनी साम्राज्य संयुक्त रूप से मुग़लों के खिलाफ लड़ रहे थे। उनकी यात्रा के बाद कोपल के पास गुंटापुरा में एक पहाड़ी पर एक किले के निर्माण के लिए वणजारों को अनुमति मिल गई । राजू जी नाइक और लस्करी नाइक ने गुंटापुरा में कोपल किले का निर्माण शुरू किया। सन् 1666 तक यह किला पूरा हो गया और अधिकांश इतिहासकारों ने इसे दक्षिण में अब तक के सबसे मजबूत किलों में से एक के रूप में परिभाषित किया है।

सन् 1686 तक यह क्षेत्र मुग़लों और जंगी-भंगी के नियंत्रण में आ गया और भवन दास बड़तिया को उनके द्वारा प्रदान की गई सेवाओं की सराहना में कोपल में 400 एकड़ भूमि आबंटित की गई। सतारवीं शताब्दी के आखिर में बंदा सिंह बहादुर के किले का निर्माण कोपल में किया गया। जो गुंटापुरा किले से मात्र 3 मील की दूरी पर स्थित है। कोपल में किला बंदा बहादुर के नज़दीक सिकलीघर सिखों की आबादी आज भी मौजूद है। सिकलीघर और वणजारे जोकि राजस्थान के मूल निवासी थे और गुरु नानक साहिब के संपर्क में आने के बाद सिक्ख धर्म भी अपना लिया था। उन्होनें काफी संख्या में कर्नाटक की तरफ पलायन भी किया। सिकलीगर सिक्ख सबसे अच्छे हथियार बनाने के लिए मशहूर थे और अधिकांश इतिहासकारों ने उल्लेख किया है कि 6वें गुरु हर गोबिंद साहिब के शासनकाल में सिकलीगर राजस्थान से पंजाब लाए गए थे।[397] लेकिन वास्तव में कर्नाटक और पंजाब में सिकलीगर 16वीं शताबदी गुरु नानक साहिब के समय दौरान आए थे। उन्होंने सिक्खों के लिए हथियार तैयार करने का कार्य किया था। कर्नाटक के बलारी ज़िले में लौह अयस्क का एक समृद्ध स्त्रोत है। यह स्थान हथियारों के निर्माण का केंद्र बिंदु बन गया है। जैसे कि पूर्व पृष्ठ में उल्लेख किया गया है कि लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी में हथियारों के कारखाने भी स्थापित किए गए थे और सिकलीगर वहां हथियार बना रहे थे। लोहगढ़ (यमुनानगर) के आसपास के क्षेत्र में कोलार और मैंगलोर नाम के गांव हैं जहां पर कभी वणजारे बसा करते थे।[398] पाउंटा साहिब से नाहन जाने वाली सड़क के आस-पास वणजारों और सिकलीगरों के कई गांव आज भी बसे हुए है।[399] सन् 1680 में शिवाजी की मृत्यु से दक्षिण की

---

397 *कृपाल सिंह ने अपनी पुस्तक सिकलीगर कबिले दा सभ्याचार में पंजाब के संदर्भ में सिकलीगर जनजाति के इतिहास को बताया। इसका पता सन् 1595-1644 में लगाया जा सकता है। यही वह समय था जब छठे सिख गुरु, गुरु हर गोबिंद साहिब ने मुग़लों के साथ युद्ध किया और पीरी-मीरी, पीरी(आध्यात्मिक) -मीरी(लौकिक) की अवधारणा की वकालत की।

398 *कोलार कर्नाटक का एक प्रसिद्ध शहर है जो सोने की खानों के लिए जाना जाता है। मैंगलोर कर्नाटक का एक प्रसिद्ध बंदरगाह शहर है। गुरु नानक साहिब ने अपनी दूसरी उदासी के दौरान इन शहरों का दौरा सन् 1509 में किया था। लोहगढ़ (हरियाणा) के पास के कोलार और मैंगलोर गांवों का होना साफ तौर से दर्शाता है कि कर्नाटक और लोहगढ़ (हरियाणा) के आपस में सम्बध थे। दोनों जगह वणजारे बसते थे और दोनों जगह के वणजारों की आपस मे नजदीकी रिश्तेदारी थी।

399 *नाहन का गुरुद्वारा साहिब गुरु नानक साहिब और गुरु गोबिंद सिंह के नाहन आगमन से जुड़ा हुआ है और वर्तमान में इसका प्रबंधन सिकलीगरों/सिक्खों द्वारा किया जाता है।

स्थिति में बदलाव आया और मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब ने इसका पूरा फायदा उठाने में कोई समय नहीं गंवाया। संभूजी को कुचलने के लिए और मराठों की ताकत को खत्म करने के लिए औरंगज़ेब ने मराठों के खिलाफ जोरदार कार्यवाही की।

तदनुसार अप्रैल, 1685 में शाही सेना ने बीजापुर को घेर लिया और उस पर कब्ज़ा कर लिया। जनवरी, 1687 में औरंगज़ेब ने गोलकुंडा के खिलाफ अपने अभियान का निर्देशन किया और उसी साल सितंबर में इसे जमा करने के लिए मजबूर किया।

इस प्रकार सन् 1689 तक मुग़ल साम्राज्य दुनिया का सबसे बड़ा सम्राज्य बन गया था। जिसके पास दुनियां की 25 प्रतिशत दौलत थी और 30 प्रतिशत सैन्य बल था।

सन् 1694 के आसपास औरंगज़ेब ने अपने बेटे मुअज्जम (अगला मुग़ल बादशाह बहादुर शाह) को 07 साल की कारावास के बाद रिहा किया। सन् 1695 में औरंगज़ेब ने मुअज्जम को पंजाब का सूबेदार नियुक्त किया।

विदर्भ में मराठवाड़ा, ख़ानदेश, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक के सभी गोर वणजारों में भाई लक्खी राय वणजारा, जंगी-भंगी और भगवानदास वदतिया के टांडों के वणजारा के वंशज आज भी मिलते हैं। पूरे दक्षिण भारत में वणजारों के उत्थान के संदर्भ मिलते हैं। आज भी कर्नाटक में 4100 से अधिक वणजारों के टांडे है। इन टांडों में रहने वाले वणजारे गुरु नानक साहिब को अरदास में याद करते हैं।

किला बंदा सिंह बहादुर, कोपल कर्नाटक में वणजारों की वार्षिक सभा

अठारवीं शताब्दी दिल्ली में जरनैल बंदा सिंह बहादुर की शहादत के बाद मुग़लों ने भारतीय उपमहाद्वीप में सिक्खों के नरसंहार का आदेश दिया। किसी नानकपंथी या उससे संबंध रखने वाले व्यक्ति की जानकारी प्रदान करने वालो को मुग़लों के द्वारा ईनाम दिए जाते थे। वणजारों को मुग़लों द्वारा विशेष रूप से निशाना बनाया गया था। वही कई ऐसी घटनाएं थी जिसमें वणजारों को दिल्ली लाया गया और वे शहीद हो गए। मुग़लों ने वणजारों के व्यापारिक टांडों को लूटने के भी आदेश दिए थे। ऐसी विकट स्थिति से निपटने के लिए एक प्रमुख वणजारा नेता वीरासी विशलावत सिंह नायक ने सभी वणजारा नेताओं, विशेष रूप से दक्षिण के सिक्ख मसंदों, टांडों के नायकों और सभी सिक्ख समुदाय के सदस्यों को एक साथ बुलाया। कोपल के किला बंदा बहादुर में एक बड़ा इक्कट्ठा किया। सन् 1717 में कोपल में बंदा बहादुर किले के सामने वणजारों के लिए एक सम्मेलन आयोजित किया गया था। इस गंभीर स्थिति का सामना करने के लिए रणनीति तैयार की गई। किला बंदा बहादुर के इस सम्मेलन में कर्नाटक के मसंद भाई सेवा सिंह, नानुसाद सिंह खेरालिया और वेरासी विशलावत सिंह नायक, महाराष्ट्र से भाव सिंह नायक (बावन बंदा), तेलंगाना (एपी) के शोमू साद सिंह नायक और अन्य कई नायक शामिल हुए थे। इस सम्मेलन में राजस्थान, गुजरात, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, कर्नाटक और तमिलनाडु के 27 कुलों के वणजारों के लगभग 4 लाख वणजारों ने भाग लिया था। एक लोकगीत में इस इक्कट्ठ का विवरण है जिसमें दर्शाया गया है कि एक बार कोपल के किला बंदा बहादुर पर भारत के विभिन्न

भागों में वणजारों के सभी 27 कबीले यहां एकत्र हुए थे।[400] एक महशूर लोकगीत आज भी कर्नाटक में गाया जाता है।

"बंदा बहादुर कोपलगढ़ फतने सैन तेरह-चैदह
वाद सत्तसाल पदर एक काज मलान
काजकोलजा कोप्पलगढ़ बहादुर बांदा"

सन् 1708 से 1724 तक कोपल मराठों के नियंत्रण में रहा और उन्होंने सिक्ख वणजारा व्यापारियों को पूर्ण विशेषाधिकार भी प्रदान किए। सन् 1725 से 1760 तक यह क्षेत्र हैदराबाद के निज़ामों के नियंत्रण में आया और 1781 तक यह क्षेत्र मैसूर के हैदरअली के नियंत्रण में रहा। इन सभी स्थानीय नरेशों ने वणजारों को विशेषाधिकार प्रदान किया। हैदर अली और उनके बेटे टीपू सुल्तान ने इस क्षेत्र पर नियंत्रण कर लिया और वणजारों को बंदा बहादुर किले का किलादार बनाए रखा।

अंग्रेज़ों द्वारा किला बंदा सिंह बहादुर पर कब्ज़ा

अंग्रेज़ों ने बीजापुर के पुराने प्रदेशों में वणजारों के किलों पर जबरदस्ती कब्ज़ा करने की कोशिश की, यह आसान नही था। क्योंकि किले की दीवार तक पहुंचने के लिए काफी ऊंचाई तक की खड़ी चट्टान बहुत दुर्लभ थी। वणजारों ने लगातार ब्रिटिशों को परेशान करना जारी रखा। उनका प्रतिरोध इतना अडिग था कि केननावे ने 8 मार्च, 1781 को कॉर्नवॉलिस को सूचित किया। "मुझे डर है कि कोपल के किलों को बलपूर्वक ले जाने का मौका हमारे खिलाफ है"।[401] फिर भी 18 अप्रैल, 1781 को पांच महीने के प्रतिरोध के बाद वणजारों से अग्रेज़ों ने यह किला कब्ज़े में ले लिया। अंग्रेज़ों के बंदा बहादुर के किलों पर कब्ज़ा करने के बाद वणजारे के टांडों को खदेड़ा गया। यह टांडे आस-पास के वन क्षेत्रों में स्थानांतरित हो गए। सन् 1792 में अंग्रेज़ों और टीपू सुल्तान के बीच युद्ध के दौरान मैसूर में टीपू सुल्तान की सेना के लिए वणजारे व्यापारी अनाज और सैन्य साम्रगी उपलब्ध करवाते रहे।[402] अंग्रेज़ों ने वणजारों के आने जाने पर काफी प्रतिबंध लगाए और वणजारा नाइक को मृत्युदंड के आदेश भी दिए। आगे ब्रिटिश कप्तान एंड्रयू रीड्स ने बंदा बहादुर किले पर कब्ज़ा कर लिया। बाद में अग्रेजों ने साजिश रच वणजारों और सिकलीगरों को अपराधिक जनजातीय अधिनियम के अर्न्तगत उनका सारा व्यापार समाप्त कर जुर्म पेशा घोषित कर दिया।

---

400 *दक्षिण भारत के हजारों वणजारों ने मार्च के माह के अन्दर कोपल में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के किले के चारों ओर इकट्ठे होकर एक भव्य समारोह आयोजित किया जाता है। जिसमें गुरु नानक साहिब और जरनैल बंदा सिंह बहादुर को याद किया जाता है। टाडा डेवेलपमैन्ट कारपोरेशन, कर्नाटक के द्वारा बंदा बहादुर किला कोपल के नज़दीक ज़मीन खरीदी गई और वहां पर एक भवन का निर्माण भी किया गया है।

401 *मैकैजी, पेज 63 विल्क पृष्ठ 482।

402 *टीपू सुल्तान का इतिहास, मोहिबुल हसन, पन्ना 206।

अध्याय 25

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ सिक्ख शहीद

पंद्रहवीं शताब्दी में गुरु नानक साहिब ने ना केवल नई धार्मिक विचारधारा मानवता को दी बल्कि नई क्रांतिकारी सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक विचारधारा भी अमल में लाई गई। गुरु नानक साहिब के आगमन से पहले भारत वर्ष के लोग 500 साल से गुलामी झेल रहे थे। इतनी लंबी गुलामी का कारण केवल यह था कि यहां के लोग जाति-पाति, वर्ण व्यवस्था, विभिन्न समुदाय, क्षेत्रवाद में बंटे हुए थे। समानता और एकता ना होने के कारण भारत एक कमज़ोर समाज बन गया था। गुलामी इतनी गहरी हो गई कि वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोगों की मानसिकता के अन्दर इतनी मजबूती से घर कर गई। जिस कारण भारत वर्ष के बाशिंदे जुल्म और ज़बर के खिलाफ आवाज़ उठाना भूल गए। मुठठी भर आक्रमणकारी जब भी दिलचाहा हिंदोस्तान को रोंदते हुए लूट ले गए। अपना राज स्थापित करके भारी कर लगाकर यहां के लोगों का शताब्दियों तक खून चूसते रहे। जुल्मी हाकमकारों का साथ भी धार्मिक आडम्बर रचने वाले लोग देते रहे। गुरु नानक साहिब ने जुल्म और ज़बर को लेकर आवाज उठाने का नया हौंसला और विचारधारा समाज को दी और ज़ालिम हाकमों की जड़ें हिला कर रख दी। गुरबाणी में गुरु नानक साहिब ने खून पीने वाले हाकमों का वर्णन गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1288 पर है।

राजे सीह मुकदम कुते॥ जाइ जगाइन्हि बैठे सुते॥
चाकर नहदा पाइनि घाउ॥ रतु पितु कुतिहो चटि जाहु॥ (अंग 1288)

इस श्लोक में गुरु नानक साहिब राजाओं और उनके करिंदों को कुत्ते बोलते हैं और व्यक्त करते हैं कि यह वो लोग है जो किर्त (कमा के खाने वाले) लोगों को रात को सोने भी नहीं देते और आम जनता का खून पीने से गुरेज़ नही करते।

इस जुल्म को समाप्त करने के लिए और मानवता के अधिकार की रक्षा के लिए गुरु नानक साहिब की अगली नौं जोतों ने दिन-रात कार्य किया और दो शताब्दियों में हलीमी राज की स्थापना कर डाली। गुरु नानक साहब ने निडरता का ऐसा मनुष्य तैयार किया जिसने जान की बाजी लगाकर केवल प्यार का खेल खेला। इस श्लोक का वर्णन गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1412 पर है।

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ॥ सिरु धिर तली गली मेरी आउ॥
इतु मारिग पैरु धरीजै॥ सिरु दीजै काणि न कीजै॥ (अंग 1412)

यदि आपको यह मानवतावादी प्यार का खेल खेलना है तो अपने सिर-धड़ की बाजी लगानी पड़ेगी और एक बार इस मिशन पर कार्य आरंभ कर दिया तो पीठ दिखाकर मत भागना।

सन् 1708 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने दो शताब्दियों में हुई गुरु नानक साहिब की विचारधार पर फूल चढ़ाए और इस पर कठोर मेहनत करके अमली जामा पहनाया। गुरु नानक साहिब विचारधारा के अमल में आने के बाद ऐसी शूरवीर सिक्ख फ़ौज तैयार हुई जिसका मुकाबला करने की हिम्मत दुनिया की किसी भी फ़ौज में नहीं थी। मौके के युद्ध के गवाह काफी ख़ान और मोहम्मद कासिम औरंगाबादी बार-बार लिखते है कि सिक्ख फ़ौज का मुकाबला करने के लिए मुग़ल फ़ौज सक्षम नहीं थी। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए लाखों सिक्खों ने शहीदियां पाई परन्तु इतिहासिक शोध ना होने के कारण यह जानकारी उपलब्ध नहीं है। फिर भी प्रयत्न कर जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों की शहीदियों से संबंधित जानकारी इकट्ठा की गई है। भविष्य में यदि और भी नाम सामने आते या पता चलते है तो इस किताब के नए संस्करण में जोड़ दिए जाएगें।

06 अप्रैल, 1709 को हुई सिक्ख शहीदियां

अक्तूबर, 1708 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर की रवानगी नांदेड़ से पंजाब की तरफ हुई। पंजाब पहुंचने में जरनैल बंदा सिंह बहादुर को लगभग एक वर्ष का समय लगा। उसूलन तो नांदेड़ से पंजाब की दूरी केवल 3 माह में पूरी की जा सकती थी। परन्तु मुगल राज के खिलाफ लड़ाई के लिए सिक्ख फ़ौजों तक संदेशा पहुंचाना और तालमेल स्थापित करने के लिए एक वर्ष का लगभग समय लग गया। गुरु का चक्क अमृतसर सन् 1709 में मुग़लों के अधीन था और अब सिक्ख विरसे से संबंधित ज़रूरी स्थानों को छुड़ाने की कोशिश शुरू हो गई थी। इसी मुहिम के चलते हुए गुरु का चक्क अमृतसर भी मुग़लों से खाली करवा लिया गया। यह मुहिम भाई मनी सिंह के नेतृत्व में की गई। 06-04-1709 को मुग़लों और सिक्ख फ़ौज के बीच अमृतसर में घमासान युद्ध हुआ। मुग़ल फ़ौज का नेतृत्व हरसराय कर रहा था जोकि इस युद्ध में मारा गया और मुग़ल फ़ौज की हार हुई। इस युद्ध में हुए सिक्ख शहीदियों का वर्णन इस प्रकार है -

1. भाई निगाहिया सिंह:- यह भाई लक्खी शाह वणजारें के सबसे बडे सुपुत्र थे और गुरु के चक्क अमृतसर में इन्होंने हरसराय का वध किया और स्वंय भी शहीद हुए। शहीदी के समय इनकी आयु 98 वर्ष की थी। ऐसा कर यह मानवता की इतिहास में मैदाने जंग में शहीद होने वाले सबसे बडी आयु के व्यक्ति बने। इनके जीवन के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी पृष्ठ 218 पर दी हुई है।
2. भाई कर्ण सिंहः- यह राठौर वणजारा परिवार में से एक थे और इनके पूर्वज भाई रामा राठौर गुरु नानक साहिब के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे। इनके पूर्वज राजा हठिया सन् 469 में कन्नौज देश के राजा थे। इनके पूर्वज भाई धूड़ा जी (27-09-1621) ने छेवें गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए शहीदी प्राप्त की। इनके चाचा ईशर सिंह (31-08-1700), सूरज सिंह(08-10-1700) और इनके दादा

भाई दयाल सिंह (01-09-1700) को गुरु गोबिंद सिंह के साथ मुग़लों के खिलाफ जंग लडते हुए शहीदी प्राप्त हुई। भाई कर्ण सिंह गुरु गोबिंद सिंह और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे।

3. भाई हाठू सिंहः- यह चौहान वणजारा परिवार में से एक थे और इनके पूर्वज भाई उदयकर्ण गुरु नानक साहिब के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे। सन् 425 में इनके पूर्वजों का राज अष्ट्रपुरा पर था। उस समय स्थावना वणजारां यहां के राजा थे। इनके परिवार में शहीदियों का दौर छेवें सिक्ख गुरु हर गोबिंद साहिब के समय से शुरू हो गया था। सन् 1635 में भाई किशना ने छठे गुरु साहिब के समय मुगलों से लड़ते हुए शहीदी दी थी। सन् 1696 भाई संगत राय (19-02-1696), भाई हनुमंत राय (19-02-1696) भाई आलम सिंह (27-04-1635) भाई बीर सिंह (07-12-1705), भाई अमोलक सिंह (07-12-1705), भाई मोहर सिंह (07-12-1705) ने दसवें नानक गुरु गोबिंद सिंह के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए शहीदियां दी। यह भाई जग्गू जी के सुपुत्र और भाई पदमा जी के पौत्र और भाई कोला जी के प्रपौत्र थे। इनके परिवार में गुरु हर गोबिंद साहिब से लेकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर तक कई शहीदियां हुई। जिसका विवरण इस पृष्ठ पर आगे है। इनके परिवार में हुए अन्य शहीदों का भी ब्यौरा है। भाई सहज सिंह, भाई डोगर सिंह, भाई हीरा सिंह, भाई दयाल सिंह जिनकी विस्तारपूर्वक जानकारी इस पृष्ठ में आगे है। इसके अतिरिक्त इनके वशंज भाई भागड़ सिंह(1740) भी शहीद हुए।

4. भाई मोहर सिंह - यह भाई छबील सिंह के सुपुत्र, भाई मुरारी के पौत्र गुरु का चक्क, मैदाने जंग में शहीद हुए। इस परिवार के अन्य शहीद भाई केसा सिंह (14-10-1700), भाई जेठा सिंह (11-10-1711), भाई धर्म सिंह (11-10-1711)। यह परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख धर्म में प्रवेश किया था और पीढ़ी-दर-पीढ़ी, मानवतावादी सोच पर इस परिवार ने शहीदियां दी।

5. भाई छबील सिंह- यह भाई मुरारी के सुपुत्र थे और यह इस मैदाने जंग में शहीद हुए। यह परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख बन गया और पीढ़ी-दर-पीढ़ी शहीदियां देता रहा।

6. भाई गुरमुख सिंह- यह भाई छबील सिंह के सुपुत्र, भाई मुरारी के पौत्र, भाई मोहर सिंह। यह परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख बन गया और पीढ़ी-दर-पीढ़ी शहीदियां देता रहा।

7. भाई जीत सिंह- यह भाई छबील सिंह के सुपुत्र, भाई मुरारी के पौत्र, भाई मोहर सिंह, इस मैदाने जंग में शहीद हुए। यह परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख बन गया और पीढ़ी-दर-पीढ़ी शहीदियां देता रहा।

13 मई, 1710 को हुई सिक्ख शहीदियां

फ़ौजदार सरहिंद वज़ीर ख़ान के साथ जरनैल बंदा सिंह बहादुर का युद्ध चप्पड़चिड़ी (नज़दीक चण्डीगढ़) में हुआ और इतिहासकार बताते हैं कि दोनों तरफ 25 से 30 हज़ार फ़ौज मैदाने-ए-जंग में पहुंची थी। एक दिन के भीषण युद्ध के बाद वज़ीर ख़ान को मार गिराया गया। इस युद्ध में सिक्ख जरनैलों ने शहीदियां प्राप्त की जिसका ब्यौरा निम्न प्रकार से है।

8. **भाई संग्राम सिंह-** यह परमार वणजारे थे और भाई बचित्र सिंह के सुपुत्र और भाई मणि सिंह के पौत्र थे। इनके पूर्वज भाई लखमन और भाई राधे जोकि नाहन हिमाचल प्रदेश के रहने वाले थे। 16वीं शताब्दी के शुरूआत में गुरु नानक साहिब के सिक्ख बन गए थे। यह परमार वणजारां परिवार राजा भोज के वंशज हैं। इनके दादा भाई बल्लू जी उस समय के भारतवर्ष के सबसे प्रभावशाली व्यक्ति थे। जब भी इनकी मुलाकात अकबर बादशाह से होती तो अकबर बादशाह इनका सिंहासन अपने सिंहासन के बराबर लगवाकर बैठा करते थे। भाई बल्लू जी जन्म तिथि 02-04-1560 छठे गुरु हर गोबिंद साहिब के प्रमुख जरनैलों में से एक थे। मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए इन्होंने 13 अप्रैल, 1634 को गुरु का चक्क अमृतसर में शहीदी दी थी। शहीदी के समय उनकी उम्र 74 वर्ष थी। भाई संग्राम सिंह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे। चप्पड़चिड़ी की लड़ाई में अपनी शूरवीरता का जौहर दिखाया। इनके भाई राम सिंह ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ 09-06-1716 को शहीदी पाई थी। जिसका विवरण इस पृष्ठ पर आगे दिया हुआ है। इनके पिता भाई बचित्र सिंह ने नागिनी बरछे से कई मुग़ल हाथी मार गिराए। उन्होनें 08-12-1705 को शहीदी पाई। इस परिवार के लगभग 80 सदस्यों ने 1621 से लेकर 1740 तक शहीदियां दी। जिनका ब्यौरा इस पृष्ठ में आगे दिया हुआ हैं।

9. **भाई महबूब सिंह-** यह परमार वणजारे थे और भाई उदय सिंह के सुपुत्र और भाई मणि सिंह के पौत्र थे। इनके पिता ने भी 06-12-1705 को गुरु गोबिंद सिंह के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए शहीदी पाई थी। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे।

10 **भाई फतेह सिंह-** यह परमार वणजारे थे और भाई उदय सिंह के सुपुत्र और भाई मणि सिंह के पौत्र थे। यह भाई महबूब सिंह के छोटे भाई थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे।

11. **भाई बजर सिंह-** यह राठौर वणजारे परिवार में से थे और इन्होनें शस्त्रों का ज्ञान गुरु गोबिंद सिंह को दिया था। यह भाई रामा जी के सुपुत्र, शहीद भाई सुखिया के पौत्र और भाई मांडन के प्रपौत्र थे। भाई मांडन 27-09-1621 गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए शहीद हुए थे। इनके भाई जीता सिंह (14-10-1700),

नेता सिंह (14-10-1700), उदय सिंह (14-10-1700) गुरु गोबिंद सिंह के समय मुग़लों से लड़ते हुए शहीद हुए थे। यह परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख बन गए थे और भाई लाखा राठौर गुरु नानक साहिब के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे। सन् 469 में इस परिवार के राजा हठिया का कन्नौज पर राज था। शहाबुद्दीन गोरी के आक्रमण के बाद इस परिवार का राज कन्नौज पर से समाप्त हुआ।

16 अक्तूबर, 1710 को हुई सिक्ख शहीदियां

12. थानेसर के नजदीक खेड़ा अमीन की धरती पर मुग़लों और सिक्ख फ़ौज के बीच में भारी जंग हुई। जिसमें हज़ारों की तादात में मुग़ल सैनिक मारे गए और सिक्ख जरनैल भाई किरत सिंह (नामी बक्शी) भी शहीद हुए।

20 नवंबर, 1710 को हुई सिक्ख शहीदियां

चप्पड़चिड़ी की लड़ाई जीतने के बाद सिक्ख फ़ौजों का कब्ज़ा सरहिंद पर हो गया। परन्तु मुग़ल अपना कब्ज़ा दोबारा से बरकरार करने के लिए सरहिंद पर हमला करते रहे। जिसके चलते हुए 20-11-1700 को सिक्ख जरनैलों की शहीदियां हुई जिसका ब्यौरा इस प्रकार से है।

13. भाई सुक्खा सिंह भंगेंशवरी- यह परमार वणजारे थे और भाई नठिया के सुपुत्र थे। इस परिवार के टांडे का नाम भंगेश्वरी टांडा था और यह टांडा उस समय के विश्व के सबसे अमीर और शक्तिशाली टांडों में से एक था। इस परिवार के काफी सदस्य जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ शहीद हुए इस परिवार का विवरण आगे दिया हुआ है।
14. भाई लाल सिंह भंगेंशवरी- यह परमार वणजारे थे और भाई नठिया के सुपुत्र थे और भाई सुक्खा सिंह के छोटे भाई थे।

26 जून, 1711 को हुई सिक्ख शहीदीयां

बादशाह बहादुर शाह लगभग 2 लाख की फ़ौज लेकर 1710 के आखिर में सढ़ौरा पहुंचा और लोहगढ़ के अलग-अलग किलेबंदी पर हमला किया। लगभग छहः माह बीतने के बाद भी बहादुर शाह को कोई सफलता प्राप्त नही हुई और वह सढ़ौरा का इलाका छोड़कर लाहौर की तरफ कूच कर गया। परन्तु एक बहुत बडी मुग़ल फौज़ लोहगढ़ पर हमले के लिए छोड़ गया और 26-06-1711 को मुग़ल फ़ौज ने पूरी ताकत से सढ़ौरा पर हमला किया जिसमें मुग़ल फ़ौज का काफी बड़ा नुकसान हुआ और जो सिक्ख जरनैल शहीद हुए उनका ब्यौरा इस प्रकार से है-

15. भाई अलबेला सिंह- मुग़ल फ़ौज के द्वारा सढ़ौरा पर बार-बार हमला किया गया और 26-06-1711 के हमले में भाई अलबेला सिंह शहीद हुए।
16. भाई नजीर सिंह- यह जलाल ख़ान (जलालाबाद का सूबेदार) का बेटा था और सिक्ख

बनकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर के मुख्य जनरैलों में शामिल हुआ और सढ़ौरा में शहीदी दी।

17. भाई जनाहर सिंह- यह भाई नज़ीर का छोटा भाई था और इन्होंने भी सढ़ौरा में शहीदी दी।

18. भाई भिखन सिंह- यह पीर बुद्धु शाह का भतीजा था। चप्पड़चिड़ी की लड़ाई में इन्होंने अहम भूमिका निभाई। जरनैल बंदा सिंह बहादुर की सहायता के लिए यह काफी समय तक बनूड़ के इलाके में बने रहे। गुरुद्वारा पूढ़ा साहिब, ज़ीरकपुर, चण्डीगढ़ के नज़दीक इनको समर्पित है। इसके अतिरिक्त यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों मे से एक थे और सढ़ौरा मे मुगलों से लड़ते हुए 26-06-1711 को शहीद हुए।

10 सितंबर, 1711 को हुई सिक्ख शहीदियां

मुग़लों के खिलाफ अलग-अलग जगहों पर सिक्ख फ़ौज के द्वारा हमला किया जा रहा था और सांबा (जम्मू पठानकोट के रास्ते पर एक छोटा सा गांव) की लड़ाई के बाद निम्नलिखित वर्णित दोनों सिक्ख जरनैलों को कैद कर लिया गया व 10-09-1711 को इनको शहीद कर दिया गया।

19. भाई माही सिंह- यह राठौर वणजारां और भाई पीखा राठौड़ के सुपुत्र थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के मुख्य जरनैल थे।

20. भाई द्रगाही सिंह- यह राठौर वणजारां और भाई माही सिंह के छोटे भाई थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के मुख्य जरनैल थे।

11 अक्तूबर, 1711 को हुई सिक्ख शहीदियां (लाहौर)

सन् 1711 में मुग़ल राज का गुप्तचर विभाग काफी सक्रिय हुआ और अब तक सिक्ख फ़ौजों की तैयारियों को समझना शुरू कर चुका था। उन लोगों को चिन्हित करना शुरू किया गया जोकि इस पूरी सिक्ख मुहिम के केन्द्र बिन्दु थे और सिक्ख फ़ौजियों को मुग़लों के खिलाफ मदद पहुंचा रहे थे। इस पूरी क्वायत के चलते हुए मुल्तान के मनसबदार ने 40 सिक्खों को मुल्तान से 15-09-1711 को गिरफ्तार किया और अलोवाल (लाहौर) ले जाया गया। यहां पर बादशाह बहादुर शाह पहले से ही मौजूद था। यह सभी सिक्ख काफी अमीर व्यक्ति थे और मुग़ल राज में इनका काफी रसूख़ था। इसलिए बादशाह ने इन व्यक्तियों को सजाए मौत देने से पहले अपनी जान बचाने का एक अवसर प्रदान किया और आदेश दिया कि जो इन 40 सिक्खों में से ईस्लाम कबूल कर लें या जरनैल बंदा सिंह बहादुर को अपना नेता (जत्थेदार) मानने से इन्कार कर दें उस सिक्ख की जान बख्श दी जाएगी। परन्तु एक भी सिक्ख ने दोनों में से एक भी शर्त मानने से इन्कार कर दिया और मुग़लों द्वारा इन 40 सिक्खों को लाहौर में ज़मीन में जिन्दा गाढ़

कर शहीद कर दिया गया उन शहीदों में से 21 का ब्यौरा इस प्रकार से हैः-

21. भाई सहज सिंह- यह चौहान वणजारे परिवार में से थे और भाई जग्गू के सुपुत्र और भाई पदमा के पौत्र थे। इनके परिवार के पूर्वज भाई उदय कर्ण गुरु नानक साहिब के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे। मुल्तान के मसंद थे। सन् 425 में इनके पूर्वजों का राज अष्ट्रपुरा पर था और स्थापना वणजारां यहां के राजे थे। इनके परिवार में शहीदियों का दौर छेवें सिक्ख गुरु हर गोबिंद साहिब के समय से शुरू हो गया था। सन् 1635 में छठे गुरु साहिब के समय मुग़लों से लड़ते हुए शहीदी दी थी। सन् 1696 में भाई किशना, भाई सगंत राय और सन् 1705 में भाई हनुमंत राय, भाई आलम सिंह, भाई वीर सिंह, भाई अमोलख सिंह और भाई मोहर सिंह ने दसवें नानक गुरु गोबिंद सिंह के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए शहीदियां दी। 12-04-1709 को भाई सहज सिंह ने अमृतसर की जंग में लड़ते हुए शहीदी दी जिसका विवरण उपरोक्त दिया हुआ है। भाई सहज सिंह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे और मुलतान और लाहौर में सिक्ख फ़ौज को रसद व अन्य ज़रूरी सामान पहुंचाने में मदद कर रहे थे।

22. भाई डोगर सिंह- यह चौहान वणजारे परिवार में से थे और उपरोक्त वर्णित भाई सहज सिंह के छोटे भाई थे।

23. भाई हीरा सिंह- यह चौहान वणजारे परिवार में से थे और उपरोक्त वर्णित भाई सहज सिंह के छोटे भाई थे।

24. भाई दयाल सिंह- यह चौहान वणजारे परिवार में से थे और उपरोक्त वर्णित भाई सहज सिंह के छोटे भाई थे।

25. भाई केसो सिंह भट्ट- इनके पूर्वज कौशिक गौत्र के ब्रहामण थे और गुरु नानक साहिब की मुलाकात के बाद यह परिवार सिक्ख बन गया। भाई केसो, भाई बोहित के सुपुत्र थे और शहीद भाई किरत के पौत्र और भाई भीखा भट्ट के प्रपौत्र थे। भट्ट भीखा जी और भट्ट किरत जी, पाचवें गुरु अर्जुन साहिब के संगी साथियों में से एक थे और इनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है। भाई केसो सिंह जी मुल्तान से गिरफतार किए गए और लाहौर में इनको शहीद किया गया। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

26. भाई हरी सिंह भट्ट- यह केसो सिंह भट्ट के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे।

27. भाई देसा सिंह भट्ट- यह केसो सिंह भट्ट, भाई हरी सिंह भट्ट के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे।

28. भाई नरबुद सिंह भट्ट- यह केसो सिंह भट्ट, भाई हरी सिंह, भाई देसा सिंह भट्ट के छोटे

भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

29. भाई तारा सिंह भट्ट- यह केसो सिंह भट्ट, भाई हरी सिंह, भाई देसा सिंह, भाई नरबुद सिंह भट्ट के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

30. भाई सेवा सिंह भट्ट- यह केसो सिंह भट्ट, भाई हरी सिंह, भाई देसा सिंह, भाई नरबुद सिंह भट्ट, भाई तारा सिंह भट्ट के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

31. भाई देवा सिंह भट्ट- यह केसो सिंह भट्ट, भाई हरी सिंह, भाई देसा सिंह, भाई नरबुद सिंह भट्ट, भाई तारा सिंह भट्ट, भाई सेवा सिंह भट्ट के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

32. भाई जेठा सिंह- यह चौहान वणजारे परिवार में से थे और भाई सबील सिंह के बेटे, भाई चन्दा के पौत्र, भाई लादा के प्रपौत्र थे। इनका परिवार भी गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख धर्म को अपना चुका था। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

33. भाई जेठा सिंह-2- यह परमार वणजारे परिवार में से एक थे और भाई माई दास के बेटे थे और भाई बल्लू जी के पौत्र थे। यह भाई मनी सिंह जी के बड़े भाई थे और इनको भी गिरफ्तार करके लाहौर ले जाकर शहीद किया गया। इनके परिवार का विवरण कई बार इस पृष्ठ में आया है।

34. भाई हरी सिंह- यह परमार वणजारे परिवार में से एक थे और भाई माई दास के बेटे थे और भाई बल्लू जी के पौत्र थे। यह भाई जेठा सिंह, भाई मनी सिंह जी के बडे भाई थे और इनको भी गिरफ्तार करके लाहौर ले जाकर शहीद किया गया। इनके परिवार का विवरण कई बार इस पृष्ठ में आया है।

35. भाई रूप सिंह- यह परमार वणजारे परिवार में से एक थे और भाई जेठा और हरी सिंह के बडे भाई थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

36. भाई प्रसन्ना सिंह- यह राठौर वणजारें परिवारों में से थे और भाई अजीत सिंह के सुपुत्र, भाई तेगे के पौत्र और भाई सुखिया माढंन के प्रपौत्र थे। इनका परिवार एक राज शाही परिवार था और इनके पूर्वज राजा हठिया का सन् 469 में कन्नौज पर राज था। इनके पूर्वज भाई लाखा राठौर ने पन्द्रहवीं शताब्दी में गुरु नानक साहिब के सिक्ख बन गए। इनके परिवार में शहीदियों का दौर छेवें गुरु हर गोबिंद साहिब के समय से शुरू हो गया। भाई धूड़ा (27-09-1621), भाई सुखिया (16-12-1634), भाई फतेहचन्द (26-04-1635), भाई जग्गू (26-04-1635) ने छेवें गुरु साहिब के दौर मे शहीदियां दी। भाई उदय (18-09-1688), भाई ईसर सिंह (29-08-1700), भाई दयाला सिंह

(13-10-1700), भाई सूरज सिंह (13-10-1700), भाई देवा सिंह (08-10-1700), भाई मोहर सिंह (13-10-1700), भाई हिम्मत सिंह (13-10-1700), भाई जीत सिंह (14-10-1700), भाई नेत सिंह (14-10-1700), भाई सेवा सिंह (14-10-1700), भाई कर्ण सिंह (16-01-1704), भाई मान सिंह (17-03-1707), ने गुरु गोबिंद सिंह के दौर में शहीदियां दी। इनके परिवार से पहली महिला सिक्ख जरनैल बीबी भींखा कौर वणजारन ने 06-12-1705 को आनंदपुर की लड़ाई में शहीदी दी। इनके बड़े भाई कर्ण सिंह 06-04-1709 को अमृतसर की जंग में शहीद हुए। भाई प्रसन्ना सिंह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

37. भाई अनूप सिंह- यह राठौर वणजारे परिवार मे से थे और भाई प्रसन्न सिंह के छोटे भाई थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

38. भाई मोहर सिंह- यह राठौर वणजारें परिवार मे से थे और भाई अनूप सिंह, भाई प्रसन्न सिंह के छोटे भाई थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों मे से एक थे।

39. भाई चणन सिंह- यह राठौर वणजारे परिवार मे से थे और भाई मोहर सिंह, भाई अनूप सिंह ,भाई प्रसन्न सिंह के छोटे भाई थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

40. भाई कहर सिंह- यह राठौर वणजारे परिवार मे से थे और भाई मोहर सिंह, भाई प्रसन्न सिंह के छोटे भाई थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

41. भाई धर्म सिंह- यह भाई छबीला के बेटे, भाई चन्दा के पौत्र और भाई लादा के प्रपौत्र थे। इनका परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख धर्म मे आ गया था। भाई धर्म सिंह गुरु गोबिंद सिंह के चारों साहबज़ादों (शहीद अजीत सिंह, शहीद जोरावर सिंह, शहीद जुजार सिंह और शहीद फतेह सिंह) के शिक्षक भी थे। भाई धर्म सिंह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे।

28 दिसंबर, 1711 में हुई सिक्ख शहीदियां (बिलासपुर)

मुग़लों के दबाब मे आकर बिलासपुर का राजा बार-बार सिक्ख फ़ौज के लिए बाधा उत्पन्न कर रहा था। इसके चलते हुए सिक्ख फ़ौज के द्वारा बिलासपुर के राजा पर हमला कर दिया गया। जिसमें बिलासपुर के राजा को काफी नुकसान हुआ। 2 सिक्ख जरनैल जिनका विवरण निम्नलिखित प्रकार से ज़ख्मी हालत में शहीद कर दिए गए।

42. भाई बाघ सिंह- यह परमार वणजारे परिवार से थे। भाई उदय सिंह के बेटे थे और मनी सिंह के यह भाई बिलासपुर की लड़ाई में शहीद हुये। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के

प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे। बिलासपुर का राजा मुग़लों के दवाब में आकर सिक्ख फौज़ों के लिए मुशकिलें बढ़ा रहा था। इस राजा को सबक सिखाने के सिक्ख फ़ौजों ने बिलासपुर पर 28-12-1711 को हमला कर दिया और सिक्ख फौज़ के बीच बिलासपुर के नज़दीक बरसाना में जबरदस्त लड़ाई हुई जिसमें भाई बाघ शहीद हुए। इस परिवार का बाकि का इतिहास भाई अलबेला सिंह के सामने दर्शाया गया है।

43. भाई केसो सिंह- यह परमार वणजारे परिवार से थे। भाई चितर सिंह के बेटे थे और भाई मनी सिंह के प्रपौत्र थे। इस परिवार का बाकि का इतिहास भाई सोहन सिंह के सामने दर्शाया गया है।

15 जून, 1712 को हुई सिक्ख शहीदियां (सरहिंद)

44. भाई लाल सिंह- यह चौहान वणजारे परिवार में से एक थे और भाई गुरदास सिंह के बेटे थे और इनके पूर्वज भाई उदयकर्ण गुरु नानक साहिब के साथ जुड़े थे। इनके पूर्वज भाई किशना जी गुरु हर गोबिंद साहिब के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे और मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए करतारपुर, जालंधर में शहीदी (26 अप्रैल, 1635) दी थी। भाई लाल सिंह, जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे और मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए सरहिंद में शहीद।

22 जून, 1713 को हुई सिक्ख शहीदियां (सढ़ौरा)

बादशाह फ़र्रूख़सियर के कमांड संभालने उपरांत उसने अपने जरनैल अब्दुल समद ख़ान को फिर से सढ़ौरा पर हमला करने के लिए भेजा। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में सिक्ख फ़ौजों ने अब्दुल समद ख़ान को सढ़ौरा पर कब्ज़ा नहीं करने दिया। 22-06-1713 को एक बड़ा युद्ध सिक्ख फ़ौज और मुग़लों के बीच मे लड़ा गया जिसमें निम्नलिखित सिक्ख जरनैल शहीद हुए।

45. भाई अलबेला सिंह- यह परमार वणजारे परिवार से थे और यह भाई उदय सिंह के बेटे थे और भाई मनी सिंह के पौत्र थे। यह भाई बल्लू जी और राजा भोज के वशंज थे। भाई उदय सिंह गुरु गोबिंद सिंह के प्रमुख सिक्खों में से एक थे और मुग़लों के साथ जंग लड़ते हुए 06 दिसंबर, 1705 में आनंदपुर साहिब में शहीद हुए थे। 22-06-1713 को भाई अलबेला सिंह ने सढ़ौरा में मुग़लों को मैदाने जंग में भारी नुकसान पहुंचाते हुए शहीदी प्राप्त की।

46. भाई मोहर सिंह- यह परमार वणजारे परिवार से थे और यह भाई अलबेला सिंह के छोटे भाई थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे। इनके परिवार का वर्णन उपरोक्त पद में दिया गया है।

47. भाई सोना सिंह- यह परमार वणजारे परिवार से थे और यह भाई चितर सिंह के सुपुत्र थे

और भाई मनी सिंह के पौत्र थे। सढ़ौरा के मैदाने जंग में इन्होनें 22-06-1713 में अपनी शूरवीरता दिखाते हुए शहीदी थी। इनके पिता और दादा को सन् 1734 में मुग़लों के द्वारा लाहौर में शहीद किया गया। इनके सबसे छोटे भाई हठु सिंह ने 27 मार्च, 1758 में मुग़लों के खिलाफ जंग लड़ते हुए सरहिंद में शहीदी दी।

09 जून, 1716 को हुई सिक्ख शहीदियां (दिल्ली)

इस दिन जरनैल बंदा सिंह बहादुर उनके बेटे भाई अजय सिंह, पत्नी सुशीला कौर और उनके प्रमुख जरनैलों को महरौली, बादशाह बहादुर शाह की कब्र के सामने कुतुबमीनार, दिल्ली में शहीद किया गया। इन सिक्ख जरनैलों को बहादुर शाह की कब्र के सामने इसलिए शहीद किया गया ताकि उसकी आत्मा को शान्ति मिले। क्योंकि बहादुर शाह सिक्ख फ़ौजों की तैयारी और पराक्रम देखकर पागल हो गया था। सन् 1712 में इसी पागलपन के चलते उसकी मौत हो गई। इसके अतिरिक्त दिल्ली में 740 सिक्ख योद्धा गुरदास नंगल गढ़ी से पकड़कर लाए गए। जून 1716 के पहले हफ्ते में रोज 100 सिक्ख योद्धाओं के सिर कलम किए गए। शहीदी से पहले ना तो यह शहीद सिक्ख योद्धा रोए और ना ही इनके चेहरे पर किसी प्रकार की कोई परेशानी-तनाव इत्यादि था। मौके पर मौजूद अंग्रेज़ व्यक्त करता है कि यह शूरवीर योद्धा शहीदी से पहले खुश और शांत थे। 09-06-1716 को शहीद हुए सिक्ख जरनैलों का ब्यौरा निम्न प्रकार से है।

48. जरनैल बंदा सिंह बहादुर- जरनैल बंदा सिंह बहादुर को गुरदास नंगल की गढ़ी से पकड़ा गया और दिल्ली लाया गया और उनके 740 सिक्ख योद्धाओं के साथ शहीद किया गया।
49. भाई अजय सिंह- यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के सुपुत्र थे और चार वर्ष की आयु में इन्हें बादशाह फ़र्रूख़सियर के आदेश पर उनके पिता के सामने शहीद किया गया।
50. बीबी सुशीला कौर- यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर की पत्नी थी और बादशाह फ़र्रूख़सियर पर दिल्ली में हमला कर दिया और इनको शहीद किया गया।
51. भाई भगवंत सिंह भंगेश्वरी- यह परमार वणजारे परिवार से थे। यह भाई नठिए के सुपुत्र थे और भाई बल्लू जी के पौत्र थे। इनके पूर्वज भाई लखमन और भाई राधे जोकि नाहन (हिमाचल प्रदेश) के रहने वाले थे। 16वीं शताब्दी के शुरूआत में गुरु नानक साहिब के सिक्ख बन गए थे। यह परमार वणजारा परिवार राजा भोज के वंशज हैं। इस परिवार के टांडे का नाम भंगेश्वरी टांडा था और यह टांडा उस समय के विश्व के सबसे अमीर और शक्तिशाली टांडों में से एक था। इनके दादा भाई बल्लू जी उस समय के भारतवर्ष के सबसे प्रभावशाली व्यक्ति थे। भाई बल्लू जी (जन्म 02-04-1560), छठे गुरु हर गोबिंद साहिब के प्रमुख जरनैलों में से एक थे और मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए इन्होंने 13 अप्रैल, 1634 को गुरु का चक्क अमृतसर में शहीदी दी थी। शहीदी के समय

उनकी उम्र 74 वर्ष थी। इसके अतिरिक्त भाई भगवंत सिंह भंगेश्वरी को औरंगज़ेब ने 5000 का मनसब दिया हुआ था। यह अटक (पाकिस्तान) के राजा थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे और इनके टांडे के साथ ही जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़ से पंजाब पहुंचे थे।

52. भाई बाज सिंह भंगेश्वरी- यह भाई भगवंत सिंह भंगेश्वरी के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।
53. भाई कोयर सिंह भंगेश्वरी- यह भाई भगवंत सिंह भंगेश्वरी के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।
54. भाई शाम सिंह भंगेश्वरी- यह भाई भगवंत सिंह भंगेश्वरी के छोटे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।
55. भाई नाहर सिंह भंगेश्वरी- यह भाई बाज सिंह के सुपुत्र थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।
56. भाई शेर सिंह भंगेश्वरी- यह भाई बाज सिंह के सुपुत्र थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।
57. भाई अलबेला सिंह भंगेश्वरी- यह भाई बाज सिंह के सुपुत्र थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।
58. भाई राम सिंह- यह परमार वणजारे परिवार से थे। यह भाई बचित्र सिंह के सुपुत्र थे और भाई मनी सिंह के पौत्र थे और भाई बल्लू जी के वंशज में से थे। भाई बचित्र सिंह एक शूरवीर योद्धा थे और दसवें नानक गुरु गोबिंद सिंह के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए 8 दिसंबर, 1705 में कोटला आनंदपुर साहिब में शहीद हुए थे। सन् 1704 में आनंदपुर किले पर मुग़लों ने हाथियों के साथ हमला कर दिया और भाई बचित्र सिंह ने अकेले ही घुड़सवारी करते हुए नागनी बरछे के साथ मुग़ल हाथी को मार गिराया।
59. भाई आली सिंह- यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी-साथियों में से एक थे। सलौंदी गांव (नज़दीक सरहिंद) के रहने वाले थे। इनका परिवार गुरु नानक साहिब के समय से सिक्ख विचारधारा को अपना चुका था। इनके परिवार के भाई सिहंगा (13-04-1634) को गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए शहीदी प्राप्त हुई।
60. भाई माली सिंह- यह भाई आली सिंह के सगे भाई थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे।
61. भाई राय सिंह हजूरी- इनके पूर्वज राम दास गौतम कुरूक्षेत्र के रहने वाले थे। सन् 1502 में गुरु नानक साहिब के थानेसर (कुरूक्षेत्र) आगमन के बाद सिक्ख बन गए। यह भाई मतिदास के भतीजे थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख संगी साथियों में से एक थे। भाई मतिदास का नाम सिक्ख इतिहास में बड़े आदर के साथ लिया जाता है

क्योंकि सन् 1675 में औरंगज़ेब के आदेश पर गुरु तेग़ बहादुर साहिब को चांदनी चौंक दिल्ली पर शहीद किया गया था। नौवें गुरु साहिब की शहादत से पहले भाई दयाला दास (पावार वन्जारा-भाई बल्लू जी का वंशज), भाई सति दास और भाई मति दास को शहीद किया गया। भाई मति दास को चांदनी चौंक पर मुग़ल जल्लादों ने आरे के साथ चीर दिया और उनके शरीर के दो टुकड़े कर दिए। भाई राय सिंह के दादा हीरानन्द, गुरु हर गोबिंद साहिब के प्रमुख साथियों में से एक थे और मुग़लों के साथ हुई जंग में 28 अप्रैल, 1635 में करतारपुर (जालंधर) में शहादत दी थी। इनके बडे भाई मुकंदम सिंह ने 03-12-1705 को मुग़लों के खिलाफ लड़ते हुए चमकौर की गढ़ी में शहीदी दी।

62. भाई गुलाब सिंह बक्शी- यह भाई बक्शी के सुपुत्र थे और भाई लक्खी शाह वणजारे के पौत्र थे। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे। भाई बक्शी को सन् 1720 में पाउंटा साहिब के नजदीक गांव सिंघपुरा में रंगड़, मुग़लों के द्वारा शहीद कर दिया गया।

63. भाई अगराज सिंह- यह भाई नगहीया सिंह के बेटे थे और भाई लक्खी शाह वणजारों के पौत्र थे।

64. भाई फरहाज सिंह- यह अगराज सिंह के छोटे भाई और भाई नगहीया सिंह के बेटे थे और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के मुख्य जरनैल थे।

65. भाई धर्म सिंह- यह भाई रूपा जी के बेटे थे और भाई रूपा जी (1614-1709) मालवा क्षेत्र पंजाब के मसंद थे और इनके पूर्वज गुरु नानक साहिब के प्रमुख सिक्खों में से एक थे। भाई परम सिंह और भाई धर्म सिंह ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पंजाब आगमन के बाद मालवा क्षेत्र में सिक्ख फ़ौज के साथ तालमेल स्थापित किया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर को जरूरी सामान पहुंचाया। यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।

66. भाई परम सिंह- यह भाई रूपा जी के बेटे थे और भाई धर्म सिंह के छोटे भाई थे यह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे।

67. भाई गुरबक्श सिंह- यह भाई भगतू जी के सुपुत्र थे। भाई भगतू जी पाचवें, छेवें और सातवें सिक्ख गुरु साहिबान के समकालीन थे। यह मालवा क्षेत्र के मसंद थे। लक्खी जंगल में चल रही सिक्ख फ़ौजों की तैयारियां इनके परिवार की देख-रेख में हो रही थी। भाई गुरबक्श सिंह जरनैल बंदा सिंह बहादुर के प्रमुख जरनैलों में से एक थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के सन् 1712 में लक्खी जंगल के दौरे के दौरान भाई गुरबक्श सिंह साथ थे। इन्होंने दिल्ली में सन् 1716 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ शहीदी दी।

अध्याय 26

भारतवर्ष में किले लोहगढ़ का वर्णन

गुरु नानक साहिब के आगमन के बाद एक नई विचारधारा ने जन्म लिया जो केवल धार्मिक उपदेशों के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और राजनीतिक क्रांति की बात करती है। यह सभी विषय आपस में जुड़े हुए हैं और गुरु नानक साहिब ने अपनी सभी उदासियों के दौरान विश्वभर का भ्रमण किया और लोगों को सच के मार्ग पर चलने का रास्ता दिखाया। गुरु नानक साहिब की विचारधारा पर चलते हुए विश्वभर के 130 राजा सिक्ख बन गए। गुरु नानक साहिब ने ही मजबूत किले निर्माण का सिद्धांत इन नेक शासकों के सामने रखा। इन किलों को भेदा जाना ना मुमकिन था। उस समय की प्रचलित सबसे मज़बूत धातु लोहा था। जिसको भेदा नही जा सकता था। इसलिए गुरु नानक साहिब ने इन किलों का नाम लोहगढ़ रखा। इन किलों के निर्माण के लिए दस के दस सिक्ख गुरु साहिबान के साथ वणजारे और सूफी संतों ने प्रमुख योगदान दिया और रणनीति के तहत भारतवर्ष के अलग-अलग भागों में किला लोहगढ़ का निर्माण किया। जिसका वर्णन निम्नलिखित प्रकार से है-

1. किला लोहगढ़, मुम्बई-पुणे मार्ग महाराष्ट्र-

लोहगढ़ महाराष्ट्र एक मजबूत किला है जोकि मुम्बई-पुणे मार्ग पर स्थित है। आज के समय यह किला पुरातत्व विभाग के अधीन है और प्रचलित इतिहास के अनुसार यह किला शिवा जी महाराज के साथ जोड़ा जाता है। इस किले के नज़दीक और भी कई किले हैं जैसे कि रायगढ़ इत्यादि। शिवा जी के गुरु समरथ रामदास गुरु नानक साहिब के घर का मुरीद था और अपने समकालीन छेंवें नानक गुरु हर गोबिंद साहिब से भेंट करने के लिए सन् 1633 में गढ़वाल पहुंचा था। इस बैठक में गढ़वाल का राजा भाई लक्खी शाह वणजारा भी उपस्थित थे। मराठी ऐतिहासिक स्त्रोत यह बताते हैं कि मराठों के किले निर्माण में भाई लक्खी शाह वणजारे का अहम योगदान है। एक स्त्रोत यहां तक बताता है कि मराठों का पहला राजनेता नेता भाई लक्खी शाह वणजारा था।[403] गुरु नानक साहिब के द्वारा इस जगह का भ्रमण अपनी दूसरी उदासी के दौरान केरला कर्नाटक से लौटते हुए सन् 1504 में किया गया। यदि इस किले की पुरातत्व अवशेषों का अवलोकन किया जाए तो इस किले का निर्माण सोहलवीं शताब्दी के दौरान हो चुका था। इसके अतिरिक्त गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान भगत त्रिलोचन जी की वाणी जोकि शोलापुर, महाराष्ट्र के रहने वाले थे। उनके द्वारा इस किले निर्माण में प्रमुख योगदान दिया गया। इसके

403 *Castes and Tribes of India-3, The Banjaras, S.G Deogaonkar, Shailaja S. Deogaonkar, Page-46.

अतिरिक्त भगत नामदेव जी भी महाराष्ट्र में नांदेड़ के नज़दीक हगोली गांव के रहने वाले थे। उनकी वाणी भी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है। उनके द्वारा भी गुरु साहिब के मिशन के ऊपर पूर्ण कार्यवाही डाली गई। जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़, महाराष्ट्र से चलकर ऊतर भारत पहुंचे और यहां से उन्होंने मुग़ल राज को उखाड़ फेंका।

2. किला लोहगढ़ भरतपुर, राजस्थान

पत्थर और चूने की चिनाई का एक मजबूत किला लोहगढ़ भरतपुर में आज भी मौजूद खड़ा है। इस किले का इतिहास अठाहरवीं शताब्दी चूड़ामन जाट और सूरजमल राजा के साथ जोड़ा जाता है। गुरु नानक साहिब अपनी दूसरी उदासी के दौरान दक्षिण भारत के भ्रमण के लिए निकले और रास्ते में वह भरतपुर ठहरे। यहां पर गुरु नानक साहिब ने किला लोहगढ़ निर्माण करने का फैसला लिया और उनके इस फैसले को भगत धन्ना जी (जाट) और भगत पीपा जी (राजपूत) ने लागू किया। यह दोनों भगत साहिबान की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान हैं और यह दोनों भगत साहिबान राजस्थान के रहने वाले थे। इस किले निर्माण के लिए वणजारे सिक्खों ने प्रमुख योगदान दिया और सताहरवीं शताब्दी में इस किले को मज़बूत करने के लिए भाई लक्खी शाह वणजारे ने भी योगदान दिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़ से चलकर ऊतर भारत की तरफ पहुंचे है तो उनका एक पड़ाव भरतपुर में हुआ है। जहां पर सन् 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर को वणजारे/लुबाने सिक्खों के द्वारा हथियार, घोड़े, पैसे इत्यादि उपलब्ध करवाए गए।[404] यहां पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने राजनेता चूड़ामन जाट से भेंट की और उन्हें मुग़लों के खिलाफ मुहिम में शामिल होने का न्यौता दिया। इस पेशकश को एक बार तो चूड़ामन ने मान लिया परन्तु सन् 1710 में मुग़ल बादशाह के दवाब में आकर चूड़ामन भारी फ़ौज लेकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर के खिलाफ लोहगढ़ पहुंचा और सिक्खों के खिलाफ जंग की।[405]

3. किला लोहगढ़ झुनझनू, राजस्थान

गुरु नानक साहिब अपनी दूसरी उदासी के दौरान दक्षिण भारत के भ्रमण के लिए निकले और रास्ते में वह भरतपुर ठहरे। यहां पर गुरु नानक साहिब ने किला लोहगढ़ निर्माण करने का फैसला लिया और उनके इस फैसले पर भगत धन्ना जी (जाट) और भगत पीपा जी (राजपूत) ने लागू किया। बाद में इस किले में गुरु गोबिंद सिंह ने सन् 1706 में भ्रमण किया और सन् 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पड़ाव भी इस किले में हुआ।

4. किला लोहगढ़ उदयपुर

यह किला उदयगढ़-प्रतापगढ़ मार्ग पर स्थित है और गुरु नानक साहिब अपनी दूसरी

---

404 *Life Time of Banda Singh Bahadur, Ganda Singh Page, 27.
405 *Chandra, Parties and Politics, 122.

उदासी के दौरान दक्षिण भारत के भ्रमण के लिए निकले और रास्ते में वह भरतपुर ठहरे। यहां पर गुरु नानक साहिब ने किला लोहगढ़ निर्माण करने का फैसला लिया और उनके इस फैसले पर भगत धन्ना जी (जाट) और भगत पीपा जी (राजपूत) ने लागू किया। यह इलाका उस समय वणजारे सिक्खों का होता था। बाद में इस किले में गुरु गोबिंद सिंह ने सन् 1706 में भ्रमण किया और सन् 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पड़ाव भी इस किले में हुआ।

5. लोहगढ़ सिरसा, हरियाणा, लोहगढ़ मोगा और लोहगढ़ मानसा

यह लोहगढ़ किला मध्यकालीन व्यापार मार्ग दिल्ली से पाकपटन मार्ग पर स्थित है और यह इलाका बाबा फरीद से सम्बंधित है। गुरु नानक साहिब साढ़े चार महीने (1501) इस मार्ग पर रहे। बाद में गुरु तेग़ बहादुर साहिब का भी यहां पर आगमन हुआ। गुरु गोबिंद सिंह सन् 1707 में दक्षिण भारत की ओर जाते हुए इस किले में रूके और जरनैल बंदा सिंह बहादुर सन् 1709 में इस किले में रूके। मौके पर अब यह किला मौजूद नहीं है। इसके अतिरिक्त इस इलाके में किला लोहगढ़ मोगा और किला लोहगढ़ मानसा में गुरु नानक साहिब द्वारा स्थापित किया गया। किला लोहगढ़ मोगा के नज़दीक किला भगवानगढ़ भी स्थापित किया गया जोकि आज मौके पर मौजूद नहीं है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इस इलाके से मालवे के सिक्खों के साथ ताल-मेल स्थापित किया।

6. किला लोहगढ़ ख़ालसा राजधानी

इस किले बारे विस्तारपूर्वक जानकारी इस किताब के सभी अध्याय में दी गई है। इस किले का निर्माण गुरु नानक साहिब के भ्रमण पर आरंभ कर दिया था। इस किले के निर्माण में सभी गुरु साहिबान, बाबा फरीद जी, भगत सदना जी, वणजारे सिक्खों और सूफी संतों का प्रमुख योगदान रहा। यहीं से मुग़ल राज की जड़ें उखाड़ फैंकी गई। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इस जगह से नानक शाही सिक्के जारी किए और इन सिक्कों पर इस जगह को ख़ालसा तख़्त अंकित किया गया।

7. किला लोहगढ़ अंबाला

यह किला ख़ालसा राजधानी से 100 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित है। अमृतसर और चण्डीगढ़ जाने वाले राजमार्ग के त्रिकोने पर अबांला से 04 किलोंमीटर की दूरी पर स्थित है। इस किले का निर्माण गुरु नानक साहिब से संबंधित है और बाद में अंबाला में सभी गुरु साहिबान का भ्रमण हुआ। यहां पर एक गुरुद्वारा मंजी साहिब भी स्थापित हुआ। आज मौके के ऊपर यह किला मौजूद नहीं है परन्तु इस गांव में भाई लक्खी शाह वणजारे द्वारा लगाए गए कुएं आज भी मौजूद है। यह जगह पजौंकड़ा साहिब के भी नज़दीक है और इस किले के अलावा ख़ालसा राज

के कई अन्य किले इस किले के नजदीक स्थापित किए गए थे। जिनका स्थान बोभबब्याल, टुडंला, मोडी, ढरवा, काकरु, कोढ़ कच्छुआ में था।

8. किला लोहगढ़ ज़ीरकपुर चंडीगढ़

यह ख़ालसा राजधानी का अग्रिम मोर्चो में से एक था और इसके पास कई अन्य ख़ालसा राज के किले मनौली इत्यादित में स्थित है। मौके पर अब किला मौजूद नहीं है और किले की यादगार में एक गुरुद्वारा साहिब सुशोभित किया गया है जिसके बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी ऐपीलोग्स में दी गई है।

9. किला लोहगढ़ पिंजौर

यह किला मौके पर मौजूद नहीं है और इस किले का निर्माण भी गुरु नानक साहिब के समय आरंभ हुआ था। यह स्थान पिजौर से लगभग 04 किलोंमीटर की दूरी पर चण्डीगढ़ की तरफ पहाड़ियों में स्थित है। सन् 1714 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर इस किले में मौजूद थे। इस किले के आस-पास कई सिक्ख किले आज भी मौजूद खड़े हैं जोकि गोरखपुर, वबाना, बसंर गांव इत्यादि में स्थित है।

10. किला लोहगढ़ आनंद्पुर साहिब, पंजाब

इस किले के निर्माण की रूप-रेखा गुरु नानक साहिब के द्वारा तैयार की गई। हालांकि प्रचलित इतिहास के मुताबिक यह किला सिक्खों के दसवें गुरु गोबिंद सिंह के द्वारा 17वीं शताब्दी के आखिर में तैयार करवाया गया और इस किले के अंदर हथियार बनाने का कारखाना भी स्थापित किया गया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा मुग़लों के विरूद्ध जंग लड़ने के लिए इस किले का प्रयोग किया गया। आज यह किला मौजूद नहीं है। इस किले की यादगार में आनंदपुर साहिब के नज़दीक किला लोहगढ़ का निर्माण पुनः करवाया गया है।

11. किला लोहगढ़ अमृतसर

इस किले के निर्माण की रूप-रेखा गुरु नानक साहिब के द्वारा तैयार की गई। हालांकि प्रचलित इतिहास के मुताबिक यह किला सिक्खों के छेवें गुरु हर गोबिंद साहिब द्वारा सन् 1621 में तैयार करवाया गया था, ताकि गुरु का चक्क अमृतसर की सुरक्षा दुश्मनों से की जा सके। जून 1709 में भाई मनी सिंह के नेतृत्व में सिक्ख फ़ौजों के द्वारा इस किले का कब्ज़ा पुनः मुग़लों से लिया गया। यह किला मौके पर मौजूद नहीं है और किले की यादगार में एक गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवाया गया है।

12. किला लोहगढ़ करसू, पाकिस्तान

इस किले के निर्माण की रूप-रेखा गुरु नानक साहिब के द्वारा तैयार की गई। प्रमुख तौर पर यह किला सिक्खों के द्वारा मुग़लों के खिलाफ सन् 1710 से लेकर सन् 1716 तक हुई जंग में प्रयोग में लाया गया।

13. किला लोहगढ़ गुरदासपुर और लुधियाना

इस किले के निर्माण की रूप-रेखा गुरु नानक साहिब के द्वारा तैयार की गई और प्रमुख तौर पर यह किला सिक्खों के द्वारा मुग़लों के खिलाफ सन् 1710 से लेकर सन् 1716 तक हुई जंग में प्रयोग में लाया गया। यह दोनों किले मौके पर मौजूद नहीं हैं।

14. किला लोहगढ़ अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश) और मुरैना (मध्य प्रदेश)

इस किले के निर्माण की रूप-रेखा गुरु नानक साहिब के द्वारा तैयार की गई और पूर्ण अध्याय में व्यक्त किया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का आक्रमण जम्मू से लेकर बरेली तक था और यह दोनों लोहगढ़ किले मुरादाबाद और बरेली के काफी नजदीक है। प्रमुख तौर पर यह किला सिक्खों के द्वारा मुग़लों के खिलाफ सन् 1710 से लेकर सन् 1716 तक हुई जंग में प्रयोग में लाया गया। यह दोनों किले आज मौजूद नही है।

15. किला लोहगढ़ सिलीगुढी और लोहगढ़ किला भोलपुर, पश्चिम बंगाल

इस किले के निर्माण की रूप-रेखा गुरु नानक साहिब के द्वारा तैयार की गई और गुरु तेग़ बहादुर साहिब का भ्रमण भी इस इलाके में कई बार हुआ। यह दोनों किले निचले हिमालय क्षेत्र में मौजूद है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि सिक्ख किलांबदी नेपाल पार करते हुए पश्चिम बंगाल तक पहुंच गई थी।

अध्याय 27

जम्मू से लेकर बरेली तक हलीमी राज

मुज्फर आलम अपनी किताब दा क्राईयसस आफ एम्पायर इन मुगल नार्थ इंडिया पन्ना न. 169 में दर्शाते है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मुगलो पर आक्रमण जम्मू (जालंधर दवाब) से (गढ़वाल)बरेली तक था[406]। जम्मू से लेकर बरेली तक की लम्बाई लगभग 550 किलोमीटर पडती है और ऐतिहासिक स्त्रोतो का अध्ययन करनें उपरांत यह पता चलता है कि निचले हिमालय क्षेत्र से लेकर लाहौर सूबा और दिल्ली सूबा के मैदानी इलाको तक में सिक्ख फौज के द्वारा अलग-अलग स्थानो पर किलाबंदी की गई थी और इन मौर्चो से भी मुगल फौज पर सन् 1709 से लेकर सन् 1716 तक आक्रमण किए गए।

इतने बड़े क्षेत्र में किलाबंदी करनी एक व्यक्ति के लिए संभव नही थी और यह केवल इसलिए संभव हुई कि यह कार्य गुरु नानक साहिब से लेकर गुरु गोबिंद सिंह तक सभी दस सिक्ख गुरु साहिबान के द्वारा 200 वर्ष से अधिक समय में किया गया और सन् 1709 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इस तैयारी के चलते मुगल राज की जड़े उखाड फेंकी। इतने बडे क्षेत्र में किलेबंदी का आकंलन और मुगलो के ऊपर जरनैल बंदा सिंह बहादुर के आक्रमण का अध्ययन करने हेतू इस क्षेत्र को इस अध्याय में पाँच जोन में बाटा गया है।

जोन न. पांच में इलाका बरेली से लेकर मेरठ तक लिया गया है और पहाडो के क्षेत्र में गढवाल का क्षेत्र पिथोड़ागढ से लेकर कोटद्वार तक लिया गया है। अखबार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला के अनुसार अक्तूबर 1712 तक जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में सिक्ख फौज के द्वारा जालंधर से लेकर बरेली तक अपना राज स्थापित कर लिया था और किसी भी मुगल मनसबदार में इतनी हिम्मत नही थी कि वह इस क्षेत्र में सिक्खों के साथ टकराव लें।

अगस्त 1714 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर पुनः बरेली गए, बरेली से मुरादाबाद गए। यहां पर कमाऊ के राजा बाज बहादुर चन्द और सिक्ख फौज के बीच युद्ध हुआ जिसमें कुमाऊ के राजा का भारी नुकसान हुआ। एक ऐतिहासिक स्त्रोत के अनुसार गढ़वाल की पहाडियों में 40 हजार की सिक्ख फौज जरनैल बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में चल रही है।[407] 13 जुलाई 1715 को गढ़वाल की फौज और सिक्ख फौज ने सयुंक्त होकरमुरादाबाद और बरेली के शासक रोहिल्ला

---

406 *With the help of the Srinagar-Garhwal chief and the banjaras, the Sikhs marched and aspired to invade as far as the territory of sarkar Moradabad and chakla Bareilly in suba Delhi. Akhbarat, FS, 1st and 2nd R. Ys.. I, pp. 259 and 327.

407 *Veena Sachdeva, Article-Historical Geography of Baba Banda Singh Bahadur, in Revisiting Baba Banda Singh Bahadur and his time, edited by Amarjeet Singh, P 29.

अफगानो पर हमला किया और उनको इस इलाके से खदेड़ दिया। इस समय जरनैल बंदा सिंह बहादुर गुरदास नंगल की गढ़ी (पंजाब) से मुगलो के विरूद्ध युद्ध लड रहे थे। यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि गढ़वाल के क्षेत्र में सिक्ख फौज की भारी तैयारी थी और गढ़वाल के राजा फतेहशाह ने मुगलो के खिलाफ सिक्ख फौज का सम्पूर्ण साथ दिया। प्रश्न यह है कि क्या यह तैयारी जरनैल बंदा सिंह बहादुर के समय हुई या यह तैयारी पहले से ही थी। जैसे कि इस किताब के कई अध्याय में वर्णन किया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कार्यकाल आठ साल का था और इस समय में 550 किलोंमीटर में किलाबंदी और मौर्चो स्थापित करना तो बडी दूर की बात है, इस पहाडी इलाके में जीवन यात्रा करना ही संभव नही था। यह भी बिल्कुल स्पष्ट है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर और सिक्ख फौज को इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति की सम्पूर्ण जानकारी थी और जैसे कि ऐतिहासिक स्त्रोतो से पता चलता है कि 40 हजार की सिक्ख फौज गढ़वाल-बरेली के क्षेत्र में मौजूद थी और इस फौज के लिए घौड़े, हथियार, रसद इत्यादि पर्याप्त मात्रा में मौजूद थे, इस बात से बिल्कुल स्पष्ट है कि यह तैयारी काफी समय पहले से ही गुरु नानक साहिब के समय से शुरू हो गई थी।

ऐतिहासिक स्त्रोतो का अध्ययन करने से पता चलता है कि गुरु नानक साहिब गढ़वाल-बरेली के इलाके में सन् 1503 में आए थे और यहां पर हिन्दू मत का सबसे बडा केंद्र था, जिसका नाम था गौरखमत और जोगियो के साथ संवाद होने उपरांत, जोगियो ने गुरु नानक साहिब को अपना गुरु मान लिया और गौरखमते का नाम नानकमता रख दिया। उस समय इस श्रीनगर गढ़वाल का राजा अजै पाल था और इस राजा ने भी गुरु नानक साहिब के सपंर्क में आने के बाद सिक्ख धर्म को अपना लिया और सन् 1517 में गढ़वाल के राजा ने श्रीनगर को अपनी राजधानी बनाया। नए ऐतिहासिक स्त्रोत से पता चला है कि राजा अजै पाल पंवार वणजारें थे और राजा भोज के वंशजो में से एक थे और जैसे कि इस किताब के अध्याय न. 1 और 2 पर वर्णन किया गया है कि इस राजा भोज के परिवार के वंशज भी नाहन क्षेत्र में बैठे रहे और गुरु नानक साहिब के सपंर्क में आने के बाद हलीमी राज की स्थापना के कार्य आरंभ किया। इस परिवार के कई सदस्यो ने गुरु हर गोबिंद साहिब से लेकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर तक शहीदियां दी, जिसका वर्णन इस किताब के अधयाय न. 25 में दिया गया है।

इस परिवार में से कई सदस्यो का सिक्ख धर्म के प्रचार और गुरु साहिबान का प्रमुख सहयोंग करने का इतिहास है और इस परिवार के भाई मनी सिंह सुपुत्र भाई माई दास का नाम सिक्ख समाज में बडे आदर-सत्कार से लिया जाता है। राजा अजै पाल (1490-1519) भी इस परिवार का हिस्सा थे और उनके बाद गढ़वाल के राजा की गद्दी पर क्लयाण शाह (1519-1528), सुंदर पाल (1528-1540), हंसादेव पाल (1540-1556), विजय पाल (1556-1567), सहज पाल (1567-1603), बहादुर शाह (1603-1622), महीपत शाह (1622-1631), पृथ्वी शाह और इनकी माता नक्टी रानी (1631-1662), मेदनी शाह (1662-1684), फतेहशाह (1684-1717) बैठे।

ऐतिहासिक स्त्रोतो से से पता चलता है कि गुरु नानक साहिब सन् 1503 में ऋषिकेश से होते हुए टेहरी गढ़वाल पहुंचे और उसके बाद गुरु साहिब पोहड़ी गढ़वाल श्रीनगर तक गए और बाद में गुरु साहिब अलमौरा जिले में बागेश्वर पहुंचे और यहां पर राजा अजै पाल ने गुरु साहिब के दर्शन किए और उसके बाद भाई मरदाना जी के साथ नैनीताल पहुंचे और आज भी नैनीताल से दो मील की दूरी पर नानक थड़ा नाम की जगह मौजूद है और काशीपुर में नानक साहिब के आगमन को लेकर एक गुरुद्वारा साहिब भी मौजूद है, इसके बाद गुरु साहिब हल्दवानी और इसके बाद में नानक मता पहुंचे[408]। जिसका वर्णन पहले की किया जा चुका है। आज यहां पर एक भव्य डैम का निर्माण किया गया है। जिसका नाम नानक सागर है। गुरु साहिब नानक मता से होते हुए रीठा साहिब पहुंचे और बाद में पीलीभीत[409], मुरादाबाद[410], कोटद्वार[411] से घूमते हुए बरेली के मैदानी इलाके में पहुंचे जहां पर गुरु नानक साहिब की मुलाकात टांडा वणजारां में वणजारों से हुई। जहां पर भारी मात्रा में वणजारों ने सिक्ख धर्म को अपना लिया। जोन न. पांच, बरेली गढ़वाल क्षेत्र में वणजारें सिक्खो के कई टांडे आज भी मौजूद है[412]।

सन् 1634 में सिक्ख धर्म के छेवें गुरु हर गोबिंद साहिब ने भी इस इलाके का दौरा किया और यहां पर यह भी बताना उचित होगा कि गढ़वाल के राजा बहादुर शाह ने गुरु हर गोबिंद साहिब के साथ ग्वालियर के किले में कैद काटी थी और सन् 1619 में बहादुर शाह छेंवे गुरु साहिब के साथ ग्वालियर किले से रिहा किए गए। इनके बेटे महीपत शाह भी गुरु साहिब के शिष्य थे और सन् 1633 में बहादुर शाह के निधन के बाद इनकी पत्नी रानी कर्णावती जिनको नक्टी रानी भी कहा जाता है ने गढ़वाल का राज पाट संभाला। गुरु हर गोबिंद साहिब श्रीनगर गढ़वाल पहुंचे और वहां पर उनकी मुलाकात रानी कर्णावती से हुई और यहां पर एक बैठक का आयोजन किया गया जिसमें छेंवे गुरु हर गोबिंद साहिब, भाई लक्खी शाह वणजारां, रानी कर्णावती, समरथ रामदास[413] और अन्य कई वणजारें सिक्खो ने भाग लिया। समरथ रामदास शिवाजी के गुरु थे और महाराष्ट्र में मराठा राज की स्थापना के लिए कार्य कर रहे थे। श्रीनगर गढ़वाल में इस बैठक में भाग लेने से यह स्पष्ट होता है कि मराठा मूवमैन्ट भी गुरु नानक साहिब के फलसफे के अधीन कार्य कर रही थी।

---

408 *नानक मता के पास 14 गांव गुरू नानक साहिब के नाम से आज से 100 साल पहले भी मौजूद थे और एक लाख पाँच हजार बिगा जगंल गुरू नानक साहिब के नाम पर था।

409 *पीलीभीत में एक गुरूद्वारा, गुरू नानक साहिब और गुरू गोबिंद सिंह के नाम से मौजूद है और भाई धन्ना सिंह की पुस्तक के अनुसार इस गुरूद्वारा पर नानकशाही अखाडा उदासी महंतो का कब्जा है।

410 *भाई धन्ना सिंह साईकिल यात्रा किताब के अनुसार गुरू नानक साहिब का एक गुरूद्वारा मौजूद है जोकि उदासी महंतो के कब्जे में है। यह गुरूद्वारा किला राम घाट गंगा किनारे है।

411 *भाई धन्ना सिंह साईकिल यात्रा किताब के अनुसार यहां पर गुरू नानक साहिब का गुरूद्वारा मौजूद था परन्तु यहा अब महंतो का डेरा है।

412 *Uttar Pradesh District Gazetteers: Moradabad, Page-14.

413 *According to Sikh tradition based on an old Punjabi Manuscript Panjah Sakhian, Samarth Ramdas met Guru Hargobind (1595-1644) at Srinagar in the Garhval Hills.

कई मराठी ऐतिहासिक स्त्रोतो में भाई लक्खी शाह वणजारें को पहला मराठा राजा भी लिखा गया है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि मुगल राज की जड उखाडने के लिए कार्य योजनाबंद तरीके से गुरु नानक साहिब की विचारधारा के अधीन किया जा रहा था। गुरु हर गोबिंद साहिब इस बैठक के बाद नानक मता, नजीवाबाद, नगीना, पीलीभीत, बरेली, चांदशोई, मुरादाबाद के स्थानो पर गए और बाद में वह सहारनपुर-देहरादुन के रास्ते पंजाब को लौट गए। छेंवे गुरु साहिब का इस स्थान पर आने का मकसद केवल वणजारें सिक्खो के द्वारा इस इलाके में की जा रही तैयारियों का मुआना करना और गढ़वाल के राजा के साथ तालमेल स्थापित करना ताकि वह किसी प्रकार से मुगलो के दबाव में ना आए। इस पूरे प्रकंरण के चलते हुए गढ़वाल रियास्त के संबंध मुगलो के साथ और बिगड़ गए और सन् 1640 में बादशाह शाहजहां के आदेश पर मुगलो के जरनैल नजाबद खान ने हमला बोल दिया परन्तु अबतक गढ़वाल रियास्त की युद्ध की तैयारी काफी बडे स्तर पर हो चुकी थी। जिसके चलते हुए गढ़वाल की फौज ने ना केवल मुगल फौज को हराया ब्लकि मुगल सैनिको की नाक काट दी गई और कटी नाक के साथ मुगल सैनिको को गढ़वाल के क्षेत्र से भगा दिया गया। इस युद्ध के बाद रानी कर्णावती का नाम नक्टी रानी रखा गया। सन् 1654 में शाहजहां ने गढ़वाल के राजा के विरूद्ध एक और लड़ाई की जिसके चलते हुए देहरादून का इलाका गढ़वाल से अलग हो गया और मुगलो के अधीन आ गया[414]। सन् 1655 में कुमाऊ के राजा ने गढ़वाल की रियास्त के खिलाफ मुगलो का साथ देना आरंभ कर दिया।

सन् 1657 में दाराशिकोह और औरंगजेब के बीच में अगला मुगल बादशाह बनने के लिए युद्ध आरंभ हो गया और समूहगढ़ की लडाई में औरंगजेब की जीत हुई। सातवें गुरु हर राय साहिब सन् 1645 से लेकर सन् 1657 तक लोहगढ़ की पहाडियों में मौजूद थे और उन्होनें दाराशिकोह की मदद के लिए फौज तैयार की और स्वंय नूरपुर के राजा के साथ दाराशिकोह की मदद के लिए पंजाब पहुंचे परन्तु दाराशिकोह हौसला हार चुका था और वह औरंगजेब से युद्ध करने से भाग गया। 29 मई, 1658 को गुरु हर राय साहिब के आदेश पर दाराशिकोह के बेटे सुलेमान शिकोह को गढ़वाल के राजा पृथ्वी चन्द के द्वारा पनाह दी गई। औरंगजेब के द्वारा भरपूर कोशिश के बावजूद भी राजा पृथ्वी चन्द ने सुलेमान शिकोह को औरंगजेब के हवाले नही किया। औरंगजेब ने राजा जय सिंह मिर्जा को गढ़वाल भेजा ताकि वह सुलेमान शिकोह को गढ़वाल से लेकर आ सकें परन्तु वह इस कार्य में विफल रहा। सन् 1661 में औरंगजेब ने सुलेमान शिकोह को पकड लिया और उसका कत्ल करवा दिया। यहां पर यह भी बताया जाना उचित होगा कि सन् 1661-62 में गढ़वाल के राजा पृथ्वी चन्द (आयु 40 साल), सुलेमान शिकोह, (आयु 28 साल), गुरु हर राय साहिब (आयु 32 साल) और नूरपुर का राजा (आयु 40 साल) की मौत रहस्यमय परिस्थितियों में हुई और यह कहा जाना भी गलत नही होगा कि इन सभी की मौत के पीछे औरंगजेब का हाथ था।

गुरु हर राय साहिब के द्वारा नाहन गढ़वाल, सहारनुपर, मुरादाबाद इत्यादि में 360 प्रचार

414 *The Imperial Gazetteer of India, Dehradun, 1909 vol. 11, p.165.

केंद्र[415] स्थापित किए गए ताकि इस क्षेत्र में हलीमी राज की स्थापना की जा सकें। बरेली से मेरठ के क्षेत्र में मुख्य तौर पर जनसंख्या वणजारें और जाट जन-जाति की थी जोकि मुख्य तौर से सिक्ख विचारधारा में जुड गए थे। मथुरा और बरेली के इलाके के बीच में शौरा/बारूद बनाने के नमक की खाने थी और वणजारें सिक्ख इन खानो से शौरा/बारूद का निर्यात पूरे विश्व भर में करते थे और इस बारूद का इस्तेमाल वणजारें सिक्खो के द्वारा गढ़वाल के इलाके में हथियार बनाने के लिए भी किया गया। इरफान हबीब की किताब एटलस आफ मुगल एम्पायर के अनुसार गढ़मुक्तेश्वर से दिल्ली के रास्ते में पड़ने वाली काली नदी पर एक पक्के पुल का निर्माण एक दरगाही संत के द्वारा करवाया गया जोकि गुरु नानक विचारधारा से संबंध रखता था। इस स्त्रोत से यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि इस इलाके में गुरु फलसफे का दब-दबा बन चुका था और नानक विचारधारा को मानने वाले लोग काफी अमीर थे और जनहित में पुल निर्माण जैसे महगें कार्य भी करवा रहे थे। गुरु तेग बहादुर साहिब के द्वारा भी इस इलाके का दौरा पूर्व से लौटते हुए किया गया। बाद में गुरु गोबिंद सिंह के द्वारा भी इस इलाके का दौरा किया गया और पीलीभीत में गुरु गोबिंद सिंह के नाम का एक गुरुद्वारा आज भी मौजूद है। सन् 1699 में गुरु गोबिंद सिंह द्वारा खालसा पंथ की सृजना की गई तो इसी इलाके में पड़ने वाले शहर हस्तीनापुर के पास एक गांव से भाई धर्म सिंह आए जोकि पहले खालसे बने और पाँच प्यारो में सुमार हुए। यह जाट समुदाय से संबंध रखते थे। इस बात से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस इलाके में सिक्ख विचारधारा का दब-दबा बन चुका था और सन् 1712 में जब यहां पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर आए तो कोई भी मुगल मनसबदार की हिम्मत नही थी कि वह उनका मुकाबला कर सकें। जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा बरेली में स्थापित मुगलो की मीन्ट (शाही सिक्के बनाने का कारखाना) लूट ली गई और कब्जा कर लिया। चार्लज जे रोडगर अपनी किताब में बताते है कि नजीबाबाद में नानक शाही सिक्के तैयार किए जाते थे। सन् 1765 में सिक्ख मिसलों द्वारा इस इलाके पर हमला कर दोबारा से रोहिल्ला अफगानो से अपने कब्जे में ले लिया। सिक्ख मिसलो के जत्थेदार बघेल सिंह, गुरदित्त सिंह और जस्सा सिंह रामगढ़िया ने बरेली के इलाके में अपना राज स्थापित किया।

जोन न. चार इस जोन का भौगोलिक क्षेत्र उतर दिशा में श्रीनगर (गढ़वाल) से लेकर चक्राता (देहरादून) हैं, पश्चिम दिशा में चक्राता से लेकर बागपत तक है, दक्षिण दिशा बागपत से लेकर मेरठ तक और पूर्व दिशा में मेरठ से लेकर बिजनौर, कौटद्वार व श्रीनगर तक है। इस जोन के उतर दिशा में शिवालिक और हिमालय की पहाडियां और पश्चिम दिशा में तराई और दुआब का क्षेत्र है, यहां से गंगा, यमुना जैसी नदियां बहती है और वन्सपती व वनजीवों के दृष्टिकोण से धनी क्षेत्र है।

25 जुलाई, 1710 को जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सहारनपुर की सरकार पर कब्जा कर लिया। यहां पर चार हजार का मनसबदार बैठता था और जोन न. चार में मुगल हुकुमत की प्रशासनिक इकाई थी। अली हमीद खान फौजदार सहारनपुर जरनैल बंदा सिंह बहादुर के हमले

---

415 *History of Sikhs by Hari Ram Gupta.

के बाद सहारनपुर छोडकर दिल्ली भाग गया उसके साथ कई छोटे मनसबदार दयोबन्द जलालाबाद इत्यादि भी अपनी जान बचाने के लिए दिल्ली भाग गए[416]। इस तरह सहारनपुर सरकार के नीचे आने वाले सभी परगना जैसे कि बेहट, अम्बैटा, नानोटा[417] इत्यादि जरनैल बंदा सिंह बहादुर के कब्जे में आ गए और यहां पर सिक्ख प्रशासनिक अधिकारी जरनैल बंदा सिंह बहादुर द्वारा नियुक्त किए गए । जैसे कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सहारनपुर को कब्जे में लिया तो बादशाह बहादुर शाह ने अलाहाबाद के सूबेदार खान बहादुर ऊमेद खान को सर्तक रहने का आदेश जारी किया और इस आदेश में साफ तौर से दर्शाया गया था कि सिक्ख फौज अलाहाबाद सूबे पर भी जल्द आक्रमण कर सकती है[418]। इस बात से यह साबित होता है कि 200 साल पुराना हिंदुस्तान पर मुगल राज जोकि दुनिया का सबसे ताकतवर राज माना गया है जरनैल बंदा सिंह बहादुर के आक्रमण के बाद तास के पत्तो की तरह ढहना शुरू हो गया। यह बात भी बिल्कुल स्पष्ट है कि जोन न. चार में सिक्ख फौज की तैयारी और किलाबंदी की तैयारी गुरु नानक साहिब के समय से आरंभ हो चुकी थी। सन् 1501 में गुरु नानक साहिब के द्वारा जोन न. चार का प्रचार दौरा किया और करनाल से चलकर गंगहौंह पहुंचे जहां पर गुरु नानक साहिब के द्वारा सूफी पीरो को स्थापित किया गया। इसके बाद गुरु नानक साहिब सहारनपुर से रूढकी, हरिद्वार पहुंचे। गुरुद्वारा नानकवारी, हरिद्वार गुरु नानक साहिब के आगमन में आज भी सुशोभित है। यहां पर गुरु साहिब कुम्भ के मेले के दौरान पहुंचे थे और यहां पर सन्यासी, बैरागी, जोगी, पडिंतो के साथ सच्चे परम पिता परमात्मा को लेकर संवाद हुआ। गुरु नानक साहिब के द्वारा एक कस्बा कनखल में बसाया गया और गुरुद्वारा ज्ञानगोद्धडी, कनखल में गुरु नानक साहिब के आगमन को लेकर सुशोभित है। इसके उपंरात गुरु साहिब देहरादून चक्राता इत्यादि भी गए और उसके बाद गुरु साहिब ऋषिकेश और टेहरी गढ़वाल गए और टेहरी गढ़वाल में गुरु साहिब के द्वारा एक धर्मशाल की स्थापना की गई। हरिद्वार से वापिस लौटते हुए गुरु नानक साहिब नजीबाबाद सडक के नजदीक एक गांव गैन्दीखाटा में तीन महीने तक रूके और यहां पर एक किले और बावड़ी का निर्माण किया। आज मौके पर किला मौजूद नही है परन्तु बावडी मौजूद है। इस जगह पर एक गुरुद्वारा साहिब भी सुशोभित है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर के द्वारा इस किले का प्रयोग हलीमी राज की स्थापना के लिए सन् 1710 में किया गया। इसके उपंरात गुरु नानक साहिब ने मुजफरनगर के क्षेत्र में प्रचार दौरे किए और यहां पर जाट समाज के लोगों ने भारी मात्रा में सिक्ख धर्म में प्रवेश किया। इस क्षेत्र में महमूदपुर नाम का गांव सिक्ख धर्म के प्रचार का मुख्य केन्द्र बना। इसके उपरांत गुरु साहिब नें मेरठ में भी प्रचार दौरे किए और इस शहर में मौजूद सूरजकुंड नामक तालाब का निर्माण गुरु नानक साहिब के द्वारा करवाया गया। हलीमी राज की स्थापना के

416 *Page no. 237, A comprehensive history of India: 1712-1772, Kallidaikurichi Aiyah, Nilakanta Sastri.

417 *नानोटा परगना अमीर शैयदो का शहर था जिस पर 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने अपना कब्जा स्थापित कर लिया।

418 *Land Mark in Sikh History:A fully researched, Page-21, M.L Aluwalia.

लिए बाबा फरीद, पीर बहलोल[419], भगत कबीर साहिब ने इस इलाके में कई गांव स्थापित किए और प्रचार दौरे भी किए। अलाउदीन साबीर कलीयार जोकि एक सूफी संत थे और बाबा फरीद के भतीजे थे और इन्होने हलीमी राज की स्थापना के लिए हरिद्वार, रूढकी में कार्य किया। इसके अलावा मुजफरनगर में सूफी संत गरीबशाह[420] ने गुरु नानक साहिब के मिशन को आगे बढाया। कराना में हजरत मकदुम साबीर ने गुरु नानक साहिब के मिशन पर मोर्चा संभाला। इसके अलावा वणजारों के द्वारा इस इलाके में कई टाडों की स्थापना की गई जैसे कि टांडा सकोली, टांडा जलालपुर, टांडा वणजारापुर, टांडा औरंगाबाद, टांडा वणजारा, टांडा देशराल, टांडा मानसिंह, टांडा मिसरी, टांडा फतेहपुर, टांडा मधाती, टांडा अमैटा, टांडा बसंत, टांडा नानकगढ़, टांडा मानकपुर और इन टांडो ने हलीमी राज की स्थापना के लिए अहम भूमिका निभाई।

सन् 1556 में तीसरे नानक गुरु अमरदास साहिब ने जोन न. चार का प्रचार दौरा किया और गुरु साहिब के साथ भाई जेठा जी (आगे चल कर चौथे गुरु रामदास साहिब) भी साथ इस प्रचार दौरे में यहां पहुंचे। गुरु साहिब ने जोन न. चार में स्थित सिक्ख प्रचार केन्द्रों और सिक्खों के द्वारा की जा रही किलाबंदी और मौर्चाबंदी का मुआना किया और हरिद्वार पहुंचे। जहां पर उन्होने सती प्रथा को बंद करवाया। गुरुद्वारा सतीघाट, कनखल तीसरे गुरु साहिब के आगमन की याद में सुशोभित है।

सन् 1634 में छेंवे गुरु हर गोबिंद साहिब के द्वारा भी इस क्षेत्र का दौरा किया गया और कई गांव में किलेबंदी की तैयारी की गई। पनीयाली कासिनपुर नाम का एक गांव है जोकि सहारनपुर दयोबन्द के बीच में है यहां पर गुरु हर गोबिंद साहिब के द्वारा एक किला निर्माण किया गया जोकि आज मौके पर मौजूद नही है। इसके अतिरिक्त गुरु साहिब द्वारा ऋषिकेश और देहरादून के इलाके का भी भ्रमण किया गया। सहारनपुर शहर में नवाबगंज करके एक जगह पर गुरु हर गोबिंद साहिब पहुंचे थे।

जोन न. तीन(क) इस जोन का भौगोलिक क्षेत्र उतर दिशा में शिमला, चक्राता से लेकर यमुनानगर, करनाल तक है और आगे करनाल-कुरूक्षेत्र, पटियाला से लेकर संगरूर तक और पूर्व दिशा में संगरूर से लेकर चण्डीगढ़ शिमला तक है। फारसी के स्त्रोत बताते है कि खालसा राज के किले शिमला की पहाडियों और देहरादून की पहाडियों में मौजूद थे। सन् 1710 से लेकर सन् 1717 तक सिक्ख फौज के द्वारा मुगल राज के विरूद्ध लडाई लडने के लिए इन किलों का प्रयोग किया गया। गुरु नानक साहिब के द्वारा भी इस इलाके का भ्रमण किया गया और गुरु नानक साहिब के नाम से कई गुरुद्ववारे इस क्षेत्र में सुशोभित है। इसी क्षेत्र के सामने पड़ने वाला मैदानी इलाके आज जिला यमुनानगर, अबांला, पंचकुला और चण्डीगढ़ में मौजूद है और इसी क्षेत्र में 52 किलों का निर्माण सिक्खो के द्वारा किया गया ताकि मुगल फौज से लडाई लडी जा सकें। इन 52

419 *पीर बलोल गुरू नानक साहिब के बगदाद दौरे के उपरांत हिदुस्तान पलायन कर गए और गुरू साहिब के मिशन के उपर कार्य आरंभ किया।

420 *पीर गरीबशाह भी गुरू नानक साहिब की पीछे बगदाद से चलकर हिदुस्तान आए और मुजफरनगर में गुरू नानक साहिब के मिशन को चलाया।

किलों की विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-28 में दी गई है। खालसा राज लौहगढ़ जोकि शिवालिक की पहाडियों, जिला यमुनानगर में स्थित है का विस्तारपूर्वक वर्णन अध्याय-1 और 2 में दिया गया है। सन् 1710 से लेकर 1716 तक इस क्षेत्र में खालसा फौज और मुगल फौज के बीच हुई लडाई का विवरण अध्याय-6, 11, 12 और 13 में दिया गया है।

जोन न. तीन(ख) इस जोन का भौगोलिक क्षेत्र दक्षिण दिशा में सिरसा से लेकर भिवानी तक और भिवानी, रोहतक, सोनीपत, करनाल तक और करनाल से लेकर संगरूर तक और संगरूर से लेकर सिरसा तक हैं। सन् 1709 में दक्षिण भारत से मध्य प्रदेश, राजस्थान के रास्ते चलते हुए जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने नारनौल, हरियाणा में प्रवेश किया और भिवानी, हिसार, रोहतक, जींद, कुरूक्षेत्र में अपना दबदबा बनाया। मुगल इतिहासकार, जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पहली बार वर्णन खंडाश्री खरखौदा से जोडकर करते है। जिला कैथल में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सरकारी खजाने को लूटा और कैथल क्षेत्र में अपना प्रशाक्षक नियुक्त किया। टोहाना के किला से जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मालवे के सिक्खो को पत्र लिखे कि मुगलो के खिलाफ युद्ध का आगाज हो चुका है और पूर्ण रूप से इस संदर्भ में तैयारी कर ली जाए। आज टोहाना किला मौजूद नही है परन्तु भाई लक्खी राज वणजांरा के द्वारा बनाई गई एक वावड़ी मौजूद है जोकि टोहाना की तहसील के पास स्थित है। इस क्षेत्र में हलीमी राज की स्थापना के लिए गुरु नानक साहिब ने सन् 1502 में कार्य आरंभ कर दिया था जिसके चलते हुए सिरसा से रोहतक क्षेत्र में गुरु नानक साहिब ने लगभग साढ़े चार महीने का समय व्यतीत किया और उसके उपरांत वह जीन्द, कैथल, कुरूक्षेत्र, करनाल, अंबाला, पंचकुला और यमुनानगर (यहां पर लौहगढ़ खालसा राजधानी स्थित है) क्षेत्र का भ्रमण किया, प्रचार केन्द्र स्थापित किए और युद्ध नीति के मद्देनजर रखते हुए किले निर्माण की जगह चिनहित की, आगे चलकर नौं गुरु साहिबानों ने इस क्षेत्र में कार्य किया जिसकी विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय-22 में दी गई है।

जोन न. दो इस जोन का भौगोलिक क्षेत्र दक्षिण दिशा में फिरोजपुर से लेकर सिरसा तक और पूर्व दिशा में सिरसा, संगरूर, पिंजौर और शिमला तक और उतर दिशा में शिमला, कुल्लू, धर्मशाला तक और पश्चिम दिशा में धर्मशाला, होशियारपुर, जालंधर, फिरोजपुर तक है। इस जोन के दक्षिण भाग को पंजाब का मालवा क्षेत्र भी बोला जाता है और इस क्षेत्र में गुरु नानक साहिब ने कई प्रचार केन्द्र स्थापित किए और आगे चलकर सभी सिक्ख गुरु साहिबान ने इस क्षेत्र में हलीमी राज की स्थापना के लिए कार्य किया। जिसके चलते हुए कई किलों का निर्माण इस क्षेत्र में करवाया गया। तख्त दमदमा साहिब भी इस क्षेत्र में मौजूद है। लक्खी जंगल भी इस क्षेत्र में मौजूद है जहां पर गुरु नानक साहिब और छेंवी पातशाही द्वारा हलीमी राज की स्थापना के लिए किलाबंदी की गई और आज यहां गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारा सुशोभित है।

सन् 1711 में फारसी स्त्रोतो में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का लक्खी जंगल के क्षेत्र में देखे जाने का वर्णन हुआ है और यह भी वर्णन हुआ है कि यही से ही जरनैल बंदा सिंह बहादुर राजपूत राजस्थानी राजाओं के साथ तालमेल स्थापित करने की योजना को अंजाम देते है। इस

जोन के जालंधर क्षेत्र का वर्णन फारसी स्त्रोतो में जरनैल बंदा बहादुर के सदर्भ में आता है कि जालंधर सरकार का फौजदार, जरनैल बंदा सिंह बहादुर के द्वारा मार गिराया गया और यहां के समस्त प्रगणाओं पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कब्जा हो गया। जालंधर के नजदीक करतारपुर का संबंध गुरु नानक साहिब व अन्य सिक्ख गुरु साहिबान के साथ भी आता है। होशियारपुर का क्षेत्र शिवालिक पहाडियों के नजदीक स्थित है और होशियापुर की पहाड़ियों में खालसा राज के कई किले स्थापित किए गए जिनके पुरातत्व अवशेष आज भी होशियारपुर की पहाडियों में स्थित है। रोपड़ क्षेत्र में हिमाचल की ओर गुरु नानक साहिब के द्वारा एक शहर बसाया गया जिसका नाम कीरतपुर है और सन् 1624 से लेकर सन् 1704 तक सिक्ख गुरु साहिबान इसी शहर से गुरु नानक साहिब के फलसफे का प्रचार दुनिया भर में कर रहे थे और हलीमी राज की स्थापना के लिए इन पहाडियों में कई किलों का निर्माण करवाया गया जिनका वर्णन इतिहासिक स्त्रोतों में देखा जा सकता है। इस क्षेत्र में कई वणजारों के टांडे आज भी मौजूद है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इस क्षेत्र में मुगलो की ईंट से ईंट बजा दी थी।

इस जोन के ऊतर क्षेत्र में हिमाचल पडता है और गुरु नानक साहिब के समय पर यह क्षेत्र कई छोटी-छोटी पहाडी रियासतो में बटा हुआ था और हिमाचल का मुख्य पहाडी राजा कागड़ा में किला बनाकर रहता था। गुरु नानक साहिब ने हिमाचल की सभी रियासतो का भ्रमण किया और लगभग सभी पहाडी राजे गुरु नानक साहिब के शिष्य बने। पूरे हिमाचल में वणजारों का दबदबा बना हुआ था और वणजारों ने कई जगह अपने टांडे स्थापित किए हुए थे। खासतौर पर कांगड़ा शहर के नजदीक कई टाड़े और सिक्ख किले आज भी मौजूद है। कांगड़ा के नजदीक मानगढ़ का किला सिक्खों की एक महत्वपूर्ण मौर्चाबंदी थी और कांगड़ा क्षेत्र में आज भी खालसा राज के कई किलों के अवशेष मौजूद है, जिन्हे लोग आज के समय में सिंग-के-सगाड़े कहते है।

गुरु हर गोबिंद साहिब, गुरु हर राय साहिब और गुरु गोबिंद सिंह ने इस क्षेत्र का कई बार भ्रमण किया और कई गुरुद्वारे उनकी भ्रमण की याद में सुशोभित है। वणजारों द्वारा पूरे हिमाचल प्रदेश में अपने किले स्थापित कर दिए गए और जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इन किलों का प्रयोग पंजाब में स्थित मुगल शासको पर आक्रमण करने के लिए खूब अच्छी तरह किया। जैसे कि पूर्व अध्यायो में दर्शाया गया है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ क्षेत्र से लाहौर के क्षेत्र में थियेटर आफ वार को बदलने में निपुण थे कारण यही था कि हिमाचल प्रदेश के रास्ते से चलकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ से लाहौर पर हमला करते और यह किले लाखो की सिक्ख फौज को राशन, हथियार, घौडे इत्यादि मुहिया करवाते थे। चम्बे के राजे गुरु नानक साहिब के समय से ही सिक्ख हो गए थे और सन् 1711 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का विवाह चम्बे की राजकुमारी बीबी सुशीला कौर से हुआ। इस कथन से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हिमाचल प्रदेश खालसा राज की पृष्ठ भूमि बन चुकी थी और फारसी के कई स्त्रोत इस बात का जिर्क करते है कि हिमाचल में वणजारें जरनैल बंदा सिंह बहादुर को रसद और हथियार मुहिया करवा रहे है जिसके चलते हुए मुगल बादशाह ने इन पहाडी राजाओं को कई आदेश पारित किए कि इन वणजारें

सिक्खो को ऐसे करने से रोका जाए। हिमाचल के पहाड़ और पंजाब का मैदानी क्षेत्र के भौगोलिक तालमेल को सिक्ख फौज के द्वारा बहुत अच्छे से इस्तेमाल किया और मुगल राज जोकि दुनिया का सबसे शक्तिशाली और अमीर राज था, उसकी जड़ें भारतवर्ष की धरती से उखाड फेंकी।

जोन न. एक इस जोन का भौगोलिक क्षेत्र उतर दिशा में/पहाडी क्षेत्र में धर्मशाला, चम्बा से लेकर जम्मू तक और पश्चिम दिशा में जम्मू से लेकर ननकाना साहिब तक और दक्षिण दिशा में ननकाना साहिब से लेकर फिरोजपुर तक और पूर्व दिशा में फिरोजपुर, जालंधर, होशियारपुर, कांगडा धर्मशाला तक है। इस क्षेत्र में मुख्य तौर पर जम्मू, लाहौर, गुरदासपुर, अमृतसर और ननकाना साहिब का इलाका आता है। गुरु नानक साहिब का प्रकाश ननकाना साहिब में हुआ और यह इलाका हमेशा से ही सिक्ख धर्म का केन्द्र बिन्दु रहा। गुरु नानक साहिब से लेकर अगले सिक्ख गुरु साहिबान सभी ने इस इलाके में ना केवल सिक्ख विचारधारा का प्रचार किया ब्लकि हलीमी राज की स्थापना के लिए पूर्ण रूप से कार्य किया। कादरी और चिस्ती सूफी संतो का हलीमी राज की स्थापना में प्रमुख योगदान था और जिसमें से प्रमुख योगदान साई मिंया मीर जैसे सूफी संतो ने निभाया।

गुरु नानक साहिब के समय से ही इस क्षेत्र में हलीमी राज के किलों का निर्माण किया जा चुका था। इसका सबसे बडा उदाहरण गुरदास नंगल का किला जोकि गुरु नानक साहिब के सिक्ख दुनीचंद करोडिया ने गुरु नानक साहिब के आदेश पर तैयार करवाया था और इसी किले पर मुगल फौज ने 09 महीने की घेराबंदी कर जरनैल बंदा सिंह बहादुर को गिरफ्तार किया था। यह किला इतना मजबूत था कि इस किले को तोडने के लिए कोसीखो तोप का इस्तेमाल मुगलों द्वारा किया गया था जोकि 40 मन बारूद एक साथ दागने में सक्षम थी, परन्तु वह तोप भी इस किले को ना भेद पाई। विडंबना की बात यह है कि इतिहासकारों ने इस किले को गुरदास नंगल की कच्ची गडी लिखा है।

गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान भक्त नामदेव जी की वाणी है और भक्त नामदेव जी महाराष्ट्र के रहने वाले थे और गुरु नानक साहिब के आग्रह पर उन्होने अपना प्रचार केन्द्र गुरदासपुर व जोन न.-05 को बनाया ताकि हलीमी राज की स्थापना इस इलाके में की जा सकें। इस अध्याय में अभी काफी शौध की आवश्यकता है ताकि जो वाक्य गुरु नानक साहिब से लेकर जरनैल बंदा सिंह बहादुर तक इस साढे पाँच सौ किलोंमीटर के क्षेत्र में घटे उनका वर्णन विस्तारपूर्वक तरीके से किया जा सकें और यह बात इसलिए अनिवार्य है कि सिक्ख इतिहास और सिक्ख फलसफा बिना इस अध्याय को समझे और जाने पूर्ण रूप से अधूरा है।

अध्याय 28

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कालक्रम

05 अक्तूबर, 1708	जरनैल बंदा सिंह बहादुर नांदेड़ से पंजाब के लिए भाई भगवंत सिंह बंगेशरी के टांडा के साथ रवाना हुए।
अक्तूबर, 1709	जरनैल बंदा सिंह बहादुर 1500 किलोंमीटर से अधिक की दूरी तय कर ख़ान देश, मंदसौर, अजमेर, फुलेरा, चूरू, भरतपुर से होते हुए बांगर देश पहुंचे।
नवंबर, 1709	कैथल के शाही खजाने पर कब्ज़ा किया। स्योंसर (पिहोवा) के जंगल में सिक्ख सेना एकत्र हुई।
26 नवंबर, 1709	एक दिन से भी कम समय में 10000 मुग़ल फौज को मारकर, समाना को जीत कर और भाई फतेह सिंह को गवर्नर नियुक्त किया।
दिसंबर 1709	घड़ाम, सनौर, थानेसर, दामला, शाहाबाद पश्चात, मुस्तफाबाद, कुंजपुरा और कपूरी पर कब्ज़ा किया। थानेसर में 5000 मुसलमान, जरनैल बंदा सिंह बहादुर की सेना में शामिल हुए।
27 दिसंबर, 1709	सढ़ौरा का कोतवाल उस्मान ख़ान मारा गया और सढ़ौरा को जीत कर इसका नाम अजायबनगर रख दिया। खिजराबाद का परगना निर्विरोध सिक्ख राज लोहगढ़ का हिस्सा बन गया।
जनवरी 1710	लोहगढ़ को सिक्ख राज्य की राजधानी घोषित किया। बंदा सिंह बहादुर ने गुरु नानक-गुरु गोबिंद सिंह के नाम पर सिक्के जारी किए। अगले चार माह लोहगढ़ में रहकर बड़े युद्ध की तैयारी की।
12 मई, 1710	चप्पड़चिड़ी की लड़ाई में सिक्ख फ़ौज ने जीत हासिल की और सरहिंद वज़ीर ख़ान के फ़ौजदार मारे गए। काफी ख़ान की रिपोर्ट अनुसार 40000 अधिक सिक्ख सैनिक थे, जिनके पास बंदूकें, तोपें और अन्य

आधुनिक हथियार थे और हज़ारों की तादात में मुग़ल सैनिक मारे गए।

13 मई, 1710 — मुग़ल साम्राज्य के सबसे अमीर प्रांत सरहिंद पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने कब्ज़ा कर लिया। वज़ीर ख़ान सरहिंद सरकार का फ़ौजदार था। वह तीन हज़ारी मुग़ल मनसबदार था।

20 मई, 1710 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर की रिपोर्ट दक्षिण में बादशाह बहादुर शाह को सौंपी गई, जोकि उस समय आंध्र प्रदेश में था।

जुलाई 1710 — सरहिंद के सभी 33 परगना और जालंधर-दोआब के कुछ परगनों पर कब्ज़ा करने के पश्चात लोहगढ़ लौटे।

11 जुलाई, 1710 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने परगना खिजराबाद की कोतवाली बुड़िया को कब्ज़े में लिया और इसे गुलाब नगर का नाम दिया।

23 जुलाई, 1710 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पानीपत पर कब्ज़ा कर लिया और पानीपत के हाकम और सूफी संतों ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर का स्वागत किया। हालांकि सिक्ख फ़ौजों का दबदबा पानीपत में जून, 1710 में ही स्थापित हो चुका था।

25 जुलाई, 1710 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सहारनपुर सरकार जिसके पास (4000 की मनसबदारी) थी के सभी परगनों पर कब्ज़ा कर लिया।

जुलाई 1710 — लाहौर के क़ाज़ियों ने सिक्खों के विरूद्ध जिहाद की घोषणा की। लाहौर के सूफी संतों (चिश्ती और कादरी) ने सिक्खों के विरूद्ध जिहाद का विरोध किया। इसके अतिरिक्त फिरोज खान मेवाती को दिल्ली से बड़ी फ़ौज लेकर सिक्खों के विरूद्ध कार्यवाही करने के आदेश जारी किए गए।

03 अगस्त, 1710 — 28 जुलाई, 1710 को बादशाह द्वारा अपने 3 मुग़ल जरनैलों सुल्तान कुली ख़ान, सैययद अब्दुला ख़ान और महावत ख़ान को हुक्म जारी किया गया कि वह सिक्ख विद्रोह को कुचल दें। इस हुक्म के चलते हुए ये तीनों जरनैल दिल्ली से मुग़लों की भारी फ़ौज लेकर पानीपत पहुंचे, जहां पर

सिक्ख फ़ौज और मुग़ल फ़ौज के बीच घमासान युद्ध हुआ। युद्ध कई दिनों तक चलता रहा और मुग़ल जरनैल मैदाने-ए-जंग छोड़कर दिल्ली भाग गए।

अगस्त 1710 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मुजफ्फरनगर पर कब्ज़ा कर लिया। (2000 की एक मनसबदारी)।

29 अगस्त, 1710 — बादशाह ने हुक्म दिया कि सभी हिन्दु अपनी दाड़ी और सिर के केश मुंढवा लें ताकि सिक्खों की पहचान की जा सके।

29 सितंबर, 1710 — ख़ान ख़ाना मुनायम ख़ान का पुत्र महावत ख़ान बड़ी फ़ौज के साथ दिल्ली से आया और उसने फिर से पानीपत में सिक्ख फ़ौज के साथ जंग की और जंग के दौरान डर के मारे वापिस भाग गया।

अक्तूबर 1710 — बादशाह बहादुर शाह दक्षिण से दिल्ली पहुंचा और 4 राजकुमारों के साथ 32 मनसबदार और 2 लाख मुग़ल सैनिकों के साथ लोहगढ़ पर हमला करने के लिए रवानगी की।

16 अक्तूबर, 1710 — खेड़ा अमीन में मुग़ल फ़ौज और सिक्ख फ़ौज के बीच में भारी जंग हुई और जरनैल किरत सिंह शहीद हुए।

20 अक्तूबर, 1710 — बादशाह अपनी शाही फ़ौज के साथ संराय कंवर पहुंचा।

23 अक्तूबर, 1710 — बादशाह अपनी शाही फ़ौज के साथ सोनीपत पहुंचा।

23 अक्तूबर, 1710 — बादशाह अपनी शाही फ़ौज के साथ समालखा पहुंचा।

24 अक्तूबर, 1710 — बादशाह अपनी शाही फ़ौज के साथ पानीपत पहुंचा। यहां से शाही फ़ौज और सिक्ख फ़ौज के साथ लड़ाई आरंभ हो जाती है परन्तु सिक्ख फ़ौज भारी फ़ौज के सामने तीन दिन रूकावट पैदा कर पीछे हटती है।

28 अक्तूबर, 1710 — बादशाह अपनी शाही फ़ौज के साथ घरौड़ा पहुंचा।

30 अक्तूबर, 1710 बादशाह अपनी शाही फ़ौज के साथ करनाल पहुंचा। यहां से बादशाह इन्द्री का रास्ता लेते हुए लोहगढ़ जाने की कोशिश करता है। परन्तु पहले दिन ही इस रास्ते पर 20 हज़ार से ज़्यादा मुग़ल सैनिक मार गिराए जाते हैं और बादशाह वापिस करनाल आ जाता है।

02 नवंबर, 1710 बादशाह शाही फ़ौज लेकर तरावड़ी, नीलोखेड़ी पहुंचता है। जहां पर सिक्ख फ़ौज और मुग़ल फ़ौज के बीच घमासान युद्ध होता है।

14 नवंबर, 1710 मुग़ल फ़ौज ने उगाला गांव में शााहबाद के पास डेरा जमाया। करनाल से पंचकूला, चंडीगढ़, ख़ालसा राज के केंद्र से सिक्खों और मुग़लों के बीच लड़ाई शुरू हुई। लोहगढ़ के 52 अग्रिम किलों ने इस युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सिक्ख सेनाओं ने एक साथ जालंधर दोआब से बरेली (550 कि.मी. लंबाई) तक हमला किया।

18 नवंबर, 1710 बादशाह बहादुर शाह के पास सिक्खों द्वारा बनाए गए किलेबंदी के संदर्भ में कोई सुराग नहीं था। बादशाह सिक्ख किलेबंदी का नक्शा बनाने का आदेश देता है ताकि युद्ध की रणनीति बनाई जा सके।

20 नवंबर, 1710 राहोन (जम्मू क्षेत्र) की लड़ाई सिक्ख सेना और मुग़लों के बीच हुई। जालंधर के फ़ौजदार शम्स ख़ान और जम्मू के गवर्नर वाजीद ख़ान ने सिक्ख सेना पर हमला किया। सिक्खों ने इस लड़ाई में मुग़लों को हराया और राहोन पर कब्ज़ा कर लिया।

12 दिसंबर, 1710 कीरतपुर में बंदा सिंह बहादुर और उन्होंने भारतीय उप-महाद्वीप में सिक्ख संगतों को पत्र लिखा कि वे मुग़लों के विरूद्ध लड़ने के लिए विभिन्न सिक्ख गढ़ीयों में इकट्ठा हो।

26 दिसंबर, 1710 नाहन के राजा भूप प्रकाश (14 वर्ष) को मुग़लों ने गिरफ्तार कर लोहे के पिंजरे में बंद करके सलीमगढ़ किले (फोर्ट) दिल्ली में कैद कर दिया गया।

जनवरी 1711 चंबा के राजा की बेटी सुशील कौर से विवाह। बादशाह मुग़ल सेना के

साथ अभी भी शाहबाद के निकट उगाला गांव में था और अधिकतम मुग़ल सेना शाहबाद और सढ़ौरा के बीच बराड़ा में पहुंच गई थी। बादशाह को जरनैल बंदा सिंह बहादुर के लोहगढ़ छोड़ने और चंबा में शादी करने की कोई ख़बर नहीं थी।

04 फरवरी, 1711 — सहारनपुर और बुड़िया के लिए स्थापित बादशाह ख़ानखाना, मुनीयम ख़ान ने 8000 घुड़सवार और पैदल सैनिकों द्वारा समर्थित जरनैल बंदा सिंह बहादुर अभी भी पहाड़ी में थे। स्थिति अच्छी तरह से एक लड़ाई देने के लिए तैयार थी लेकिन भारी बर्फ के कारण मार्ग अवरुद्ध और पहाड़ी राजा बंदा सिंह को अपील करने का साहस नहीं कर पाए। बादशाह का आंदोलन निश्चित नहीं था लेकिन एक अफवाह थी कि वह लुधियाना के रास्ते गुरु का चक्क (अमृतसर) जाएगा।

01 मार्च, 1711 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने सहारनपुर को फिर से हासिल किया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर का भय इतना फैला हुआ था कि मुग़ल अधिकारी शहरों से बाहर नहीं जाते थे।

06 मार्च, 1711 — रुस्तम दिल ख़ान ने हामिद ख़ान की सहायता की और इस्फदियार ख़ान को जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पीछा करने के लिए प्रतिनियुक्त किया गया था, जो कुल्लू की पहाड़ियों में दिखाई दिए थे। यह कहा जाता है कि उसकी कमान में 40000 सैनिकों की सेना थी। लाहौर की दिशा में सिक्ख विद्रोह का प्रभाव बहुत गंभीर था। सहारनपुर से कुल्लू तक कुल दूरी 300 किलोंमीटर है। यह दूरी सिक्ख सेनाओं द्वारा 5 दिनों के भीतर तय की गई थी। इसलिए पहाड़ियों में सिक्ख सेना प्रति दिन 60 किलोंमीटर की यात्रा तय कर रही थी। दूसरी ओर मुग़ल सेना तेजी के साथ प्रति दिन 20 किलोंमीटर यात्रा तय कर रही थी। पहाड़ियों में सिक्ख किले, सिक्ख सैनिकों को भोजन, हथियार और सुरक्षा प्रदान कर रहे थे। रुस्तम दिल ख़ान को बंदा बहादुर का पहाड़ियों में पीछा करने के लिए भेजा गया। लेकिन वह सिक्ख सैनिकों की गति से बराबरी नहीं कर सकता था। 14000 सैनिकों के साथ सिक्ख सेना का पीछा करने के लिए महताब ख़ान को भी भेजा गया था। इसी बीच जम्मू और जालंधर के फ़ौजदार भी 20000 सेना के साथ जम्मू के निकट बंदा सिंह की तलाश में थे।

07 मार्च, 1711	मुग़ल दरबार में राजनीति का उल्लेख किया गया है। राजकुमारों के बीच असंतोष था। सिक्खों ने लाहौर के बाहरी इलाके में पूरी तरह से अपना सिक्का स्थापित किया। जिसके परिणाम स्वरूप शहर का बाहरी बाज़ार शहर के अंदर चला गया।
17 मार्च, 1711	बादशाह ने जहांदर शाह को आदेश दिया कि वह फ़ौज लेकर लाहौर पहुंचे। सिक्ख फ़ौज की बढ़ती हुई ताकत को रोके।
20 मार्च, 1711	बंदा सिंह बहादुर और जालंधर व जम्मू के फ़ौजदार के बीच लड़ाई हुई। जहां जम्मू की पहाड़ियों के पास दोनों फ़ौजदार मारे गए। इसके अतिरिक्त सिक्ख फ़ौजों ने बटाला शहर को जीत लिया और सभी मुग़ल सैनिक बटाले के अन्दर मार दिए गये और बचे हुए बटाला शहर छोड़कर भाग गए।
21 मार्च, 1711	मुग़ल बादशाह बहादुर शाह ने आदेश पारित किये कि महाराजा अजीत सिंह (जौधपुर) और महाराजा जय सिंह (जयपुर) शाहज़ादा अज़ीमूदीन की फ़ौज में जल्द से जल्द शाामिल हों ताकि जरनैल बंदा सिंह बहादुर की बढ़ती हुई ताकत को रोका जा सके।
03 अप्रैल, 1711	जरनैल बंदा सिंह बहादुर को बंदी बनाने से रोकने के लिए बादशाह ने लाहौर जाने की योजना बनाई।
18 अप्रैल, 1711	एक जांच के जवाब में यह बताया गया कि नाहन के राजा को सलीमगढ़ (दिल्ली) की जेल में डाल दिया गया है। बादशााह छत-बनूड़ में पहुंचा, सतलुज पर पुल तैयार हो रहा था। वहां के वणजारा समुदाय ने सिक्खों की मदद की।
23 अप्रैल, 1711	बादशाह रोपड़ पहुंचता है।
24 अप्रैल, 1711	जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बटाला और कलानौर पर कब्ज़ा कर लिया।
09 मई, 1711	यह कहा गया कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने कलानौर में स्वयं को स्थापित किया है। हिंदू और मुसलमान उसकी सेनाओं में शामिल हो गए।

सम्राट ने सतलुज नदी को पार किया और कलानौर की ओर बढ़े। राजा मोहकम चंद के साथ मोहम्मद अमीन ख़ान को सिक्खों के विरूद्ध अभियान सौंपा गया।

09 मई, 1711 लक्खी जंगल में जरनैल बंदा सिंह बहादुर, दिल्ली और अजमेर पर हमला करने की योजना

20 मई, 1711 जरनैल बंदा सिंह बहादुर का बटाला पहुंचना।

25 मई, 1711 कमांऊ के राजा जगत सिंह ने बादशाह को 25 सिक्खों का कत्लेआम कर पेश किया और भारी इनाम लिया।

28 मई, 1711 मुग़ल जरनैल हमीद ख़ान और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के बीच कलानौर में युद्ध हुआ और ज्यादातर मुग़ल फ़ौज मारी गई।

30 मई, 1711 सिक्खों और मुग़लों के बीच पासी की लड़ाई।

07 जून, 1711 वजीराबाद में सिक्ख और मुग़लों के बीच लड़ाई।

09 जून, 1711 बादशाहपुर में 2000 सैनिकों की भर्ती।

10 जून, 1711 सिक्खों के लोहगढ़ जोन में इकट्ठा होने की ख़बर बादशाह तक पहुंची।

13 जून, 1711 बादशाह को भेजी एक रिपोर्ट के अनुसार खड़ग सिंह और अन्य सिक्खों को पकड़ लिया गया। उनके पास से राजपूत सरदारों को लिखे गए जरनैल बंदा सिंह बहादुर का एक पत्र बरामद हुआ। कहा जाता है कि जरनैल बंदा सिंह बहादुर अजमेर पहुंचने के मकसद से लक्खी जंगल की ओर गए थे।

16 जून, 1711 बादशाह की सिक्खों तक पहुंचने की ख़बरें लोहगढ़ में पहुंचनी शुरू हो गई।

22 जून, 1711 मुग़ल बादशाह राजस्थानी राजाओं के व्यवहार से नाखुश था क्योंकि यह

राजे जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध युद्ध करने के लिए देरी कर रहे थे। दिन-प्रतिदिन बादशाह का प्रताप कम हो रहा था। इस दौरान जरनैल बंदा सिंह बहादुर के बरेली में होने की ख़बर मुग़ल बादशाह को दी गई।

02 जुलाई, 1711 — बादशाह ने टिप्पणी की कि दो मुठभेड़ हुई थी, लेकिन मुग़ल सेना जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ने में विफल रही। कोई मुग़ल रईस सिक्खों के विरूद्ध शत्रुता करने का साहस नहीं करता। सिक्खों से लड़ने की रणनीति थी कि मुग़ल सेना का एक स्तंभ ब्यास नदी के पूर्व की ओर और दूसरा शिवालिक की पैदल पहाड़ियों में तैनात किया जाए। बादशाह ने राजपूत सरदारों को आदेश दिया कि वे सतलुज नदी की बाईं ओर किनारे पर स्थित हों और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के मामले में वह वहां उपस्थित रहें।

11 जुलाई, 1711 — बादशाह का काहनूंवान और कलानौर पहुंचना और मुग़ल जरनैलों के साथ सिक्ख मामलों पर चर्चा करनी।

15 जुलाई, 1711 — राजस्थान के राजाओं ने कुरुक्षेत्र में रहने की सलाह दी। चूंकि लोहगढ़ (क्षेत्र) ज़ोन में आगे बढ़ना बहुत खतरनाक हो सकता था।

17 जुलाई, 1711 — जरनैल बंदा सिंह बहादुर की योजनाओं का मुकाबला करने के लिए बादशाह ने अजमेर जाने की योजना बनाई।

30 जुलाई, 1711 — राजपूत प्रमुखों को आदेश दिया गया कि वे मुग़ल दरबार में पेश न होकर जल्दी से आगे बढ़ें और सढ़ौरा में स्थिति कायम करें।

22 अगस्त, 1711 — राजाओं को जागीर के संबंध में शाही आदेश के मुद्दे पर परामर्श के लिए भेजा। बादशाह लाहौर में कुछ महीनों तक रहेंगे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर सढ़ौरा और लोहगढ़ की ओर बढ़ गए हैं।

26 अगस्त, 1711 — मुग़ल जरनैल रुस्तम दिल ख़ान और मुनीर ख़ान को सलाखों के पीछे डाल दिया गया। क्योंकि वे जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ने में विफल रहे थे।

26 अगस्त, 1711 मुग़ल सेनाओं में अनाज और हथियारों की भारी कमी।

30 अगस्त, 1711 वकील ने राजा जय सिंह को सलाह दी कि वे मुग़ल सेना को उत्साह के साथ प्रस्तुत करने के लिए राजा अजीत सिंह से परामर्श लें। बादशाह ने राजा को सढ़ौरा में जरनैल बंदा सिंह बहादुर के साथ सामना करने उसे तलब करने और शाही पक्ष अर्जित करने का आदेश दिया।

11 अक्तूबर, 1711 अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला के अनुसार, मुग़लों द्वारा 40 वणजारे सिक्खों को मुल्तान से गिरफ्तार किया गया और उन्हें दिल्ली लाया गया। दिल्ली में इन वणजारे सिक्खों को इस्लाम अपनाने के लिए कहा गया और उन्होंने इंकार कर दिया। इन 40 वणजारे सिक्खों को जिंदा जलाकर शहीद कर दिया गया।

20 अक्तूबर, 1711 मुग़लों और सिक्खों के बीच लाहौर की लड़ाई हुई। जिन सिक्ख जरनैलों ने शहादत प्राप्त की थी भाई सहज सिंह, दोदर सिंह, हीरा सिंह, दियाल सिंह, भाई केसो सिंह, रेसा सिंह, नरपश्चात सिंह, तारा सिंह, जेठा सिंह चौहान, जेठा सिंह परमार थे।

अक्तूबर/नवंबर,1711 अगले 2 महीनों तक राजाओं ने सढ़ौरा के पास आने का साहस नहीं किया और बादशाह से अधिक जागीरें मांगते रहे।

07 दिसंबर, 1711 महाबत ख़ान ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ने के लिए राजा को सढ़ौरा में कुछ और दिन रहने के लिए कहा था। हालांकि राजे वापिस लौट गए।

28 दिसंबर, 1711 सिक्खों और मुग़लों के बीच बिलासपुर की लड़ाई। भाई केसो सिंह, भाई भाग सिंह वणजारा सिक्ख जरनैलों ने शहादत प्राप्त की।

30 दिसंबर, 1711 गुरु का चक्क, अजीत सिंह पालित को दिया गया था और बहुत सारा पैसा भी दिया गया था। मुग़लों ने इस गद्दार का इस्तेमाल जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध किया। उन्होंने सिक्खों को गुमराह किया कि वे जरनैल बंदा सिंह बहादुर का समर्थन न करें।

जनवरी 1712	जरनैल बंदा सिंह बहादुर के पुत्र अजे सिंह का जन्म लोहगढ़ में हुआ था।
15 जनवरी, 1712	जरनैल बंदा सिंह बहादुर बिलासपुर में थे। छोटी लड़ाई मुग़लों और सिक्खों की हुई। बहादुर शाह के उस समय के सभी अटकलें विफल हो गई थी। करोड़ों रुपये खर्च करने के पश्चात भी मुग़ल सिक्खों का सफाया करने में विफल रहे। अब सिक्खों को कुचलना बादशाह के लिए जीवन और मृत्यु का प्रश्न था। बहादुर शाह गहरे सदमें में आ गए। वह सिक्खों को कुत्ते और गधे कहता हैं। उन्होंने लाहौर में सभी कुत्तों और गधों को मारने का आदेश दिया, मुग़लों के अधिकारियों ने उन आदेशों को ग़लत समझा परिणाम स्वरूप लाहौर में सभी कुत्तों और गधों की हत्या कर दी गई।
28 फरवरी, 1712	बहादुर शाह का लाहौर में निधन। 67 दिनों के पश्चात उनका शरीर दिल्ली पहुंचा और कुतुब मीनार के पास दफनाया गया।
03 मार्च, 1712	नदी रावी के तट पर जहांदार शाह और आजमशाह की सेनाओं के बीच बादशाही तख्त के लिए लड़ाई। इस लड़ाई में जहांदार शाह के सभी चार बेटे मारे गए थे।
23 अप्रैल, 1712	लोहगढ़ में सिक्खों को वश में करने के लिए मोहम्मद अमीर ख़ान को नियुक्त किया गया।
05 मई, 1712	जरनैल बंदा सिंह बहादुर लोहगढ़ किले में थे और सिक्खों ने थाने स्थापित किए हुए थे। मोहम्मद अमीन ख़ान ने लोहगढ़ पर हमला करने का साहस नहीं किया।
20 मई, 1712	बादशाह जहांदार शाह ने दिल्ली के लिए लाहौर छोड़ा। लोहगढ़ से लाहौर तक सिक्ख सेना के आंदोलन अभी भी मुग़लों द्वारा अनियंत्रित रहे।
जून से सितंबर 1712	अगले 4 महीने लोहगढ़ व सढ़ौरा के पास सिक्खों और मुग़लों के बीच लड़ाई जारी रही।
अक्तूबर 1712	सिक्खों ने जालंधर दोआब से बरेली तक अधिकार कर लिया।

दिसंबर 1712	उत्तराधिकारी के लिए फरुखसियर द्वारा बादशाह जहांदार शाह की हत्या कर दी गई।
जनवरी/फरवरी 1713	अगले 2 महीनों के लिए फरुखसियर अपने प्रशासन को स्थापित करने में व्यस्त रहा और सिक्ख सैनिकों का आंदोलन अनियंत्रित रहा।
मार्च 1713	नाहन के राजा भूप प्रकाश को मुगलों का सहयोग करने की शर्त पर छोड़ा गया।
अप्रैल 1713	मोहम्मद अमीन ख़ान और अब्दुस समद ख़ान ने लोहगढ़ के पास स्थिति संभाली। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मुग़ल सेना को कड़ी टक्कर देने के लिए किले के अंदर प्रवेश किया।
जून 1713	बड़ी मुग़ल सेनाएं अब्दुस समद ख़ान और जईम-उद-दीन अहमद ख़ान के नेतृत्व में लोहगढ़ (क्षेत्र) जोन के पास पहुंची। मुग़लों की सेना की गिनती 1 लाख से अधिक थी और मुग़लों और सिक्खों के बीच फिर से लड़ाई शुरू हो गई। अगले 3 महीनों तक लड़ाई जारी रही परंतु मुग़लों को कोई बड़ी उपलब्धि नहीं मिली।
अगस्त 1713	कश्मीर में सिक्ख और मुग़लों के बीच लड़ाई।
06 अगस्त, 1713	मुग़लों के भारी युद्ध की रणनीति के विरूद्ध सिक्ख संघर्ष कर रहे थे और लोहगढ़ की बड़ी किलेबंदी के तहत मुग़लों के लिए घुसपैठ करना असंभव था।
27-29 अगस्त, 1713	अब्दुस समद ख़ान एक कायर था। रईसों में कोई एकता नहीं थी। मुग़लों की सेनाओं ने लोहगढ़ की ओर बढ़ने का प्रयास किया, लेकिन भारी जनहानि हुई।
दिसंबर 1713	युद्ध की रणनीति के रूप में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने फिर से लोहगढ़ किले को छोड़ दिया और पहाड़ी मार्ग से जालंधर दोआब तक पहुंच गए। मुग़लों को जरनैल बंदा सिंह बहादुर का कोई समाचार नहीं था।
फरवरी 1714	जरनैल बंदा सिंह बहादुर का पीछा करते हुए, अब्दुस समद ख़ान लाहौर

	पहुंचे।
28 फरवरी, 1714	बटाला और कलानौर की स्थिति से पता चलता है कि सिक्ख लाहौर पर कब्ज़ा करने में असमर्थ थे।
अप्रैल 1714	सिक्ख बलों के साथ पिंजौर में जरनैल बंदा सिंह बहादुर मौजूद थे।
अगस्त 1714	जरनैल बंदा सिंह बहादुर बरेली और मुरादाबाद में थे। कमांऊ के बाज बहादुर चंद राजा और सिक्ख सेना के बीच लड़ाई हुई।
सितंबर 1714	जरनैल बंदा सिंह बहादुर पंजाब के मैदानों में लौट आए।
दिसंबर 1714	पहाड़ी राजे जरनैल बंदा सिंह बहादुर के सहयोगी थे परन्तु मुग़ल पहाड़ी राजाओं को जरनैल बंदा सिंह बहादुर के विरूद्ध उकसाने में सफल रहे
दिसंबर 1714	जरनैल बंदा सिंह बहादुर बवाना (पिंजौर) और लखत गांव पहुंचे। इसके उपरांत उन्होंने जम्मू के पास टांडा ढोला का भ्रमण किया।
फरवरी 1715	जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बटाला और कलानौर पर कब्ज़ा कर लिया।
फरवरी 1715	जरनैल बंदा सिंह बहादुर सुकेत और मंडी में दिखाई दिए और बिलासपुर के राजा और जरनैल बंदा सिंह बहादुर के बीच लड़ाई हुई।
20 फरवरी, 1715	जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बटाला पर हमला किया और रायपुर ने फ़ौजदार सोहाब ख़ान की हत्या कर दी।
10 मार्च, 1715	गुरदासपुर क्षेत्र में भारी शाही सेना को स्थानांतरित करने का आदेश दिया। जरनैल बंदा सिंह बहादुर को पकड़ने के लिए 1 लाख से अधिक के 100 मनसबदारों और मुग़लों की बड़ी सेना को तैनात किया गया था।
19 मार्च, 1715	जरनैल बंदा सिंह बहादुर कोट मिर्जा जान से गुरदास नंगल के गढ़ी में स्थानांतरित हो गए।
अप्रैल 1715	मुग़लों ने गुरदास नंगल के किले को घेर लिया।

मई 1715	कोहशिकन तोप को गुरदास नंगल के किले को ध्वस्त करने के लिए लाया गया था। खाइयां खोदी गईं, पानी छोड़ा गया, जंगल साफ किए गए। लेकिन मुग़लों ने गुरदास नंगल किले के पास जाने का साहस नहीं किया।
जून 1715	कांगड़ा और नूरपुर के राजाओं और पहाड़ी इलाकों में वणजारों के अवरोध मार्ग के लिए कुछ अन्य पहाड़ियों के राजाओं को शाही आदेश दिया गया था ताकि सिक्ख सैनिकों को खाद्य व अन्य सामान की आपूर्ति बंद की जा सके।
13 जुलाई, 1715	श्रीनगर गढ़वाल के सिक्ख और राजा की संयुक्त सेना ने मुरादाबाद और बरेली में मुग़लों पर हमला किया।
16 अगस्त, 1715	सिक्खों के विरूद्ध मदद की जगह मुग़ल बादशाह द्वारा अजीत सिंह पालित को खिल्लत दी गई थी।
सितंबर 1715	मुग़लों द्वारा वणजारों का मूल्यवान माल व 4 लाख रूपये लूटे गए।
07 दिसंबर, 1715	एक सप्ताह तक कोई आवाज न सुनकर मुग़लों के सैनिकों ने गुरदास नंगल के किले में घुसने की कोशिश की और उन्हें भूख से लाचार कमजोर सिक्ख मिले। जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उनके साथियों को गिरफ्तार कर लिया गया।
27 फरवरी, 1716	जरनैल बंदा सिंह बहादुर और सिक्खों को दिल्ली लाया गया और सलीमगढ़ किले में कैद कर दिया गया।
05 मार्च, 1716	740 सिक्ख कैदियों की शहादत शुरू।
09 जून, 1716	जरनैल बंदा सिंह बहादुर अपने बेटे अजय सिंह (जो चार वर्ष से अधिक आयु के थे) के साथ शहीद हुए थे।

अंतिका

जरनैल बंदा सिंह और सिक्ख फ़ौजों के विरूद्ध लड़ने वाले -

3 मुसलमान बादशाह,
5 शहज़ादे,
30 हिंदू राजे और जरनैल,
120 वरिष्ठ मुसलमान जरनैल, फ़ौजदार और सूबेदार और जिहादी।

बादशाह : बहादुर शाह, जहांदार शाह, फरख्खसियर
शहजादे : रफी-उश-शान, अजीमुश्शान, रफी-उश-सान, जहानशाह, खुजिशता अख्तर।
हिंदू राजे और जरनैल: सुच्चा नंद, राजा चेत सिंह व राजा ज्ञान चंद, जगत चंद व बाज बहादुर चंद (कमाओं), राजा अनूप सिंह, छत्रसाल बुंदेला, चूड़ामनि जाट, राजा ओदीप सिंह, राजा गोपाल सिंह भदावड़िया, पृथी चंद, उदित सिंह बुंदेला, बदन सिंह बुंदेला, अजीत सिंह (राजा जोधपुर), वचन सिंह कछवाहा और जय सिंह सिलाई (राजा जयपुर), अमर सिंह (राजा अजमेर), हमीर चंद कटोच (राजा कांगड़ा), राजा जसरोटीए का पुत्र हरिदेव, कृपाल देव और ध्रुव देव (राजा जम्मू), भूपत प्रकाश (नाहन), मान सिंह (राजा कुल्लू), कैथल का आमिल, लाल कंवर गुज्जर, टोडर मल का पोता, संतोष राय कानूनगो (कलानौर), राजा दया धम्मा/धर्मा (नूरपुर), किशन सिंह (नरोका), सांवल दास (दीवान गाजी ख़ान), टीका राम (दरोगा दिल्ली)

मुसलमान सूबेदार, फ़ौजदार और जरनैल: वज़ीर ख़ान (फ़ौजदार सरहिंद), मुनईम ख़ान (ख़ान खानां) और उसके दो पुत्र महाबत ख़ान और ख़ान जमान बहादुर, इस्लाम ख़ान (मीर आतिश), हमीद-उद्-ख़ान, सरफराज ख़ान बहादुर (बहरोज ख़ान) और उसका पुत्र सैफ़-उलाह-ख़ान, अहतमान ख़ान और उसका पुत्र लुत्फ-उलाह ख़ान, मुहम्मद अमीन ख़ान पहले सूबेदार मुरादाबाद, फिर बंदा सिंह के विरूद्ध मुहिम का प्रमुख और उसका पुत्र कमर-उद्-दीन बाद में प्रधानमंत्री, जुल्फिकार ख़ान (बख्शी-उल मुल्क), कोकलताश ख़ान बहादुर, ख्वाजा हसन ख़ान, शकरुल्ला ख़ान, इब्राहिम ख़ान (मीर आतिश), सरबराह ख़ान (कोतवाल, दिल्ली), बाड़ा का सईअद अब्दुला ख़ान (सूबेदार अलाहाबाद) सईअद हुसैन अली ख़ान और सईअद वजीह-उद्-दीन (बाढ़ा), रूस्तम दिल ख़ान और उसका भाई सुलतान कुली ख़ान, अब्दुस समद ख़ान (बाद में सूबेदार जम्मू और लाहौर) और उसका पुत्र जकरिया ख़ान (बाद में सूबेदार जम्मू और लाहौर), चुगत्ता ख़ान, शाहनिवाज ख़ान, अफरास्याब ख़ान, शफशिकन ख़ान, फिरोज ख़ान मेवाती (सूबेदार सरहिंद), जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान पहले सूबेदार सिकन्दराबारद और मेरठ और फिर सरहिंद, मुहम्मद रुस्तम गाजी ख़ान (सूबेदार सरहिंद), हकीम मोइतमद-उल-मुल्क, रहमान यार ख़ान, अता-उलाह ख़ान, फतेह-उलाह ख़ान, मोहतम ख़ान, राय राईआं, जनी ख़ान, फिदवी ख़ान, अब्दुल करीर ख़ान, अकीदत ख़ान (पुत्र अमीर ख़ान), मुहम्मद अली ख़ान (बख्शी जहांदार ख़ान), अबू-

उल-कासिम (नायब फ़ौजदार सरहिंद), मुहम्मद बका (फ़ौजदार फतेहबाद), मुहंमद अमीन (फ़ौजदार रजौरी), जलाल ख़ान (फ़ौजदार रोहतक), सैफ-उद्-दीन अहमद ख़ान (फ़ौजदार गुजरात), अजहर ख़ान (फ़ौजदार वजीराबाद), इरादतमंद ख़ान (सूबेदार ऐमनाबाद), नूर मुहम्मद ख़ान (फ़ौजदार औरंगाबाद और पसरूर), शेख मुहम्मद दायम (फ़ौजदार बटाला), सुहराब ख़ान (फ़ौजदार कलानौर), आरिफ बेग ख़ान (नायब सूबेदार लाहौर), सुलतान ख़ान (सूबेदार जम्मू), सद्दात ख़ान (सूबेदार कश्मीर), मुहम्मद अली ख़ान (नायब सूबेदार कश्मीर), जलालाबाद का फ़ौजदार जलाल ख़ान, उसका पुत्र दीनदार ख़ान, पोत्र गुलाम मुहम्मद बन्यारा और पीर मुहम्मद ख़ान, भान्जा गुलाम मुहम्मद ख़ान और भतीजा हजबर ख़ान और जरनैल सद्दात ख़ान, सहारनपुर का फ़ौजदार मुहम्मद

अली ख़ान और उसके भतीजे पीर ख़ान और जमाल ख़ान, कदम-उद्-दीन (कपूरी), उस्मान ख़ान (सढ़ौरा), शेर मुहम्मद ख़ान (मलेरकोटला), खिजर ख़ान और उसके पुत्र ख़ान अली और मुहम्मद बख़्श (मलेरकोटला), निजामुल मुल्क असद् ख़ान (दिल्ली)

जरनैल : अफजल ख़ान, ख़ान बहादुर, शमशेर ख़ान, अब्दुला ख़ान (पांचों दिल्ली), शमश ख़ान (फ़ौजदार सुलतानपुर, जालंधर-दोआब), बायजीद ख़ान उर्फ कुतबदीन खेशगी (फ़ौजदार जम्मू), दौलत मुईन का पुत्र ईसा ख़ान (फ़ौजदार जालंधर-दोआब), ईसा ख़ान मंज (फ़ौजदार जंगल देश), उमर ख़ान (फ़ौजदार कसूर), सैफ ख़ान (फ़ौजदार सुलतानपुर), उस्मान ख़ान करावल, नुसरत ख़ान, सईअद हसन ख़ान, जोरावर ख़ान, रणबाज ख़ान, शेर ख़ान (सभी जरनैल), शेख अहमद शैखुल्ल -हिंद (बटाला), सुहराब ख़ान (कलानौर), जरनैल इनाम ख़ान, सदात ख़ान (कोटला), अशरफ ख़ान (फ़ौजदार हरियाणा), ख्वाजा सुलतान (गुरज बरदार), सईअद अजमतुल्ला ख़ान (जमींदार रजौरी), होशदार ख़ान (फ़ौजदार जालंधर-दोआब),

तलवन (जालंधर-दोआब) के जमींदार : मुग़ल बेग़ ख़ान, दुर्लब ख़ान, अब्दुल समद ख़ान और इनायत ख़ान, इनाम ख़ान वालाशाही, मिर्जा शाह निवास, दौलत बेग ख़ान, सालेह ख़ान, फतेह-उला-ख़ान, मुहम्मद असलम (वकील गाज़ी ख़ान), फिरोज जंग ख़ान, मौलवी मुरादुल्ला, अब्दुल कादर, महफूज ख़ान, मुहंमद ख़ान, जरनैल अबू-उल-मुल्क (भतीजा जैन-उद्-दीन, सूबेदार सरहिंद), ख्वाजा मुकर्रम (फ़ौजदार रूपड़), शर्फ-उद्-दीन (बख्शी सरहिंद) फ़ौजदार पट्टी और कई जिनके नाम तवारीख में नहीं मिलते।

लाहौर के जिहादीए: पीर मुहम्मद तक्की, मूसा बेग़, शाह इनायतुल्ला, मुहम्मद जमान राजपूत मुसलमान और मूल्ला मीर मुहम्मद।

दूसरे मौलवी: मौलवी विर्दी बेग़ लाहौर, शाह मुहम्मद काज़ी बुड़िया।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर और उसके साथियों के साथ संबंधित स्थान

1. राजोरी - बहुत से ऐतिहासिक स्त्रोत मानते हैं कि बंदा सिंह बहादुर का लक्ष्मण देव के नाम से राजौरी (पुंछ) कश्मीर में जन्म हुआ। यह बंदा सिंह का पहला स्थान है जहां उसकी याद में मैमोरियल बनना चाहिए।
2. बिसरमपुर - जेमेज़बर ने अपने 'ट्रैक' काम में वर्णन किया है कि बंदा सिंह का जन्म बिसरमपुर (जो जालंधर जिले का गांव है) में हुआ है। परन्तु उसके साथ अन्य कोई भी सहमत नहीं होता। परन्तु पतारा के मास्टर मोता सिंह ने यहां उसकी याद में एक सराय बनाई हुई है।
3. नांदेड़ - यहां बंदा सिंह ने कई साल बिताऐ और अपना डेरा स्थापित किया था। जहां गुरु गोबिंद सिंह ने अपना आर्शीवाद देकर उसको सिंघ बनाया था और पंजाब की ओर ज़ालिम मुग़लों के विरुद्ध जूझने के लिए भेजा था। यहां उसके नाम पर उसके डेरे के स्थान पर गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है।
4. खंडा/सेहरी (खरखोदा) - इस स्थान पर बंदा सिंह ने अपना पहला हैडक्वाटर (मुख्यालय) दो गांवों के बीच बनाया हुआ था। यहाँ बंदा सिंह ने कई सप्ताह विश्राम किया और मुग़लों के विरुद्ध जंग करने की तैयारी की। यहां भी उनकी याद में कोई इमारत का निर्माण होना चाहिए।
5. समाना - 26 नवंबर, 1709 को बंदा सिंह ने सभी मुग़लों के बड़े जल्लाद मारे, जिन्होंने गुरु तेग़ बहादुर साहिब का शीश काटा और छोटे साहिबज़ादों को नींवों में जीवत ही चिनवा दिया था। यहां भी इस महान जरनैल बंदा सिंह बहादुर की याद में आज तक कोई स्मृति नहीं बनी क्योंकि यहां से ही समाना को जीत कर सिक्खों की पहली जीत हुई थी।
6. लोहगढ़ - यह आजाद पंजाब की (ख़ालसा) राजधानी महान जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने बनाई। यह जगह हरियाणा और हिमाचल प्रदेश की सीमा पर 7000 से अधिक एकड़ में डाबर की पहाड़ियों पर स्थित है। अब यहां पर गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है। खुशी की बात है कि हरियाणा सरकार की ओर से बंदा सिंह बहादुर मेमोरियल (कम्युनिटी सैंटर) बनाया जा रहा है। जिसमें लाईट और साउंड सिस्टम के साथ बंदा सिंह जी की 1710, 1712, और 1713 की मुग़लों के विरुद्ध लड़ाई और अन्य सफलताओं के बारे जानकारी दी जायेगी। भगवानपुर, बिलासपुर (यमुनानगर) से लोहगढ़ तक हरियाणा सरकार ने पक्की सड़क बनवा दी है और 'लोहगढ़ ट्रस्ट' अपनी जमीन खरीद कर बंदा सिंह बहादुर की याद में अलग-अलग समाज सुधार योजनाओं के अनर्तगत इमारतों के निर्माण कर रही है। इस जगह पर निर्माण करके लोगों को रोजगार, चिकित्सा सुविधाएं सिक्ख सिद्धांतों के अनुसार गुरबाणी शिक्षा और जरुरी लोगों के लिए लंगर के प्रबंध किए जाएंगे। निर्माण कार्य चल रहा है। एस.जी.पी.सी ने भी यहां एक गुरुद्वारे के निर्माण का काम शुरू किया हुआ है। भविष्य में यह लोहगढ़ एक टूरिस्ट कंपलैक्स के द्वारा आर्कषण का केंद्र बनेगा। शाहबाद से लोहगढ़ की सड़क जरनैल बंदा सिंह जी के नाम पर की गई है और इस सड़क की चौड़ाई बढ़ाई जा रही है। इस सड़क के आरंभ होने पर जी.टी. रोड पर जरनैल बंदा सिंह बहादुर स्मृति द्वार सरकार की ओर से लगवाया जा रहा है। इसके अतिरिक्त अन्य 3 बड़े स्मृति द्वार और 13 अलग-अलग स्थानों पर ख़ालसा राजधानी लोहगढ़ पहुँच मार्ग के द्वार लगाए गऐ हैं।

7. सढ़ौरा - यहां हज़ारों सिक्ख, मुग़लों के विरुद्ध लड़ते-लड़ते शहीद हुए थे और गुरु गोबिंद सिंह और सिक्खों का साथ देने वाले पीर बुद्धू शाह भी सढ़ौरा के ही थे। यहां सढ़ौरा में 3 बादशाहों (बहादुर शाह, जहांदार शाह और फरखसियर) ने सिक्ख फ़ौजों के साथ 3 लड़ाईयां लड़ी थी। यहां हरियाणा सरकार ने 05 एकड़ ज़मीन पर सरकार द्वारा पीर बुद्धू शाह जी की याद में टावर और मेमोरियल बनाने का कार्य आरंभ हुआ है।

8. चप्पड़चिड़ी - यह स्थान 'वाटरलोअ' की तरह प्रसिद्ध है जिसमें सिक्खों ने अपने खून के साथ सिक्ख इतिहास लिखा है। यहां वज़ीर ख़ान सहित भारी संख्या में मुग़लों को मारकर चप्पड़ चिड़ी की जीत हासिल की और इस लड़ाई के दौरान हज़ारों ही सिक्ख यहां शहीद हुए। यहां पंजाब सरकार ने बंदा सिंह की याद में ऊंचा टावर बनाया हुआ है परन्तु यहां महान जरनैल बंदा सिंह बहादुर का बड़ा 'स्टैच्यू' भी लगना चाहिए।

9. सरहिंद (फतेहगढ़ साहिब) - इस जगह से 27 मई, 1710 को बंदा सिंह ने जमींदारी व्यवस्था खत्म करके ज़मीन पर काम करने वालों को ही जमीन का मालिक बनाकर दुनिया का बहुत बड़ा काम किया था। जैसा कि फ्रांस के 1789 आंदोलन से 70 साल पहले का क्रांतिकारी सुधार है, परन्तु इतिहासकारों ने इस पर कोई काम नहीं किया। यहां बंदा सिंह बहादुर और बाज सिंह के बड़े 'स्टैच्यू' लगने चाहिए।

10. रियासी - यहां बंदा सिंह ने डेरा जरनैल बंदा बहादुर में कुछ समय बिताया था और उसकी पत्नी, उसका पुत्र यहीं रहे थे। यहां एक सराय बनी हुई है और उनके समय से गुरुद्वारा सुशोभित है।

11. गुरदास नंगल - यहां बंदा सिंह गिरफ्तार सिंघों के सहित लगभग 08 महीने घेरे में रहे और यहां लगभग दो हज़ार सिंघों ने शहादतें दीं। यहां एक बड़ा संग्रहालय होना चाहिए और बंदा सिंह का बड़ा 'स्टैचू' लगाना चाहिए।

12. लाल किला - इसमें बंदा सिंह बहादुर को 740 सिंघों सहित कई दिन बंद किया गया था। इस घटना को याद करते हुए यहां भी कोई स्मृति इमारत बनाई जानी चाहिए।

13. सलीमगढ़ - यहां बंदा सिंह और उसके मुख्य सिंघों को कई दिन बंदी बना कर रखा। यहां भी बंदा सिंह बहादुर जी की स्मृति इमारत होनी चाहिए।

14. चांदनी चौंक - मार्च 1716 को यहां 700 सिंघों को प्रतिदिन 100-100 करके शहीद किया गया था। इन शहीदों की याद में यहां भी स्मृति या कोई परियोजना होनी चाहिए।

15. कुतुब मीनार, महरोली - यहां 9 जून को बंदा सिंह बहादुर और उसके साढ़े चार वर्ष के बच्चे को शहीद किया गया था। यहां गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है, परन्तु लाईट और साउंड प्रोग्राम तैयार करके इन सिक्ख शहीदों की शहादतें दिखाई जानी चाहिए।

16. धोता टांडा (जम्मू) - यहां बंदा सिंह बहादुर के मृतक शरीर के टुकड़े लाकर संस्कार किया गया। इसके अतिरिक्त अमीनगढ़, कुंजपूरा, कपूरी, ठसका, बुड़िया (हरियाणा में), सहारनपुर (यू.पी), बिलासपुर (हिमाचल), घड़ाम, रोपड़, रोहान, कलानौर, बटाला(पंजाब) रायपुर, रासूलपुर और बालोह (कश्मीर) वह स्थान हैं। जहां बड़ी संख्या में सिक्खों ने शहादतें दी हैं। उनकी याद में इंडिया गेट (दिल्ली) की तर्ज़ पर सिक्ख शहीदों की याद लोहगढ़ व सबंधित स्थानों पर कोई न कोई स्मृति/स्मारक भी बनवाए जाने चाहिए। कई शूरवीरों/शहीदों की याद में अनेकों स्मृतियां व गुरुद्वारे तो बन चुके हैं जो विश्व भर में फैले हुए हैं। अब तो गुरुद्वारा साहिब के अतिरिक्त मीनारें, टावर, संग्रहालय, स्टैच्यू, प्लेटफार्म बनने चाहिएं तांकि भविष्य में सिक्ख नस्लें/पीढ़ियों अपने इतिहास की जानकार हो सकें।

भाई लक्खी राय (शाह) वणजारा पर लोकगीत

सभ ठाठ पड़ा रह जायेगा, जब लाद चलेगा वणजारा,
तू है लक्खी वणजारा।
टांडें तेरा भारी है, गुफल दिल में मत रहना तू
बहुत बड़ा है वपारा।
तू है लक्खी वणजारा।
नमक, मिश्री खंडगिरी, फाही समन रखता है
तू है लक्खी वणजारा।
वपार तेरा सच्चा है, और खुदा का तू है प्यारा
तू है लक्खी वणजारा।
लक्खां अशर्फ़ी, लक्खा तोले, खूब करेगा विउहारा।
तू है लक्खी वणजारा।
नूर गजरका तैने लागी, वैमे कपटस गया मारा।
तू है लक्खी वणजारा।
वो नायक था मेराही धानी। जब ऐन के चोट पैंदी
रोनीका मचा हरी गुल सारा,
तू है लक्खी वणजारा।
शमशेर भालोका मारा।
तू है लक्खी वणजारा।

भाई लक्खी शाह वणजारा अपनी पूरी संपत्ति छोडकर, सामान लादकर आगे चला जाता था। लक्खी राय का टांडा बहुत ही बड़ा था और बहुत बड़ा व्यापारी होने के कारण उसे बहुत सुचेत और होशियार रहना पड़ता था। यह गीत वणजारे लोग, भाई लक्खी शाह की याद में गाते हैं।

Banda Singh Bahadur
(A poem by Rabinder Nath Tagore)

In the prominent royal Mogul court of Delhi
King's sleep will break-up hundred times daily
There was such a dreadful fright in his heart
In his consciousness painful sighs were brought
What fire scorched his heart no one knows
All of a sudden he was jumping in fiery blows
It appeared like red hot sky from the Delhi court
King's heart shaking, seeking Godly support
Rivers of blood were flowing on the five rivers' land
Sikhs were facing persecutions for some ideal ground
Smeared in blood, they were saying thanks in gratitude
Patiently, regardless of comforts, they were in solitude
They crossed their way with the Mughals might
With faithful heart they remembered God in sight
Maiden decorated with mark of blood, their foreheads
What sort of people are Sikhs, with such eagerness
They move like moth, looking at burning all around
Without delay they line up ready to fight duty bound
They play jokes with death, and like lions they roar
Wherever they stare and rebuke, enemy is no more
Brave warriors jumped in fray with hand to hand attack
They quickly hawk assaulting caught the deadly foe
Like flying hawk assaulting a deadly poisonous snake
Squeezing them in their claws from tip to toe
InnMUerable was the enemy army, Sikhs were very few
They were surrounded in chains and were put in queue
Clothes soaked in blood, bodies full of wounds and bruises
Intestines fall in tummy but they had faith and confidence
The enemy was battered by the dashing Banda Singh sage
Moguls fought back and tied him like brave lion in cage

Surrounded him from all the sides and imprisoned the
hero's chum
Then they moved towards Delhi, on the beat of kettle-drum
The Mogul army departed towards the Capital of Delhi city
They moved like hurricane, without stopping or any pity
Seven hundred Sikhs were imprisoned and curled-up in chains
It was a disgusting sight, an extraordinary incident, full of pains
On every pointed spear, the head of Sikh was hanging
Streams of blood dripping, the sight will give a panging
Sikh prisoners shackled in chains, shouted this voice of cry
O! Our true saviour preserve thy honour, don't let panth shy
Spectators gathered in the heart of Delhi's Chandni Chowk
This caravan of Sikhs was quite out of strength and in shock
Outside they were dull and defeated, inside enjoying thrill
Greeting loudly the victory of Guru and obedient to His will
The onlookers revealed an extraordinary and peculiar tale
The prisoners started argument as nobody wanted to fail
Everybody wanted to be first in their turn to meet the fate
All wanted to meet the Beloved, Gobind through life's gate
The wheel of death started, the murderers were on assault

An applause was echoed, whenever the sword was at fault
The Sikhs were being butchered, going forward for sacrifice
It was game of seven days for seven hundred heroes nice
Chief Banda Singh was in the clutches of destiny or fate
Next they brought forward to kill his little son ever so great
The Kazi passed on to Banda Singh the killer sword grand
He ordered him to cut his son's head as it was royal command
Sons are symbols of worldliness for formality in social affairs
If someone rebukes them one feels like to pull his hairs
What sort of test in life, to kill one's own son, was shaping
The thing one can't even imagine, the same was happening

Banda first picked his son and loved and caressed him
Then he tried to explain the role and character of Sikhism;
Prince Fateh and Jujhar Singh were also children like you
Now in the test time and what they achieved you can also do
Greeting the victory loudly, the little son was revitalized
If life goes, the custom of Sikhism is, let it be sacrificed
For holder of righteousness definite victory will be at last
His love won't be wasted; he meets the Beloved very fast
The Kazi became angry as he could not bear the splendour
The executioner attacked the child and he started to flutter
Even then this strange trick of destiny could not succeed
Plump intestines jumping softly, the earth was red indeed
It is written in the history that Banda remained unmoved
In his mouth soft plump heart of slayed child was forced
In this hard probation Banda remained unshaken, steady
The history will cry when going through its own study
It was such a dreadful scene that onlookers could not spy
Snatching with pincers first they took out his both eyes
Iron bars were made red hot to burn his body limbs ready
The Sikh greeted the victory loudly and soul left the body
The Sky echoed with kettle-drum beat, banner flying like kite
Once a hero takes a battlefield, he is eager to show his might
A true warrior is one, who fights for sake of humble and meek
He might be cut into the pieces, but to leave battlefield will never seek

कविता (हिंदी अनुवाद)
जरनैल बंदा सिंह बहादुर लेखकः रविन्द्रनाथ टैगोर

रविन्द्रनाथ टैगोर ने जरनैल बंदा सिंह बहादुर पर अंग्रेज़ी में कविता लिखी है, जिसका भावार्थ यहां हिंदी भाषा में दिया जा रहा है।

लेखक वर्णन करता है कि बंदा सिंह बहादुर ने उत्तरी भारत में मुग़लों के विरुद्ध मुहिम दौरान इतनी दहशत फैलाई हुई थी कि मुग़ल बादशाह की नींद हराम हो गई। वह दिन में कई बार बेचैन होता। उसके दिलों-दिमाग में भयानक डर बैठ गया कि अब उसका राज्य जाने ही वाला है और वह दर्दनाक सांस लेने लगा। हर समय परेशानी में मानसिक संतुलन खो देता और उसको पल भर भी चैन नहीं आता। उसको इस तरह लग रहा था जैसे उस पर सारी मुसीबतों का पहाड़ गिर गया हो जिसके नीचे दबकर वह बुरी तरह कुचला जा रहा हो। उसकी आत्मा का यह दर्द भरी हालत वह स्वयं जानता था और ख़ुदा के आगे पुकार-पुकार कर वह अपनी सलामती की प्रार्थना/विनतियों में डूबा हुआ बेचैनी की दशा में था। सिक्खों ने तो मुग़लों के सिर काट-काट कर ख़ून की नदियां बहा दी। सिक्ख तो गुरु की ख़ातिर अपने मकसद को पूरा करने के लिए अपनी मृत्यु की परवाह ना करते हुए मुग़लों पर कूद पड़ते और उन पर आक्रमण कर उन्हें तबाह कर देते। निःसंदेह स्वयं वह रणक्षेत्र में जूझते हुए आनंद महसूस करते और परमात्मा का शुक्रराना करते दिखाई देते। वह मुग़लों की भारी फ़ौज को चीर कर आगे निकल जाते और परमात्मा को हर समय अपने अंग-संग मानते। जब भी जंग के लिए सिक्खों के जरनैल इनको बुलाते तो यह बिना किसी देरी के भूख से बेहाल भी मैदाने जंग की अग्रिम कतारों में आ खड़े होते। मौत को तो इन्होनें मज़ाक ही समझा हुआ था और इनके चेहरों पर शहादत का जलाल हर समय चमकता रहता था। जैसे उड़ता हुआ बाज़ अपने पंजे में भयानक ज़हरीले नाग को लेकर उड़ जाता है। वैसे ही यह संख्या में कम होने के बावजूद भी अनगिनत मुग़लों को परलोक पहुंचा देते। मुग़लों में इतनी भगदड़ मच जाती कि वह अपने प्राण बचाने के लिए पीछे को भाग जाते थे। मुग़ल बादशाह ने इतनी बुरी हालत, जो उसकी सल्तनत में हुई, कभी नहीं देखी थी। वह हर समय दुनिया का सबसे बड़ा किले के बारे सोच-सोच कर पागल हुआ घूमता था। आखिरकार भारी संघर्ष के पश्चात् मुग़लों ने सिंघों को घेरे में ले ही लिया। यह सिंघ कई महीनों से भूख से बेहाल और शरीर पर अनेक ज़ख़्म/खरौंचें, पेट सुकेड़े हुए, परन्तु परमात्मा में पूर्ण विश्वास वाले यह सिंघ पूरी चढ़दीकला में थे। मुग़लों ने सबसे पहले जरनैल बंदा सिंह बहादुर को जंजीरों में जकड़ा। संघर्षशील अन्य सिघों को दो-दो, तीन-तीन इकट्ठे करके जंजीरों/चैनों के साथ जकड़ लिया। परन्तु उस समय सिंघ ऊंची आवाज़ में पंथ की चढ़दीकला के जयकारे लगा रहे थे और प्रार्थना कर रहे थे।

उनका हृदय अंदर से प्रसन्नता में था और वह इसको गुरु की जीत समझ कर गुरु का आशीर्वाद समझ रहे थे। मुग़ल इन सिंघों को ड्रम बजाते हुए बिना रुके तूफ़ान जैसे दिल्ली लाए। नेज़ों पर सिंघों के सिर काट कर टांगे हुए थे जिनमें से ख़ून बह रहा था। दिल्ली में मुग़लों के परिवार भारी संख्या में इकट्ठे होकर इनको देखने आए और इनको फटकार रहे थे। परन्तु सिक्ख अपने गुरु के सिमरन में लीन थे। यह दृश्य बहुत भयानक था क्योंकि सिंघों के हौंसले अभी भी बुलंद थे। प्रत्येक सिंघ पहले शहादत पाने को तैयार था। वह अपने गुरु गोबिंद सिंह को मिलने की जल्दी में था। मुग़लों ने इन सिक्खों को मौत के घाट उतारना शुरू किया। सिंघों का सिर

काटते समय जैसे ही तलवार चलती, 'धाड़' की धमक पड़ती। इस कत्लगाह के समय सिक्ख बिना घबराहट के अपनी बारी लेने के लिए आगे बढ़ते रहे। 700 सिंघों का कत्ल सात दिन में हुआ। प्रमुख जरनैल बंदा सिंह बहादुर भी अन्य सिंघों की तरह शहादत के लिए अपनी बारी का इंतज़ार कर रहा था, मुग़ल सिपाही उसके छोटे बच्चे को उसके सामने कत्ल के लिए लाए। काज़ी ने बंदे के हाथ अपने ही बच्चे का कत्ल करने के लिए कटार दी और शाही आदेश के अनुसार उसको अपना पुत्र स्वयं कत्ल करने का हुकम दिया। दुनिया में मरने के पश्चात मानव अपनी निशानी के तौर पर संतान छोड़ कर जाता है परन्तु यह किस तरह की किस्मत की आज़माइश! अगर किसी की संतान को कोई दुख पहुंचाए तो उसको अत्यंत दुख पहुंचता है। यह किस तरह की परीक्षा सिक्खों की हो रही थी कि अपने बच्चे को स्वयं ही कत्ल करना। फिर वह घटना घटी जिसका कोई अनुमान नहीं लगा सकता। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने पहले स्वयं के बच्चे को उठाया उसको प्यार किया और गले लगाया फिर उसने अपने पुत्र को सिक्खी सिद्धांतों की जानकारी देते हुए समझाया कि साहिबज़ादे फतेह सिंह और जुझार सिंह भी तुम्हारे जैसे बच्चे थे जिन्होंने परीक्षा में जो किया वह तू भी करके दिखा। उसने ऊंची आवाज में पुकारते हुए छोटे बच्चे को संबोधन किया कि सिक्ख सिद्धांतों को कायम रखने के लिए कुर्बान हो जाना यही सिक्खी का सिद्धांत है। इस तरह सत्य के लिए लड़ते रहना आख़िर जीत पक्की होगी। इस तरह जरनैल बंदा सिंह अपनी संतान के साथ दुलार-प्यार कर रहा था और उसका प्यार व्यर्थ नहीं जायेगा। यह सुनकर काज़ी को अच्छा नहीं लगा और वह क्रोधित हुआ। जैसे ही कातिल ने बच्चे पर कटार के साथ हमला किया तो बच्चों की आंतड़ियां बाहर आ गई और धरती ख़ून से लाल हो गई।

इतिहास में यह लिखा है कि जरनैल बंदा सिंह इस समय बिल्कुल ख़ामोश रहा और बच्चे का कलेजा निकाल कर उसके मुंह में जबरन डाला गया पर बंदा बहादुर इस समय भी स्थिर रहा। कोई इतिहास को छुपा न पाया, पहले बंदे का मांस जम्बूरों के साथ नोचा फिर उसकी दोनों आंखें निकाल। लोहे के तकले लाल गर्म करके उसके शरीर पर लगाए गए परन्तु सिक्खों ने जीत का स्वागत किया और उसकी आत्मा निकल कर परमात्मा में समा गई। सारा आसमान ड्रंम की आवाज़ों की तरह गूंज उठा और परिंदे पतंग की तरह उड़े। एक बार फिर किसी योद्धा ने लड़ाई के मैदान का चयन किया। उसने यहां अपनी ताकत का प्रदर्शन किया। सच्चा विजेता उसको ही माना जाता है जो कमज़ोर और मज़लूमों के लिए जुल्मों के विरूद्ध लड़ता है, उसके निःसंदेह टुकड़े-टुकड़े किए जाये परन्तु वह लड़ाई का मैदान नहीं छोड़ता।

पुस्तक में आए मुख्य शब्द

अहदी:- अहदी वह लोग थे जो सीधा शाही सरकार के नियुक्त किये हुए नौकर थे (जो एक पद के कर्मचारी थे) उनके घोड़ों और अन्य समान की जांच होती थी और बख़्शी-ऐ-अहदी या अहदियें को इस समान पर आधारित कर भरना पड़ता था।

अकाल तख़्त:- दरबार साहिब अमृतसर के सामने सिक्खों का पवित्र स्थान।

अमर बेलें- यह पहाड़ों में लटकती हुई मज़बूत लंबी बेलें होती हैं। जो वृक्षों से लटकती हैं जिसके मज़बूत लंबे रस्से बनाए जाते हैं। जिसके सहयोग से एक पहाड़ी से दूसरी पहाड़ी या एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष तक आसानी के साथ जाया जा सकता है।

सूबे का अमीन- अमीन, ज़मीन सर्वेक्षण करने वाले का नाम है जो (शाह जहान के नीचे) बाद में मामला निर्धारती कहा जाने लगा। सूबे का अमीन अकबर और जहांगीर के समय मामला निर्धारित करके इकट्ठा भी करता था। विशेष रूप से जगीरदार यह मामला शाही नियमों अनुसार इकट्ठा करते थे।

अमीन-अन-मुल्क- यह सभी सूबा अमीन का प्रमुख, जो शाही सरकार के लिए मामला इकट्ठा करने के नियम देखता था और प्रत्येक के साथ समानता और हुक्म पालन का ध्यान रखता था।

अमीर- ऊंची शान वाला मुनष्य, जिसका बहुवचन उमरा होता था।

बहादुर- यह मुग़लों और मुग़ल न्यायालयों द्वारा छटा उच्च पद का चिन्ह था। जो (मान-सम्मान) एक हैगरी ओर ऊंचा निशान था। यह ब्रिटिश भारत में दूसरे श्रेणी का मान-सम्मान प्राप्त करने वाला चिह्न था।

बख़्शी- अहदियों का बख़्शी

भाई- यह भाई को संबोधन करता है जिसके द्वारा गुरु नानक साहिब अपने सभी संगी-साथियों को बुलाते थे।

चक्क नानकी- आनंदपुर साहिब का पुराना नाम चक्क नानकी था।

दरबार- यह शाही न्यायालय का उच्च पद का स्थान होता था। जहां सरकारी मसले सुने जाते थे और जहां से सरकारी नियुक्तियां होती थी और इनाम बांटे जाते थे व अन्य सरकारी पत्र जारी किये जाते थे।

फ़ुरमाण- सरकारी या शाही हुक्म।

फ़ौजदार- यह एक निर्धारित इलाके का जरनैल होता था जो कानून व्यवस्था देखता था।

गढ़- किला

गढ़ी- छोटा किला

गुरुद्वारा- गुरु का घर, जहां संगतें बैठकर वाहेगुरु का स्मरण करती हैं।

गुरु का चक्क- अमृतसर का पुराना नाम

जागीरदार- ज़मीन का मालिक

जंग- युद्ध या लड़ाई

ख़ालसा राजधानी- 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ को सिक्खों की राजधानी घोषित करके इसको ख़ालसा राजधानी कहा।

ख़ालसा तख़्त- सिक्खों की ताकत की गद्दी। 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने ख़ालसा राजधानी से सिक्का जारी करके इस पर ख़ालसा तख़्त लिखा।

ख़ालसा- अमृतधारी सिक्खों का समूह, जो सिक्ख सिद्धांतों के अनुसार जीवन व्यतीत करते हुए आज़ादी महसूस करते है।

ख़ान-खाना- मुखिया/प्रमुख/सेनापति

खिल्लत/पोशाक- यह बहादुरी का बड़ा चिह्न होता था जिसमें पगड़ी, शाल व बिना सिला हुआ कपड़ा शामिल था। कभी-कभी हथियार, हीरे और अन्य कीमती सामान भी इसमें शामिल होता था जो किसी विशेष अवसर पर इनाम के तौर पर दिए जाते थे।

कोतवाल- थाने या शहर का मुखिया।

क्षत्रीय- हिंदू लोग जो देश की रक्षा के लिए फ़ौज में होते थे, जिनको कुछ भूमि का मालिक बनाया होता था।

मीर बख़्शी- जो मनसबदार का प्रमुख होता था और उनके कार्यों की निगरानी करता था।

मीर-आकिस- हथियारबंद फ़ौज का प्रमुख।

नानकप्रस्त- मुग़ल यह शब्द सिक्खों के लिए प्रयोग में लाते थे।

नायक- टांडों के प्रमुख को नायक कहते थे। वणजारे टांडों द्वारा व्यापार करते थे। एक टांडे में कई हज़ार बैलगाड़ियां होती थी जो बलदों/भैंसे व घोड़ों के द्वारा खींचे जाते थे।

पातशाह या बादशाह- यह शब्द परशियन में बादशाह/राजा के लिए प्रयोग किया जाता था। परन्तु पातशाह, बादशाहों के बादशाह को कहते थे।

परगना- मुग़ल काल में परगने एक प्रांत की प्रशासनिक इकाई होती थी।

पीर- इस्लाम को मानने वाले अपने धार्मिक नेता के लिए यह शब्द प्रयोग करते हैं।

सरकार या कानूगो- यह एक जद्दी उत्तराधिकारी होता है जो मामले या कर का लेखा-जोखा देखता है और परगने का टैक्स इकट्ठा करने का कार्य करता है।

काज़ी- इस्लाम में धार्मिक ज्ञान रखने वाले मनुष्य को काज़ी कहते हैं।

रंगड़- वह राजपूत जिन्होनें इस्लाम धर्म को अपना लिया हैं।

रिसाला- फ़ौजी टुकड़ी

सरकार- प्रशासनिक यूनिट जो परगने से बड़ी और सूबे से छोटी होती है।

सईयद- मोहम्मद का दामाद व उत्तराधिकारी पुरुषों को सईयद व मोहम्मद कहते हैं।

शहज़ादा- राजकुमार या बादशाह का पुत्र।

सहकदार- मामला इकट्ठा करने वाला अधिकारी जो जागीरदार के नीचे कार्य करता था।

सिक्ख- जो दस सिक्ख गुरु साहिबानों और गुरु ग्रंथ साहिब के सिद्धांतों के अनुसार जीवन व्यतीत करता हैं।

टांडा- मध्य काल में टांडों द्वारा मध्य और दक्षिण एशिया तक व्यापार होता था जिसमें कई घोड़े,

बैल, ऊंट, भैंसें और अन्य पशु होते थे। यह जहां ठहरते थे उस जगह का नाम टांडा होता था।

वाहिगुरु जी का ख़ालसा, वाहिगुरु जी की फ़तेह- इस बोल का इस्तेमाल सिक्ख आपस में मिलते समय एक दूसरे के स्वागत के लिए करते हैं। यह सम्बोधन स्पष्ट करता है कि ख़ालसा वाहिगुरु जी का है और इसको जो भी फ़तेह हासिल हुई है वह वाहिगुरु जी की ही है।

वकील- मुग़ल बादशाह की कचहरी में सूबों के प्रतिनिधि जो कानून के अनुसार बहस करते हैं।

वणजारा- व्यापार करने वाले, अठारवीं सदी तक यह विश्व के सबसे अमीर व्यापार करने वाले लोग थे। जिन पर अंग्रेज़ों ने क्रिमनल एक्ट लगाकर इन्हें ग़रीबी की हालत में पहुंचा दिया।

ज़मींदार- ज़मीन के मालिक। यह लोग एक बड़े ज़मीन के चक्क के मालिक होते हैं। जो अपनी इच्छा के साथ कामगारों के पास से कृषि करवाते थे और मामला इकट्ठा करते थे। इनका पद प्रांत के राजकुमार की अपेक्षा से एक पद नीचा होता था। यह अपनी इच्छा से न्याय देते थे।

बिबलियोग्राफी (संदर्भ-ग्रंथ सूची)

मौजूदा कार्य बंदा सिंह बहादुर के जीवन और योगदान के बारे में है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर, आठ वर्षों (1708 से 1716) की अपनी कार्यप्रणाली और बलिदान के कारण पंजाब और दक्षिण एशिया के इतिहास का सबसे बड़ा नायक बन गए थे। अधिकतर फारसी स्त्रोतों ने समकालीन संबंधित कीमती सामग्री को संभाल कर रखा था। गुरमुखी और पंजाबी सूत्रों की भी उपयोगी जानकारी हासिल की है परन्तु आम तौर पर वे पक्षपात करते या उनमें ऐतिहासिक घटनाक्रम का अभाव नजर आता है।

गुरमुखी और पंजाबी सूत्रों में ऐतिहासिक दस्तावेज के लिए सबसे अधिक भट्ट बही इस्तेमाल की जाती रही हैं। यह एक बड़े आकार के रजिस्टर होते हैं जिनमें भट्ट अपने ग्राहकों, वंशों के जन्म, विवाह, लड़ाई, और मृत्यु के रिकार्ड रखने के लिए प्रयोग करते हैं। यह विशेष रूप से सिक्ख, राजपूत और क्षत्रीय अपने परिवारिक पुजारियों के पास से अपनी आगे की पीढ़ी के रिकार्ड लिखवाते थे। जिनको नबी कहा जाता है। हालांकि, यह पुजारी केवल रिकार्ड रखने वाले थे इसलिए इनकी लिखतों को इतिहास का आधार मानना उचित नहीं। क्योंकि यह सामग्री यादों पर आधारित समान्य स्तर की होती है और कई बार इनमें सुनी सुनाई कहानियां भी मिली होती हैं। परन्तु इसमें 'तिथियों का विवरण', 'लोगों के नाम' और स्थान की संभाल ठीक से होती है जो उस समय के इतिहास का सबसे कीमती खज़ाना भी कहा जा सकता है। इसलिए भट्टबही का केवल यही हिस्सा ही उपयोग किया जाना चाहिए।

दूसरा उल्लेख 'गुर सोभा ग्रंथ' 1711 में सेनापति द्वारा लिखा है, यह रचना केवल 1701 से 1709 के बीच के समय को बयान करती है। इसलिए इसमें बंदा सिंह बहादुर का कोई उल्लेख नहीं है।

तीसरा उल्लेख 'गुर बिलास साहित्य' है जोकि गुरु साहिबों के जीवन पर आधारित है, अठारवीं सदी के दूसरे अर्ध और उन्नीसवीं सदी के पूर्वाध में लिखा गया हैं। इसमें एकत्रित की गई कहानियां और कल्पित मिलावटी सामग्री का खुलकर प्रयोग किया हुआ है। जिस कारण ऐतिहासिक घटनाओं में बहुत फेरबदल है। इनमें से तीन रचनाओं का अक्सर उल्लेख दिया जाता है जैसे कि कुइर सिंह द्वारा गुरबिलास पातशाही दसवीं (1751), सुखा सिंह द्वारा गुरबिलास पातशाही छटी (1897), गुरबिलास पातशाही दसवीं (1797) और कुछ ने 1718 में पुस्तकों में इंदराज ही दर्ज किये हैं। कुछ लेखक (गुरमुख सिंह, दरबारा सिंह और काहन सिंह नाभा) इन तीनों की रचनाओं में गुरु साहिब की पीढ़ी का इतिहास ग़लत दिया हुआ है। इन्होंने भी बंदा सिंह की भूमिका के बारे उल्लेख नहीं किया। केसर सिंह छिब्बर जोकि मंत्री दीवान दरगाह मल का बड़ा पुत्र था) ने गुरु साहिबों का 1644 से 1696 का इतिहास 'बंसावलीनामा दस पातशाही वर्ष 1769 में लिखा है। इस पुस्तक का दूसरा भाग लेखक की यादों पर आधारित है। इसने बंदा सिंह की भूमिका के बारे कुछ सामग्री दी है।

1790 में स्वरूप सिंह कोशिश ने 'गुरु कीयां साखीयां' पुस्तक को लिखा, जोकि केवल भट्ट बहीयों पर आधारित हैं। इस पुस्तक में गुरु साहिबों के बारे बहुत मूल्यवान जानकारी है परन्तु बंदा सिंह के बारे कोई जानकारी नहीं है। इसी लड़ी में संतोख सिंह द्वारा रचित (गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, 1839) प्राचीन पंथ प्रकाश, 1814-1840, रत्न सिंह भंगू और ज्ञानी ज्ञान सिंह (पंथ प्रकाश 1890) लिखे गए हैं। जोकि सिक्ख इतिहास के अनुसार ऐतिहासिक हैं। परन्तु यह तीनों ही गंभीर रूप में विवादित जानकारी से भरपूर हैं। हालांकि, एक अन्य पुस्तक गणेशा सिंह बेदी द्वारा

रचित 'शशीवंश बिनोद (1879)' ने गुरु साहिबों और बिलासपुर (कहलूर) राज्यों के बीच कुछ मूल्यवान संबंधों को संभाला है। कुछ इतिहास जो उन्नीसवीं सदी के दूसरे अर्ध में रामसुख राव, फतेह सिंह प्रभाकर और जस्सा सिंह बिनोद ने लिखे हैं जिससे कुछ कीमती जानकारी प्राप्त होती है।

फारसी स्त्रोत बंदा सिंह के समय के बारे में जानकारी का सबसे मूल्यवान स्त्रोत हैं। हालांकि गुरु साहिबान का एक भी उल्लेख अकबरनामा (अबुल फजल, 1601) और तुजकि-ऐ-जहांगीरी (1620) में नहीं दिया हुआ परन्तु जुलिफकार अरदसतानी द्वारा रचित 'दाबिस्तान-ऐ-मजहब (1645-46) में सिक्ख धर्म के बारे खोज भरपूर और ठोस जानकारी मिलती है। सुजान राय भंडारी की 'खुलसतुत तवारीख (1696)' में गुरु साहिबों के समय के कुछ उल्लेख भी हैं, परन्तु यह केवल 1695-96 की अवधि को पूरा करते हैं। सबसे मूल्यवान फारसी सिद्धांत सिक्ख स्थिति का वर्णन करते हैं। अख़बार-ऐ-दरबार-ऐ-मउला जोकि बादशाह के दरबार की ख़बर बताती है जो जयपुर राज के प्रतिनिधि द्वारा भेजे गए विवरणों के रूप में है। यह दिल्ली दरबार और मुग़ल सम्राटों की फ़ौज के साथ सम्बन्धित ख़बरें देने की एजेंसी भी थी। इस स्त्रोत से 1707 के पश्चात के समय से 1750 तक की प्रतिदिन की डायरी पढ़ी जा सकती है। मैंने इस विवरण को व्यापक तौर पर प्रयोग किया है। विशेष रूप से मुग़ल सम्राटों और अन्य आधिकारियों के आदेश और गतिविधियों को सामग्री का स्त्रोत बनाया है।

ज्यादातर इस समय या इस समय के दौरान लिखी गई जानकारी के कुछ दस्तावेज नीचे दिए गए है- तजाकीतु सलातिन-ऐ-चुगाता (1724 में मुहम्मद हदी कामवर द्वारा लिखी गई) 1707 से 1724 तक का समय है। कामवर बहादुर शाह के पुत्र रफी-उल-शाह का अधिकारी था और हमेशा उनके साथ रहता था। उनके कर्तव्यों में साम्राज्यों को प्रति दिन जानकारी भेजने के साथ इस पुस्तक के दो भाग हैं। पहले हिस्से में 1707 तक के समय को शामिल किया गया है और दूसरे हिस्से में 1724 तक की घटनाओं का वर्णन है। हालांकि कामवर ने बंदा सिंह और सिक्खों के लिए अपनी नफरत को छुपाया नहीं फिर भी उसने बहुत ज्यादा जानकारी दी कि बंदा सिंह बहादुर की गतिविधियों के बारे उसने लोहगढ़ पर मुग़ल हमले और बंदा सिंह, सढ़ौरा की लड़ाई, नाहन के राजा की गिरफ्तारी, सिक्खों द्वारा जम्मू और सुलतानपुर के मुखियों की हत्या, गुरदास नंगल की घेराबन्दी, गिरफ्तारी और बंदे की शहादत की दास्तान के बारे विस्तारपूर्वक विवरण दिया है। नवंबर, 1710 में लोहगढ़ में हुए हमलों का वर्णन कहीं भी विस्तारपूर्वक नहीं मिलता जितना इन्होनें किया।

तारीख़-ऐ-इरादतख़ान इरादत ख़ान द्वारा 1710 से 1720 के मध्य में लिखी गई जिसमें अठारवीं सदी की पहली तिमाही का वृतांत है। इरदात ख़ान राजकुमार मुहंमद आज़म के एक पूर्व मुलाजिम, ख़ान ख़ाना के साथ सेवा में शामिल था। परन्तु उसकी मौत के उपरांत उसने सेवा से सन्यास ले लिया और इस पुस्तक को लिखा। उसने बंदा सिंह के बारे मूल्यवान जानकारी दी है।

इबरतनामा जो 1723 में मुहम्मद काजीमी द्वारा लिखी गई थी, अठारवीं सदी के पहले दो दशकों की एक आंखों देखा दस्तावेज है। उसने चप्पड़चिड़ी की लड़ाई, जम्मू और सुलतानपुर के प्रमुखों की हत्या, गुरदास नंगल की घेराबन्दी और बंदा सिंह की गिरफ्तारी की कीमती जानकारी दी है। यह वही थे जिसने मुग़ल सिपाहियों की मानसिकता की सही तस्वीर पेश की थी कि वह कैसे बंदा सिंह से ख़ौफ खाते थे।

दसतुर-इंसा (1720) जो यार मुहम्मद द्वारा लिखी गई एक मात्र ही फारसी स्त्रोत है, जिसमें लिखा है कि कुछ मुसलमान सरहिंद की सिक्खों की जीत के पश्चात सिक्ख धर्म में आ गए

थे।

इबरतनामा 1720 के मिर्जा मुहम्मद हरसी द्वारा लिखा, चप्पड़चिड़ी, राहों और गुरदास नंगल की लड़ाई के साथ 1716 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर और दिल्ली के अन्य सिक्खों की शहादत के बारे में विस्तृत विवरण देता है। दिल्ली में 29 फरवरी, 1716 को सिक्ख कैदियों के जुलूस की घटना ब्यान की है। उसने अपनी पुस्तक में कुछ सिक्ख कैदियों का बयान भी दर्ज किया है।

मुहम्मद हरसी राजकुमार रफी-उल-शान (बहादुर शाह का पुत्र) के अधीन एक कर्मचारी था और उसके पास पचास घुड़सवारों का एक मनसब था। वह बहादुर शाह के परिवार का पंसदीदा था और लाहौर से दिल्ली तक बादशाह बहादुर शाह का शव ले जाने के लिए सहायक के तौर पर चयनित हुआ था।

शाहनामा (मीर मुहम्मद अहसान साजद द्वारा सन् 1718 में लिखा) फरख्खसियर के शासन का एक वर्णन है। लेखक सबसे पहले चप्पड़चिड़ी के नाम का उल्लेख करता था, जहां सरहिंद के कब्ज़े के लिए लड़ाई 12 मई, 1710 को हुई थी। इस लड़ाई में उसने वज़ीर ख़ान की हत्या का एक खूबसूरत विवरण दिया है। वह सिक्खों का विवरण देने वाला पहला व्यक्ति है। इसलिए यह पुस्तक सिक्ख इतिहास का एक अहम अमूल्य स्त्रोत है।

मुनवर-कलाम सन् 1722 में शिवदास द्वारा लिखी गई पुस्तक में उल्लेख करता है कि बंदा सिंह ने गुरु गोबिंद सिंह से खंडे की पाहुल प्राप्त की थी। सिक्ख इतिहास के इस समय के बारे में एक अन्य मूल्यवान ख़बर है कि सन् 1723 में गुलाम मुयी उद्-दीन द्वारा लिखे गए 'फतेहनामा समदी' में लेखक ने गुरदास नंगल की लड़ाई और दिसंबर, 1715 में बंदा सिंह और अन्य सिक्खों की गिरफ्तारी का चश्मदीद गवाह बताया है। सन् 1731 तक खाफ़ी ख़ान द्वारा लिखी गई मुंतखबुल- उल-लूबाब ने इतिहास के सन् 1730 तक का विवरण दिया है। हालांकि इस काम में तारीखों के बारे में सही जानकारी की कमी है और यहां तक कि घटनाओं का विवरण दोषपूर्ण तरीकों के साथ लिखा है, परन्तु इसने नौजवान सिक्ख लड़के की कहानी दी है जो इस निवेदन पर रिहा होने से इन्कार करता है कि वह एक सिक्ख नहीं है। जब उसकी मां कोतवाल की चिट्ठी पेश करती है तो वह कहता है 'वह मेरी मां नहीं है, मैं सिक्ख हूँ, मुझे अपने शहीद भाईयों में शामिल करो। खाफ़ी ख़ान ने 29 फरवरी, 1716 को जुलूस निकालने का विवरण भी पेश किया हैं जब बंदा सिंह और अन्य सिक्ख कैदियों को दिल्ली की गलियों में घुमाया गया था। यह वही है जिसने बंदा सिंह के बयान को मुग़ल शासन के विरूद्ध जंग के ऐलान के लिए अपने कारणों के बारे लिखा था।

मीरात-ऐ-वारदात सन् 1734 में मुहम्मद सूफी वार्द द्वारा लिखी गई पुस्तक में बंदा सिंह के नांदेड़ से खरखोदा, चप्पड़चिड़ी की लड़ाई, वज़ीर ख़ान की हत्या और कुछ बाद की घटनाओं के विवरण भी दिए हैं। इसमें सरहिंद की जीत के उपरांत बंदा सिंह द्वारा एक समानतावादी प्रणाली को लागू करने का विवरण दिया गया है।

तारीख-ऐ-मुहम्मद शाही खुशहाल चंद द्वारा लिखी गई पुस्तक में सिक्ख धर्म में बंदा सिंह की जन्म तारीख और नये विवाहित सिक्ख लड़के की फांसी का वर्णन किया है जो सिक्ख धर्म से बचने के लिए स्वयं को एक हिंदू होने से इन्कार करता है।

मुसार-उल-उमरा शाह नवाज ख़ान शमश-उद्-दोला द्वारा सन् 1757-1758 में लिखी गई पुस्तक में अकबर सन् (1556) के समय से सन् 1757 तक दो सौ साल के मुग़ल दरबार

के अधिकारियों के बारे जानकारी दी है। शाह निवाज के पास मुग़ल दरबार के रिकार्ड तक पहुंच थी। इसलिए उन्होंने इन अधिकारियों की भूमिका के कीमती विवरण दिए हैं। इन अधिकारियों में गवर्नर, फ़ौजदार, दीवान और लाहौर के अन्य अधिकारी भी शामिल हैं। इन विवरणों से ही सिक्खों के साथ अपने व्यापार के बारे में बहुत सारी जानकारी मिलती है। यह पुस्तक सन् 1888 में बंगाली की एशियाटिक सोसायटी द्वारा अंग्रेजी भाषा में अनुवाद की गई थी।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के बारे में तीन नई पुस्तकों में सन् 1710 से 1716 की अमूल्य जानकारी है।

1. जरनैल बंदा सिंह बहादुर, फारसी स्त्रोत (पंजाबी में), बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित (सन् 2011 में सिंघ ब्रदरज़ अमृतसर द्वारा प्रकाशित)
2. डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित मुहम्मद कासिम औरंगाबादी के अहवाल-उल-ख़्वाकीन (सिंघ ब्रदरज़ अमृतसर द्वारा सन् 2012 में प्रकाशित)
3. बलवंत सिंह ढिल्लों द्वारा संपादित बंदा सिंह बहादर और राजस्थानी दस्तावेज (सिंघ ब्रदरज़ अमृतसर द्वारा सन् 2016 में प्रकाशित)

अंग्रेजी स्त्रोत

आरंभ के 'अंग्रेजी स्त्रोत' बंदा सिंह के बारे बहुत कुछ नहीं बताते। अंग्रेजी स्त्रोतों से उपलब्ध एक ही जानकारी 'जोहन सर रमन' और 'ऐडवर्ड्स स्टीफन' द्वारा 10 मार्च, 1716 को फोर्ट विलियम (कलकत्ता) के ब्रिटिश गवर्नर को लिखी चिट्ठी है। जिसमें दिल्ली में 700 सिक्खों के कत्लेआम का उल्लेख दिया गया है। यह डॉ. गंडा सिंह द्वारा 'अरली यूरोपियन अकाउंट ऑफ द सिक्ज़' में प्रकाशित किया गया है। अंग्रेजों ने बंदा सिंह को अन्य कार्यो में भी उल्लेख किया है। परन्तु यह सभी पुस्तकें/विवरण या तो 19वीं सदी के दूसरे अर्ध में या 20वीं सदी के पूर्वाध में प्रकाशित की गई थी। इस घटना का थोड़ा सा उल्लेख बंगाल में अंग्रेजी के प्रमुख इतिहास में थी जोकि आर. विल्सन ने भी दिया है परन्तु इरविन ने अपनी पुस्तक 'लेटर मुगलज़' में बंदा सिंह के बारे बहुत सारी उपयोगी जानकारी दी है।

बंदा सिंह की पहली सही जीवनी सन् 1915 में करम सिंह इतिहासकार ने लिखी थी। उसने दो पुस्तकें लिखी 'बंदा कौन था' (उर्दू में) और 'बंदा बहादुर' (पंजाबी में), दो वर्ष की अवधि में उसने अपनी पहली पुस्तक में संशोधन किया। करम सिंह ने पंजाबी स्त्रोत के अतिरिक्त कई फारसी स्त्रोतों का इस्तेमाल किया था। सन् 1930 में सोहन सिंह ने अपनी पुस्तक 'बंदा द ब्रेव इन इंग्लिश' प्रकाशित की। सोहन सिंह ने करम सिंह जैसे फारसी स्त्रोतों का प्रयोग नहीं किया परन्तु वह महान सिक्ख जरनैल के पहले अंग्रेज वृतांत पर आधारित था इसलिए उनको अच्छी प्रतिक्रिया दी गई थी। सन् 1935 में डॉ. गंडा सिंह ने अपनी पुस्तक बंदा सिंह बहादुर, पंजाबी में प्रकाशित करवाई। गंडा सिंह की अपनी पुस्तक 'करम सिंह इतिहासकार' पर आधारित थी। परन्तु उसने कुछ नई जानकारी भी शामिल कर दी थी। इसके पश्चात डॉ. हरिराम गुप्ता का 'हिस्ट्री ऑफ द सिख्ज़' में उसने बंदा सिंह के बारे में बहुत अधिक जानकारी दी। परन्तु आर्य समाजवादी होने के नाते वह न्याय नहीं कर पाए और उनकी खोज में पक्षपात का मेल हो गया। इसके उपरांत, बंदा सिंह (अंग्रेज़ी में) की चन्दला की पुस्तक सन् 2006 में प्रकाशित हुई और कुछ अन्य काम भी सामने आए। परन्तु इनमें से कोई भी नयी जानकारी नहीं मिली। लगभग सभी लेखकों ने करम सिंह या गंडा सिंह या पंजाबी स्त्रोत संतोख सिंह, ज्ञानी ज्ञान सिंह और रत्न सिंह भंगू जैसे हैं इसलिए इस पुस्तक में कोशिश की गई है कि सच्चाई सामने लाई जा सके।

सहायक पुस्तक सूची

1. दबिस्तान-ए-मजाहब (मऊबाद जुलफ़िकार अरदसतानी)
2. हिस्टरी-ऑफ़-द-सिक्खज़ एंड देयर रिलीजन
(डॉ. कृपाल सिंह, और खड़क सिंह),
3. गैदरिंग स्टौर्म (डॉ. हरबंस लाल अग्निहोत्री और चांद राम अग्निहोत्री),
4. हिस्ट्री-ऑफ-द-सिक्खज गुरु (अग्निहोत्री हरिराम गुप्ता),
5. इवैलूशन ऑफ ख़ालसा (इन्दु भूषण बैनर्जी)
6. माखज़ि तवारीख़े सिक्खां (डॉ. गंडा सिंह)
7. हिस्ट्री ऑफ सिक्खज (खुशवंत सिंह)
8. ए हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज (कनिंघम)
9. श्री गुरु हर राय साहिब जीवन और प्रतिभा (डॉ. जगजीवन सिंह)
10. बंदा सिंह बहादुर फ़ारसी स्त्रोत संपादक (डॉ. बलवंत सिंह ढिल्लों)
11. गुरु गोबिंद सिंह, जीवन, युद्ध और यात्राएं (डॉ. सुखदयाल सिंह)
12. गुरु ग्रंथ साहिब व विश्व शान्ति (रिटा. लैफ. कर्नल गुरदीप सिंह)
13. अब जूझन को दाओ (महिन्द्र सिंह सरना)
14. पीर बुद्धू शाह (खोजी काफिर)
15. अहवाल उल खवाकीन (मुहम्मद कासिम औरंगाबादी)
16. गुरमति प्रकाश मासिक पत्रिका (शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
17. अखबाराति-दरबारी-मुअल्ला, (बिदि)
18. तारीख़े-ऐ-महम्मद (साही)
19. एलियट एंड डाऊसन (मुहंमद लतीफ)
20. इबरतनामा (मुहंमद कासिम)
21. बंदा सिंह बहादुर (अमरजीत सिंह)
22. सलातिन-ऐ-चुगता (तजाकीत)
23. मुंतख़बल-उल-लुबाब (ख़ाफी ख़ान)
24. ज़फ़रनामा
25. भट्ट वहियां
26. गुरबिलास साहित्य
27. गुरु शोभा ग्रंथ गुरबिलास पातशाही दसवीं
28. गुरबिलास पातशाही छटी बंसावलीनामा दसां पातशाहियां
29. गुरप्रताप सूरज ग्रंथ 1839

30. पंथ प्रकाश 1814-1840
31. पंथ प्रकाश 1890 (रत्न सिंह भंगू और ज्ञानी ज्ञान सिंह)
32. अकबरनामा (अबुल फ़ज़ल 1601)
33. तुजकि-ए-जहांगीरी (1620)
34. तारीख़-ए-इरादतखानी (इरदत ख़ान)
35. इबरतनामा, दशूर-उल-निसां
36. इबरतनामा-1720
37. मिर्ज़ा मुहम्मद हरसी
38. शाहनामा (मीर मुहम्मद अहसान साजद)
39. मुनावर-उल-कलाम -1722 (शिवदास)
40. फतेहनामा सम्मदी (ग़ुलाम मुयी-उद्-दीन)
41. मिरत-ए-वारदात (मुहम्मद सूफ़ी वार्ड)
42. तारीखे-ए-मुहम्मद शाही (खुशहाल चंद)
43. मुसार-उल-उमरा (शाह नवाज ख़ान शमश-उद्-दोला)
44. अरली यूरपियन अकाउंट ऑफ द सिक्खज (डॉ. गंडा सिंह)
45. बंदा कौन था और बंदा बहादर (कर्म सिंह)
46 बंदा-द-ब्रेव (सोहन सिंह)
47. बंदा सिंह बहादुर (डॉ. गंडा सिंह)
48. बंदा सिंह (चन्दला),
49. इनसाईक्लोपीडिया ऑफ सिक्खज, जिल्द-I,II,III (हरबंस सिंह),
50. फाल-ऑफ-मुग़ल-इम्पायर भाग - 1 से 4 (बंस सिंह)
51. फस्ट राज ऑफ का सिक्खज (हरीश ढिल्लों)
52. मराठा हिस्ट्रोग्राफी (ए. आर. कुलकरनी, मनोहर)
53. ए. हिस्ट्री ऑफ जयपुर (जादुनाथ सरकार)
54. नॉर्थ-वस्टर्न फंर्टियर और ब्रिटिश इंडिया भाग-1, 1839-42
55. द-सिक्ख मारटियर (भगत लक्ष्मन सिंह)
56. द-डिकलाइन-ऑफ-द-मुग़ल इम्पायर (मीना भर्गावा)
57. बंदा सिंह बहादुर (सुरिदंर सिंह)
58. गुरु हर गोबिंद साहिब विज़न और प्रसनैल्टी (बलजिन्दर सिंह चीसा)
59. परकसन ऑफ हिस्ट्री (जगजीत सिंह)
60. मुग़ल डाकुमेंटस 1628-1659, Vol I&II (ऐस.ऐ.आई तिरमिजी)

सिक्ख राजधानी लोहगढ़ का मानचित्र

किला लोहगढ़ और 52 अग्रिम गढ़ियों/किलों का विस्तार

लोहगढ़ किला और इसके 52 अन्य अग्रिम किले हरियाणा प्रांत के पांच ज़िले यमुनानगर, करनाल, कुरूक्षेत्र, अंबाला और पंचकूला में फैले हुए थे। इसको समझने के लिए इस क्षेत्र को तीन हिस्सों में बांटा गया है।

जोन-1- करनाल और कुरूक्षेत्र

जोन-2- यमुनानगर

जोन-3- अंबाला और पंचकूला

उपसंहार

लोहगढ़ के 52 मोर्चा का विवरण व नक्शा

क्रम सं.	गांव	तहसील	जिला	विवरण
1.	लाहड़पुर	सढ़ौरा	यमुनानगर	मौजूद है
2.	सरावा	सढ़ौरा	यमुनानगर	मौजूद है
3.	अजीजपुर / रामगढ़	बिलासपुर	यमुनानगर	मौजूद है
4.	संधाये / संध्या	बिलासपुर	यमुनानगर	मौजूद है
5.	मछरौली	बिलासपुर	यमुनानगर	अब नहीं है
6.	छछरौली	छछरौली	यमुनानगर	अब नहीं है
7.	लेदाखास	छछरौली	यमुनानगर	मौजूद है
8.	गुलाबगढ़	छछरौली	यमुनानगर	मौजूद है
9.	खिजराबाद	छछरौली	यमुनानगर	मौजूद है
10.	बेगमपुर	छछरौली	यमुनानगर	अब नहीं है
11.	महलांवाली	जगाधरी	यमुनानगर	अब नहीं है
12.	गढ़ी वणजारा	जगाधरी	यमुनानगर	अब नहीं है
13.	अकालगढ़	जगाधरी	यमुनानगर	अब नहीं है
14.	ससौली	जगाधरी	यमुनानगर	मौजूद है
15.	दयालगढ़	जगाधरी	यमुनानगर	अब नहीं है
16.	नगलखेड़ा	मुस्तफाबाद	यमुनानगर	अब नहीं है
17.	रादौर	रादौर	यमुनानगर	मौजूद है
18.	हड़तान	रादौर	यमुनानगर	अब नहीं है
19.	दामला	रादौर	यमुनानगर	मौजूद है
20.	धीन	बराड़ा	अंबाला	मौजूद है
21.	मौजगढ़	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है
22.	मैहताबगढ़	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है
23.	जवाहरगढ़	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है
24.	अकालगढ़	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है
25.	नाहरा डेरा	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है
26.	तंदवाल	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है
27.	सिरसगढ़	बराड़ा	अंबाला	अब नहीं है

लोहगढ़ के 52 मोर्चा का विवरण व नक्शा

क्रम सं.	गांव	तहसील	जिला	विवरण
28.	नगला	साहा	अंबाला	मौजूद है
29.	बीहटा	साहा	अंबाला	मौजूद है
30.	लंडा	साहा	अंबाला	अब नहीं है
31.	केसरी	साहा	अंबाला	अब नहीं है
32.	नोहिनी	साहा	अंबाला	अब नहीं है
33.	कोड़वा	शहजादपुर	अंबाला	मौजूद है।
34.	कड़ासन	शहजादपुर	अंबाला	अब नहीं है
35.	कड़ौली	शहजादपुर	अंबाला	अब नहीं है
36.	छोटागढ़	नारायणगढ़	अंबाला	अब नहीं है
37.	बड़ागढ़	नारायणगढ़	अंबाला	अब नहीं है
38.	मटेड़ी	अंबाला	अंबाला	मौजूद है
39.	रतुर	रायपुर रानी	पंचकूला	मौजूद है
40.	हंगोली	रायपुर रानी	पंचकूला	मौजूद है
41.	जसवंतगढ़ कोट रंगेशवर	रायपुर रानी	पंचकूला	अब नहीं है
42.	बबैन	बबैन	कुरुक्षेत्र	अब नहीं है
43.	संघोर	बबैन	कुरुक्षेत्र	अब नहीं है
44.	हेलवा	पेहवा	कुरुक्षेत्र	मौजूद है
45.	कौल	पूण्डरी	कैथल	मौजूद है
46.	बनी बदरपुर छरौंदी	लाडवा	कुरुक्षेत्र	अब नहीं है
47.	खरींडवा	शाहबाद(मा.)	कुरुक्षेत्र	अब नहीं है
48.	खेड़ा अमीन	थानेसर	कुरुक्षेत्र	अब नहीं है
49.	गोरगढ़	इन्द्री	करनाल	अब नहीं है
50.	शेरगढ़ खालसा	इन्द्री	करनाल	अब नहीं है
51.	गढ़पुर खालसा	इन्द्री	करनाल	अब नहीं है
52.	शामगढ़	करनाल	करनाल	मौजूद है

किला लोहगढ़ और सिक्ख राज के सचित्र प्रमाण

किला लोहगढ़ और उसके 52 मोर्चे जोकि हरियाणा के 6 जिले (करनाल कैथल, कुरुक्षेत्र, यमुनानगर, अंबाला, पंचकूला) में फैले हुए है का मानचित्र। इस विषय को सही ढ़ंग से समझने के लिए इस क्षेत्र को तीन ज़ोनों में विभाजित किया गया है। ज़ोन 1 : करनाल, कैथल और कुरुक्षेत्र, ज़ोन 2 : यमुनानगर और ज़ोन 3 : अंबाला, पंचकूला। लगभग 200 सालों तक इस किलेबंदी की तैयारी सिक्खों द्वारा गुरु नानक साहिब से लेकर बाबा बंदा सिंह बहादुर तक की गई थी।

लोहगढ़ के 52 अग्रिम किले

काफ़ी खान जोकि लोहगढ़ के युद्ध का चश्मदीद गवाह है और अखबारे–दरबारे मऊला में इन 52 अग्रिम किलों का जिक्र करता है जिनकी सूची और जगह पूर्व पन्नों पर बताई गई है। इन सभी किलों की बनावट एक जैसी है और यह सभी किले करनाल, कैथल, कुरुक्षेत्र, यमुनानगर, अंबाला और पंचकूला जिलों में फैले हुए हैं और सन् 1710 से 1716 तक यह सभी किले मुगल फौज के विरुद्ध आपस में तालमेल बनाकर लड़ते रहे और इन किलों के चक्रव्यूह को तोड़ना मुगल फौज के लिए लगभग असंभव था। इन किलों के निर्माण की योजना गुरु नानक साहिब के समय से ही तैयार हो गई और वणजारे सिक्खों ने इन किलों पर अपने गांव बसाये ताकि समय आने पर हलीमी राज की स्थापना की जा सके।

यमुनानगर की तहसील छछरौली का गांव लेदा खास.
(30´14´47.08´´, 77´19´47.51´´)

सढ़ौरा नगर जिला यमुनानगर में लोहगढ़ का मोर्चा
(30.3845262, 77.228106)

कुछ बुर्ज/गढ़ी जंगलों में बने हुए हैं। 52 किलों में से 22 आज भी मौजूद हैं, जिनकी चिनाई में नानकशाही ईंटों का प्रयोग किया हुआ हैं।

भाई लक्खी शाह वणजारे का कुआँ
कांसापुर जिला पंचकूला नजदीक हंगोली में

गांव हंगोली तहसील रायपुर रानी जिला पंचकूला का मोर्चा
30´ 31´39.36´´ उत्तर, 77´ 0´43.21´´ पश्चिम)

गांव सरावां, तहसील सढ़ौरा जिला यमुनानगर
(30.3484613, 77.1936153)

गांव रातोर तहसील रायपुर रानी जिला पंचकूला का मोर्चा
(30´ 31´33.14´´, 77´ 2´36.82´´)

रामगढ़, तहसील बिलासपुर, जिला यमुनानगर (30.3168028, 77.2452528)

यह लोहगढ़ का अग्रिम किला गांव बीहटा तहसील साहा जिला अंबाला में स्थित है और इस गांव में भाई लक्खी राय वणजारे का बनाया हुआ नानकशाही ईंटों का पक्का तालाब भी मौजूद है। (30.27671005,76.95251225)

गांव धीन का मोर्चा जो तहसील बराड़ा (अंबाला) में है (30.24457201,77.10401982)

गांव नगला, तहसील साहा (अंबाला) का बुर्ज (30.2281356, 76.9451166)

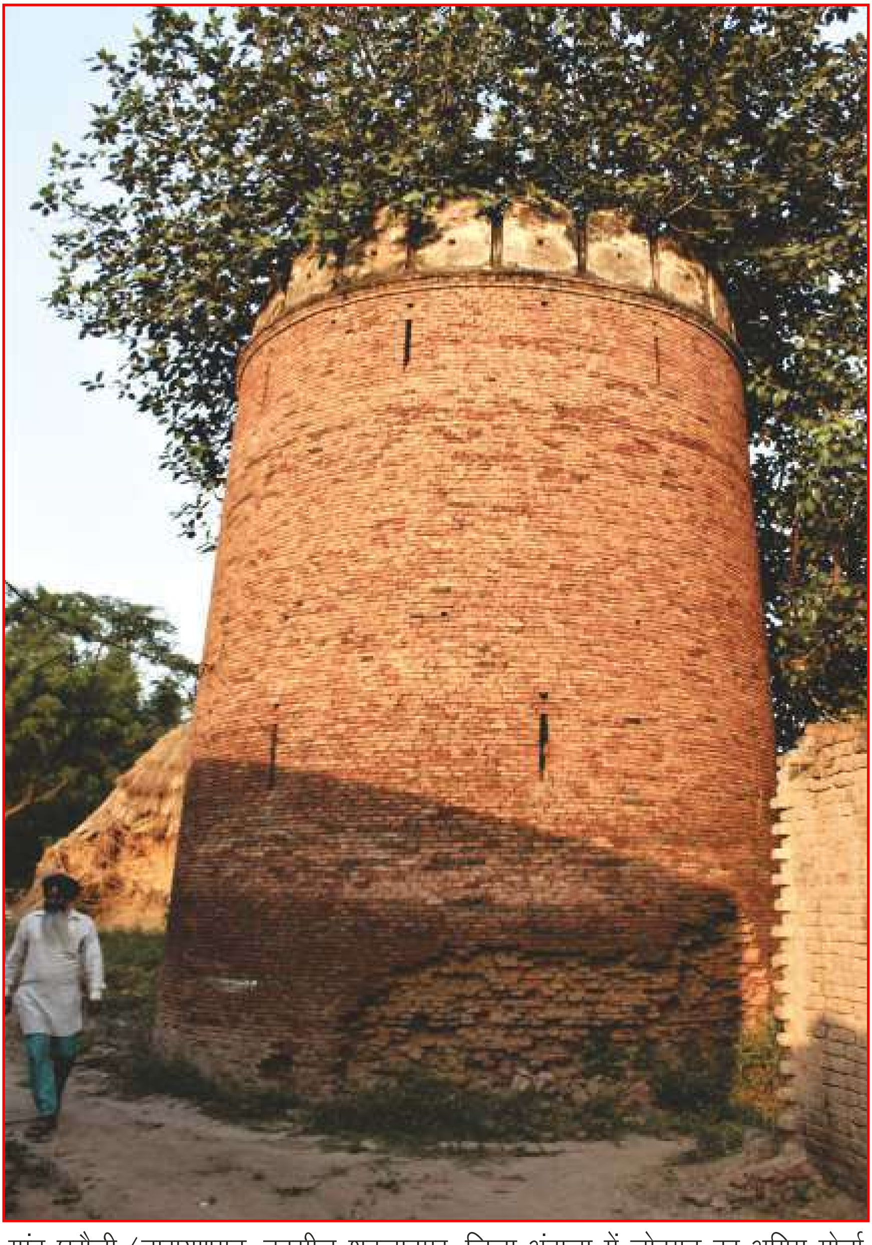

गांव घरौली/नारायणगढ़, तहसील शहजादपुर, जिला अंबाला में लोहगढ़ का अग्रिम मोर्चा
(30.38197824,76.99183241)

गांव कोड़वा, तहसील शहजादपुर, जिला अंबाला (30.3963974,76.9661594)

गांव हेलवा, तहसील पेहवा, जिला कुरुक्षेत्र ;29ण्9766375ए76ण्4775806द्ध

गांव ससोली, तहसील जगाधरी, जिला यमुनानगर (30.1423675,77.2580146)

गांव लाहडपुर, तहसील सढौरा, जिला यमुनानगर (28.5547675,76.7826545)

गांव दामला, तहसील जगाधरी में लोहगढ़ का मोर्चा। (30.0819074,77.2191893)

गांव रामगढ़, तहसील बिलासपुर में लोहगढ़ का मोर्चा। (30.3168028, 77.2452528)

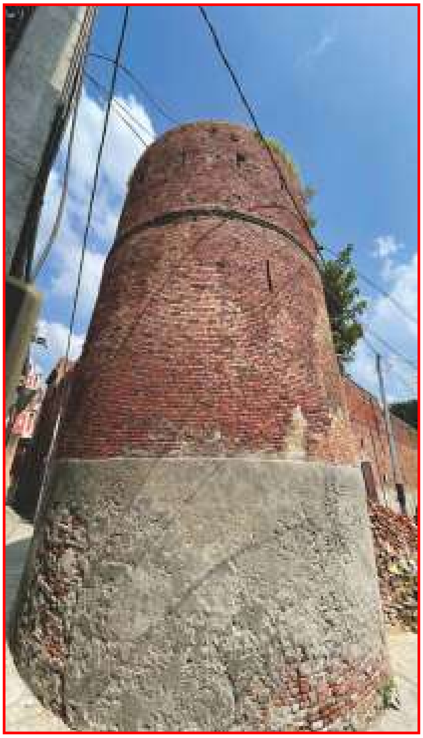

गांव शामगढ़ में तहसील व जिला करनाल में लोहगढ़ का मोर्चा। (29.774505, 76.956283)

गांव मटेड़ी शेखा में तहसील व जिला अंबाला में लोहगढ़ का मोर्चा। (30.334472, 76.772833)

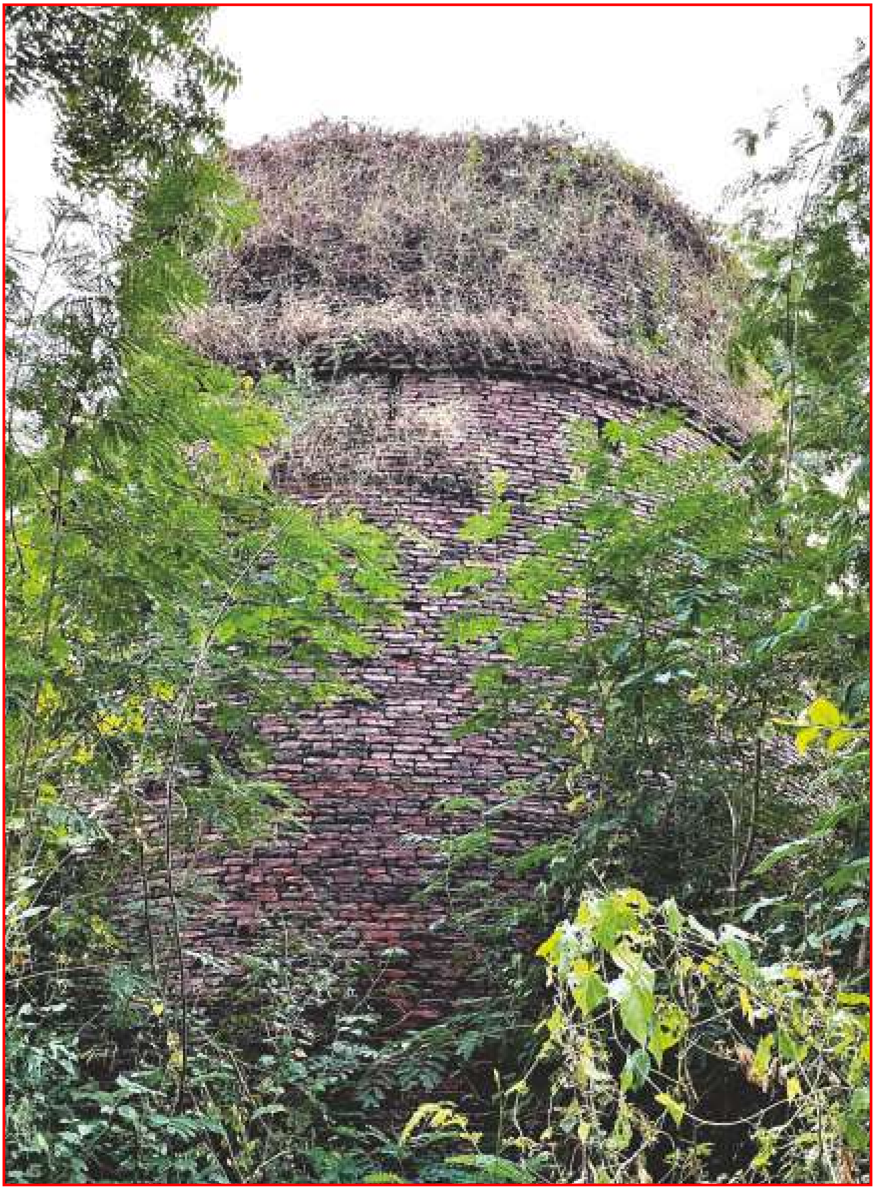

गांव कौल, तहसील पूण्डरी, जिला कैथल की है जहां लोहगढ़ का एक मोर्चा है। जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने इन्हीं मोर्चों से हमला कर कैथल का खजाना लूटा था। (29.8431022,76.6642727)

तहसील बाबैन (कुरूक्षेत्र के गांव संगोर में अंग्रेज़ों द्वारा लोहगढ़ का मोर्चा तोड़ कर थाना स्थापित किया गया था ताकि बागियों पर नज़र रखी जा सके परंतु काफी समय तक इस थाने में अपराध की वारदातें न होने के कारण इसको बंद कर दिया गया था।

यह तस्वीर कुरूक्षेत्र के बाबैन गांव की है जहां लोहगढ़ का एक मोर्चा था। इस गांव के नज़दीक लोहगढ़ के अन्य मोर्चे भी थे जोकि खरींडवा गांव, लक्खी गढ़ी आदि में थे। अब मौके पर मौजूद नहीं हैं।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर का आक्रमण क्षेत्र जम्मू से लेकर बरेली तक

अखबार–ऐ–दरबार–ऐ–मऊला अनुसार जरनैल बंदा सिंह बहादुर का मुगलों पर आक्रमण जम्मू से लेकर बरेली तक था। इस आक्रमण की लंबाई लगभग 550 कि.मी. थी। जम्मू की पहाडियों से लेकर बरेली की पहाड़ियों तक खालसा फौज द्वारा 10 से 15 कि.मी तक किलाबंदी की हुई थी। सबसे विशेष बात यह है कि इतने लम्बे क्षेत्र में फैले हुए सिक्खों का आक्रमण में उचित तालमेल था जोकि उचित योजना और अभ्यास के बिना संभव नहीं था। इससे यह बात साबित होती है कि सिक्ख लगभग 200 सालों तक खालसा राज स्थापित करने हेतु योजना बद तरीकों से कार्य करते रहे। वण्जारे सिक्ख दुनिया भर में व्यापार कर मोटा मुनाफा कमाकर खालसा राज के लिए ज़रूरी वस्तुएं एकत्रित करते हुए इन मार्गों से लोहगढ़ पहुंचते थे। इन मार्गों के द्वारा हथियार, खाने का सामान, घोड़े इत्यादि लोहगढ़ पहुंचाऐ गए।

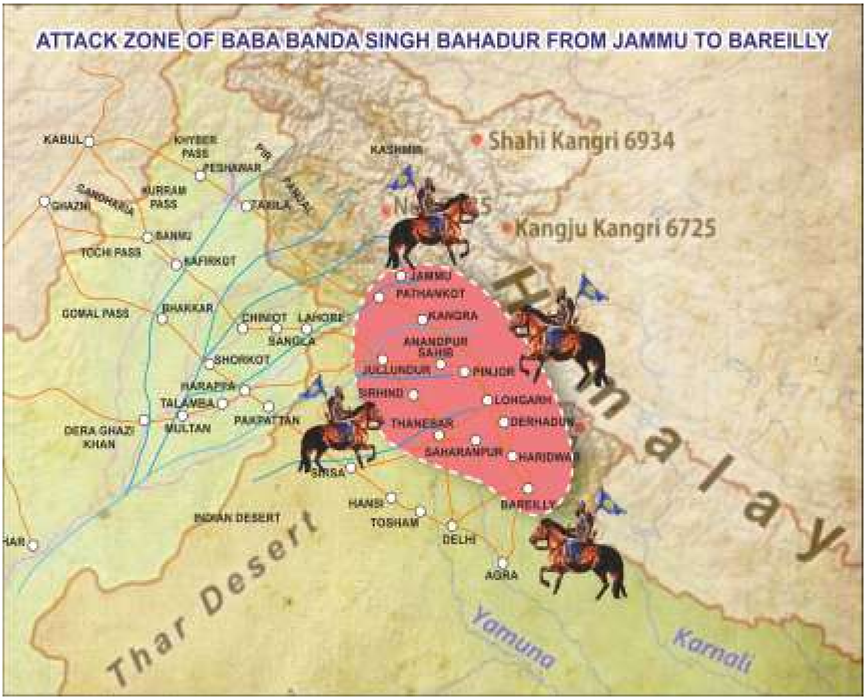

किला लोहगढ़ का मानचित्र 32 सैक्टरों में विभाजित

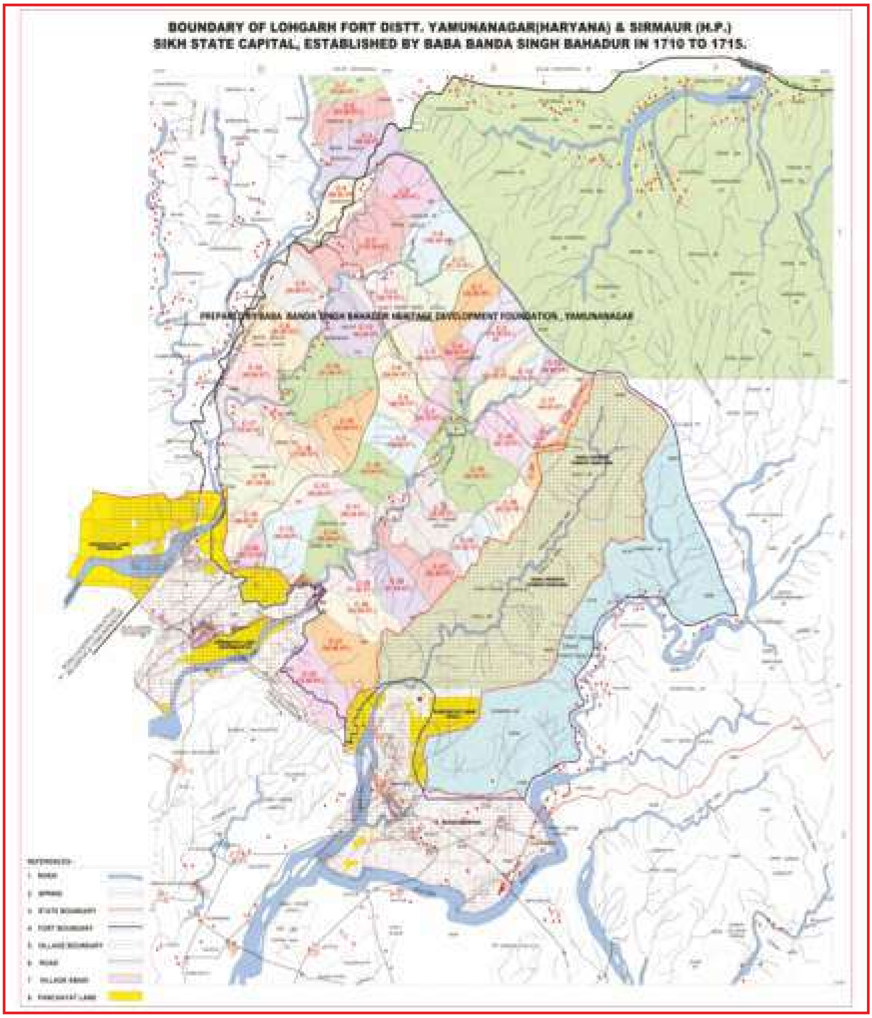

लोहगढ़ किला लगभग 7000 एकड़ में फैला हुआ है और उपरोक्त वर्णित नक्शे अनुसार इस क्षेत्र को 32 सैक्टरों में विभाजित किया गया है तांकि इस क्षेत्र को समझा जा सके। अध्याय नं. 1 व 2 में लोहगढ़ किले के भौगोलिक स्थिति हेतू विस्तारपूर्वक जानकारी दी गई है।

भाई लक्खी राय वणजारा के व्यापारिक रास्तों का मानचित्र

सिक्ख टांडों का मार्ग मानचित्र और जिन मार्गों से सामान लोहगढ़ पंहुचाया जाता है।
यह वे व्यापारिक रास्ते हैं, जिनके द्वारा भाई लक्खी राय वणजारा, लोहगढ़ किले में घोड़े, बारूद और किले के निर्माण का सामान उपलब्ध करवाया करते थे।

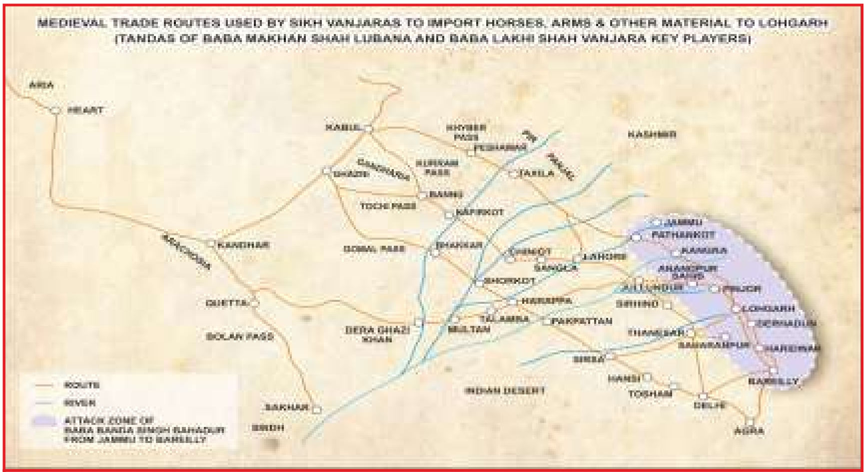

जरनैल बंदा सिंह बहादुर के अधीन सिक्ख राज के इलाके (हरियाणा, पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और पूर्वी पाकिस्तान) इस इलाके का वर्णन अध्याय 27 में वर्णित है और यह इलाका 5 जोन में विभाजित किया गया है।

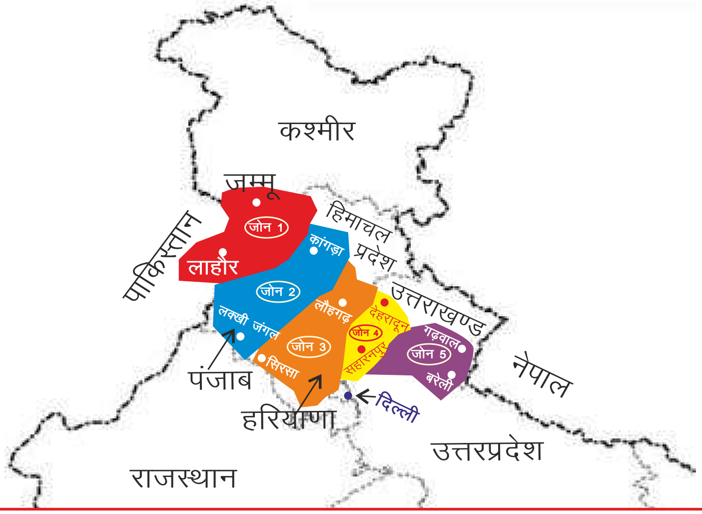

लोहगढ़ और मुखलिसगढ़

(30.318855,77.5950717)

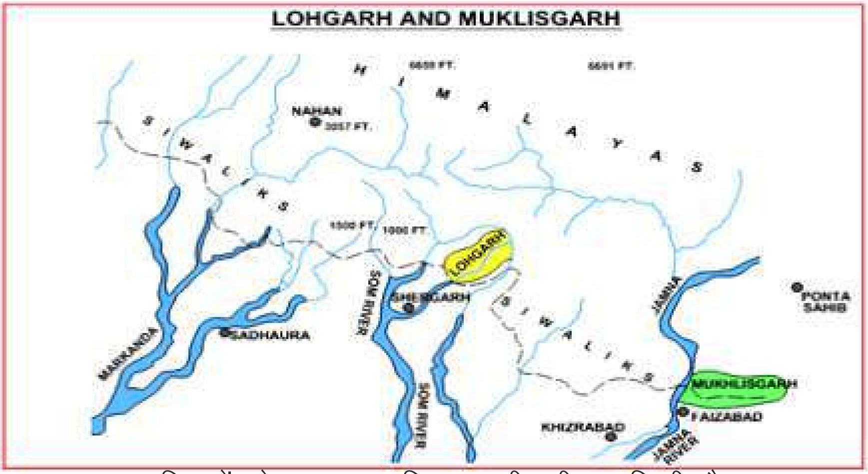

मानचित्र में लोहगढ़ व मुखलिसगढ़ की दूरी 30 कि.मी. है।

इतिहासकारों ने किला लोहगढ़ को, मुगलों का बनाया रंगमहल 'मुखलिसगढ़' बताया है जबकि लोहगढ़ और मुखलिसगढ़ की दूरी लगभग 30 किलोमीटर से अधिक है। शाहजहाँ के जरनैल अली मर्दान खान द्वारा मुखलिसगढ़ यमुना नदी के किनारे परगना फैजाबाद सरकार सहारनपुर में बनाया गया था जोकि मौजूदा समय उत्तर प्रदेश में स्थित है और हथनीकुंड बैराज के नज़दीक है। मुखलिसगढ़ उस समय की आधुनिक तकनीक से तैयार किया गया था और यमुना नदी के पानी के प्रभाव के कारण इस रंगमहल के कमरे गर्मियों में ठंडे और सर्दियों में गर्म रहते थे।

मुखलिसगढ़ की इमारत

लोहगढ़ और मुखलिसगढ़

मुखलिसगढ़ का क्षेत्रफल 45 एकड़ के लगभग है और रंगमहल की इमारत 2 एकड़ के करीब में बनी हुई है। फिलहाल यह जगह पुरात्तव विभाग, भारत सरकार की अधिसूचित संरक्षित स्थल है और इसके पुनः निर्माण के लिए 2 करोड़ रुपए की राशि भी ख़र्च की गई है। कभी भी मौके पर आकर इतिहासकारों ने लोहगढ़ और मुखलिसगढ़ को देखने की जहमत नहीं की, केवल एक दूसरे की नकल मारकर लोहगढ़ को मुखलिसगढ़ लिखते रहे।

चित्रों मे रंग महल मुखलिसगढ़ की इमारतें

भोजराज में एक अन्य दुहरी दो–मंजिला इमारत मिली है जिसमें 25 बैरकें बनी हुई हैं।

इस इमारत की छत एक मीटर से अधिक मोटी है, जिस पर तोप के गोलों का प्रभाव अंदर नहीं पहुँच पाता। इसकी अंदर वाली बैरकें 2–2 थंबों पर टिकी हुई हैं। बाहरी दीवारों की चौड़ाई लगभग 2 मीटर से अधिक है और ख़ास किस्म के तरीके के साथ पत्थर तराश कर बनाई हुई है। इसकी बनावट एक अच्छी मात्रा के चूने, सुरख़ी की मोटी तह पर दूसरा पत्थर टिका कर मज़बूत बनाया गया है। इस की ऊँचाई 30 फुट है और इस इमारत के निर्माण को देखकर हैरानी होती है कि इसको बनाते समय कोई जल्दबाज़ी नहीं की गई थी। गुरु हर राय साहिब ने यहां पर अपने जीवन के 13 साल व्यतीत किये इस गांव का नाम थापल है और वह इस जगह के काफी नजदीक है। यह गांव राजा भोज के साथ संबंधित है और राजा भोज के नाम से लोहगढ़ क्षेत्र में 25 गांव मौजूद हैं। भाई मनी सिंह जी राजा भोज के वंशज है और भाई मनी सिंह के दादा, परदादा नाहन

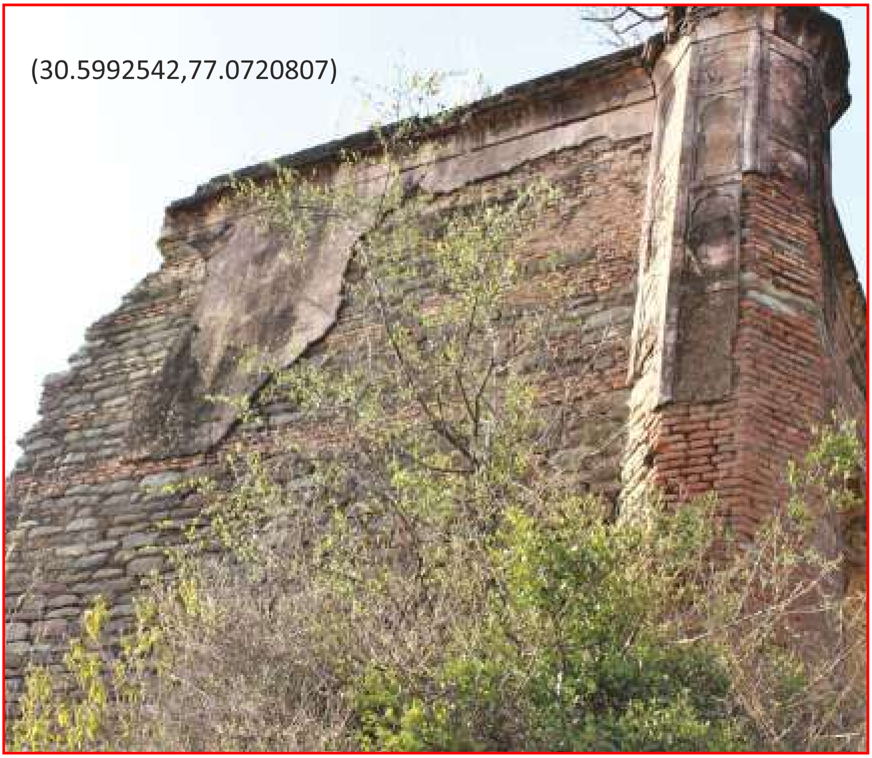

भोजराज में लोहगढ़ का मोर्चा

भोजराज में लोहगढ़ का मोर्चा

गांव भोजराज में लोहगढ़ के मोर्चे

अब (हिमाचल प्रदेश) के रहने वाले थे और यही पर ही भाई मनी सिंह के बड़े बुजुर्ग भाई राधे के साथ गुरु नानक साहिब की मुलाकात हुई थी। यह जगह नाहन से कुछ दूरी पर स्थित है।

यह किला गांव भोजराजपुर (30'34.27',98''उत्तरी 77'5.5,83'' पश्चिमी) में समुद्र तल से 1200 फुट ऊँची पहाड़ी पर स्थित है। यह सुरक्षा की दृष्टि से बहुत बढ़िया मोर्चा है, जिसमें चूने और सुरख़ी की अच्छे अनुपात में चिनाई की हुई है। दीवारों का निर्माण करने के लिए पत्थर पूरी तरह तराश कर बराबर आकार के बनाकर रखे हैं ताकि पकड़ मज़बूत हो और देखने में यह इमारत बढ़िया लगे व दुश्मन के हमले के समय सुरक्षित रहे।

थानेसर शहर का नक्शा
दस सिक्ख गुरु साहिबान के आगमन का प्रतीक

थानेसर लोहगढ़ का प्रवेशद्वार बना और 10 सिख गुरु साहिबान थानेसर पहुंच कर लोहगढ़ और हलीमी राज की स्थापना के लिए कार्य किया। सूफी संत, पीर जलालुद्दीन, पीर निजाम थानेसरी, पीर भीखन शाह, पीर बुद्धुशाह ने इस कार्य में अहम भूमिका निभाई। इस विषय में विस्तारपूर्वक जानकारी अध्याय 22 में दी गई है।

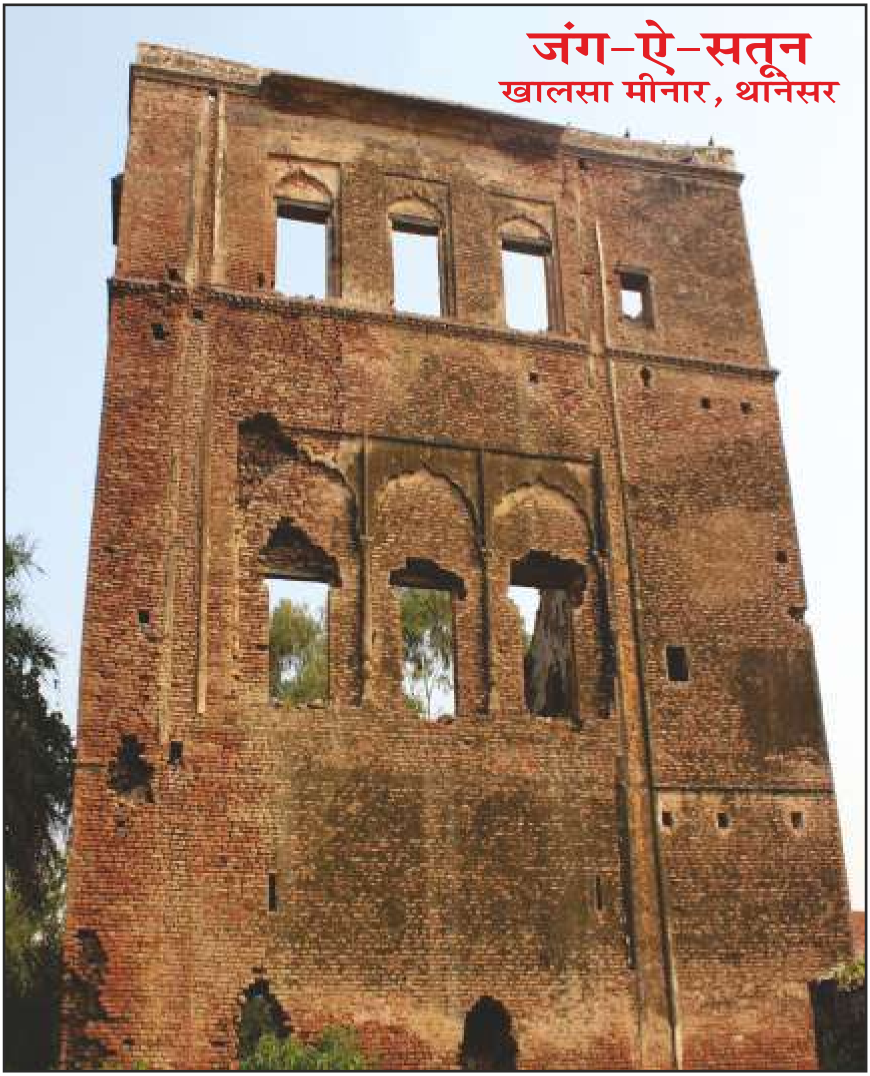

अध्याय 22 में थानेसर और सिख इतिहास के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी दी गई है। थानेसर ही एक दुनिया का ऐसा शहर हैं जहां दस के दस सिख गुरु साहिबान आए और सन् 1710 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने थानेसर शहर को जीत लिया। यह खालसा मीनार इस बात का प्रतीक है कि यहां से आगे लोहगढ़ का क्षेत्र है और यहां से खालसा राज का क्षेत्र शुरु होता है। इस मीनार का जिक्र फारसी के स्रोतों में आता है। (29.9799661,76.8295566)

गुरुद्वारा मंजी साहिब
(बनी-बदरपुर तहसील लाडवा, ज़िला कुरुक्षेत्र)

यह गुरुद्वारा यमुना नदी के किनारे गाँव बनी–बदरपुर में इंद्री, लाडवा और रादौर के बीच स्थित है, जो गुरू तेग़ बहादुर की याद में बना हुआ है। गुरू साहब यहाँ सन् 1665 और फिर सन्1671 में आए। गुरू जी ने मसंद राम बख्स को यहाँ किला और गुफा बनाने के लिए काफ़ी धन दिया। यहाँ लगभग 1.5 कि.मी. लम्बी गुफा है जो गाँव छलौंदी तक जाती है। ज्ञानी गरजा सिंह लिखते हैं, कि गुरू साहिब गुरगद्दी संभालने से पहले भी 1656 में यहाँ आए थे। यह इलाका सारा गुरू नानक साहिब जी के समय से सिक्खी से जुड़ा हुआ था और गुरू नानक साहिब कुरूक्षेत्र से होते हुए इस इलाके में से भ्रमण करते 'कपाल मोचन' गए थे जो लोहगढ़ किले से लगभग 10 कि.मी. दूर है। फिर तीसरी पातशाही गुरू अमरदास जी कुरूक्षेत्र से हरिद्वार जाते हुए भी इसी इलाके में विचरते हुए यहाँ से ही जमुना नदी पार की थी जिसका ज़िक्र चौथे पातशाह ने गुरू ग्रंथ साहब के अंक 1116 पर किया है। बाबा बंदा सिंह बहादुर और मुगलों के बीच घमासान युद्ध हुआ था।

इंद्री में भाई लक्खी राय का कुआँ है। लोहगढ़ किले के 52 अग्रिम किलों में से दो किले लाडवा और रादौर में मौजूद थे जहां बाबा बंदा सिंह बहादुर के नाम से गुरूद्वारा साहिब सुशोभित हैं। एक किला 'गौरगड़' गाँव में है। गौर का मतलब है वणजारा। यहाँ आजकल सिर्फ़ भाई लक्खी राय का कुआँ ही मौजूद रह गया है। गौरगढ़ मंजी साहिब गुरूद्वारा साहिब से कुछ ही किलोमीटर दूर है।

मंजी साहिब गुरूद्वारे की पुरानी इमारत कार सेवा के नाम पर गिरा कर संगमरमर का गुरुद्वारा बनाया हुआ है। अब तो यहाँ निशानी के तौर पर एक 'मंजी' ही रह गई है, जो पुरानी नानकशाही ईंटों की बनी हुई है।

लोहगढ़ ट्रस्ट खोजी टीम ने इस इलाके में तीन गुफाएं ढूँढ़ी हैं, मंजी साहिब, (कुरूक्षेत्र), गाँव जठलाना और दयालगढ़ (यमुनानगर)। यहाँ से अन्य गुफाएँ मिलने की उम्मीद की जाती है।

इन ढाई–फुट की गुफाओं को सिक्ख गुरिल्ला लड़ाई के लिए प्रयोग करते थे क्योंकि यहाँ से दुश्मन पर हमले के समय सुरक्षा मिलती थी। सिक्ख एक जगह से दूसरी जगह पर धरती के नीचे से ही निकल जाते थे और दुश्मन पर वार करके फिर वापिस गुफा में आ जाते थे। सिर्फ़ तोपों के मुँह दुश्मन पर गोलाबारी करने के लिए गुफा से बाहर निकाले होते थे। इस तरह इन गुफाओं का दुश्मन को पता नहीं लगता था। इसी कारण जब इस घने जंगलों की गुफाओं में बादशाह बहादुर शाह की फौजें आगे बढ़ रही थीं तो सिक्खों के अचानक हमलों ने बादशाह को अपना रास्ता बदलने के लिए मजबूर कर दिया और इंद्री वाला रास्ता छोड़ कर शाहबाद के रास्ते से सढ़ौरे की तरफ हमला किया।

इन सभी इलाको में सिक्खों के ही गांव थे, जैसे गढ़पुर खालसा, कारी खालसा, ऊपरपुर खालसा, बुधानपुर खालसा, भौजी खालसा, नदी खालसा आदि। गुरू साहबानों ने करनाल, शाहबाद, बुढ़ियां, अंबाला, नाहन, पिंजौर, और मनी–माजरा में सिक्खी प्रचार के लिए मंजी स्थापित की हुई थी। इसलिए यह सभी इलाको में सिक्ख भारी मात्रा में बसते थे जो बाद में बाबा बंदा सिंह बहादुर की फ़ौज का हिस्सा बने थे। मुगलों ने 1716 लोहगढ़ किले पर कब्ज़ा करके सभी सिक्खों का कत्लेआम कर दिया। अब यहाँ बसे हुए लोगों की आबादी 200 साल ही पुरानी है।

गुरु काल में नानकशाही ईंटों की बनी मंजी साहिब

लोहगढ़ किले की दीवारें व अन्य निशानियाँ

सैक्टर–12 लोहगढ़
दीवार की नींव

कलेसर के जंगलों में
तोप रखने का प्लेटफार्म

पटवार खाने के अधिकारी लोहगढ़
किले का मुआइना करते हुए

सैक्टर–32 लोहगढ़ में
एक बड़ा रैंप

लोहगढ़ सैक्टर–20 में रैंप

लोहगढ़ की पहाड़ियों
के ऊपर बने कमरे

लोहगढ़ किले की दीवारें व अन्य निशानियाँ

चार मीटर चौडी दीवार की नींव'

आले सहित किले की दीवार

तोप रखने का प्लेटफार्म

पहाड़ी की चोटी पर मोर्चा

बेहट के पहाड़ों में किले और गुफा। जहाँ से एक जगह से दूसरी जगह छुप कर जाया जा सकता था।

चूना और सुरख़ी की चिनाई की दीवार

लोहगढ़ किले की दीवारें व अन्य निशानियाँ

लोहगढ़ में मटकियाँ, बर्तन, चक्की आदि (ज़ोन 2 और 3)

बड़ी मटकी जिसमें अनाज
स्टोर किया जाता था।

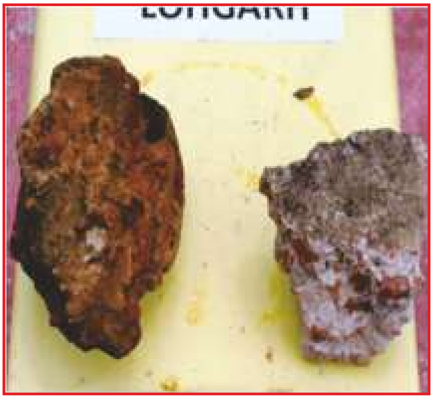

चूना और कंक्रीट जो
निर्माण कार्य के लिए
प्रयोग किया जाता था।

धातुओं से लोहा बाहर
निकालने के बाद का
बचा बुरादा (**Residue**)

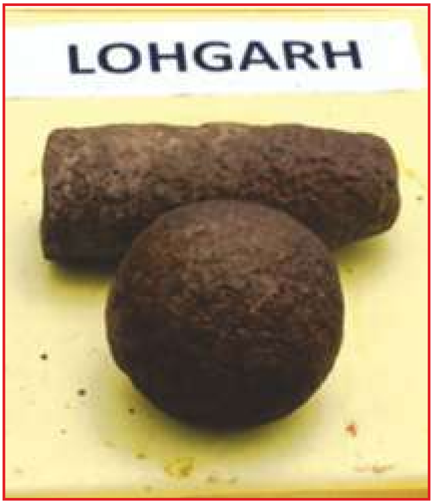

पत्थरों को तराश कर
बनाए गए गोले जो
दुश्मन पर छोड़े जाते थे।

यह अलग–अलग तरह के चक्र हैं जो तेल निकालने,
पानी उठाने और भारी समान उठाने आदि के काम आते थे।

यह अलग–अलग तरह की ओखलियाँ हैं जो मसाले कूटने और
अन्य चीज़ों को बारीक करने के काम आती हैं।

यह चक्की के पाट हैं, जिस द्वारा गेहूँ की पिसाई की जाती थी। बड़े चक्की के
पाटों द्वारा सुरख़ी और चूना पीसा जाता था जो कि चिनाई के काम आता था।

लोहगढ़ इलाके में अलग–अलग खिलौने मिले हैं,
जोकि बच्चों के खेलने के काम आते थे।

तराशे हुए पत्थर, जिनके दोनों तरफ सुराख किए हुए थे तांकि इनमें चूना व सुरखी अच्छी तरह से भरी जा सके और चिनाई के समय पत्थर की पकड़ मजबूत हो सके।

पत्थरों पर नक्काशी की हुई, जिससे लोहगढ़ की सुंदरता बढ़ सके।

मटके, पीने के पानी वाले घड़े, अनाज संभालने वाले बड़े बरतन, बर्तनों के टुकड़े, किला लोहगढ़ ज़ोन में फैले हुए हैं। जिसे खालसा फौज ने प्रयोग किया था।

लोहगढ़ किले को बनाने के लिए पाँच विभिन्न आकार की चूने व सुरखी निर्मित ईंटों का प्रयोग किया गया है, जिसका विवरण इस प्रकार है :–

1. 7”X3.5”X1.5”
2. 7”X5” X1.5”
3. 10”X7”X1.5”
4. 11”X6”X2”
5. 14”X8”X2”

डेम और पानी का प्रबंध

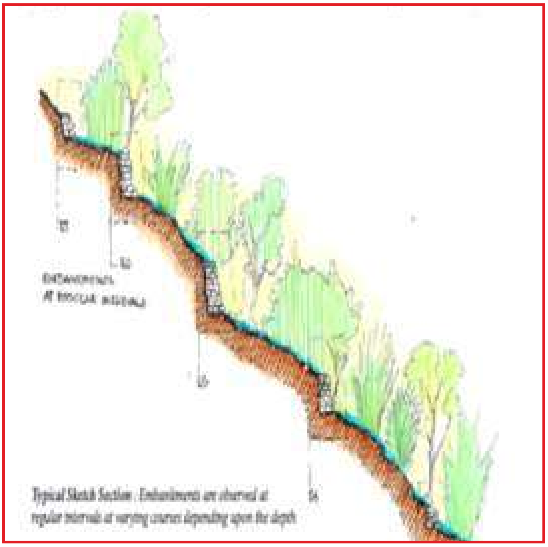

किला लोहगढ़ से बाहर आने वाली नदियों और खोलों का निरीक्षण किया गया जिस से पता लगा कि गर्मियों के मौसम में भी इन नदियों में पानी मौजूद रहता है। इन्हीं खौलों में ग़ैर बरसाती मौसम में भी पानी की मौजूदगी एक महत्वपूर्ण विषय है और खालसा फ़ौज ने इस कुदरत की नियामत को अच्छी तरह इस्तेमाल किया और पीने के पानी का प्रबंध पहाड़ियों पर ही कर दिया जिस कारण खालसा फ़ौज और घोड़ों के लिए काफ़ी मात्रा में पानी उपलब्ध था, जोकि जंगी असूल अनुसार पहली ज़रूरत है।

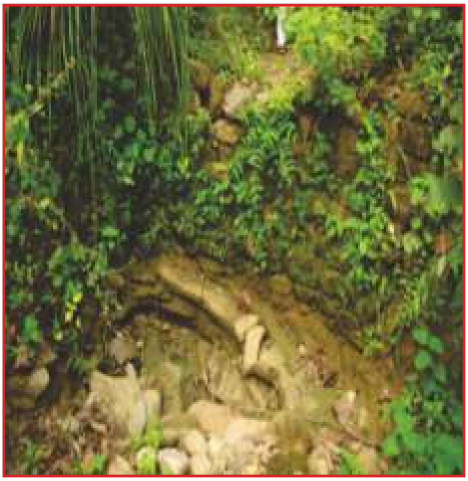

लोहगढ़ किले में अलग–अलग स्थानों पर पानी जमा करने के बाँध।

सैक्टर–12 का चैक बाँध

सैक्टर–2 का चैक बाँध

सैक्टर–11 का चैक बाँध

सैक्टर–22 का चैक बाँध

सैक्टर–18 का चैक बाँध

सैक्टर–15 का चैक बाँध

सैक्टर–17 का चैक बाँध

सैक्टर–23 का चैक बाँध

सैक्टर–29 का चैक बाँध

सैक्टर–19 का चैक बाँध

सैक्टर–21 का चैक बाँध

सैक्टर–4 का चैक बाँध

सैक्टर–4 का चैक बाँध

सैक्टर–24 का चैक बाँध

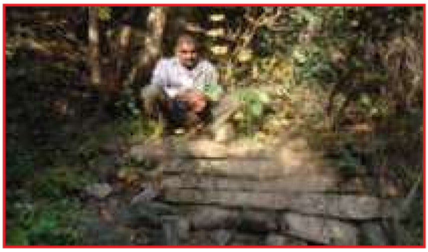

सैक्टर–6 का चैक बाँध

सैक्टर–23 का चैक बाँध

मस्सा रंघड़ का महल

बाबा बंदा सिंह बहादुर की शहादत के बाद सिक्ख कौम नेता–विहीन हो गई और सिक्खों के ख़ात्मे के लिए रंघड़ मुसलमान नियुक्त किये गए। इन राजपूत मुसलमानों ने न सिर्फ़ सिक्खों को मारा बल्कि लोहगढ़ के किले को भी मलियामेट करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के अनुसार मस्सा राजपूत मुसलमान 1716 से 1740 तक सिक्खों को ख़त्म करने के लिए लोहगढ़ के नज़दीक गांव मछरौली में रहा। इस इलाके में 85 गांव रंघड़ों के बसाए गए थे। तहसील बिलासपर का गांव मछरौली में रंघड़ मुसलमानों की हवेली की निशानियां मिलती हैं। रायपुर रानी और नारायणगढ़ तहसील में भी राजपूत मुसलमानों की हवेलियों के निशान/मलबे मिलते हैं।

मछरौली में मस्सा रंघड़ की हवेली

गांव 'बवाना' पिंजौर (पंचकुला) में लोहगढ़ का मोर्चा

अखबाराति–दरबारे–मऊला के अनुसार बाबा बंदा सिंह बहादुर सन् 1714 में पिंजौर के नज़दीक लोहगढ़ की किलेबंदी बवाना में रहा। यह गढ़ी तकरीबन 15–16 एकड़ में फैली हुई है जिसमें डेढ़ कनाल जगह पर पक्का बुर्ज बना हुआ है जिसकी ऊंचाई 30 से 35 फुट के लगभग है। इस की छत पर तोप रखने का प्लेटफार्म आज भी देखा जा सकता है और ऊपर जाने के लिए पक्की सीढ़ी है। यह घग्गर नदी के किनारे 2200 फुट की ऊंचाई पर (समुद्र तल से) पहाड़ी पर बना हुआ है। गढ़ी की बाहर वाली दीवारें ढाई मीटर चौड़ी हैं और आसपास बहुत ही रमणीक स्थान है। आज 300 साल के बाद भी यह बुर्ज पूरी मज़बूती के साथ देखा जा सकता है। यहां एक कुआं भी है जहां से पता लगता है कि अमीर वणजारे यहां रहते थे। यहां से नाहण रियासत और दूसरे स्थानों के बीच आपसी तालमेल आसानी से हो जाता था।

(30.8055586,76.9470941)

गांव बवाना (पिंजौर) गढ़ी की कुछ चित्र

गांव बवाना (पिंजौर) गढ़ी के कुछ चित्र

दूसरा बुर्ज

तीसरा बुर्ज

गुरुद्वारा गोरखपुर (पिंजोर) व लोहगढ़ की बुर्जियाँ

यह लोहगढ़ का मोर्चा गाँव गोरखपुर में है जोकि शिवालिक की पहाड़ियों में पिंजौर और बद्दी के बीच में स्थित है। यह स्थान लोहगढ़ और आनंदपुर साहिब के बीच में भी है। इस स्थान के नजदीक गुरु नानक साहिब और गुरु श्री हरि राय

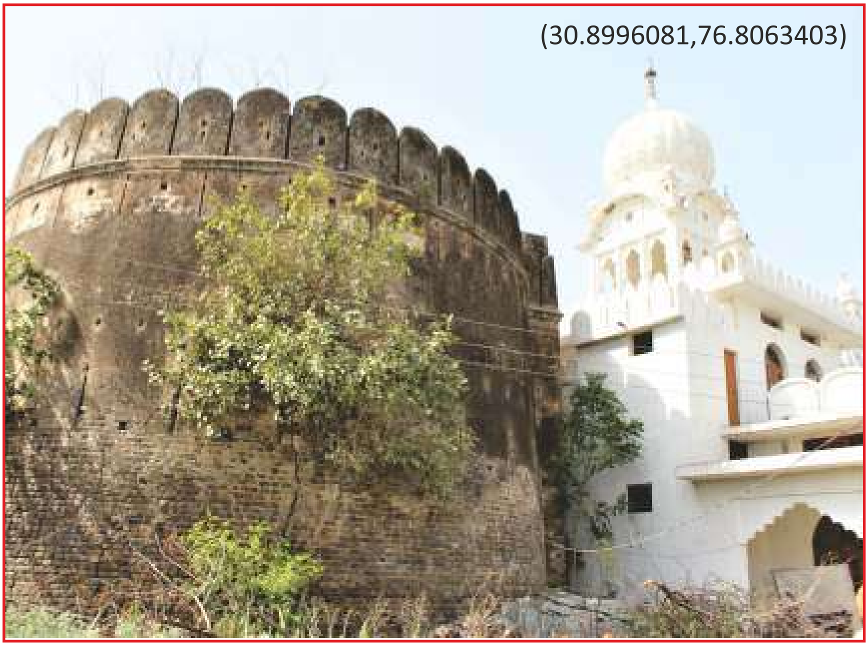

साहिब के अन्य स्थान भी मौजूद हैं। इन किलों से ही जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने मुगल फौज से टकराव लिया था। इस स्थान पर गुरु साहिबान की याद में एक गुरुद्वारा साहिब भी सुशोभित है। इस जगह के नज़दीक भाई लक्खी शाह वणजारे का तालाब भी मौजूद है।

उपरोक्त फोटो में जो छेद नजर आ रहे हैं, यह छेद बंदूकें रख कर दुश्मन के ऊपर हमला करने के लिए इस्तेमाल किए जाते थे।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

चंडीगढ़ का क्षेत्र शिवालिक की पहाड़ियों के नजदीक है और जैसे कि अखबारे दरबारे मऊला में वर्णन आता है कि बाबा बंदा सिंह बहादुर का आक्रमण जम्मू से लेकर बरेली तक था और चंडीगढ़ का क्षेत्र भी सिख आक्रमण का हिस्सा था। चंडीगढ़ स्थित मनी माजरा में पत्थर और चूने की चिनाई से बना हुआ एक किला स्थित है और इस किले के पुरातत्व सबूत बताते हैं कि यह किला 16वीं शताब्दी में गुरु नानक के बणजारे सिक्खों के द्वारा तैयार किया गया और इस किले से मनी माजरा सिख इतिहास से संबंधित एक महत्त्वपूर्ण स्थान है और यहां पर एक गुरुद्वारा मंजी साहिब सुशोभित है। इस स्थान पर गुरु नानक साहिब से लेकर गुरु गोबिंद सिंह साहिब का आगमन हुआ। एक और सिख इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटना इस स्थान से संबंधित है, भाई अब्दुल ख्वाज़ा, चांदनी चौक दिल्ली के कोतवाल मनी माजरा के रहने वाले थे और सन 1675 में गुरु तेग बहादुर की शहादत के बाद उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और गुरु गोबिंद सिंह की सेना में शामिल हो गए। भाई अब्दुल ख्वाज़ा के पूर्वज का संबंध गुरु नानक साहिब के समय सिख धर्म के साथ था। (द इनसाईक्लोपीडिया ऑफ सिक्खिज़्म, हरबंस सिंह, पंजाबी यूनी.पटियाला)। इसके इतिहासिक घटना के अतिरिक्त गुरु गोबिंद सिंह ने रामराय (सातवें सिख गुरु हर राय साहिब के बड़े बेटे) की देहरादून में शहीदी उपरांत सन 1689 में उनकी पत्नी राज कौर को इस किले में आदर सहित बसाया। गुरु नानक साहिब के समय इस जगह का नाम कुछ और था अतः बाद में इस गांव का नाम भाई मनी सिंह के नाम से प्रचलित हुआ। यह जगह भाई मनी सिंह के पूर्वजों की सदा–सदा से मलकियत रही। यह जगह 18वीं शताब्दी तक नाहन के राजा के क्षेत्र में आती थी और भाई मनी सिंह के पूर्वज नाहन के रहने वाले अमीर लोग थे।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

मनी माजरे किले से एक सुरंग निकल कर मनसा देवी मंदिर के नज़दीक पहाड़ों में जाती है और जहां पर एक सुरंग का दूसरा मुख खुलता है और जहां पर ऐतिहासिक गुरुद्वारा पहली पातशाही बाऊली साहिब (गुरु नानक साहिब से संबंधित) मौजूद है। इस गुरुद्वारे में एक बावड़ी भी है जो गुरुनानक साहिब ने स्वयं तैयार करवाई थी। उत्तर दिशा में स्थित शिवालिक की पहाड़ियों में एक गांव स्थित है जिसका नाम भी लोहगढ़ है। गुरु नानक साहिब ने इस क्षेत्र का भ्रमण स्वयं किया और उनके साथ वणजारे सिक्ख भी थे। यहां से निकलकर गुरु नानक साहिब पिंजौर पहुंचे जहां पर उन्होंने सिक्ख (प्रचार केंद्र) मंजी साहिब स्थापित की। इस स्थान पर आज मौके पर गुरुद्वारा साहिब मौजूद है। पिंजौर के नज़दीक शिवालिक की पहाड़ियों में कई सिख मोर्चे गांव बवाना, बनासर, गौरखपुर इत्यादि में आज भी मौजूद हैं जिनका विवरण पहले भी इस किताब में किया जा चुका है।

पिंजौर के नजदीक एक और गांव है जिसे बुर्ज कोटिया कहते हैं। इस गांव को टांडा बुर्ज के नाम से भी जाना जाता है। टांडा जो शब्द है वह वणजारों के व्यापार केंद्रों के लिए इस्तेमाल किया जाता था। इस बुर्ज के साथ किला भी मौजूद था जोकि अंग्रेजों के समय ध्वस्त कर दिया गया और आज के समय केवल एक बुर्ज रह गया है जोकि पत्थर और चूने की चिनाई से बना हुआ है। यह एक बहुत सामरिक जगह पर मौजूद है क्योंकि इस स्थान पर बैठकर पिंजौर को जाने वाले मार्ग पर नज़र रखी जा सकती थी और दुश्मन फौज की हर गतिविधि की खबर मिल सकती थी।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

बुर्ज टांडा से पश्चिम दिशा की ओर शिवालिक की पहाड़ियों में 20 कि.मी. दूर लोहगढ़ का एक और किला मोरनी में मौजूद है। इस किले का वास्तुकला का नक्शा लोहगढ़ के अग्रिम 52 मोर्चों से मिलता–जुलाता है। इस किले का ज्यादादर हिस्सा पत्थर और चूने की चिनाई से बना हुआ है और नानकशाही ईंट के निर्माण हेतु प्रयोग किया गया है। इस किले का निर्माण 17वीं शताब्दी में हुआ। हालांकि, ऐतिहासिक विरूपण के चलते हुए इसे किसी मुगल जरनैल का किला बताया जा रहा है। आज के समय में यह किला वन विभाग हरियाणा की देख–रेख में है और वन विभाग द्वारा इसके अंदर एक सुंदर प्रकृति से संबंधित संग्रहालय तैयार किया गया है।

टांडा बुर्ज से दक्षिण दिशा की तरफ 10 किमी चलने उपरांत गुरुद्वारा नाडा साहिब आ जाता है, गुरुद्वारा नाडा साहिब भाई नाडू शाह लुबाणा से संबंधित है और यह गुरुद्वारा वणजारों की चौंकी नामक गांव पर स्थित है। भाई नाडू शाह वणजारा की भेंट गुरु गोबिंद सिंह के साथ हुई। भाई नाडू शाह शाह लुबाणा मौजूदा पंचकूला के बड़े हिस्से का मालक था और खालसा राज की स्थापना के लिए कई किलों का निर्माण किया था।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

नाडा साहिब की दक्षिण दिशा से गुरूद्वारा डकोली साहिब लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह गुरूद्वारा छठे गुरु हर गोबिंद साहिब, नौंवें गुरु तेग बहादुर साहिब और दसवें गुरु गोबिंद सिंह जी के आगमन का प्रतीक है। इस गुरुद्वारा में भाई लक्खी शाह वणजारा द्वारा एक बावडी/बाऊली का निर्माण करवाया गया जोकि आज भी मौके पर मौजूद है। बाऊली बनाने का कार्य केवल वणजारे सिख किया करते थे क्योकि बाऊली निर्माण में काफी बड़ा खर्चा आता था जिसको वहन करना आम आदमी के बस की बात नहीं थी। वणजारे सिखों ने सिख गुरु साहिबान की अगुवाई में कई बाऊलियां तैयार कीं। गुरुद्वारा बाऊली साहिब अंबाला, गुरुद्वारा बाऊली साहिब, पिहोवा, गुरुद्वारा बाऊली साहिब गोबिन्दवाल, गुरुद्वारा बाऊली साहिब, अमृतसर, गुरुद्वारा बाऊली साहिब, तरनतारन, गुरुद्वारा बाऊली साहिब, हरिद्वार, गुरुद्वारा बाऊली साहिब, लाहौर, गुरुद्वारा बाऊली साहिब, नडाला इत्यादि इस बात का प्रतीक हैं। यह बाऊलियां सिख प्रचार केंद्र पर स्थापित की गई क्योंकि संगत दूर–दूर से चलकर गुरमत विचारों पर विचार विर्मश करने हेतु धर्मसाल/मंजी साहिब पर पहुंचती थी। पानी एक बड़ी ज़रूरत थी और संगत के लिए भरपूर मात्रा में पानी हो इसलिए बाऊलियों का निर्माण किया गया। इसके अतिरिक्त लंगर व्यवस्था भी धर्मसालों में की गई।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

गुरुद्वारा डकोली साहिब की दक्षिण दिशा में 3 किलोमीटर दूर गुरुद्वारा लोहगढ़ साहिब जीरकपुर में मौजूद है। इस क्षेत्र मे कई गुरुद्वारे हैं जिनकी ऐतिहासिक महत्वता है। इस गुरुद्वारे से दक्षिण दिशा (4 किलोमीटर दूर बनूड़) जोकि मक्का मदीना बगदाद से आए सूफी संतों का मुख्य केन्द्र रहा, इन सूफी संतों ने गुरु नानक साहिब के हलीमी राज के ऊपर पूर्ण कार्य किया। डकौली के नज़दीक सिख राज के कई किले थे जैसे कि किशनगढ़, धर्मगढ़, बिशनगढ़ इत्यादि जोकि अब मौजूद नहीं हैं केवल इन किलों के नाम से गांव मौजूद है जिनका शहरीकरण हो चुका है।

गुरुद्वारा लोहगढ़ की पश्चिम दिशा की तरफ खालसा राज का एक और किला मनौली गांव में स्थित है। यह किला नानक शाही ईंटो और चूने से तैयार किया गया है इस किले के 09 बुर्ज आज भी मौके पर मौजूद है। इस किले की बनावट लोहगढ़ के 52 किलों से मिलती है। यह किला एक बरसाती नदी के किनारे स्थित है, जिस कारण तीन तरफ से इस किले के ऊपर आक्रमण नही किया जा सकता। सरहिंद और छप्पड़चिड़ी की लड़ाई में इस किले का अहम योगदान था। आज यह जगह साहिबज़ादा अजीत सिंह नगर, (मोहाली शहर) में आती है और अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे मोहाली के नज़दीक है। पंजाब सरकार के द्वारा इस किले की मुरम्मत भी की गई।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

छप्पर चिड़ी, मौहाली

किला मनौली से छप्पड़चिड़ी का मैदाने जंग पश्चिम की तरफ लगभग 8 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है और आज यहां सरकार के द्वारा एक सुंदर मौनोमैन्ट तैयार किया गया है और बाबा बंदा सिंह बहादुर और अन्य सिक्ख जरनैलों से संबंधित संग्रहालय पार्क इत्यादि भी तैयार किए गए है। आज यह जगह साहिबजादा अजीत सिंह नगर, (मोहाली शहर) में आती है।

गुरुद्वारा अम्ब साहिब, मौहाली

छप्पर चिड़ी के मैदान से उत्तर दिशा की तरफ लगभग 4 किलोमीटर की दूरी पर गुरुद्वारा अम्ब साहिब सुशोभित है जोकि सातवें गुरु हर राय साहिब के आगमन और उनके सिक्ख भाई खुखराम वणजारां जोकि इस जगह के मालिक थे की याद में बनाया गया है। यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि यह सभी इलाका एक समय पर वणजारें सिक्खो की मलकियत होती थी। आज यह जगह सहबजादा अजीत सिंह नगर, (मोहाली शहर) में आती है।

चंडीगढ़ और आसपास में ऐतिहासिक सिख ईमारतें

गुरुद्वारा अम्ब साहिब के उतर दिशा की तरफ लगभग 4 किलोमीटर की दूरी पर बडैल कस्बा, चंडीगढ़ में खालसा राज का एक किला आज भी मौजूद है जोकि बाबा बंदा सिंह बहादुर, और उनके जरनैल बाज सिंह के द्वारा मुख्य तौर पर प्रयोग मे लाया गया। इन दोनों सिक्ख जरनैलों की याद में आज यहां एक गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है। आज मौके पर केवल एक बुर्ज और एक दीवार खड़ी है और दूसरे बुर्ज पर लोगों का कब्जा हो चुका है और बाकी के बुर्ज और किले की पुरातन दीवारें इत्यादि गिर चुकी हैं। यह किला बुड़ैल के बीचों–बीच ऊंची जगह पर स्थित है। इस किले के आसपास कई पुरातन नानकशाही ईंट के बने हुए कुएं मौजूद हैं जोकि इस बात का प्रतीक हैं कि यह एक बहुत बड़ा सिख केंद्र था और बाबा बंदा सिंह बहादुर और उनके साथियों ने यहां से मुगल फौज पर हमला कर उन्हें काफी नुक्सान पहुंचाया था। सन 1950 में चंडीगढ़ शहर के बनने उपरांत बड़ैल गांव एक बड़ा कस्बा बनकर उभरा जिसमें सिख विरासतें नष्ट हो गई।

बनासर (लोहगढ़ मोर्चा)

यह शिमला से पिंजौर की तरफ जाने वाले मध्ययुगीन व्यापार मार्ग पर विरोधी सेना के विकास को देखने के लिए एक गार्ड पोस्ट है। यह समुद्र तल से लगभग 4000 फीट ऊंचा, पिंजौर से सिर्फ 30 किलोमीटर, नाहन से 50 किलोमीटर और चंडीगढ़ से भोज नगर – परमाणु रोड पर 50 किलोमीटर, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में है। यह किला लोहगढ़ जोन के अन्य किलों के साथ समन्वय का काम करता था और मुगलों के खिलाफ सिक्ख दलों की मदद करता था।

1710–1716 में जरनैल बंदा सिंह बहादुर का हमला जालंधर दुआब से बरेली तक 550 किलोमीटर लंबा था। बांदा किले का स्थान बंदा सिंह बहादुर के आक्रमण क्षेत्र में स्थित है। अखबार–ऐ–दरबार –ऐ–मऊला के अनुसार 1714 ईस्वीं में बाबा बंदा सिंह बहादुर सिक्ख सैनिकों के साथ इस क्षेत्र में मौजूद था। सिक्ख किलाबंदी पैटर्न से पता चलता है कि बनासर किले के पास भवाणा, मोरनी, रायपुर रानी, गोरखनाथ आदि में कई किले स्थापित किए गए थे और ये सभी किले लोहगढ़ के समर्थन के लिए बनाए गए थे। गुरु नानक साहिब ने खुद कालका के पिंजौर में मंजी 'धरमसाल' की स्थापना की, ताकि इस क्षेत्र में सिक्ख विचारधारा पनप सके और जिसने सिक्ख सेना को मुगल सेना के खिलाफ लड़ने में मदद की।

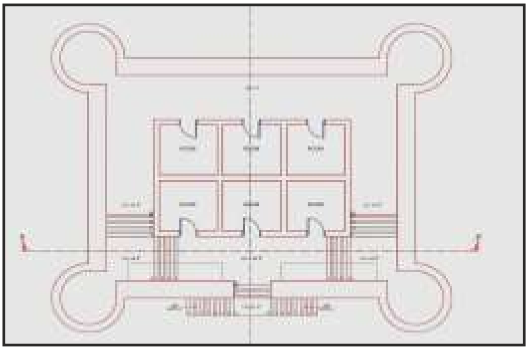

बनासर किले का नक्शा

गुरु नानक साहिब अपने प्रचार दौरों के दौरान पिंजौर से 'जौहरसर' पहुंचे जहाँ उनकी याद में गुरुद्वारा 'जौहरसर' (भोज नगर में दगशई के पास) सुशोभित है। गुरु नानक साहिब ने पूरे हिमाचल प्रदेश की यात्रा की और आगे सिल्क रूट पर चीन के लिए रवाना हुए। भारतीय उप महाद्वीप से सिल्क मार्ग में प्रवेश हिमाचल प्रदेश से होता था और वणजारा व्यापारी अपनी व्यापारिक गतिविधियों के लिए हिमाचल प्रदेश से सिल्क मार्ग तक इन मार्गों का उपयोग करते थे। ये अंतर्राष्ट्रीय व्यापार गतिविधियां कई सदियों तक अस्तित्व में थीं और यही कारण है कि वणजारा व्यापारियों ने हिमाचल प्रदेश को अपना घर बनाया। राजा भोज गांवों का अस्तित्व भी इसी तथ्य से संबंधित है। गुरु नानक साहिब ने चीन का दौरा किया, जिसमें हिमाचल से चीन जाने वाले वणजारों के व्यापारी भी शामिल थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर व सिख सैनिक भी इन दुर्गम पहाड़ियों के मार्ग को अपनाया करते थे। सन 1960 में भारत–चीन सीमा तनाव के कारण यह ऐतिहासिक व्यापार मार्ग बाधित हो गया था।

जरनैल बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ से बिलासपुर, चंबा, कांगड़ा, जम्मू तक कई आंदोलन किए और आगे लाहौर पर हमले किए और इस गढ़ ने सिख फौजों के आंदोलन के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में काम किया। इस किले द्वारा जरनैल बंदा सिंह बहादुर व सिक्ख सैनिकों को ज़रूरत के समय सुरक्षा, भोजन और गोला–बारूद उपलब्ध कराया जाता था। इस किले के आसपास भोज नाम के कई गांव हैं। भोज नगर स्पष्ट रूप से चित्रित करता है कि एक बड़ा शहर इस जगह पर मौजूद था। भोज गाँव, राजा भोज से संबंधित हैं और भाई मनी सिंह राजा भोज के वंशजों में से एक हैं। यह स्पष्ट है कि एक समय में इस किले की भूमि के मालिक वणजारे सिख थे।

अखबार–ऐ–दरबार–ऐ–मुअल्ला भी यह संदर्भ देता है कि इन पहाड़ियों में वणजारे, सिखों की मदद करते रहे हैं। यह भी कहा जाता है कि यह किला गोरखों द्वारा बनाया गया था जोकि पूरी तरह से गलत है पुरातत्व सूत्रों के अनुसार यह किला

किला बनासर के अंदर का दृश्य

लगभग 400 वर्ष पुराना है और गोरखे सिर्फ 150 साल पहले ही यहां आए थे।

बनासर किले का वास्तुशिल्प डिजाइन लोहगढ़ के 52 अग्रिम किलों जैसा दिखता है। यह किला 70 फीट लंबा और 50 फीट चौड़ा आयताकार है, जिसका क्षेत्रफल 400 वर्ग मीटर है। दीवारों की ऊंचाई 40 फीट से अधिक है और मोटाई लगभग 5 फीट है। किले में चार बुर्ज हैं, जोकि मुख्य रूप से किले की दीवारों के पास दुश्मन की ताकत की निगरानी के लिए उपयोग किए जाते थे। इस किले का निर्माण मुख्य रूप से पत्थर की चिनाई द्वारा किया गया है और कुछ हिस्से में नानकशाही ईंटों का भी उपयोग किया गया है। किले की दीवारों पर चूने से प्लास्टर किया गया है। किले की चारों दीवारों में 250 फायरिंग मस्कट छेद हैं।

किले में दो–मंजिल इमारत है जिसमें 12 कमरे हैं और यह किला 250 सिक्ख सैनिकों की कंपनी के रहने में सक्षम था। किले में पानी के लिए एक कुआँ (बाउली) भी है जो पूरे वर्ष सैनिकों को पानी प्रदान करने की क्षमता रखता था। किले के अंदर अत्यधिक पानी की निकासी के लिए विशेष व्यवस्था की गई थी। किले के बाहर पहाड़ी की चोटी पर पानी की पकड़ थी जिसे तालाब का आकार दिया गया था, जिसका उपयोग पानी के भंडारण के लिए किया जाता था।

भाई लक्खी राय वणजारा के साथ जुड़े स्थान

भाई लक्खी राय वणजारा (1580–1680) का परिवार गुरू नानक साहिब के समय से ही गुरू साहिबानों के साथ जुड़ा हुआ था। भाई लक्खी शाह वणजारे ने लोहगढ़ किले के निर्माण के लिए धन इकट्ठा किया और किले के लिए हर तरह का सामान उपलब्ध करवाया। वह सिर्फ़ अमीर व्यापारी ही नहीं था बल्कि एक काबिल राजनीतिक आगु और योद्धा भी था। वह बड़े टांडों का मालिक था जिसमें लाखों वणजारे काम करते थे। इन्हीं वणजारों ने लोहगढ़ की लड़ाई में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया था जिस कारण अंग्रेज़ों ने इन को क्रिमिनल ट्राइबल एक्ट में लाकर एक अमीर कौम को गरीब बनाकर रख दिया। भाई लक्खी राय वणजारा का नाम अंबाला के सरकारी गजटियर में दर्ज किया हुआ है। भाई लक्खी राय वणजारा का इतिहास बिगाड़ने की नियत से लोहगढ़ के नज़दीक उनके नाम की मज़ारें तैयार की गई।

लोहगढ़ के नज़दीक भाई लक्खी राय वणजारा की मज़ार।
(30.6186215,76.9536709)

भाई लक्खी राय वणजारा की मजार, हांसी, (ज़िला हिसार)
(29.0989119,75.9590831)

लोहगढ़ साहिब के नज़दीक भाई लक्खी राय वणजारा द्वारा बनवाए गये कुएँ

अब तक भाई लक्खी राय वणजारा की तरफ से बनाये गये 85 कुएं, लोहगढ़ के इलाके में मिले हैं। जिससे सिक्ख इतिहास के संबंधित अहम जानकारी मिलती है। यह सभी कुएं जिला यमुनानगर में मौजूद हैं।

बुढ़ी

बट्टूवाल

अलीशेरपुर

महलांवाली

बांसेवाला

वनसंतूर

ठसका

बनीआवाला

फतेहगढ़ साहिब के नज़दीक भाई लक्खी राय वणजारा का किला और सराए

सराए वणजारा में भाई लक्खी वणजारा का पक्का तालाब भी है जोकि नानकशाही ईंटों के साथ बना हुआ है और अब मौजूदा समय पर गाँव वालों ने कब्ज़े किये हुए हैं। इस सिक्ख विरासत की संभाल के लिए पंजाब सरकार द्वारा आज तक कोई भी कोशिश नहीं की गई जब कि कुछ दूरी पर मुग़ल सराय पर पंजाब सरकार ने करोड़ों रुपए ख़र्च किए हुए है। (30.5393769,76.5106784)

भाई लक्खी राय वणजारा की बावड़ियां

यह बावड़ी भाई लक्खी राय वणजारा ने गांव ईसरगढ़, जिला कुरूक्षेत्र में बनवाई थी। यह जगह जी.टी. रोड के नज़दीक है और भाई लक्खी राय वणजारा के टांडे आमतौर पर इस स्थान पर रुका करते थे। खालसा राजधानी के 52 मोर्चों में से एक मोर्चा जोकि खरींडवा गांव में था, इस बावड़ी के नज़दीक है। (30.020828, 76.8909379)

यह बावड़ी भाई लक्खी राय वणजारा ने गांव थली ज़िला जयपुर में बनाई थी। इस स्थान पर संगमरमर की खद्यानें है और भाई लक्खी राय वणजारा के टांडे दिल्ली के लिए यहाँ से संगमरमर लेकर जाते थे। (26.6066099,75.8722085)

भाई लक्खी राय वणजारा की राजशाही छत्तरियां

छत्तरियां भाई लक्खी शाह वणजारा ने बनवाई थी जोकि गांव थली, जयपुर में है। यह छत्तरियां लगाने का अधिकार केवल वणजारों और राजाओं के पास था। (26.6066099,75.8722085)

यह बावड़ी भाई लक्खी राय वणजारा ने गांव वणाजारे की धरा ज़िला टोंग, राजस्थान में बनवाई थी। यह स्थान भक्त धन्ना जी के गुरुद्वारा साहिब से कुछ मील की दूरी पर है।

यह बावड़ी भाई लक्खी राय वणजारा ने गांव सावरधा ज़िला जयपुर में बनवाई। इस स्थान पर गुरू नानक साहिब जी ने एक मंजी भी स्थापित की थी और गुरू गोबिंद सिंह भी इस स्थान पर आए थे। जरनैल बंदा सिंह बहादुर भी नांदेड़ से पंजाब की तरफ चले थे तब इस स्थान पर पड़ाव किया था। (26.7423134,75.2877617)

यह बावड़ी भाई लक्खी राय वणजारा ने शहर थानेसर जिला कुरुक्षेत्र में बनाई। यह बावड़ी नौंवी पातशाही गुरुद्वारा के नजदीक मौजूद है। (29.9799661,76.8295566)

बाबा बंदा सिंह बहादुर किला कोपल, कर्नाटक

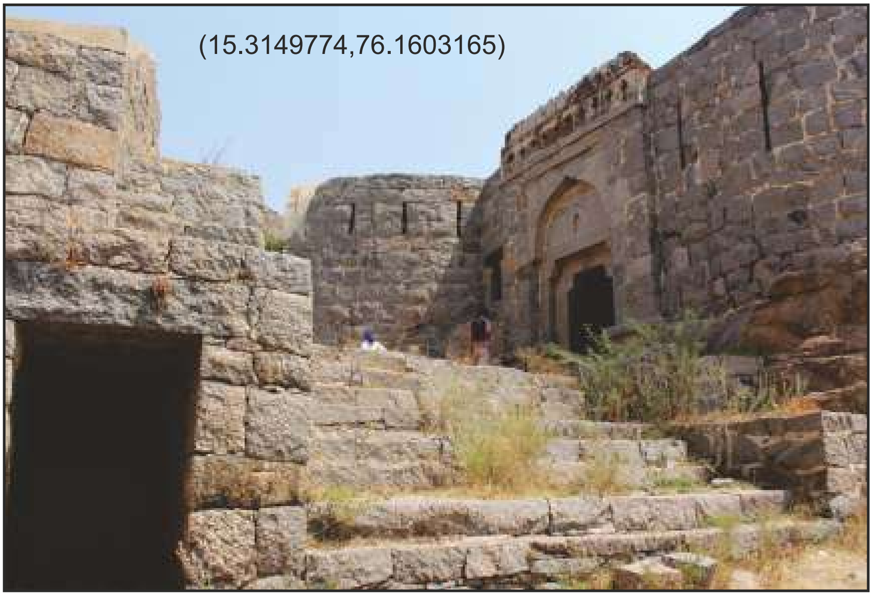

कोपल किले का चित्र 1,2

बाबा बंदा सिंह बहादुर किला कोपल, कर्नाटक

कोपल किले का चित्र **3,4**

बाबा बंदा सिंह बहादुर किला कोपल, कर्नाटक

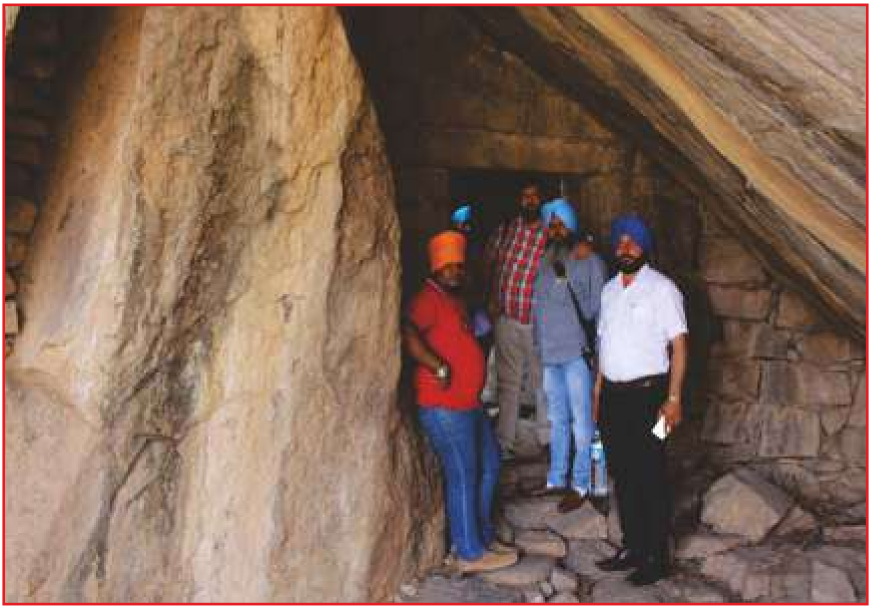

कोपल किले का चित्र **5,6**

शैय्यद बदर–उ–दीन उर्फ पीर बुद्धु शाह के परिवार का कुर्सीनामा

मौहम्मद मुस्तफा, (मुस्लिम धर्म के पैगंबर)

हजरत अली (विवाह फातिमा बिन्त पुत्री पैगंबर मौहम्मद)

ईमाम अली मौसा रजा। (पुत्र)

ईमाम मौहम्मद ज्व्वाद ताकी। (पुत्र)

शैय्यद ईमाम अली हदी नकी। (पुत्र)

शैय्यद जफर सानी। (पुत्र)

शैय्यद अली अश्गर। (पुत्र)

शैय्यद अबि अबदुल्ला। (पुत्र)

शैय्यद अहमद मासाद्दी। (पुत्र)

शैय्यद अलि मासाद्दी। (पुत्र)

शैय्यद हशन खलिमी। (पुत्र)

शैय्यद अबदुल्ला खलिमी । (पुत्र)

शैय्यद अलि बोखारी। (पुत्र)

शैय्यद अहमद बोखारी। (पुत्र)

शैय्यद मौहम्मद। (पुत्र) (हजरत ख्वाजा निजामुद्दीन ओलिया)

शैय्यद बदर–उ–दीन उर्फ पीर बुद्धु शाह के परिवार का कुर्सीनामा

शैय्यद मौहम्मद। (पुत्र) (हजरत ख्वाजा निजामुद्दीन ओलिया)

↓

शाह अबदुल हमोद गंज–उल–हम। (पुत्र)
(जिसकी मजार ईद गाह (अफगानिस्तान) में स्थित हैं।)

↓

शाह अबदुल वाहब कुतुब–उल–कुतुब। (पुत्र)
(जिसका मकबरा मौहल्ला स्वानियंन की मस्जिद सढौरा में स्थित है।)

↓

शैय्यद अबदुल हमीद–II (पुत्र)

↓

शाह अलि अश्गर। (पुत्र)

↓

राजा शाह ईब्राहिम बाला। (पुत्र)

↓

शैय्यद मौहम्मद अशरफ। (पुत्र)

↓

शैय्यद गुलाम शाह। (पुत्र)
(भनगानी युद्ध में शहीद हुए (16 अप्रैल 1688)

↓

शैय्यद बदर–उ–दीन उर्फ बुदू शाह।
(जन्म 13 जून, 1647 व शहीदी तिथि 21 मार्च, 1704)

↓

- शैय्यद शाह हुसैन
- शैय्यद मो.बख्श
- शैय्यद मो.शाह (भंगानी युद्ध में शहीद हुए) (16 अप्रैल 1688)
- शैय्यद अशरफ (भंगानी युद्ध में शहीद हुए) (16 अप्रैल 1688)

अध्याय 21 में सढौरा और पीर बुद्धु षाह के परिवार के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी दी गई है। सढौरा जोकि लोहगढ़ से लगभग 20 कि.मी. की दूरी पर स्थित है और सढौरे से ही इस परिवार ने हलीमी राज की स्थापना के लिए गुरु नानक साहिब के सिद्धांत पर कार्य किया।

हरियाणा सरकार द्वारा शाहबाद से लेकर लोहगढ़ तक सड़क को लोहगढ़ मार्ग घोषित किया गया

LOHGARH SIKH SAMARK

LOHGARH SIKH SAMARK

यमुनानगर भास्कर

देखो म्हारा देस हरियाणा 18 भास्कर

पहली बार भास्कर लाया एक फ्रेम में लोहगढ़ के तीनों गुरुद्वारे

अभी ₹50 करोड़ बजट, 100 करोड़ से ऊपर जाएगा

हरियाणा-हिमाचल की सीमा पर सन् 1710 में बनी सिख राज की पहली राजधानी लोहगढ़ फिर चर्चा में है। 3 सदी अनदेखी हुई। अब संवारने में सरकार-ट्रस्ट-एसजीपीसी में होड़ मची है

300 साल बाद लौट रही लोहगढ़ की सरदारी

लोहगढ़ ट्रस्ट द्वारा खालसा राजधानी के पुनः निर्माण के लिए चल रहे कार्य

लोहगढ़ ट्रस्ट द्वारा खालसा राजधानी के पुनः निर्माण के लिए चल रहे कार्य

लोहगढ़ के बारे में ट्रिब्यून अखबार में छपी खबर

Fort Lohgarh to rise from ashes

The place lies sandwiched between Haryana and HP. It is believed Baba Banda Singh Bahadur fought 3 battles against the Mughals from the fort

Shiv Kumar Sharma
IN YAMUNANAGAR

HISTORY can be a queer treasure trove of unencumbered doubts and self-assured glorification: the two may tend to meet at even queerer juncture of folk tales and beliefs. Like Lohgarh fort, lying on the cusp of Haryana and Himachal Pradesh. The fort, believed to be the largest in the world, has lived off the terrain, steel-like, unforgettable for generations, unsought for, yet standing apart rock solid. What was there, and is there, has remained unnoticed for 300 years — this is its claim to fame, with the belief that the decaying fort was once witness to three battles between Baba Banda Singh Bahadur's forces and Mughal armies.

Lohgarh came into limelight when the Haryana government held a state-level function to celebrate the 300th martyrdom of Banda Bahadur last year. The chief guest, chief minister Manohar Lal Khattar, highlighted several "untouched historical facts" about the place and told the gathering that his ancestors were also a part of the Banda Bahadur's army. The state government is keen to develop Lohgarh, of which a part exits in Bhagwanpur gram panchayat of Yamunanagar district and the other part in Himachal Pradesh.

Lohgarh is located about 35 km from Yamunanagar. The state government appointed district development and panchayat officer (DDPO) Gagandeep Singh a nodal officer to develop the area. A Sikh activist, Jarnail Singh, says the community has formed 'The Lohgarh Trust' under the chairmanship of Gurvinder Singh, a resident of Karnal, for carrying out research about the place and the fort. The trust has roped in a Delhi-based heritage revival company, the Indian Trust for Rural Heritage and Development (ITRHD).

The ITRHD research about Lohgarh has revealed that the Lohgarh fort included fort walls, bastions, rooms, soldier barracks, watch towers, pottery, grindstone, hand milers to mill floor and big clay drums for the storage of food grains. Many carved stones are also found. "The

Haryana has started a slew of projects to boost tourism in Lohgarh. [illegible]

fort walls are made of dressed stones and lime. Mortar mixed with brick powder has been used as the binding material. The bricks used in the fort walls are of five different sizes," says SK Mishra, ITRHD chairman. Archeological studies have thrown up astonishing facts, he said.

> Lohgarh Trust plans to build a gurdwara, living rooms, a langar hall, multimedia interaction rooms and an exhibition hall at Lohgarh

Gagandeep Singh, the nodal officer, says Lohgarh was Khalsa Rajdhani and the epicenter of its fort was spread across 7,000 acres, making it of one the largest forts in the world. The fort area covers revenue estates of Haripur, Jhil, Mehtawali, Palori, Sukron, Maharonwala (in HP), and Bhagwanpur, Nathori, Dhanaura, Nagli and Mohindinpur (in Haryana).

"The 52 defence posts (bastions) built by the Banjara Sikhs in plains before the Lohgarh fort to check the advancement of the Mughal army extended up to Ladwa (part of Kurukshetra) and Indri of Karnal," says Gagandeep. "It is interesting to note that the Lohgarh fort was constructed by the general public and not by a monarch."

Dr Harjinder Singh Dilgeer, former director Sikh History Research, SGPC, and former visiting professor Punjabi University, Patiala, says Bhai Lakhi Rai Banjara, Bhai Makhan Shah Labana (rich traders) and Peer Budhu Shah (a noble man in the Mughal court) played a key role in raising funds for the construction of the fort.

He said that in 1708 AD, after a series of talks failed between Guru Gobind Singh and Bahadur Shah at Nander (Maharashtra), Baba Banda Singh Bahadur, the first Sikh general was deputed by the 10th master to uproot the Mughal empire. "In 1709, Baba Banda Singh Bahadur, after capturing all the major parts of Delhi and Lahore declared Lohgarh as Khalsa Rajdhani," said Dr Dilgeer. He says first Khalsa Raj coins were minted, the Sikh calendar was issued and a royal seal was prepared to issue 'farmans' (orders) by Baba Banda Singh Bahadur.

Dr Dilgeer says historians have wrongly called Lohgarh as Mukhlishgarh, the Rang Mahal of Mughals situated in UP, close to Hathni Kund Barrage of Yamunanagar district.

Prof Veena Sachdeva of Panjab University, Chandigarh, says three battles were fought at Lohgarh. The first was fought between emperor Bahadur Shah and Baba Banda Singh Bahadur in 1710; the second was fought in 1712 (between emperor Jahandar Shah and Baba Banda Bahadur) and the third battle in 1713 (between Abdus Samad Khan, the Mughal subedar of Lahore appointed by emperor Farrukhsiyer, and Baba Banda Bahadur).

The Tribune Sun, 15 October 2017
epaper.tribuneindia.com//c/23150276

पुस्तक में आए मुख्य शब्दों का विवरण और पन्ना नं.

अंबाला-7,9,13,27,48,52,81,84, 161,172,180,185,187,199,201, 202,203,211,246,256,291

अकबर-18,66,67,69,89,111,182, 185,189,192,193,194,208,234, 282,288

अकाल तख्त- 282

अकीदत ख़ान- 123,272

अगमगढ़- 24,216

अगराज सिंह- 243

अचल- 103,111

अजनबी ख़ान बहादुर-114

अजमेर-41,42,70,71,83,101,103, 259,265,266,272

अजमेर चंद- 107,118,147

अजीत सिंह-40,69,71,72,83,101, 121,168,238,239,264,267,271, 272

अनूप कौर- 60

अनूप सिंह- 71,117,239,272

अबैद ख़ान- 71

अब्दुल करीर ख़ान- 123,272

अब्दुल कादर-121,273

अब्दुल वाहिब शाह-183,188,190, 192

अब्दुस समद ख़ान- 113,122,129, 140,142,146,148,152,154,157, 159,269,272

अमर बेल- 10,11,282

अमर सिंह- 69,73,83,272

अमीनगढ़- 95,204,275

अमृतसर- 7,8,38,65,66,83,101, 112,121,160,186,193,197,216, 218,219,220,232,234,237,239, 241,246,247, 258,263,282,288

अम्बर- 181

अलताफ ख़ान - 101

अलबेला सिंह (भाई)- 235,240

अलबेला सिंह भंगेश्वरी - 242

अलीगढ़- 7, 248

असरफ ख़ान- 227

असलम ख़ान- 65,66,67,219

आनंदगढ़- 9,24,216

आनंदपुर साहिब-9,23,31,40,65,107, 119,147,180,211,214,216,220,22 5,239,240, 242, 247,282

आली सिंह- 54,59

आली सिंह व माली सिंह- 242

ईंटों की सुरखी- 33

इटली- 20,180

इंद्री- 27,31,81,78,181,262

इब्राहिम-उद्-दीन- 157

इरादत ख़ान- 41,50,65,117,131

इरादतमन्द ख़ान-101,145,149,273

इस्लाम- 40,45,79,93,117,157, 169,170,183,198,267,283

इस्लाम ख़ान- 89,124,272

इस्लाम ख़ान बहादुर- 69,114

उगाला- 80,81,262,263

उतर प्रदेश- 206

उतराखंड- 16

उदमगढ़- 62

उदय सिंह- 16,85,108,118,133, 152,200,216,234,235,239,240

उदयपुर - 7,69,74,139,245

उदित सिंह बुंदेला-75,80,91,112, 272

उमरा- 44,110,203,282

उस्मान ख़ान- 20,49,50,74,180,

181,259,273
ओमा पंडित- 97,101
औरगंज़ेब- 15,19,40,41,42,48,69, 103,116,151,166,179,180,182, 183,188,189,197,198,199,201, 202,203,205,210,212,215,217, 218,226,229,242,243,252
कंघा- 180
कदम-उद्-दीन- 48,49,273
कनाट प्लेस- 18
कन्नौज- 17
कपूरी-48,49,50,259,273,275,276
कमर-उद्-दीन-148,151,155, 272
करतारपुर-23,38,194,201,240,243, 257
करनाल-9,26,27,40,48,75-81,102, 162,171,181,187,196,211,254, 255, 256,262,291
करसू- 248
कर्ण सिंह (भाई)- 232,233,239
कर्नाटक-164,185,206,223-230, 244
कलानौर- 66,102,105,110-113, 142,146,148,149,150,169, 264, 265,266,270,272,273,275,276
कलेसर - 10,15,29,94,161
कल्याणपुर- 38,119
कशमीर- 199
कहर सिंह- 239
कहलूर- 10,38,39,146,147,285
कांगड़ा- 106,107,144,149,150, 152,197,257,271,272
काजी अब्दुल वहाब- 188
कानूनगो संतोष राय- 272
काबुल- 145,186
काम बख्श- 69
काला अफ़गाना- 66
काला अंब- 10,17,29,39,206
काहन सिंह- 42
काहन सिंह नाभा- 20,62,180,187, 193,194,202,203,285
कीरतपुर- 8,10,14,21,22,23,38,39, 53,117,118,119,162,202,203,211, 257,262
कुंदन- 92
कुंजपुरा- 48,50,259
कुमाऊं- 71,75,106,145,164,249, 252
कुरान- 40,189
कुरूक्षेत्र- 9,19,23,27,78,81,161, 171,185,186,187,189-192,196, 197,200,202,203,221,242,255, 256,266,292
कुलीच मुहम्मद ख़ान- 114
कुल्लू-68,87,100,106,108,117, 152,197,256,263,272
केशो सिंह- 117,121
केसो सिंह- 118,240,267
केसो सिंह भट्ट- 117,121,237,238
केहर सिंह- 117
कैथल- 9,43,52,171,185,187, 196,200,203,208,256,259,272
कोटला बेगम- 67
कोपल- 223,224,225,228,229,230
कोयर सिंह भंगेश्वरी- 242
खंडा- 256,274
खरखौदा- 42,256,274,287
खरड़-162
खलीफा मोहमम्द-4 21,180,181
खवासपुर- 18,209

खव्वाजा अब्दुला(दिल दलेर ख़ान)-69
ख़ान बहादुर आलमगीरी- 123
खाने-ख़ान (मुनायिम ख़ान)- 77
ख़ालसा -7,8,9,10,16,22,23,36,40,41,47,48,50,52,60,61,62,70,78 88,112,142,167,171,173,174,178,179,181,187,199,202,204,206,211,214,216,220,222,225,228,246,247,253,255,256,257,262,274,283,284,289
ख़ालसा तख्त- 178,246,283
ख़ालसा पंचायत- 50
खिजर ख़ान- 53,54,273
खिलौने - 13,172
खुतबा- 112,115,116
खुसरो- (शहजादा)- 194
खेड़ा- 78,79,80,125,235,261
गंगोह- 189
गंजे-इल्म- 50
गंडा मल- 54,55
गढ़वाल- 9,19,68,75,96,142,144,165,166,167,197,198,244,249-253,271
गाज़ी ख़ान-100,104,105,109,123,272,273
गुजरात - 48,101,139,145,149,150,185,206,226,229,273
गुर प्रताप सूरज ग्रंथ- 286,290
गुरदास नंगल-94,108,139,147,148-152,241,250,258,270,271,275,286,287
गुरदासपुर- 7,147,148,149,151,248,258,270
गुरमुख सिंह- 285
गुरील्ला - 132
गुरबख्श सिंह- 63,73,75,216
गुरुद्वारा रकाब गंज-15,18,209,211,212
गुरुबक्श- 243
गुरू नानक साहिब-7,8,9,12,16,17,19,20,23,25,36,44,47,51,61,62,64,73,85,87,88,107,108,110,117,148,161,164,165,166,168,169,171,173,174,175,178-207,209,213,214,218,220,224-252,254-259,282
गुरू अंगद साहिब-89,190,200,207
गुरू अमरदास साहिब-187,190,191,192,196,203,255
गुरू राम दास साहिब-190,192,193,200,255
गुरू अर्जुन साहिब-12,23,37,59,193,194,195,197,203,209,237
गुरू हर गोबिंद साहिब-8,10,12,14,22,35,36,37,38,39,165,172,179,195,196,197,205,209,213,214,216,219,226,228,232,233,234,237,238,240-244,247,250,251,252,255, 257,291
गुरू हर राय साहिब- 8,10,14,15,21,22,23,35,39,88,162,166,172,182,187,197,198,209,214,215,217,220,252,257,289
गुरू हर किशन साहिब- 8,21,22,23,182,185,199,200,214-218,220
गुरू तेग़ बहादुर साहिब-8,9,10,15,23,44,59,62,64,172,182,185,193,196,199-203,205,210,211,212,214,216,218,220,226,243,246,248,253
गुरू गोबिंद सिंह- 7,9,10,17-20,23,24,40,41,42,44,48,57,58,60,61,62

85,107,119,120,167,173,174,178,179,180,182,185,187,197,199,202,203,216,219,220,222,225,227,228,233,234,235,237,239,240,242,245,246,247,249,251,253,257,259,274,281,287,289
गुरू ग्रंथ साहिब- 8,36,148,171,174,175,177,187,188,190,225,227,231,237,244,245,258,283,288
गुर्जर- 222
गुलाब नगर- 62,63,72,73,260
गुलाब सिंह बक्शी- 63,91,95,243
गुलाबगढ़- 81,204
गुलाम पैगंबर कुली ख़ान- 76
गुलाम मुहम्मद ख़ान- 65,273
गुलाम मुहम्मद बन्यारा - 73,273
गोरखपुर- 84,247
गोविन्दवाल- 166
ग्वालियर-7,10,36,37,38,165,195,196,197,198,209,251
घड़ाम- 46,52,204,259,276
घरौड़ा- 261
चक्क नानकी- 9,23,24,282
चणन सिंह- 239
चनौली- 23
चन्नण सिंह- 117
चप्पड़-चिड़ी- 20,53-57,60,234,235,236,259,275,287,288
चमकौर- 40,60,199,225,243
चम्बा- 31,68,106,108,142,197,258,262,263
चरनवाला- 10
चांदनी चौंक- 15,16,23,44,139,156,200,202,205,210,243,276
चौधरी मूसा-उल-ख़ान- 160
चौहान -17,117,193,206,207,237,238,240
छबील सिंह- 233
छत्रसाल बुन्देला- 75,76,80,83,85,89,272
जकरिया ख़ान- 113,137,139,140,150,154,155,215,272
जगजीवन दास-21,81,85,88,98,100,101,112
जगत चंद- 126,172
जनाहर सिंह- 236
ज़फरजंग,वफादार- 120
जफरपुर जाफरी- 31
जमदात-उल-मुल्क- 92,95,126
जमरौली- 70
जमींदारी व्यवस्था- 59,275
जम्मू- 9,23,31,52,69,77,84,86,91,94,101,102,103,104,106,109,110,112,113,120,129,132,140,142,145,148-151,153,163,165,168,171,176,184,236,248,249,258,262,264,270,272,273,275,286,287
जय सिंह सवाई- 21,69,71,72,98,134,136
जयपुर- 21,41,49,69,70,71,85,99,100,101,102,119,124,132,134,135,136,139,147,221,264,272,286,291
जलाल ख़ान- 64,65,72,73,74,126,235,273
जलाल ख़ान रोहिला- 73,74,76
जलालगढ़ी- 64
जलालाबाद- 63,64,65,74,126,235,254,273

जलालुद्दीन- 44,188-192,210
जल्लादों का शहर- 44
जवाल- 153
जवाहर- 18
जवाहर सिंह- 18,220
जसवान- 108
जहांगीर- 36,37,38,69,163,185,188,189,194,195,196,282
जहांदर शाह- 123,128,264
जहांदार शाह - 66,99,104,115,122,123,125,126,128,135,140,268,269,272,275
जादव परिवार- 206
जालंधर - 23,37,70,76,101,107,117,147,222,240,243,256,257,258,262,263,264,273,274
जालंधर दोआब- 27,81,105,109,117,129,222,249,260,262,268
जीरकपुर- 7,53,236,247
जिहाद - 52,64,67,68,77,111,115,170,260
जीत सिंह- 220,233,239
जेठा सिंह- 117,233,238
जेठा सिंह- 238,267
जैन-उद्-दीन अहमद ख़ान- 74,79,118,125,126,127,130,131,132,137,140,142-147,150,270
जोधपुर- 7,41,69,70,71,83,99,101,119,139,272
ज्ञानी ज्ञान सिंह- 41,222,286,289
झज्जर- 119
झील बांकेबाड़ा- 10
झुनझनू- 245
टांडा- 16,17,18,19,33,34,84,145,162,166,177,180,183,199,205,206,207,209,211,214,217,218,220,223,224,235,241,251,255,259,270,276,277,284
टांडो- 9,13,14,17,35,161,163,164,172,183,186,206,218,224,229,235,241,255,283,284,
टीका राम- 157,272
टोका- 10,27,187
टोडा- 50
ठसका - 10,13,19,31,46,47,48,50,179,185,200,202,204,209,212,276,
डोगर सिंह- 117,233,237
तख्त- 123,124,126,178,256,268
तरावड़ी- 75-80,201,204,262
तलवन- 113,273
तलवार- 20,58,86,104,126,140,146,153,154,172,174,178,180,181,210,281,
तारा सिंह भट्ट (भाई)-238
तारागढ़- 24,216
ताहरपुर- 10,13,94,213
तिरपोलिया के किले- 157
तोमर- 17,163,205,218
थानेसर- 19,23,36,46,47,50,52,60,64,72,78,79,80,81,85,86,87,100,101,125,126,181,185-204,235,242,259
थापल- 8,10,14,22,23,39,166,172,215
दया धम्मा- 112,152,272
दयाल सिंह (भाई)-117,223,237
दयोबन्द- 254,255
दरबार- 183
दरबार साहिब- 160,216,282

दरबारा सिंह- 285
दरवेश मुहम्मद- 65
दामला - 47,48,50,70,172,180, 181,204,259
दियानत राव- 97
दिल्ली - 10,15,16,17,18,21,23, 26,27,28,34,42,43,44,46,54,56, 59,63-81,96,99,101,102,103,116, 121,122,125,126,128,139,140, 151,153,154,155,156,157,159, 161,167,185,186,196,199,201, 205,206,208-214,216,218,220, 221,229,241,243,246,249,253, 254,260-268,272,273,275,280, 286,287,288
दीनदार अली ख़ान- 63
दीनदार ख़ान - 65,273
दुनीचंद करोडिया- 258
देवबंद- 63
देवा सिंह भट्ट (भाई)- 238
देसा सिंह भट्ट (भाई)-237
देहराना- 73
दोराहा- 125
दौलत ख़ान मुईन- 149
दौलत बेग़ ख़ान- 114,131,273
द्रगाही सिंह (भाई)- 236
धनौरा - 10,27,31
धमतान- 199,200,201
धर्म सिंह (भाई)-54,62,75,117,233, 239,243,253
धोता टांडा- 275
धौला कुआं- 18,209
नकोदर- 23,109,125
नक्शबंदी- 188,189
नगली- 10,31,33,94
नगली खोल- 11,30
नजीर सिंह- 235,236
नठीया - 17,205
ननहेड़ी- 31,34
नरबुद सिंह भट्ट- 237,238
नर्मदा- 69,226
नसीर सिंह- 74
नसीरा - 19
नादेड- 225
नानकमता- 165,250
नानकशाही ईंटों- 13,14,172, 202, 203,213,223
नानकशाही सिक्का- 61
नानकशाही सिक्के- 178
नारनौल- 43,162,203,211,256
नालागढ़- 36,38,84,161
नाहन- 8,9,10,18,22,23,28, 30,31,34,38,39,68,84,87,89,91, 94-99,102,106,108,131,137,164, 167,171,179,181,182,187,197, 200,205,209,215,222,228,234, 241,250,252,262,264,268,272, 286
नाहर सिंह- 215
नाहर सिंह भंगेश्वरी- 242
निगाहिया सिंह- 15,18,208,209, 210,212,217,218,232,243
निजाम थानेसरी- 192,195
निजामुद्दीन- 18,183,184,188, 196,200,203
निरमोहगढ़- 9,60
नुसरत ख़ान- 76,273
नूर मुहम्मद ख़ान- 149,273
नूरपुर- 144,148,152,166
48,108,112,142, ,252,271,272

नूरमहल- 23,125
नोनिया- 13,124
पंचकूला- 9,26,27,84,162,185, 262,291
पंचोली जगजीवन दास-21,85,98, 100,101,112
पक्की सराय- 77
पटना- 128,172,186,201,202
पटियाला- 201,202,221,222,255
पठान- 19,47,52,53,55,60,66, 77,86,90,112,113,143,180
पठानकोट- 222,236
परम सिंह (भाई)- 75,243
परमार - 17,117,182,193, 234, 235,238-242,267
परसरूर- 103,149,273
पलहोड़ी- 33
पलोड़ी - 10,27
पसरूर - 103,149,273
पांच प्यारे- 225
पाकपटन- 246
पातशाह- 08,73,178,201, 209,214,216,283
पानीपत- 26,63,72,74-78,88,162, 185,186,188,194, 260,261
पिंजौर- 7,10,27,143,145,147,161, 172,187,221,247,256,270
पीर ख़ान- 65,109,196,273
पीर दस्तगीर- 87,110,183, 184,185
पीर बुद्धू शाह- 20,44,62,87, 179,180,181,184,185,187,188,19 3,197,202,236,
पीर भीखण शाह- 19,44,46
पीर मुहम्मद - 73,273
पीरजादों- 64
पीलीभीत- 197,209,251, 252,253
पुंडीया- 18
पुआदडा- 23
पृथ्वी चंद- 198
प्रसन्न सिंह- 239
फकीर-उलाह-ख़ान- 123
फखर-उद्-दीन ख़ान बख्शी- 65
फगवाड़ा- 23
फतेह उल्ला ख़ान- 114
फतेह शाह- 19,75,96,126, 144,167
फतेह सिंह- 45,55,58,75,132, 133,162,234,239,259
फतेहगढ़- 9,24,169,216
फतेहगढ़ साहिब- 80,275
फरख्खसियर - 128,129,130,133, 135,136,137,140,144,146,154,15 5,272,275,287
फरहाज सिंह- 243
फारसी - 13-16,26,27,34,41, 62,78,84,85,89,115,133,136137,1 38,148,163,181,183, 185,194,196,198,201,204, 207,227,255,256,257,285-289
फिदवी ख़ान- 123,272
फिरोज ख़ान मेवाती- 74,75,76,78, 79,82,109,119,260,272
फिरोज जंग ख़ान-119,125,273
फिरोजशाह तुगलक- 44
फिलौर - 125
फूल परिवार- 75
फोर्ट विलियम- 156,288
फौजदार- 43-48,50,52,59, 60,63- 71,73,74,77,101,102,104,105,109

111,118,119,121,125,126,127,129,130,131,137,139,140,142,143,144,145,146,147,149,150,151,153,157,196,234,253,257,259,260,262,263,264,270,272,273,282,288
बंदा सिंह और इस्लाम- 169
बका बेग ख़ान- 132
बख्तयार काकी- 122,185
बख्शी- 18,63,65,72,74,89,91,92,95,96,100,114,123,128,129,152,198,208,272,273
बख्शी-उल मुल्क- 189
बख्शी-उल-मुमालिक- 92,95,96
बख्शी-उल-मुल्क- 89,100,114,152,272
बंगाल- 23,155,156,172,185,248,288
बचन सिंह कछवाहा- 116,272
बजर सिंह- 58,234
बटाला - 66,101,102,103,110,111,113,142,146,148,149,150,264,265,270,273,275
बडूवाल- 23
बनी बदरपुर- 9,171,187,200
बदन सिंह बुंदेला- 116,272
बदर-उद्-दीन उर्फ पीर बुद्धु शाह- 19,20,49,50
बद्दी- 143
बरेली- 27,52,68,76,81,84,86,101,106,110,120,127,142,144,145,163,165-168,171,176,184,208,248-253,262,266,268,270,271
बवाना- 84,143,145,270
बसंतगढ़- 9,24,214,216
बहलोलपुर- 53,55,59,60
बहादुर आलमगीरी- 123
बहादुर शाह-7,20,21,32,41,50,52,57,59,69-74,78,80,83, 86-91,95,96,99,101,103,105,108,110-122,124,125,127,129,135,140,158,170,181,182,203,222,225,229,235,236,241,250,252,254,260,261,262,264,268,272,275,286,287
बांगड- 199,200,201
बांगर देश- 42,43,259
बाघ सिंह- 118,121,239,240
बाज सिंह- 55,58,59,60,79,147,215,245
बाज सिंह भंगेश्वरी- 59,60,215,242
बादशाही बाग- 21,202
बाबा अजय सिंह- 241
बाला- 18,177,197,208
बावड़ी- 18,43,62,200,208,212,227,254
बाशल बेग- 44
बिनोद सिंह- 58,60,147
बिलासपुर- 10,13,21,31,36,37,38,39,68,106,107,108,111,118,119,121,146,147,161,172,197,213,239,240,267,268,270,274,276,285
बिलासपुर- 66,101,102,103, 110,111,113,142,146,148,149,150,264,265,270,273,276
बिसत दोआब जालंधर- 105
बिहार- 23,128,168,185,221
बीबी बसंत कौर- 213,214,215,217

बीबी सुशीला कौर- 87,241,257
बुडिया- 9,14,62,63,70,72,73,161, 169,171,172,182,187,192,201, 213,260,263,276
बुरहानपुर- 42
बुलाका सिंह- 60
बेगमपुरा- 174,175,177
बेहट- 64,162,254
बैरागी-120,254
भंडारी खिवसी- 124
भगवंत सिंह-17,42,67
भगत कबीर जी- 255
भगत त्रिलोचन जी- 225,244
भगत धन्ना जी- 227,245,246
भगत नामदेव जी-148,225,245, 258
भगत रविदास जी- 175,176,177
भगत सदना- 19,184,188,246
भगवंत सिंह भंगेश्वरी- 241,242, 259
भगवती दास- 101,112
भगवान दास - 37,38,103,113, 223,227
भगवानपुर- 10,27,31,274
भगानी- 48,62,167,180
भट् वहिया- 182
भरतपुर- 7,42,245,246,259
भरली- 67
भाई चितर सिंह- 240
भाई फतेह सिंह- 40,45,54,55,58, 75,132,133,162,234,239,259,281, 286
भाई मक्खन शाह लुबाना- 205, 217,225, 226
भाई मनी सिंह- 9,17,39,42,87, 118,133,182,187,200,205,208, 209,213-219,232,238-242, 247,250
भाई माई दास-9,17,39,201,205, 216,238,250
भाई लक्खी राय वणजारा- 14,15, 17,18,39,51,152,163,167,197,200 ,205,207,208,209,212,213,215,21 8,220,223,224,227,229
भाग सिंह- 267
भागनगर (भागांवाला नगर)- 64,73
भारत-12,13,25,26,27,58,62,66,69, 88,101,110,116,131,144,161,163, 164,165,166,174,177,181,182,18 3,184,185,203,206,212,214,215, 220-231,234,241244,245,246, 256,258,280,282
भारतीय उपमहादीप - 7,16,189, 203,205,206,218,220,229,262
भिखन सिंह-236
भिवानी- 42,162,203,256
भीखण शाह- 19,44,46
भीलछप्पर- 173
भीलपुरा- 173
भीलोवाल- 67,68
भोजराज- 84,187
भौर सैदां- 188,196,202,203
मंजी- 8,9,19,47,62,171,173,179, 184,186,187,189,192,193,197, 199,200,201,210,224,246
मंडी- 13,31,62,66, 68,106,108, 115,146,152,172,270
मदगांव- 75
मध्य ऐशिया -14,18,35,195,206, 213
मसूमपुर- 27

मनोहरपुर- 72
मराठा- 206,210,228,251,252
मलकियात गांव- 147
मलेड़- 23
मलेरकोटला- 52,53,60,273
मस्सा रंगड़- 160,161,173
महतावाली- 10,27
महफूज ख़ान- 121,273
महबूब सिंह- 234,
महरौली- 158,241
महलूक- 143,147
महाबत ख़ान- 72,77,78,80, 85,89,95-101,110,114,123,267, 272
महाराष्ट्र- 42,164,185,206,224, 225,229,244,245,251,258
माखोवाल- 147,216
माछीवाड़ा- 52,53,77,162
माता गुजरी- 40,107,201,202
मानकपुर- 184,255
मारकण्डा- 81
मालचा महल- 18,35,209
मालवा- 23,44,75,202, 203,243,256
माली सिंह- 242
माही सिंह- 236
मिर्जा अब्दुला बख्शी- 133
मिर्जा अशकारी- 40
मिर्जा रूकण- 85
मिर्जा शाह निवाज़ ख़ान- 114
मिलकारा- 10
मिस्त्र- 188
मीर जुमला- 140
मीर बाबा ख़ान- 134
मुकाद- 73
मुखलिस ख़ान- 114,123
मुखलिसगढ़- 18,20,21,209
मुखलिसपुर- 20,21
मुजफ्फरनगर- 64,65,254, 255,261
मुमताज ख़ान अख्तर बेगी- 157
मुम्बई- 164,206,244
मुरादाबाद- 75,142,144,145,163, 166,167,209,248,249,251,252, 270,271,272
मुलतान- 65,69,202,208,236,237, 267
मुस्तफाबाद- 9,47,48,50,52,172, 181,190,204,259
मुहम्मद अमीन ख़ान- 71,80, 100, 103,104,113,115,117,118,119, 121-127,129,139, 140,148,154,155,159,272
मुहम्मद अली ख़ान - 65,123, 133,272,273
मुहम्मद कासिम औरंगाबादी- 10, 50,77,79,82,87,91,92,93,95,97, 130-135,137,138,153,154,155, 158,288,289
मुहम्मद गौरी- 46
मुहम्मद जमान रंगड़- 67
मुहम्मद जहान शान- 115
मुहम्मद ताहिर- 65
मुहम्मद बाका- 126
मुहम्मद रुस्तम गाजी ख़ान- 272
मुहिब ख़ान खरल- 67
मेरठ- 74,249,253,254,272
मेहर परवर- 122
मोरनी - 143
मोहकम चंद- 265

मोहमम्द रूस्तम- 123
मोहर सिंह- 133,233,237,239,240
मोहिदीनपुर- 10,27
मौलवी मुरादुल्ला- 121,273
यमुना - 9,17,18,21,26,27,30,31,39,48,52,63,74,75,81,83,160,167,191,192,206,208,209,253
यमुनानगर- 9,26,27,30,31,81,161,180,185,190,214,222,228,255,256,274,291
यहूदींयो- 16
यादव- 17,37,218
यार मौहमम्द ख़ान कलंदर- 115
यूरोपियन- 16,207,288
रण थंभौर- 195
रण सिंह- 42
रणबाज ख़ान- 92,273
रतन चंद- 37,38
रत्न चंद दीवान- 156
रत्न सिंह भंगू- 41,147,168,285,289,290
रफी-उद्-शाह - 90
रफी-उश-शान- 115,272
रफीउशान- 89,122
रमजानी बेग- 146
राजकुमार खुजीस्टा - 83
राजकुमार रफीउसान- 85
राजपुत- 39,41,52,69,70,72,75,85,113,139,140,160,164,222,227,245,246,256,265,266,273,283,284
राजपूताना- 168
राजस्थान- 18,21,69,70,85,88,94,98,101,106,113,119,121,124,135,136,185,206,208,214,221,226,227,228,229,245,256,265,266,288
राजा शाह ईब्राहिम बाला- 197
राजा हटिया- 186
राजौरी- 126,222,274
राठौर- 17,58,163,193,206,210,219,232,234,235,236,238,239
राम राय- 8,21,22,199,216
राम सिंह- 42,60,75,103,142,152,204,215,216,234,237,242
रामदास- 165,190,192,193,197,209,244,251,255,260
रामपुर - 16,18,31,94,162, 209
राय सिंह हजूरी- 242
रायपुर- 8,10,19,23,78,102, 108,146,148,161,209,270,276
रायपुर रानी- 8,10,19,161,209
रायपुर सैनी- 23
रायसिना- 15,208,210
रायसीना- 17,206,210,211,212,221
राहों- 76,77,109,110,286
रियाड़की (माझा)- 65,66
रियासी- 108,124,222,275
रूस्तम दिल ख़ान- 74,81,82,85,90,91,97,100,263,266,272
रोपड- 53,100,102,109,112,116,117,143,145,147,162,199,257,264,276
रोम- 20,25,180
रोहिल्ला- 201,249,253
लक्खी जंगल-75,103,110,113,141,151,243,256,265
लक्ष्मन सिंह- 291
लवणकार- 13

लाडवा- 9,16,27,31,161, 193,200,210
लाल कंवर गुज्जर- 73,272
लाल किला- 18,34,99,126,154, 208,210,211,275
लाल सिंह- 199,235,240
लाल सिंह भंगेंशवरी- 235
लाहौर- 24,37,50,52,54,59,65-72, 76,87,92,94,100-107,111,112, 115,116,117,121,122,124,125, 129,130,135,137,138,139,140, 142,145-153,155,182,185,194, 195,197,201,212,215,217,219, 235,236,237,241,249,257,258, 260,263,264,266-270,272,273, 287,288
लुत्फ-उलाह-ख़ान- 123,272
लुधियाना- 52,125,162, 248,263
लोहगढ़ (सहोटा)- 9
लोहगढ़ किला- 9,10,15,27,85, 86, 92-95,106,138,160, 206,248,291
लोहगढ़ खोल - 11,30
वजीर ख़ान- 40,48,52-61,70, 72,74,107,120,196,259,260,272,275,287
वाजीद ख़ान- 77,262
वजीरबाद- 104,265,273
वजीह-उद्-दीन- 74,75,272
वणजारा- 7-9,12-19,23,27,28, 31,34,35,39,42,43,47,48,51,62,63,84,87,88,89,102,117,121,124,144,145,152,160, 167,171,172,177,179,180-184,186,187,190,192,193,196,197,199-201,205-213,215-221,223-228, 229,230,232-241,244-246, 250-253,255,257,264,267,271, 276,277,283,284,292,308,317,335,336
337,339,342,344-350
वणदुर्ग- 28
वली ख़ान- 53
विर्दी बेग- 273
शम्स ख़ान- 262
शहज़ादा अजीमुशान- 70,272
शाम सिंह- 79,215
शाम सिंह भंगेश्वरी- 242
शामूगढ- 128
शालीमार- 66,115
शाह अबदुल वाहब कुतुब-उल-कुतुब़- 19
शाह निवाज़ ख़ान- 288,290
शाह मुहंम्मद काज़ी बुड़िया- 63, 73,273
शाह सरार्फ- 188
शाह साफी कलंदर- 78,79
शाहजहां- 10,18,21,23,37,38,39, 67,69,185,189,195,198,208,212,226,252
शाहपुर- 23,161
शाहबाद- 47,48,50,52,79,80,81, 82,131,132,134,138,172,181,182 187,189,204,263,275
शिवालिक पहाड़िया- 9,26,27,28, 29,39,50,62,84,94,179,182,184,192,253,256,257,266
शेख अहमद शैखुल्ल-हिंद (बटाला)- 110,111,273
शेख चेहली- 19,184,185,189, 192-195,197,200
शेख जलालुद्दीन- 188
शेख मुहम्मद दायम (फौजदार

बटाला)- 149,273
शेर ख़ान- 92,131,273
शेर मुहम्मद ख़ान- 53-56,58,60, 273
शेर सिंह भंगेश्वरी- 242
शेरजंग नेशनल पार्क- 33
शैय्यद अबदुल हमीद-प्प्- 192
शैय्यद अशरफ- 180
शैय्यद गुलाम शाह- 180
शैय्यद बदर-उ-दीन उर्फ बुदू शाह- 19
संग्राम सिंह- 234
संतोख सिंह- 286,289
सईअद मुहम्मद फजल- 110
सढ़ौरा- 10,13,19,20,32,48, 49,50,70,71,73,75,80,81,82,87 88,89,94,95,98,100,102,104, 105,121,124,126,127,131-139, 160,161,169,172,179,180,181, 182,183,184,185,187,188,192, 195,202,204,213,222,235,236, 240,241,259,263,266,267,268, 273,274,275,286
सतलुज- 38,52,53,77,102, 112,113,116,264,265,266
सन्नौर- 46,50,259
सफवी ख़ान- 151
समाना- 45,46,50,52,75,133, 169,181,185,203,210,259,274
सरफराज ख़ान बहादुर (बहरोज ख़ान)- 123,272
सरबराह ख़ान- 114,155, 157,158,272
सरहिंद- 37,40,44,46,48,50,52, 54-61,65,66,70,71,73,74,77,79, 80,100,101,107,109,110, 118, 120,121,123-127,130,131,137, 142-151,153,169,234,235, 240,241,242,259,260,272, 273,275,287,288
सराय वणजारा- 209,221
सलीम - 194
सलीमगढ- 10,18,99,208,262, 264,271,275
सहज सिंह- 233,237,267
सहज सिंह चौहान- 117
सहारनपुर- 52,62-65,71,72,73, 74,87,167,189,200,252-255, 260,263,273,275
सांपला- 42
साई मिंया मीर- 19,47,193,258
सालेह ख़ान- 114,273
साहब सिंह (भाई)- 225
साहिबज़ादों- 44,53,60,274
सिकलीगर- 9,12,161,164,172, 213,228
सिकलीगर कबीले- 164,228
सिक्का- 61,73,113,169,177,178, 283
सितारगढ़- 93
सिरमौर- 8,9,10,22,26,38
सिलीगुढी- 7,248
सुक्खा सिंह भंगेंशवरी- 79,235
सुखा सिंह- 79,80,160, 235,285
सुच्चा नंद- 54-58,61,92,107,272
सुलतान कुली ख़ान- 74,78,79, 260,272
सुलतान ख़ान- 110,273
सुलतानपुर लोधी- 76,108,125, 207
सुलेमान शिकोह- 166,198,252

सूबेदार असलम ख़ान- 65, 66,219
सेना सिंह- 133
सेवा सिंह भट्ट- 207,238
सैफ ख़ान- 110,273
सैफ-उद्-दीन अहमद ख़ान- 149, 273
सैयद- 19,45,189
सैयद अजमतुल्ला ख़ान- 113,273
सैयद अब्दुला ख़ान - 156
सैयद अली हुसैन- 44
सैयद हासम ख़ान- 133
सोना सिंह- 240
सोम नदी- 29,30,31,32,89
स्वरूप सिंह (गुरु की साखीयां)- 22,207,285
हंपी- 206,224,225
हकीम मोइतमद-उल-मुल्क-123,272
हजबर ख़ान- 65,273
हजरत अली- 19,183
हमीर चंद कटोच- 149,152,272
हरि चंद- 36
हरि दास यादव- 37
हरिपुर - 27,30,33,197
हरियाणा- 9,10,22,26,27,33, 34, 43,112,162,185,212,221,228,246, 256,273,274,275,291
हरी सिंह- 237,238
हरी सिंह भट्ट- 237
हलीमी राज- 36,78,85,87,88, 108,111,148,168,171,175,176,178,185,187,190,192,193,197,212,231,249,250,253-258
हाठू सिंह- 233
हाडी- 208,210
हातिम ख़ान- 119
हामिद कानून- 188
हिंदुस्तान- 179, 254
हिमाचल- 9,10,20,26,27,31,34, 161,162,181,197,205,214,234,241,257,258,274,275
हीरा- 18
हीरा सिंह- 117,233,237,267
हीरा नन्द- 201,243
हुसैन ख़ान खेशगी- 146
हेमा सिंह- 219,220
हैदरपुर- 18,209
होलगढ़- 9,24
होशियार ख़ान- 117
होशियारपुर- 104,112,256, 257,258

किताब बारे

इतिहासकारों द्वारा लोहगढ़ किले से सम्बन्धित मुख्य तथ्यों की अनदेखी की गई है। यह पुस्तक इन तत्वों को सामने लाने और सिख इतिहास के अंतराल को भरने का एक प्रयास है। इतिहासकारों द्वारा लोहगढ़ के बारे में कुछ नहीं लिखा गया है, न ही किसी संस्था द्वारा इसका सर्वेक्षण किया गया है। लोहगढ़ ट्रस्ट द्वारा किए गए सर्वेक्षण में पाया गया कि किला लोहगढ़ दुनिया का सबसे बड़ा किला है, जो हरियाणा और हिमाचल प्रदेश के बीच स्थित है। यह विशाल किला डाबर की पहाड़ियों में 7000 एकड़ के क्षेत्र में फैला हुआ है और इसके 52 अग्रिम किले थे जो वर्तमान में हरियाणा के छह जिलों (करनाल, कुरुक्षेत्र, कैथल, यमुनानगर, अम्बाला, पंचकुला) में फैले हुए हैं। लोहगढ़ किला फौजी दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि यहाँ से ही विशाल मुगलराज की नींवे उखाड़ दी गई थी। दिसम्बर 1709 में बाबा बंदा सिंह बहादुर ने लोहगढ़ को खालसा की राजधानी घोषित किया और गुरु नानक–गुरु गोबिंद सिंह के नाम पर खालसा राज्य के सिक्के और मोहरें जारी की और मानवता की इतिहास में पहली बार जगीरदारी प्रथा समाप्त कर किसानों को मुजारों से जमीनों का मालिकाना हक दिया गया। इतिहासकारों ने इस जगह को गलत तरीके से मुख्लिसगढ़ (मुगल बादशाह शाहजहां द्वारा बनाया गया एक रंगमहल) लिखा है, जोकि उत्तरप्रदेश में हथनीकुण्ड बैरेज के नजदीक है।

पुरातत्व साक्ष्य के व्यापक सर्वेक्षण, इतिहास के प्राथमिक और माध्यमिक स्रोतों से पता चलता है कि लोहगढ़ किले की योजना गुरु नानक साहिब द्वारा बनाई गई थी और बाकी नौ गुरु नानक ज्योतों ने उनकी इस विचारधारा को अमलीजामा पहनाया। ''हलीमी राज'' की स्थापना हेतु वंजारे, सिकलीगर, भील सिखों और मक्का–मदीना एवं बगदाद के सुफी संतों द्वारा अहम भूमिका निभाई गई, परन्तु आज के समय में यह लोग सिक्खी की मुख्य धारा से अलग हो चुके हैं।

हरियाणा सरकार के द्वारा इस स्थान को विकसित करने हेतु कार्य आरम्भ कर दिया गया है जिसके चलते नई सड़कें, पुल, वैभवशाली स्वागत गेट और बड़े बोर्ड लगाए गए है। इस जगह को दुनिया के पर्यटक मानचित्र पर लाने का पूरा प्रयास किया जा रहा है।

इस किताब में प्रयास किया गया है कि लोहगढ़ किले से सम्बन्धित समस्त भ्रमों को समाप्त किया जा सके।

हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी

आई. पी. 16, सैक्टर 14, पंचकूला (हरियाणा)

0172–2972071, 2577798, ईमेल : hpsaa55@gmail.com

वेबसाइट : haryanapunjabisahityaacademy.com

9788195500048

Rs. 550